॥*॥ अथ पुरुषोत्तममासमाहात्म्यं प्रारभ्यते ॥*॥

॥ लक्ष्मी कान्ताय नमः ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथैकादशीमाहात्म्यस्य भाषाटीका प्रारभ्यते ॥ सूतजी कहैं हैं कि, हे शौनक आदि ऋषीश्वरो ! तुम सुनो कि, बारह मास नमें जो चौबीस एकादशी होय हैं और अधिकमासमें जो दो शुभ एकादशी ऐसे गणनासें सब छब्बीस होती हैं उनके नाम मैं कहौं हौं तुम सब सावधान मन होके सुनो ॥ १ ॥ २ ॥ उत्पन्ना १ मोक्षदा २ सफला ३ पुत्रदा ४ षट्तिला ५ जया ६ विजया ७ आमलकी ८ पापमोचना ९

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूत उवाच ॥ अथ द्वादशमासेषु एकादश्यो भवन्ति याः ॥ अधिके मासि चाप्यन्ये ये च द्वे भवतः शुभे ॥ १ ॥ एवं षड्विंशसंख्याका एकादश्यो भवंति हि ॥ तासां नामान्यहं वच्मि शृणुध्वं सुसमाहिताः ॥ २ ॥ उत्पन्ना मोक्षदा चापि सफला पुत्रदा तथा ॥ षट्तिलाख्या जयाख्या च विजयाऽऽमलकीति च ॥ ३ ॥ पापमोचनिकाख्या च कामदा च वरूथिनी ॥ मोहिनी चापराख्या च निर्जला योगिनी तथा ॥ ४ ॥ विष्णोर्देवस्य शयनी पवित्रा पुत्रदा त्वजा ॥ परिवर्तिनींदिराख्या तथा पाशांकुशा रमा ॥ ५ ॥ देवोत्थानीति च प्रोक्ताश्चतुर्विंशतिनामभिः ॥ द्वे चाप्यधिकमासस्य पद्मिनी परमेति च ॥ ६ ॥ अन्वर्थानि च नामानि सर्वासां विद्धि निश्चितम् ॥ तद्धि सर्वं कथाभिस्तु स्फुटतां यास्यति ध्रुवम् ॥ ७ ॥

कामदा १० वरूथिनी ११ मोहिनी १२ अपरा १३ निर्जला १४ योगिनी १५ देवशयनी १६ पुत्रदा १७ पवित्रा १८ अजा १९ परिवर्तिनी २० इन्दिरा २१ पाशांकुशा २२ रमा २३ देवोत्थानी २४ ये चौबीसोंके नाम कहे और पद्मिनी १ तथा परमा २ नाम दो एकादशी अधिकमास अर्थात् मलमासमें होती हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ इन सबनके नाम अन्वर्थ कहिये जैसे नाम हैं वैसेही गुण हैं जैसे भगवान्के अंगसे उत्पन्न

होनेसे उत्पन्ना कही गई और चंपकनगरके वैखानस नाम राजाके पुत्रको मोक्ष देनेसे मोक्षदा नाम भयो ऐसेही सबनके नाम जानिये वह सब आगे उनकी कथानसों निश्चय विदित हो जायगा ॥७॥ और जो इन एकादशीनके व्रत तथा उद्यापन करनेको न समर्थ होय तो इनके नामनको कीर्त्तन करके शीघ्रही वा फलको प्राप्त होय ॥ ८ ॥ उत्पन्ना मार्गकृष्णे या भवत्येकादशी शुभा ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां कुर्वे सुदीपिकाम् ॥

अथ कथा ॥ नैमिषारण्य क्षेत्रमें सूतजी अठासी हजार शौनक आदि ऋषीश्वरनसों बोलत भये कि, हे ब्राह्मणो ! श्रीकृष्णमहाराजने बडी

व्रतमुद्यापनं चासां यदि कर्तुं न शक्नुयात् ॥ तदा संकीर्त्तनान्नाम्नां सद्यस्तत्फलमाप्नुयात् ॥ ८ ॥ अथ कथा ॥ सूत उवाच ॥ एवं प्रीत्या पुरा विप्राः श्रीकृष्णेन परं व्रतम् ॥ कथितं तत्प्रयत्नेन यः कुर्याद्भुवि मानवः ॥ १ ॥ भुक्त्वा भोगाननेकांस्तु विष्णुलोकं प्रयाति सः ॥ पार्थ उवाच ॥ उपवासस्य नक्तस्य तथैवायाचितस्य भो ॥ किं पुण्यं किं विधानं हि ब्रूहि सर्वं जनार्दन ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ हेमन्ते चैव संप्राप्ते मासि मार्गशिरे शुभे ॥ शुक्लपक्षे तथा पार्थ एकादश्यामुपोष्य च ॥ ३ ॥

प्रीतिसे श्रेष्ठव्रत युधिष्ठिर आदि पांडवनसे प्रथम कहे हैं तिनको पृथ्वीमें जो मनुष्य यत्नसे करेगा ॥१॥ वह या लोकमें अनेक भोगनको भोगिके अन्तसमय विष्णुके लोकमें प्राप्त होय है । अर्जुन बोले कि हे जनार्दन ! या एकादशी व्रतको क्या पुण्य है और कौनसी विधिसो याको करे सो सब आप कृपा करिके मोसों कहिये ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण बोले ॥ हेमन्तऋतु मार्गशिर महीना आनेपर कृष्णपक्ष तथा शुक्लपक्षमें एकादशीके दिन

व्रत करके ॥ ३ ॥ दशमीके दिन कुछ दृढ़ व्रत करै और रात्रिके समय दतुनि करै ॥ ४ ॥ और दिनके आठवें भागमें जब सूर्यका तेज मन्द हो जाय वा समयसे रात्रि जानिये तो वा समयसे रात्रिमें भोजन न करै॥५॥ता पीछे प्रभात समय संकल्प करकै नियमोंको करै और हे अर्जुन ! मध्याह्न स्नानसमयमें शुद्ध और सावधानचित्त होके स्नान करै ॥ ६ ॥ नदी तलाव अथवा बावडीमें क्रमसों उत्तम और अधम जानिये और

दशम्यां चैव यत् किंचित यः कुर्यात्सुदृढं व्रतम् ॥ नक्तं च तद्दिने कृत्वा दशम्यां दन्तधावनम् ॥ ४ ॥ दिवसस्याष्टमे भागे मन्दीभूते दिवाकरे ॥ तत्र नक्तं विजानीयान्न नक्तं निशि भोजनम् ॥५॥ ततः प्रभातसमये संकल्प्य नियमांश्चरेत् ॥ मध्याह्ने च तथा पार्थ शुचिः स्नातः समाहितः ॥ ६ ॥ नद्यां तडागे वाप्यां वा उत्तमं मध्यमं त्वधः ॥ क्रमाज्ज्ञेयं तथा कूपे तदभावे प्रशस्यते ॥ ७ ॥ अश्वक्रांते रथक्रांते विष्णुक्रांते वसुन्धरे ॥ मृत्तिके हर मे पापं यन्मया पूर्वसंचितम् ॥८॥ त्वया हतेन पापेन गच्छामि परमां गतिम् ॥ अनेन मृत्तिकास्नानं विदधीत व्रती नरः ॥ ९ ॥ नालपेत पतितैश्चौरैस्तथा पाषण्डिभिः सह ॥ मिथ्यापवादिनो देववेदब्राह्मणनिन्दकान् ॥ १० ॥

जो इन तीनोंमेंसे कोई न होय तो कूपहीपर स्नान करना श्रेष्ठ है ॥७॥ हे अश्वक्रान्ते ! हे रथक्रान्ते ! हे विष्णुक्रान्ते ! हे वसुन्धरे ! हे मृत्तिके पूर्वजन्ममें करे भये पापनकूं तू हरले ॥८॥ तेरे नाश करे भये पापनसे मैं परमगतिको जाऊंगा या मंत्रसे मनुष्य स्नानतेप्रथम मृत्तिका स्नानकरै ॥९॥ व्रतके दिन पतित चोर पाखण्डी और झूठा अपवाद लगानेवाले तथा देवता और ब्राह्मणकी निन्दा करनेवाले मनुष्यनसों वार्तालाप न करै ॥१०॥

और जे दुष्ट आचारवाले मनुष्यहैं तिनसे और अगम्या जो माता भगिनी आदिहैं तिनसे गमन करनेहारे मनुष्यनसों और पराये द्रव्यके हरनेवाले तथा देवताका द्रव्य लेनेवाले मनुष्यनसों संभाषण न करै ॥११॥ जो कदाचित् इनमेंसे काहूको दर्शन हो जाय तो सूर्यको दर्शन करै तो पीछे नैवेद्य आदिसों आदरपूर्वक गोविंद को पूजन करै ॥१२॥ और भक्तियुक्त चित्त होके घरमें दीपदान करै और हे अर्जुन ! वा दिन व्रती मनुष्य पराई

अन्यांश्चैव दुराचारानगम्यागामिनस्तथा ॥ परद्रव्यापहृतश्चैव देवद्रव्यापहारिणः ॥ ११ ॥ न सम्भाषेत दृष्ट्वाऽपि भास्करं चावलोकयेत ॥ ततो गोविंदमभ्यच्र्य नैवेद्यादिभिरादरात् ॥ १२ ॥ दीपं दद्याद्गृहे चैव भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ तद्दिने वर्जयेत् पार्थ निंदां मैथुनमेव च ॥ गीतशास्त्रविनोदेन दिवारात्रं नयेद्व्रती ॥ १३ ॥ रात्रौ जागरणं कृत्वा भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ विप्रेभ्यो दक्षिणां दत्त्वा प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥ १४ ॥ यथा शुक्ला तथा कृष्णा मान्या वै धर्मतत्परैः ॥ एकादश्योर्द्वयो राजन् विभेदं नैव कारयेत् ॥ १५ ॥ एवं हि कुरुते यस्तु शृणु तस्यापि यत्फलम् ॥ शंखोद्धारे नरः स्नात्वा दृष्ट्वा देवं गदाधरम् ॥ १६ ॥

निन्दा और स्त्रीसंग न करै और गीत कहिके भजन आदिकी तथा शास्त्रके आनन्दसों दिन राति व्यतीत करै ॥ १३ ॥ भक्तियुक्त चित्त होके रात्रिके विषे जागरण करै और ब्राह्मणको दक्षिणा दे नमस्कार करके क्षमापन करावै॥ १४ ॥जैसे कृष्णपक्षकी वैसेही शुक्लपक्षी एकादशी धर्मात्मा मनुष्यको मानने योग्य हैं दोनों एकादशीनमें कुछ भेद न करै ॥ १५॥ या प्रकार जे मनुष्य व्रत करै हैं ताको जो फल होय है ताहि सुनो—मनुष्य

शंखोद्धारनामक क्षेत्रमें स्नान करि गदाधर महाराजके दर्शन करिके जा फलको प्राप्त होय हैं॥१६॥वह फल एकादशीके व्रतकी सोलहवीं कला अर्थात् सोलहैं भागकेहू समान नहीं है व्यतीपातनाम योगमें जो दान है ताको एक लक्ष फल कहा है ॥ १७ ॥ और हे अर्जुन ! सक्रांतिनविषे जो कोऊ दान करै है ताको चार लक्ष फल होय है और चन्द्र तथा सूर्यके ग्रहणमें जो कुरुक्षेत्र विषे फल होय है ॥ १८ ॥ वा सब फलको

एकादश्युपवासस्य कलां नार्हति षोडशीम् ॥ व्यतीपाते च दानस्य लक्षमेकं फलं स्मृतम् ॥ १७ ॥ संक्रांतिषु चतुर्लक्षं यो ददाति धनंजय ॥ कुरुक्षेत्रे च यत्पुण्यं ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥ १८ ॥ तत्सर्वं लभते यस्तु एकादश्यामुपोषितः ॥ अश्वमेधस्य यज्ञस्य करणाद्यत्फलं लभेत् ॥ ततः शतगुणं पुण्यमेकादश्युपवासतः ॥ १९ ॥ तपस्विनो गृहे नित्यं लक्षं यस्य च भुञ्जते षष्टिवर्षसहस्राणि तस्य पुण्यं च यद्भवेत् ॥ २० ॥ एकादश्युपवासेन पुण्यं प्राप्नोति मानवः ॥ गोसहस्रे च यत्पुण्यं दत्ते वेदांग पारगे ॥ २१ ॥ तस्मात्पुण्यं दशगुणमेकादश्युपवासिनाम् ॥ नित्यं भुञ्जते यस्य दश चैव द्विजोत्तमाः ॥ २२ ॥

एकादशी व्रत करनेहारो मनुष्य प्राप्त होय हैं और अश्वमेध यज्ञके करनेसे जो फल प्राप्त होय है ताते सौगुणों एकादशीको व्रतको फल होय है ॥१९॥ जाके घरमें एक लाख तपस्वी नित्य भोजन पावै हैं साठ हजार वर्षमें वाको जितनो फल होय है ॥ २० ॥ उतनो पुण्य मनुष्यको एकादशी व्रतसों प्राप्त होय हैं और अंगनसहित बेद पढनेवाले मनुष्यको हजार गौ देनेसे जो पुण्य होय है ॥ २१ ॥ ता पुण्यसे दशगुण अधिक

एकादशीव्रत करनहारे मनुष्यको होय है जाके घरमें नित्य उत्तम दश ब्राह्मण भोजन करै हैं ॥२२॥वाते दशगुणो अधिक एक ब्रह्मचारीके भोजनको फल होय है ताते हजारगुणो अधिक भूमिके दानको फल होय है और ताते हजारगुणो अधिक कन्यादानको फल कहा है॥२३॥तैसेही ताते दशगुणो विद्यादानको फल कहा है और जो भूखेको अन्न देय है ताको पुण्यसे दशगुणो अधिक होय है ॥२४॥ अन्नदानके समान कोऊ दान न भयो न होयगो वा अन्नदानसों स्वर्गमें स्थित पितर और देवता तृप्तको प्राप्त होयाहैं ॥२५॥ एकादशीके व्रतके पुण्यनकी संख्या नहीं

भवेत्तद्दै दशगुण भोजने ब्रह्मचारिणः ॥ एतत्सहस्रं भूदाने कन्यादाने ततः स्मृतम्॥२३॥ तस्माद्दशगुणं प्रोक्तं विद्यादाने तथैव च ॥ विद्यादशगुणं चान्नं यो ददाति बुभुक्षिते ॥२४॥ अन्नदानसमं दानं न भूतं न भविष्यति ॥ तृप्तिमायांति कौन्तेय स्वर्गस्थाः पितृदेवताः ॥ २५ ॥ एकादशीव्रतस्यापि पुण्यसंख्या न विद्यते ॥ एतत्पुण्यप्रभावश्च यत्सुरैरपि दुर्लभः ॥ २६ ॥ नक्तस्यार्द्धं फलं तस्य एकभुक्तस्य सत्तम॥ एकभुक्तं च नक्तं च उपवासस्तथैव च॥ २७ ॥ एतेष्वन्यतमं वापि व्रतं कुर्याद्धरेर्दिने॥तावद्गर्जंति तीर्थानि दानानि नियमा यमाः ॥ २८ ॥ एकादशी न संप्राप्ता यावत्तावन्मखा अपि ॥ तस्मादेकादशी सर्वैरुपोष्या भवभीरुभिः ॥ २९ ॥

है याते याके पुण्यनके प्रभाव देवतानकोहू दुर्लभ है ॥ २६ ॥ हे सत्तम ! अर्थात् हे बडे सज्जन अर्जुन ! रात्रिमें भोजन करनेहारेको और दिनमें एकबार भोजन करनेहारेको आधा फल मिलै है. एकबार भोजन करना रात्रिमें भोजन करना और उपवास करना ॥ २७ ॥ इन तीनि प्रकारके व्रतनमें एकादशी दिन कोई न कोई व्रत करना योग्य है तबही लौं तीर्थ दान नियम और यम गर्जे हैं ॥ २८ ॥ जबताईं

एकादशी नहीं आवैं हैं और यज्ञहू तबही लौं गर्जे हैं ताते संसारसे डरे भये मनुष्यनको एकादशीको व्रत अवश्य करना उचित है ॥ २९ ॥
हे अर्जुन ! जो तुम हमसे पूछा हो तो मैं कहता हूँ कि, नखनसे जल न पीवै, मच्छियों तथा सुअरोंको न मारे और एकादशीको भोजन न करै॥ ३०॥
यह मैंने तुमसे सब व्रतनमें उत्तम व्रत कहा जो किये भये हजार यज्ञ वा एकादशीव्रतके समान नहींहै ॥ ३१ ॥ अर्जुन बोले कि हे देव ! तुमने
एकादशीको सब तिथिनमें पुण्य तिथि कैसी कही बाकी पुरानी कथा सुननेकी मेरी इच्छा है। श्रीकृष्ण बोले—कि, हे अर्जुन! पहिले कृतयुगमें अति

न नखेन पिबेत्तोयं न हन्यान्मत्स्यसूकरान्॥एकादश्यां न भुञ्जीत यन्मां त्वं पृच्छसेऽर्जुन ॥३०॥ एतत्ते कथितं सर्वं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ एकादशीसमं नास्ति कृत्वा यज्ञसहस्रकम् ॥३१॥ अर्जुन उवाच॥उक्ता त्वया कथं देव पुण्येयं सर्वतस्तिथिः॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ पुरा कृतयुगे पार्थ मुरनामा हि दानवः ॥अत्यद्भुतो महारौद्रः सर्वदेवभयंकरः ॥३२ ॥ इन्द्रो विनिर्जितस्तेन ह्युत्युग्रेण च पांडव ॥ इन्द्रेण कथितः सर्वो वृत्तांतः शंकराय वै॥३३॥ सर्वलोकपरिभ्रष्टा विचरामो महीतले ॥ उपायंब्रूहि मे देव त्रिदशानां तु का गतिः ॥३४॥ ईश्वर उवाच ॥ देवराज सुरश्रेष्ठ यत्रास्ति गरुडध्वजः ॥ शरण्यश्च जगन्नाथः परित्राणपरायणः ॥ ३५ ॥

अद्भुत और बहुतही भयानक देवतानको भय देनेहारो मुरु नाम दैत्य होतो भयो ॥२३॥ हे पांडव ! अति उग्र जो यह मुरु नाम दैत्य हो ता
करके इन्द्र जीते गये,तब इन्द्र यह सम्पूर्ण वृत्तांत महादेवसे कहते भये॥३३॥ कि, हे महाराज ! हम सब अपने लोकसे भ्रष्ट होंके भूमिमें विचर रहे
हैं हे देव! उपाय बताओ देवतानकी कौनसी गति है हे ईश्वर ! कहिये ॥३४॥ श्रीमहादेवजी बोले—कि हे देवराज देवतानमें श्रेष्ठ ! शरणागतकी

रक्षा करनेहारे सब जगतके स्वामी और रक्षामें तत्पर श्रीभगवान् विष्णु जहांहैं॥ ३५॥वहांको हम सब चलतेहैं वे हमारो कार्य करेंगे, शिवजीको ऐसो वचन सुनिके बडो है मन जाको ऐसे इन्द्र॥ ३६॥संपूर्ण गणनको और मरुद्गण जो देवतानको समूह है ता समेत श्रीमहादेवजीको आगे करके जहां जगत्के स्वामी श्रीभगवान् सो रहे हैं जाते भये ॥ ३७ ॥ जगत्के स्वामी जो श्रीभगवान् है तिनको जलके मध्य सोते भये देखि

तत्र गच्छामहे सर्वे स नः कार्यं विधास्यति ॥ ईशस्य वचनं श्रुत्वा देवराजो महामनाः ॥ ३६ ॥ पुरस्कृत्य महादेवं सगणं समरुद्गणम् ॥ यत्र देवो जगन्नाथः प्रसुप्तो हि जनार्दनः ॥ ३७ ॥ जलमध्ये प्रसुप्तं तु दृष्ट्वा देवं जगत्पतिम् ॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा रुद्रः स्तोत्रमुदीरयत् ॥ ३८ ॥ ॐ नमो देवदेवाय देवदेवैः सुवंदितः ॥ दैत्यारे पुंडरीकाक्ष त्राहि नो मधुसूदन ॥ ३९ ॥ दैत्यभीता इमे देवा मया सह समागताः ॥ शरणं त्वं जगन्नाथ त्वं कर्ता त्वं च कारकः ॥ ४० ॥ त्वं माता सर्वलोकानां त्वमेव जगतः पिता ॥ त्वं स्थितिस्त्वं तथोत्पत्तिस्त्वं च संहारकारकः॥ ४१ ॥

श्रीमहादेवजी हाथ जोरके स्तुति करने लगे ॥ ३८ ॥ देवतानके देवता और श्रेष्ठ देवतान करि नमस्कार किये गये तथा दैत्यनके शत्रु हे पुण्डरीकाक्ष ! हे मधुसूदन ! हमारी रक्षा करो ॥ ३९ ॥ दैत्यनसे डरे भये सब देवता मो समेत शरणमें आये हैं हे महाराज ! आप शरण कहिये रक्षा करनहारे हो और सबके कर्ता और करावनहारे आपही हो ॥ ४० ॥ तुमहीं सब लोकनके माता हो और तुमहीं

संसारके पिता हो और उत्पन्न करनेहारे तथा पालनहारे और संहार करनहारे आपही हो ॥ ४१ ॥ हे प्रभो ! आप देवतानके सहायक हो और उनकी शांति करनहारे आपही हो आपही पृथ्वी आकाश हो और सब संसारके उपकार करनहारे ॥ ४२ ॥ आपही शिव हो और आपही ब्रह्मा तथा तीनों लोकनके पालनहारे विष्णु आपही हो । आपही सूर्य हो और चन्द्रमा हो तथा अग्निदेवता आपही हो ॥ ४३ ॥ हव्य जो

सहायस्त्वं च देवानां त्वं च शांतिकरः प्रभो ॥ त्वं धरा च त्वमाकाशः सर्वविश्वोपकारकः ॥ ४२ ॥ भवस्त्वं च स्वयं ब्रह्मा त्रैलोक्यप्रतिपालकः ॥ त्वं रविस्त्वं शशांकश्च त्वं च देवो हुताशनः ॥ ४३ ॥ हव्यं होमो हुतस्त्वं च मन्त्रतंत्रर्त्विजो जपः ॥ यजमानश्च यज्ञस्त्वं फलभोक्ता त्वमीश्वरः ॥ ४४ ॥ न त्वया रहितं किंचित्त्रैलोक्ये सचराचरे ॥ भगवन् देवदेवेश शरणागत वत्सल ॥ ४५ ॥ त्राहि त्राहि महायोगिन् भीतानां शरणं भव ॥ दानवैर्निर्जिता देवाः स्वर्गभ्रष्टाः कृता विभो ॥ ४६ ॥

साकल्य है सो आपही हो और होम आपही हो तथा होम भई वस्तु, मन्त्र, तन्त्र, ऋत्विज, जप, यजमान, यज्ञ ये सब आपही हो, फल भोगनहारे आपही ईश्वर हो ॥ ४४ ॥ तीनों लोकनमें चर और अचरमें तुम करके रहित कोई वस्तु नहीं है अर्थात् आप सर्वव्यापी हो. हे भगवन् ! हे देवदेवेश हे शरणागतवत्सल ! अर्थात् जिनको शरणमें आये भये जीव प्यारे हैं ऐसे आप हो ॥ ४५ ॥ हे महायोगिन् ! हे महाराज ! रक्षा करो और

भीत कहिये डरे भये जो हम हैं तिनकी रक्षा करो.हे विभो! कहिये हे समर्थ ! हे महाराज ! दानवकरके जीतेगये देवता स्वर्गसे भ्रष्ट करि दिये गये हैं ॥ ४६ ॥ हे जगन्नाथ ! देवता स्थानसे भ्रष्ट होके पृथ्वीतलमें विचररहे हैं यह महादेवजीका वचन सुनिके विष्णु भगवान् बोलते भये ॥ ४७ ॥ श्रीभगवान् बोले–कि,ऐसो कौनसो बडो मायावी दैत्य है.जाने देवतानको जीति लियो वाको कौनसा स्थान है और कहा नाम है और वाको कैसो

स्थानभ्रष्टा जगन्नाथ विचरंति महीतले ॥ रुद्रस्य वचनं श्रुत्वा विष्णुर्वचनमब्रवीत् ॥ ४७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कोऽसौ दैत्यो महामायो देवा येन विनिर्जिताः ॥ किं स्थानं तस्य किं नाम किं बलं कस्तदाश्रयः ॥ ४८ ॥ एतत्सर्वं समाचक्ष्व मघवन्निर्भयो भव ॥ इन्द्र उवाच ॥ भगवन्देवदेवेश भक्तानुग्रहकारक ॥ ४९ ॥ दैत्यः पूर्वं महानासीन्नाडीजंघ इति स्मृतः ॥ ब्रह्मवंशसमुद्भूतो महोग्रः सुरसूदनः॥ ५० ॥ तस्य पुत्रोऽतिविख्यातो मुरनामा महासुरः ॥ तस्य चन्द्रावती नाम नगरी च गरीयसी ॥ ५१ ॥ तस्यां वसन्स दुष्टात्मा विश्वं निर्जित्य वीर्यवान् ॥ सुरान् स वशमानिन्ये निराकृत्य त्रिविष्टपात् ॥ ५२ ॥

बल है वाको आश्रय कहां है ॥ ४८ ॥ हे इन्द्र! यह सब कहो और निर्भय हो. इन्द्र बोले–कि,हे देवदेवेश !हे भक्तनपर कृपा करनहारे महाराज ! ॥ ४९ ॥ पहले समयमें नाडीजंघ नाम राक्षस होत भयो वह ब्रह्मवंशमें उत्पन्न हो बडो उग्र देवतानको दुःखदाई हो ॥ ५० ॥ वाको पुत्र अतिविख्यात मुर नाम बडो असुर है वाकी बडो चन्द्रावती नाम नगरी है ॥ ५१ ॥ वा नगरीमें वसतो भयो वह बडो पराक्रमी दुष्टात्मा

संसारको जीतिके देवतानको स्वर्गसे निकासिके अपने वशमें करत भये ॥ ५२ ॥ इंद्र, अग्नि, यम, वायु, ईश, निर्ऋति, वरुण इन सबके स्थाननमें आपही स्थित है और सूर्य होकर तपि रहा है। ५३॥ हे देव ! वह आपही मेघ बनि बैठो है और सब देवताहू बनि गयो है हे विष्णु ! वा दैत्यको मारो और देवतानको विजयी करावो ॥ ५४ ॥ ऐसे उनके वचन सुनिके जनार्दन भगवान् कुपित होके इन्द्रसे कहत भये कि, हे देवेश ! मैं

इन्द्राग्नियमवाय्वीशसोमनिर्ऋतिपाशिनाम् ॥ पदेषु स्वयमेवासीत् सूर्यो भूत्वा तपत्यपि ॥ ९३ ॥ पर्जन्यः स्वयमेवासीद्देव सर्वाश्च देवताः ॥ जहि तं दानवं विष्णो सुराणां जयमावह ॥ ९४ ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कोपाविष्टो जनार्दनः ॥ उवाच शक्रं देवेन्द्र हनिष्ये तं महाबलम् ॥ ९५ ॥ प्रयांतु सहिताः सर्वे चन्द्रावत्यां महाबलाः ॥ इत्युक्ताःप्रययुः सर्वे पुरस्कृत्य हरिं सुराः ॥ ९६ ॥ दृष्टो देवैस्तु दैत्येन्द्रो गर्जमानस्तु दानवैः ॥ असंख्यातसहस्रैस्तु दिव्यप्रहरणायुधैः॥ ९७ ॥

वा बलवान् दैत्यको मारोंगो ॥ ५५ ॥ हे महाबली देवतावो ! तुम सब इकट्ठे होके चन्द्रावती नाम पुरकी नगरीको जावो विष्णुकर ऐसे कहे गये सब देवता विष्णु आगे करके चन्द्रावती पुरीको चलत भये ॥ ५६ ॥ देवतानने गर्जतो भयो दानवको कैसे देखो कि, असंख्यात और नाना प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण करे भये दानवकरके युक्त है ॥ ५७ ॥

भुजानकरि शोभित असुरन करि मारे गये सब देवता वा संग्रामको छोडके दशों दिशानको भागत भये ॥ ५८ ॥ ता पीछे हृषीकेश भगवान्को संग्राममें स्थित देखिके वे असुर नानाप्रकारके अस्त्र लेके उनके ऊपर दौरत भये ॥ ५९ ॥ शंख, चक्र, गदाके करनहारे भगवान् उन असुरनको आते देखि,सबके सरीरनको सर्पनके समान बाणनसों वेधि देत भये॥६०॥उन विष्णुकरके मारे गये वे असुर सैकडन नाशको प्राप्त होत

हन्यमानास्तदा देवा असुरैर्बाहुशालिभिः ॥ संग्रामं ते समुत्सृज्य पलायंत दिशो दश ॥ ५८ ॥ ततो दृष्ट्वा हृषीकेशं संग्रामे समुपस्थितम् ॥ अन्वधावन्नभिक्रुद्धा विविधायुधपाणयः॥ ५९ ॥ अथ तान्प्रद्रुतान्दृष्ट्वा शंखचक्रगदाधरः ॥ विव्याध्य सर्वगात्रेषु शरैराशीविषोपमैः ॥ ६० ॥ तेनाहतास्ते शतशो दानवा निधनं गताः ॥ एकांगो दानवः स्थित्वा युद्ध्यमानो मुहुर्मुहुः॥ ६१ ॥ तस्योपरि हृषीकेशो यद्यदायुधमुत्सृजत् ॥ पुष्पवत्तं समभ्येति कुंठितं तस्य तेजसा ॥ ६२ ॥ शस्त्रास्त्रैर्विद्ध्यमानोऽपि यदा जेतुं न शक्यते ॥ युयोध च तथा क्रुद्धो बाहुभिः परिघोपमैः ॥ ६३ ॥ बाहुयुद्धं कृतं तेन दिव्यवर्षसहस्रकम् ॥ तेन श्रांतः स भगवान् गतो बदरिकाश्रमम् ॥ ६४ ॥

भये एकांग कहे अकेलो वह दानव स्थित होके बारंबार युद्ध कर रहो है ॥ ६१ ॥ वाके ऊपर:भगवान् जो जो अस्त्र शस्त्र छोरत भये वे वाके तेजसों कुंठित होके फूलके समान वाके समीप जात भये ॥ ६२ ॥शस्त्रन और अस्त्रनकर वेधोभी वह असुर जब जीतिबेको न समर्थ भयो तब परिघके समान बडी भुजानसे युद्ध करने लगो ॥ ६३ ॥ वाने दिव्य दशहजार वर्षलों बाहुयुद्ध कीन्हो वाते थके भये भगवान् बदरिकाश्रमको जात भये ॥६४॥

वहां हैमवती नाम बहुत सुहावनी गुफा है वामें बडे योगी और जगत्के स्वामी विष्णु भगवान् शयन करनेको प्रवेश करते भये ॥ ६५ ॥
हेअर्जुन ! वह गुफा १२ योजन अर्थात् ४८कोस चौडी हैं और वाको एकही द्वार है तामें मैं भयभीत होके सोयो यामें सन्देह नहीं है॥ ६६ ॥
हे अर्जुन ! मैं वा महायुद्धसे थकि गये हो और वह दानव हो सोऊ मेरे पीछे लगो भयो वा गुफामें प्रवेश करत भयो ॥ ६७ ॥ तब वह दानव

तत्र हैमवती नाम्नी गुहा परमशोभना ॥ तांप्रविश्य महायोगी शयनार्थं जगत्पतिः ॥ ६५ ॥ योजनद्वादशायामा एकद्वारा धनंजय ॥ अहं तत्र प्रसुप्तोऽस्मि भयभीतो न संशयः ॥ महायुद्धेन तेनैव श्रांतोहं पांडुनन्दन ॥ दानवः पृष्ठतो लग्नः प्रविवेश स तां गुहाम् ॥ ६७ ॥ प्रसुप्तं मां तदा दृष्ट्वाऽचिन्तयद्दानवो हृदि ॥ हरिमेनं हरिष्येऽहं दानवानां क्षयावहम् ॥६८॥ एवं सुदुर्मतेस्तस्य व्यवसायं व्यवस्यतः ॥ समुद्भूता ममाङ्गेभ्यः कन्यैका च महाप्रभा॥ ६९ ॥ दिव्यप्रहरणा देवी युद्धाय समुप स्थिता ॥ ईक्षिता दानवेन्द्रेण अरुणा पांडुनन्दन ॥ ७० ॥ युद्धं समाहिता तेन स्त्रिया तत्र प्रयाचितम् ॥ तेनायुद्ध्यत सा नित्यं तां दृष्ट्वा विस्मयं गतः ॥ ७१ ॥

मोहि सोवते देखि अपने हृदयमें चिंतवन करत भयो कि, मैं दानवनके नाश करनेवारे या हरिको मारूंगो ॥ ६८ ॥ वह दुष्टबुद्धि ऐसे उद्योगको निश्चय कर रहो ताही समय मेरे अंगनसों एक बडे तेजवारी कन्या उत्पन्न होत भई॥ ६९॥ दिव्य अस्त्र शस्त्रनको धारण करनहारी वह देवी युद्ध करवेको उपस्थित होत भई । अर्जुन ! दानवेंद्र करिके वह क्रोधसे अरुण वर्ण देखी गई ॥ ७० ॥ वहां वा दानवने वा स्त्रीकरके मांगो भयो युद्ध

किये वह वाके साथ नित्य युद्ध करती वाहि देखि वह दैत्य विस्मयको प्राप्त भयो ॥ ७१ ॥ भयावनी अति उग्र वज्रपात करनहारी कौनने यह बनाई है ऐसे कहके वह दानव वा कन्याके साथ युद्ध करत भयो ॥ ७२ ॥ ता पीछे वा महादेवीने अति शीघ्र वाके सब अस्त्र शस्त्र काटिके वाहि रथहीन कर दीन्हों ॥ ७३ ॥ तब बाहुयुद्ध करवेको अति बलसों दौरत भयो वह असुर वा देवीकरि छातीमें पेरा मारके गिरायो गयो

केनेयं निर्मिता रौद्रा अत्युग्राऽशनिपातिनी ॥ इत्युक्त्वा दानवेन्द्रोऽसौ युयुधे कन्यया तया ॥ ७२॥ ततस्तया महादेव्या त्वरया दानवो बली ॥ छित्त्वा सर्वाणि शस्त्राणि क्षणेन विरथः कृतः ॥ ७३ ॥ बाहुप्रहरणोपेतो धावमानो महाबलात् ॥ तलेनाहत्य हृदये तया देव्या निपातितः ॥ ७४॥ पुनरुत्थाय सोऽधावत् कन्याहननकांक्षया ॥ दानवं पुनरायान्तं रोषेणाहत्य तच्छिरः ॥ ७५ ॥ क्षणान्निपातयामास भूमौ तत्र महासुरम् ॥ दैत्यः कृत्तशिराः सोऽथ ययौ वैव स्वतालयम् ॥ ७६ ॥ शेषा भयार्दिता दीनाः पातालं विविशुर्द्विषः ॥ ततः समुत्थितो देवः पुरो दृष्ट्वाऽसुरं हतम् ॥७७॥

॥ ७४ ॥ वह उठिके कन्याके मारनेकी इच्छा करके फिर दौरतो भयो तब देवी आवतो देखि क्रोध करि वाको शिर काट देत भई ॥ ७५ ॥ क्षणमात्रमेंही देवी महाअसुरको भूमिमें पटक देती भई ता पीछे कटि गयो है शिर जाको ऐसो वह दानव यमराजके लोकको जातो भयो ॥७६॥ बाकी रहे असुर शत्रु भयसे पीडित और दीन होके पातालको चले जात भये ता पीछे भगवान् उठिके आगे मारे भये दैत्यको देखते

भये ॥ ७७ ॥ और नम्रतासे हाथ जोरिके ठाढ़ी भई एक कन्याको देखते भये, तब जगत्के स्वामी भगवान् विष्णु बोलते भये ॥ ७८ ॥
या दुष्टचित्त दानवको संग्राममें कौनके मारो है जिसने देवता गंधर्व और इन्द्र और देवगण समेत सबको जीत लियो है ॥ ७९ ॥ और
जाने नागनको और लोकपालनको लीलाहीसे जीति लिया और जा करके जीतो गयो मैं भयभीत होके या गुफामें सोयो हों ॥ ८० ॥

कन्यां पुरः स्थितां चापि कृतांजलिपुटां नताम् ॥ विस्मयोत्फुल्लवदनः प्रोवाच जगतां पतिः ॥ ७८ ॥ केनायं निहतः संख्ये
दानवो दुष्टमानसः ॥ येन देवाः सगन्धर्वाः सेन्द्राश्च समरुद्गणाः ॥ ७९ ॥ सनागाः सहलोकेशा लीलयैव विनिर्जिताः ॥
येनाहं निर्जितो भूत्वा भीतः सुप्तो गुहामिमाम् ॥ ८० ॥ कन्योवाच ॥ मया विनिहतो दैत्यस्त्वदंशोद्भूतया प्रभो ॥ ८१ ॥ दृष्ट्वा
सुप्तं हरे त्वां तु यतो हन्तुं समुद्यतः ॥ त्रैलोक्यकंटकस्येत्थं व्यवसायं प्रबुद्ध्य च ॥ ८२ ॥ हतो मया दुरात्माऽसौ
देवता निर्भयाः कृताः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ निहते दानवेन्द्रेऽस्मिन्संतुष्टोऽहं त्वयाऽनघे ॥ ८३ ॥ हृष्टाः पुष्टाश्च वै
देवा आनन्दः समजायत ॥ आनंदस्त्रिषु लोकेषु देवानां यस्त्वया कृतः ॥ ८४ ॥

कन्या बोली—कि हे प्रभो ! तुम्हारे अंशसो उत्पन्न भई जो मैं हों तो करके यह दैत्य मारो गयो हैं ॥ ८१ ॥ हे हरिमहाराज ! तुम्हैं सोवते देखि यावे
वह मारिवेको उद्यत भयो और त्रिलोकीको कंटक कहिये तीनों लोकनको दुःख देनेहारो वाको यह उद्योग जानिके ॥ ८२ ॥ सो करके दुष्ट मारो
गयो और देवता निर्भय किये गये । श्रीभगवान् बोले—कि हे अनघे ! या असुरके मारनेसे मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हौं ॥ ८३ ॥ देवता हृष्टपुष्ट भये

और उनको आनन्द भयो देवतानको जो तैंने आनंदित कियो तातै तीनों लोकनविषे आनन्द भयो है ॥ ८४ ॥ हे अनघे ! मैं तोसों प्रसन्न हौं हे सुव्रते वर मांगले मैं तो को ऐसे वर देउगो जो देवतानकोहू दुर्लभ है ॥ ८५ ॥ कन्या बोली—कि हे देव ! जो आप मोपै प्रसन्न हो और जो मोके वर देनो है तो वा वरको देवो जाते मैं व्रत करनवारे मनुष्यको महापापसे तारि देउं ॥ ८६ ॥ उपवासको जो फल है ताते आधी रात्रिमें भोजन कर

प्रसन्नोऽस्म्यनघे तुभ्यं वरं वरय सुव्रते ॥ ददामि तं न संदेहो यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ८५ ॥ कन्योवाच ॥ यदि तुष्टोऽसि मे देव यदि देयो वरो मम ॥ तारयेऽहं महापापादुपवासपरं नरम् ॥ ८६ ॥ उपवासस्य यत्पुण्यं तस्यार्द्धं नक्तभोजने ॥ तदर्धं च भवेत्तस्य एकभुक्तं करोति यः ॥ ८७ ॥ यः करोति व्रतं भक्त्या दिने मम जितेन्द्रियः ॥ स गत्वा वैष्णवं स्थानं कल्प कोटिशतानि च ॥ ८८ ॥ भुंजानो विविधान् भोगानुपवासी जितेन्द्रियः ॥ भगवंस्त्वत्प्रसादेन भवत्वेष वरो मम ॥ ८९ ॥ उपवासं च नक्तं च एकभुक्तं करोति यः ॥ तस्य धर्मं च वित्तं च मोक्षं देहि जनार्दन ॥ ९० ॥

नवारेनको होय है और ताते आधो पुण्य एक वार भोजन करनवारेनको होय है ॥ ८७ ॥ जो पुरुष जितेंद्रिय होके भक्तिसों मेरे दिन व्रत करेगो वह वैष्णवधाम अर्थात् वैंकुठ धाममें प्राप्त होके करोडों कल्पोंपर्यंत आनन्द करै ॥ ८८ ॥ और जितेंद्रिय होके व्रत करै वह नाना भोगनको भोगै हैं हे भगवन् ! आपके प्रसादते मोको यह वर मिले ॥ ७९ ॥ और जो मेरे दिन उपवास वा रात्रिमें एक बार भोजन अथवा दिनमें एकबार भोजन करे हे जनार्दन

वाको आप धर्म धन और मोक्षकूं देवो ॥ ९० ॥ श्रीभगवान् बोले—कि,हे कल्याणि ! जो तू कहे है सो सब होयगो और जो लोग मेरे भक्त हैं वे मनुष्य तेरे भक्त हैं ॥ ९१ ॥ वे तीनों लोकनमें विख्यात हो मेरे निकट प्राप्त होयँगे मेरी भक्तिमें परायण तू जाते एकादशीके दिन उत्पन्न भई है ॥ ९२ ॥ ताते तेरो एकादशी यह नाम होयगो और व्रत करनवारे मनुष्यनके सम्पूर्ण पापनको जलायके अविनाशी पद देऊँगो ॥ ९३ ॥ तीज

श्रीभगवानुवाच ॥ यत्त्वं वदसि कल्याणि तत्सर्वं च भविष्यति ॥ मम भक्ताश्च ये लोकास्तव भक्ताश्च ते नराः ॥ ९१ ॥ त्रिषु लोकेषु विख्याताः प्राप्स्यंति मम सन्निधिम् ॥ एकादश्यां समुत्पन्ना मम भक्तिपरायणा ॥ ९२ ॥ अत एकादशीत्येवं तव नाम भविष्यति ॥ दग्ध्वा पापानि सर्वाणि दास्यामि पदमव्ययम् ॥ ९३ ॥ तृतीया चाष्टमी चैव नवमी च चतुर्दशी ॥ एकादशी विशेषेण तिथयो मे महाप्रियाः ॥ ९४ ॥ सर्वतीर्थाधिकं पुण्यं सर्वदानाधिकं फलम् ॥ सर्वव्रताधिकं चैव सत्यं सत्यं वदामि ते ॥ ९५ ॥ एवं दत्त्वा वरं तस्यास्तत्रैवांतरधीयत ॥ हृष्टा तुष्टा तु सा जाता तदा एकादशी तिथिः ॥ ९६ ॥ इमामेकादशीं पार्थ करिष्यंति नरास्तु ये ॥ तेषां शत्रून् हनिष्यामि दास्यामि परमां गतिम् ॥ ९७ ॥

अष्टमी, नवमी, और चतुर्दशी ये तिथि मोको प्यारी हैं, परन्तु इन सबनमें एकादशी तो मोको बहुत प्यारी है ॥ ९४ ॥ एकादशीका पुण्य सब तीर्थनके पुण्यसे अधिक है और याको फल सब दानन और व्रतनके फलसे अधिक है यह मैं तोसों सत्य सत्य कहों हौं ॥ ९५ ॥ या प्रकार वाको वर देके श्रीभगवान् वहीं अन्तर्धान हो जात भये वा समय एकादशी तिथि हृष्ट पुष्ट होत भई ॥ ९६ ॥ हे अर्जुन ! जे मनुष्य वा

एकादशी व्रतको करेंगे उनके शत्रुनको मैं नाश करोंगो और परमगति अर्थात् मोक्ष देऊँगो ॥ ९७ ॥ और जे लोग या एकादशीके महाव्रतको करेंगे तिनके विघ्ननको मैं हरि लेऊँगो औग सब सिद्धि देऊँगो॥९८॥हे कुन्तीके पुत्रो ! एकादशीकी उत्पत्ति ऐसे कही यह एकादशी सदासब पापनकी नाश करनहारी है॥९९॥बहुतही पवित्र सब पापनकी नाश करनहारी और सब सिद्धिनकी देनेवारी यह एकही एकादशी तिथि सब

अन्येऽपि ये करिष्यंति एकादश्या महाव्रतम् ॥ हरामि तेषां विघ्नांश्च सर्वसिद्धिं ददामि च ॥ ९८ ॥ एवमुक्ता समुत्पत्तिरेका दश्याः पृथासुताः ॥ इयमेकादशी नित्या सर्वपापक्षयंकरी ॥ ९९ ॥ एकैव च महापुण्या सर्वपापनिषूदनी ॥ उदिता सर्व लोकेषु सर्वसिद्धिकरी तिथिः ॥ १०० ॥ शुक्ला वाप्यथवा कृष्णा इति भेदं न कारयेत् ॥ कर्तव्ये उभये पार्थ न तुल्या द्वादशी तिथिः ॥ १०१ ॥ अन्तरं नैव कर्त्तव्यं समस्तैर्व्रतकारिभिः ॥ तिथिरेका भवेत्सर्वा पक्षयोरुभयोरपि ॥ १०२ ॥ उपवासं प्रकुर्वंति एकादश्यां नराश्च ये ॥ तेयांति परमं स्थानं यत्रास्ते गरुडध्वजः ॥ १०३ ॥ धन्यास्ते मानवा लोके विष्णुभक्तिपरायणाः ॥ एकादश्यास्तु माहात्म्यं सर्वलोकेषु यः पठेत् ॥ १०४ ॥

लोकनमें उदय भई है॥१००॥शुक्लपक्षकी है अथवा कृष्णपक्षकी है या भेदको न करै हे अर्जुन ! दोनों करनी चाहिये तिनमें द्वादशी द्वा सब नते उत्तम है ॥१०१॥ सम्पूर्ण व्रत करनहारे मनुष्यको भेद न माननो चाहिये दोनों पक्षनमें सब तिथि एकही होय है ॥ १०२ ॥ जे मनुष्य एकादशीके दिन व्रत करैं हैं वे वा परम धामको प्राप्त होयहैंजहां गरुणध्वज भगवान् विराजमानहैं॥१०३॥जे मनुष्य विष्णुभक्तिमें परायण हैं ते

धन्य हैं और सब लोकनमें जो जो एकादशीमाहात्म्य पढगो॥१०४॥वह अश्वमेधको जो फलहै ताको प्राप्त होयहै यामें संदेह नहींहै एकादशीको निराहार रहिके मैं दूसरे दिन भोजन करूंगो॥१०५॥हे पुंडरीकाक्ष अच्युत भगवान् ! मेरे रक्षक हो ऐसे उच्चारण करिके तो पीछे विद्वान् पुरुष पुष्पांजलिको अर्पण करै ॥ १०६ ॥ उपवासके फलको चाहनवारो मनुष्य फिर तीन बार जपे भये अष्टाक्षर मंत्रसों अभिमंत्रित करि पात्रमें

अश्वमेधस्य यत्पुण्यं तदाप्नोति न संशयः ॥ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहं च परेऽहनि ॥ १०५ ॥ भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥ इत्युच्चार्य ततो विद्वान् पुष्पांजलिमथार्पयेत् ॥ १०६ ॥ अष्टाक्षरेण मन्त्रेण त्रिर्जप्तेनाभिमंत्रितम् ॥ उपवासफलप्रेप्सुः पिबेत्पात्रगतं जलम् ॥ १०७ ॥ दिवा निद्रां परान्नं च पुनर्भोजनमैथुने ॥ क्षौद्रं कांस्यामिषं तैलं द्वादश्यामष्ट वर्जयेत् ॥ १०८ ॥ असंभाष्यं हि संभाष्य भक्षयेत्तुलसीदलम् ॥ आमलक्याः फलं वापि पारणे प्राश्य शुद्ध्यति ॥ १०९ ॥ आमध्याह्नाच्च राजेन्द्र द्वादश्यामरुणोदये । स्नानार्चनक्रियाः कार्या दानहोमादिसंयुताः ॥ ११०

स्थित जलकूं पीवै ॥१०७॥ दिनको सोवनो, परायो अन्न, दूसरी बार भोजन, स्त्रीसंग, शहद, कांसेके पात्रमें भोजन करनो, मांस तेल ये आठ वस्तु द्वादशीके दिन वर्जित करै ॥ १०८ ॥ जे चांडाल आदि नहीं बोलने योग्य हैं तिनसों बात करिके शुद्धिके लिये तुलसीदलको भक्षण करै और आमलेके फलहू पारणमें भोजन करनेसे शुद्ध होय ॥ १०९ ॥ हे राजेंद्र ! अर्थात राजानमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर ! एकादशीके मध्याह्नसों लगाके द्वादशीके अरुणोदय समयलों दान होम आदि समेत स्नान पूजन आदि क्रिया करनी

उचित है ॥ ११० ॥ जो कहो कि, कोऊ विषम संकष्टमें आजाय तो द्वादशी केसे होय तो जल ले पारण कर ले अर्थात् जलपान कर ले तो यामें दूसरी बार भोजनको दोष नहीं लगै॥१११॥जो विष्णुपरायण नर विष्णुभक्तके मुखसों निकरी भई सुन्दर मंगलरूपी विष्णुकथाको राति दिन सुने हैं ॥ ११२ ॥ वह करोडों कल्पोंपर्यंत विष्णुलोकमें आनंद करै हैं, जो एकादशीके माहात्म्यका एक पाद अर्थात् चौथाई जो

संकष्टे विषमे प्राप्ते द्वादश्याः पारणं कथम् ॥ अद्भिस्तु पारणं कुर्यात्पुनर्भुक्तं न दोषकृत् ॥ १११ ॥ यः शृणोति दिवारात्रौ नरो विष्णुपरायणः ॥ तद्भक्तमुखनिष्पन्नां कथां विष्णोः सुमंगलाम् ॥ ११२ ॥ कल्पकोटिसमायुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ एकादश्याश्च माहात्म्यं पादमेकं शृणोति यः ॥ ११३ ॥ ब्रह्महत्यादिकं पापं नश्यते नात्र संशयः ॥ विष्णुधर्मसमं नास्ति व्रतं नाम सनातनम् ॥ ११४ ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मार्गशीर्षकृष्णैकादशीमाहात्म्यं संपूर्णम् ॥ १ ॥

कोई सुने है ताके ब्रह्महत्या आदि सब पाप दूरि हो जाय हैं यामें सन्देह नहीं । वैष्णवधर्मके समान कोई सनातन व्रत नहीं हैं ॥ ११४ ॥ इति श्रीमत्पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीटीकायां दीपिकासमाख्यायां मार्गशीर्षकृष्णैकादशीमाहात्म्यं संपूर्णम् ॥ १ ॥
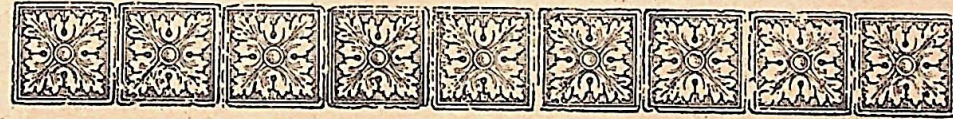
अथ मार्गशीर्षशुक्लैकादशीमोक्षदाकथायाष्टीका ॥ मार्गस्याऽपरपक्षे या मोक्षदैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां रम्यां करोम्यहम्
॥ १ ॥ युधिष्ठिर बोले—कि, साक्षात् तीनों लोकनके सुख देनहारे विश्वके स्वामी और विश्वके कर्ता पुराण पुरुषोत्तम जे प्रभु विष्णु हैं तिनको मैं
नमस्कार करो हौं ॥ १ ॥ हे देवदेवेश ! मोको बडो सन्देह है ताते मैं लोगनके हितके लिये और पापनके क्षयके निमित्त आपसे पूछौं हौं ॥ २॥

अथ मार्गशीर्षशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ वन्दे विष्णुं प्रभुं साक्षाल्लोकत्रयसुखप्रदम् ॥ विश्वेशं विश्वकर्तारं पुराणं
पुरुषोत्तमम् ॥ १ ॥ पृच्छामि देवदेवेश संशयोऽस्ति महान् मम ॥ लोकानां तु हितार्थाय पापानां च क्षयाय च ॥ २ ॥
मार्गशीर्षे सिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ कीदृशश्च विधिस्तस्याः को देवस्तत्रपूज्यते ॥ ३ ॥ एतदाचक्ष्व मे स्वामिन्
विस्तरेण यथातथम् ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सम्यक्पृष्टं त्वया राजन् साधु ते विपुलं यशः ॥ ४ ॥ कथयिष्यामि राजेन्द्र
हरिवासरमुत्तमम् ॥ उत्पन्ना सा सिते पक्षे द्वादशी मम वल्लभा ॥ ५ ॥

कि मार्गशिर महीनाके शुक्लपक्षकी एकादशीको कहा नाम है वाकी विधि कैसी है और वामें कौनसे देवताकी पूजा करी जाय ॥ ३॥ हे स्वामिन्
यह मोसों विस्तारपूर्वक आप यथार्थ वर्णन करिये. श्रीभगवान् बोले—कि, हे राजन्! तुमतो अच्छे प्रश्न किये याहीते तुम्हारो यश संसारमें भली भाँति
विख्यात है हे राजाधिराज ! मैं तुमसों उत्तम हरिवासर कहागो मार्गशिरके शुक्लपक्षमें उत्पन्ना नाम एकादशी मोको अति प्यारी है ॥ ५ ॥

हे राजन्! पहले मुर नाम असुरके बधके लिये मार्गशिर महीनेमें हमारे देहसों उत्पन्न है ताते मेरीप्यारी विख्यात हैं ॥ ६ ॥ हे राजन श्रेष्ठ ! तुम्हारे आगे मैंने चराचर त्रैलोक्यके कल्याणके अर्थ पहले यह एकादशी कही ॥ ७ ॥ हे राजन्! मार्गशिरके शुक्लपक्षमें याकी उत्पत्ति भई ताते याको नाम उत्पन्ना भयो याते परे अब मैं मार्गशिरके शुक्लपक्षकी एकादशी कहोंगो ॥८॥ जाके सुननेहीसों वाजपेय यज्ञको फल प्राप्त होय हैं । मोक्षा नामसों

मार्गशीर्षे समुत्पन्ना मम देहान्नराधिप ॥ मुरासुरवधार्थाय प्रख्याता मम वल्लभा ॥ ६ ॥ कथिता सा मया चैव त्वदग्रे राजसत्तम ॥ पूर्वमेकादशी राजँस्त्रैलोक्ये सचराचर ॥ ७ ॥ मार्गशीर्षे सिते पक्षे चोत्पत्तिरिति नामतः ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि मार्गशीर्षे सिता तथा ॥ ८ ॥ तस्याः श्रवणमात्रेण वाजपेयफलं भवेत् ॥ मोक्षा नाम्नीति विख्याता सर्वपापहरा परा ॥ ९ ॥ देवं दामोदरं तस्यां पूजयेच्च प्रयत्नतः॥तुलस्या मंजरीभिश्च धूपदीपैर्मनोरमैः॥१०॥ शृणु राजेन्द्र वक्ष्यामि कथां पौराणिकीं शुभाम् ॥ अधोगतिं गता ये वै पितृमातृसुतादयः॥११॥अस्याः पुण्यप्रभावेण स्वर्गं यांति न संशयः ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्महिमानं शृणुष्व तम् ॥ १२ ॥ चम्पके नगरे रम्ये वैष्णवैःसुविभूषिते ॥ वैखानसेति राजर्षिः पुत्रवत्पालयन्प्रजाः ॥ १३ ॥

विख्यात है और सब पापनकी हरनवारी है ॥९॥ वामें यत्नसों दामोदर देवको पूजन तुलसीकी मंजरी और सुन्दर धूप दीपमों करें ॥ ॥ १० ॥ हे राजाधिराज ! सुनो मैं पुराणकी सुन्दर कथा कहागो जे पिता माता और पुत्र आदि अधोगति अर्थात् नरकमें प्राप्त हैं ॥ ११॥ वे या एकादशीके पुण्यप्रभावसों स्वर्गको जायँगे यामें संदेह नहीं है । हे राजन् ! या कारणसों याकी वा महिमाको सुनो ॥१२॥ वैष्णवों करिकै

शोभित चंपकनाम नगरमें पुत्रके समान प्रजापालनमें तत्पर वैखानस राजर्षि होत भयो ॥ १३ ॥ वा नगरमें चारो वेदनके जाननेहारे ब्राह्मण बसते हैं या प्रकार राज्य करतो भयो वह राजा स्वप्नके मध्य ॥ १४ ॥ अपने पिताको नगरमें गयो देखत भयो ऐसे वाहि देखिके विस्मय करके उत्फुल्ल हैं नेत्र जाके ऐसो होते भयो ॥ १५ ॥ और ब्राह्मणोंके आगे स्वप्नको वृत्तांत कहत भयो. राजा बोले—कि, हेब्राह्मणो

द्विजाश्च न्यवसंस्तत्र ॥ चतुर्वेदपरायणाः ॥ एवं स राज्यं कुर्वाणो रात्रौ तु स्वप्नमध्यतः ॥१४॥ ददर्श जनकं स्वं तु अधोयोनि गतं नृपः ॥ एवं दृष्ट्वा तु तं तत्र विस्मयोत्फुल्ललोचनः॥१५॥ कथयामास वृत्तान्तं द्विजाग्रे स्वप्नसंभवम् ॥ राजोवाच॥मया तु स्वपिता दृष्टो नरके पतितो द्विजाः ॥ तारयस्वेनि मां तात अधोयोनिगतं सुत ॥ १६ ॥ इति ब्रुवाणः स तदा मया दृष्टः पिता स्वयम् ॥ तदाप्रभृति भो विप्रा नाहं शर्म लभाम्यहो ॥ १७॥ एतद्राज्यं मम महदसह्यमसुखं तदा ॥ अश्वा गजा रथाश्चैव मे रोचंते न सर्वथा ॥ १८ ॥ न कोशोऽपि सुखायेति न किंचित्सुखदं मम ॥ न दारा न सुता मह्यं रोचन्ते द्विजसत्तमाः ॥ १९ ॥

मैंने अपनो पिता नरकमें परचो भयो देखो है और पिताने कही कि, हे पुत्र ! नरकमें परचो भयो जो मैं हौं ताको तारो ॥१६॥ ऐसे कहते भये! वे पिता मैंने आप देखे हैं हे ब्राह्मणो ! तबते लगाके मोको सुखकी प्राप्ति नहीं है ॥१७॥ यह मेरो बडो राज्य मोको असह्य लगै है और सुख देनहारो नहीं है, घोडे हाथी रथ ये सब मोको नहीं रुचै हैं ॥ १८ ॥ खजानो मोको सुखदायी नहीं है कोउ वस्तु मोको सुख देनेहारी नहीं है

हे ब्राह्मणो ! मोको स्त्री पुत्र कोऊ नहीं रुचे हैं॥१९॥कहा करौं कहां जाऊं यहीं मेरो शरीर जररहा है जो कोई दान तप व्रत योग ऐसा बताओ जाते मेरो पितृनको मोक्ष हो॥२०॥हेब्राह्मणो! जाते उनको मोक्ष होय ऐसो उपाय मोको बताओ बलवान् वा पुत्रके जीवनसो कौन फलहैं॥२१॥ जाको पिता नरकमें परो है ताको जन्म निरर्थक है- ब्राह्मण बोले—कि, हेराजन् ! यहाँ पर्वतमुनिको आश्रम निकट है॥२२॥हे राजशार्दूल! वहीं

किं करोमि क्व गच्छामि शरीरं मे सु दह्यते ॥दानं व्रतं तपो योगो येनैव मम पूर्वजाः ॥ २० ॥ मोक्षमायांति विप्रेन्द्रास्तदेव कथयंतु मे ॥ किं तेन जीवता लोके सुपुत्रेण बलीयसा ॥ २१ ॥ पिता तु यस्य नरके तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ ब्राह्मणा ऊचुः॥ पर्वतस्य मुनेरत्र आश्रमो निकटे नृप॥ २२ ॥ गम्यतां राजशार्दूल भूतं भव्य त्रिजानतः॥तेषां श्रुत्वा ततो वाक्यं वैखानो राज सत्तमः ॥ २३ ॥ जगाम तत्र यत्राऽसौ आश्रमे पर्वतो मुनिः ॥ ब्राह्मणैर्वेष्टितः शांतैः प्रजाभिश्च समंततः ॥ २४ ॥ आश्रमो विपुल स्तस्य मुनिभिः सन्निषेवितः ॥ ऋग्वेदिभिर्याजुषैश्च सामाथर्वणकोविदैः ॥ २५ ॥ वेष्टितो मुनिभिस्तत्र द्वितीय इव पद्मजः॥ दृष्ट्वा तं मुनिशार्दूलं राजा वैखानसस्तदा ॥२६॥जगाम चावनिं मूर्ध्ना दंडवत्प्रणनाम च॥पप्रच्छ कुशलं तस्य सप्तस्वंगेष्वसौ मुनिः॥२७॥

जाओ वे भूत भविष्य सब जाने हैं उनको वह वचन वैखानस राजाने सुना ॥२३॥ तब वहां शांतस्वरूप ब्राह्मणों और प्रजाकरि वेष्टित राजा जातो भयो ॥२४॥ वह उन मुनिको बडो आश्रम ऋग्वेदी, यजुर्वेदी सामवेदी और अथर्ववेदमें चतुर ब्राह्मणनकरि सेवन किया है ॥ २५ ॥ वहां मुनीश्वरों करिके वेष्टित पर्वतमुनि दूसरे ब्रह्माके समान बैठे हैं ऐसे पर्वतमुनिको वह वैखानस राजा वा समय देखत भयो॥२६॥तब मस्तक नवा

भूमिमें परिके दंडवत्प्रणाम करतो भयो और मुनिने वाके राज्यके सातों अंगनमें कुशल पूंछी॥२७॥राज्यको निष्कंटक होनो और सुख होनो पूछो राजा बोले—कि,भो विप्र! तुम्हारे प्रसादसों मेरे सातों अंगनमें कुशलहै॥२८॥सबरे ऐश्वर्यके अनुकूल होने पैहू कोऊ विघ्न आय गयो है हे ब्रह्मन्! मोकूं यह संदेह है ताते मैं आपसे पूछवे आयो हौं॥२९॥पर्वतमुनि ध्यानसूं नेत्रको निश्चल करि जो होगयोहै और जो जो होगया ताको चिंतवन

राज्ये निष्कण्टकत्वं च राजसौख्यसमन्वितम्॥राजोवाच॥ तव प्रसादाद्ब्रो विप्र कुशलं मेऽङ्गसप्तके ॥ २८ ॥ विभवेष्वनुकूलेषु कश्चिद्विघ्न उपस्थितः ॥ एतन्मे संशयं ब्रह्मन् प्रष्टुं त्वां च समागतः ॥ २९ ॥ एवं श्रुत्वा नृपवचः पर्वतो मुनिसत्तमः ॥ ध्यानस्तिमितनेत्रोऽसौ भूतं भव्यं व्यचिंतयत् ॥ ३० ॥ मुहूर्त्तमेकं ध्यात्वा च प्रत्युवाच नृपोत्तमम् ॥ मुनिरुवाच ॥ जानेऽहं तव राजेन्द्र पितुः पापं विकर्मणः ॥ ३१ ॥ पूर्वजन्मनि ते पित्रा सपत्नीकृतद्वेषतः ॥ कामासक्तेन चैकत्र ऋतुभंगः कृतः स्त्रियाः ॥ ३२ ॥ त्राहि देहीति जल्पंत्या ऋतुदानं नराधिप ॥ तेन वै तव पित्रा तु न दत्तो ऋतुराग्रहात् ॥ ३३ ॥

करत भयो॥३०॥फिरि एक मुहूर्तभरि ध्यान करिके राजासूं बोलत भये.मुनि बोले—कि, हेराजेन्द्र!मैंने तुम्हारे कुकर्मी पिताके पापको जान लिया ॥ ३१ ॥ पूर्वजन्ममें तुम्हारे पिताने काममें आसक्त होके सौतिके द्वेषोंसों एक समय एक स्त्रीको ऋतुभंग कियो अर्थात् ऋतुसमयमें वाके समीप न गयो ॥३२॥ हे नराधिप ! रक्षा करो ऋतुदान दो वह ऐसे कहती रही परन्तु उस तुम्हारे पिताने आग्रहसों वाको ऋतुदान न कियो ॥३३॥

ताहि कर्म करिके तुम्हारे पिता नरकमें परो है. राजा बोले–कि हे मुनि ! कौनसो व्रत अथवा दानसों वाको मोक्ष होय ॥ ३४ ॥ पापयुक्त या नरकते कैसे बचै सो आपसो पूछतो जो मैं हूं तासों कहो । मुनि बोले–कि, मार्गशिर महीना शुक्लपक्षमें मोक्षा नाम हरिकी तिथि होय है ॥ ३५ ॥ तुम सब या एकादशीको व्रत करके पिताको अर्ध पुण्य दान करो वा पुण्यप्रभावसों तुम्हारे पिताको मोक्ष हो जायगो ॥ ३६ ॥ ता पीछे मुनिको

कर्मणा तेन सततं नरके पतितो ह्ययम् ॥ राजोवाच ॥ केन वै व्रतदानेन मोक्षस्तस्य भवेन्मुने ॥ ३४ ॥ निरयात्पापसंयुक्तात्तन्ममाचक्ष्व पृच्छतः ॥ मुनिरुवाच ॥ मार्गशीर्षे सिते पक्षे मोक्षा नाम्नी हरेस्तिथिः ॥ ३५ ॥ सर्वैस्तु तद्व्रतं कृत्वा पित्रे पुण्यं प्रदीयताम् ॥ तस्याः पुण्यप्रभावेण मोक्षस्तस्य भविष्यति ॥ ३६ ॥ मुनेर्वाक्यं ततः श्रुत्वा नृपः स्वगृहमागतः ॥ आग्रहायणिकीं कृच्छ्रात्प्राप्तो भरतसत्तम ॥ ३७ ॥ अंतःपुरचरैस्सर्वैः पुत्रदारैस्तथा नृपः ॥ व्रतं कृत्वा विधानेन पुण्यं दत्त्वा नृपाय तत् ॥ ३८ ॥ तस्मिन्दत्ते तदा पुण्ये पुष्पवृष्टिरभूद्दिवः ॥ वैखानसपिता तेन गतः स्वर्गं स्तुतो गणैः ॥ ३९ ॥ राजानमंतरिक्षाच्च शुद्धां गिरमभाषत ॥ स्वस्त्यस्तु ते पुत्रसदेत्युक्त्वा स त्रिदिवं गतः ॥ ४० ॥

वचन सुनिके राजा अपने घरको आयो ! हे भरतवंशमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर ! वह बडे कष्टसों अगहनकी एकादशीको प्राप्त होतो भयो ॥ ३७ ॥ सब रनवासको सेवकन और पुत्र स्त्रीसमेत राजाने विधिसों व्रत करके वाको पुण्य अपने पिताको दीनो ॥ ३८ ॥ तब वा पुण्यके देनेमें आकाशते फूलनकी वर्षा होत भई वा पुण्य करिके देवतानकरि स्तुति कियो गयो वैखानस राजाको पिता स्वर्गको जातो भयो ॥ ३९ ॥ और आकाशते राजासों

शुद्ध वाणी बोलत भयो–कि, हे पुत्र ! तुम्हारो सदा कल्याण होय ऐसे कहिके स्वर्गको जातो भयो ॥४०॥ हेराजन् ! या प्रकार जो या मोक्षदा नाम एकादशी व्रत करै है वाको पाप क्षीण होय और वह अन्तसमयमें मोक्षको प्राप्त होय है ॥४१॥ याते परे और कोई मोक्षकी देनहारी

एवं यः कुरुते राजान्मोक्षदैकादशीमिमाम् ॥ तस्य पापं क्षयं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ४१ ॥ नातः परतरा काचिन्मोक्षदा विमला शुभा ॥ पुण्यसंख्यां तु राजेन्द्र न जानेऽहं तु यैः कृताः ॥ ४२ ॥ चिन्तामणिसमा ह्येषा स्वर्गमोक्षप्रदायिनी ॥ ४३ ॥ इति श्रीब्रह्मांड पुराणे मार्गशीर्षशुक्लैकादश्या मोक्षदानाम्न्या माहात्म्यं समाप्तम् ॥ २॥

निर्मल तथा शुभ नहीं है और जिन करिके वाको व्रत कियो गयो है हे राजेन्द्र ! उनके पुण्यकी संख्याको मैं नहीं जानूं हूं ॥४२॥ स्वर्ग और मोक्षकी देनहारी यह एकादशी चिंतामणिके समान है ॥४३॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यटीकायां दीपिकासमाख्यायां मार्गशीर्षशुक्लैकाशीभाषाव्याख्या समाप्ता ॥ २ ॥

पौषस्यासितपक्षे या सफलैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायांटीकां कुर्वे सुदीपिकाम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले—कि, हे कृष्ण महाराज ! पौषके कृष्णपक्षमें कौनसी एकादशी होय है वाको कहा नाम हैं और कहा विधि है और वामें कौनसे देवताको पूजन होय है ॥ १ ॥ हे स्वामी जनार्दन! वह सब मोसों विस्तार करके कहो. श्रीकृष्ण बोले—कि, हे राजेन्द्र! मैं तुम्हारे स्नेहके कारण कहौंगो॥२॥अधिक है दक्षिणा जिनमें ऐसे

अथ पौषकृष्णसफलैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ पौषस्य कृष्णपक्षे तु केयमेकादशी भवेत् ॥ किं नामको विधिस्तस्याः को देवस्तत्र पूज्यते ॥ १ ॥ एतदाचक्ष्व मे स्वामिन् विस्तरेण जनार्दन ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ कथयिष्यामि राजेन्द्र भवतः स्नेहकारणात् ॥ २ ॥ तथा तुष्टिर्न मे राजन् क्रतुभिश्चाप्तदक्षिणैः ॥ यथा तुष्टिर्भवेन्मह्यमेकादश्या व्रतेन वै ॥ ३ ॥ तस्मात्सर्व प्रयत्नेन कर्तव्यो हरिवासरः ॥ पौषस्य कृष्णपक्षे तु द्वादशी या भवेन्नृप ॥ ४ ॥ तस्याश्चैव च माहात्म्यं शृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ गदिता याश्च वै राजन्नेकादश्यो भवंति हि ॥ ५ ॥ तासामपि हि सर्वासां विकल्पं नैव कारयेत् ॥ एकादश्यास्तथाप्यस्याः शृणु राजन् कथान्तरम् ॥ ६ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि पौषस्यैकादशीं तव ॥ लोकानां च हितार्थाय कथयिष्ये विधिं तव ॥ ७ ॥

यज्ञनसों मैं वसो प्रसन्न नहीं होऊं हौं जसों मैं एकादशीके व्रतसे प्रसन्न होऊं हौं॥३॥ताते सम्पूर्ण यत्ननसोंहरिवासरको व्रत करनो चाहिये पौषके कृष्णपक्षम जो द्वादशीसंयुक्त एकादशी होयहैं॥४॥ताको माहात्म्य तुम एकाग्रचित्त होके सुनो संपूर्णमहिनानमें जो एकादशी होयहैं॥५॥उन सबनमों विकल्प नहीं करनो चाहिये हे राजन् ! ताहूपै या एकादशीकी दूसरी कथा सुनो ॥ ६ ॥ या पीछे अब मैं तुमसो एकादशी कहौं हौं और

लोकनके हितके लिये बिधिको तुमसों कहौंगो ॥७॥ पौषके कृष्णपक्षमें सफला नाम एकादशी होयह याके अधिदेवता नारायणहैं उनका यत्नसों पूजन करैं॥८॥हे राजन्! यह विधिसों मनुष्यन करि एकादशी करनी चाहिये नागनमें जैसे शेष श्रेष्ठ है और पक्षिनमें जैसे गरुण श्रेष्ठ हैं ॥९॥ जैसे यज्ञमें अश्वमेध श्रेष्ठ है और नदीमें गंगाजी श्रेष्ठ हैं हे राजन्! वैसेही सब व्रतमें एकादशी तिथि श्रेष्ठ है ॥१०॥ हे भरतवंशमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर!

पौषस्य कृष्णपक्षे या सफला नाम नामतः ॥ नारायणोऽधिदेवोऽस्याः पूजयेत्तं प्रयत्नतः ॥ ८ ॥ पूर्वेण विधिना राजन् कर्तव्यै कादशी जनैः ॥ नागानां च यथा शेषः पक्षिणां गरुडो यथा ॥ ९ ॥ यथाश्वमेधो यज्ञानां नदीनां जाह्नवी यथा ॥ व्रतानां च तथा राजन्प्रवरैकादशी तिथिः ॥ १० ॥ ते जना भरतश्रेष्ठ मम पूज्याश्च सर्वशः॥हरिवासरसंयुक्ता वर्तन्ते ये जना भृशम्॥११॥ सफला नाम या प्रोक्ता तस्याः पूजाविधिं शृणु ॥ फलैर्मां पूजयेत्तत्र कालदेशोद्भवैः शुभैः ॥ १२ ॥ नारिकेलफलैः शुद्धै स्तथा वै बीजपूरकैः। जम्बीरैर्दाडिमैश्चैव तथा पूगीफलैरपि ॥ १३ ॥ लवंगैर्विविधैश्चान्यैस्तथा चाम्रफलादिभिः ॥ पूजये द्देवदेवेशं धूपैर्दीपैर्यथाक्रमम् ॥ १४ ॥

वे जन मोको सर्वथा पूज्य हैं जे सदैव हरिवासर करिके युक्त रहे हैं अर्थात् एकादशीको व्रत करै हैं ॥११॥ सफला नाम जो एकादशी कही है ताकी पूजाकी विधि सुनो समयमें और देशमें उत्पन्नभये जे सुन्दर फल हैं तिनसों या एकादशीदिन मेरे पूजन करै ॥ १२ ॥ शुद्ध नारियलके फलनकरिके तैसे बिजौरनसों जंभीरिनसों और अनारनसों औ सुपारिनसों मेरो पूजन करै ॥ १३ ॥ लौंगनकरिके तथा आम आदि और

नानाप्रकारके फलन करिके और धूप दीपसों यथाक्रम देवदेवेश जो भगवान् विष्णु हैं तिनको पूजन करै॥१४॥सफलामें विशेष करिके दीपदान कहो है और रात्रिमें यत्नसों जागरण करने योग्य है ॥१५। जबलों नेत्र खुले रहैं तबलों जो एकाग्र मन हौके जागरण करे है वाके पुण्यको सुनिये ॥१६॥ वाके समान न यज्ञ हैं न तीर्थ ह और हे राजन् ! वाके समान या लोकमें कोई व्रत नहीं हैं ॥ १७ ॥ पांच हजार वर्षलों तप

सफलायां दीपदानं विशेषेण प्रकीर्तितम् ॥ रात्रौ जागरणं तत्र कर्तव्यं च प्रयत्नतः ॥ १५ ॥ यावदुन्मीलयेन्नेत्रं तावज्जागर्ति यो निशि ॥ एकाग्रमानसो भूत्वा तस्य पुण्यं शृणुष्व तत् ॥ १६ ॥ तत्समो नास्ति वै यज्ञस्तीर्थं तत्सदृशं न हि ॥ तत्समं न व्रतं किंचिदिह लोके नराधिप ॥ १७ ॥ पञ्चवर्षसहस्राणि तपस्तप्त्वा च यत्फलम् ॥ तत्फलं समवाप्नोति सफलाया व्रतेन वै ॥ १८ ॥ श्रूयतां राजशार्दूल सफलायाः कथानकम् ॥ चम्पावतीति विख्याता पुरी माहिष्मतस्य च ॥ १९ ॥ माहिष्मतस्य राजर्षेश्चत्वारश्चाभवन्सुताः ॥ तेषां मध्ये तु यो ज्येष्ठः स महापापसंयुतः ॥ २० ॥ परदाराभिगामी च वेश्यासंगरतः सदा ॥ पितुर्द्रव्यं स पापिष्ठो गमयामास सर्वशः ॥ २१ ॥

करनेसों जो फल होय हैं वा फलको सफलाका व्रत करनेसों प्राप्त होय है ॥१८॥ हे राजशार्दूल ! सफलाकी कथा सुनिये–माहिष्मत राजाकी चम्पावती नाम पुरी विख्यात है ॥१९॥ माहिष्मत नाम राजर्षिके चार पुत्र होत भये उनमें जो जेठो होय वह बडो पापी हो ॥ २० ॥ पराई स्त्रियनसों गमन करै हो सदा वेश्यानके संगमें रत रहतो हो वह पापी पिताके द्रव्यको सब भांति बिगार देत भयो ॥ २१ ॥

यह सदा खोटी वृत्तिमें लगो रहतो और देवतानकी तथा ब्राह्मणनकी निंदा करतो और वह निश्चय करके सदा वैष्णवनको रऔदेववानकी निन्दामें रत रहतो ॥२२॥ तब माहिष्मत राजा ऐसे पुत्रको देख बहुत क्रोधित होके वाको नाम लुम्पक धरत भये ॥ २३ ॥ वा पिताकरके और बंधुनकरिके वह राज्यते निकारो गयो और राजाके भयते सब कुटुंबके मनुष्यनकरिके त्याग कियो गयो ॥२४॥ तब सब भाईबन्धुनकरि

असद्वृत्तिरतो नित्यं देवताद्विजनिन्दकः ॥ वैष्णवानां च देवानां नित्यं निंदारतः स वै ॥२२॥ ईदृग्विधं तदा दृष्ट्वा पुत्रं माहिष्मतो नृपः ॥ नाम्ना स वै लुंपकं तु कृतवानत्यमर्षितः ॥२३॥ राजान्निष्कासितस्तेन पित्रा चैवापि बन्धुभिः ॥ परिवारजनैः सर्वैस्त्यक्तो राज्ञो भयादिति ॥ २४ ॥ लुंपकोऽपि तदा त्यक्तश्चिन्तयामास एकलः ॥ मयाऽत्र किं प्रकर्त्तव्यं त्यक्तः पित्रा च बांधवैः ॥ २५ ॥ इति चिंतापरो भूत्वा मतिं पापे तदाकरोत् ॥ मया तु गमनं कार्यं वन त्यक्त्वा पुरीं पितुः ॥ २६ ॥ दिवा वने चरिष्यामि रात्रावपि पितुः पुरः ॥ तस्माद्धनात्पितुः सर्वं व्यापयिष्ये पुरं निशि ॥ २७ ॥ इत्येवं स मतिं कृत्वा लुंपको दैवपातितः ॥ निर्जगाम पुरात्तस्माद्गतोऽसौ गहनं वनम् ॥२८॥

त्याग कियो गयो वह लुम्पक अकेले होके सोच करत भयो कि, पिता और बन्धुकरिके त्याग कियो म अब कहा करौ ॥ २५ ॥ या प्रकार चिन्तामें तत्पर हो तब पापमें मति करत भयो और मनमें बिचार कियो कि, मैं अब पिताकी पुरीको छोडके बनको जाऊं हौं॥२६॥ दिन भर वनमै विचरोंगो और रात्रिमें पिताके पुरमें जाऊगो और वा बनसूं आइके सब नगरमें चोरी आदिके उपद्रव रात्रिमें करोगो ॥ २७ ॥ दैवकरि

पतित कियो गयो वह लुम्पक मनमें या प्रकार सोचिके वा पुरीते निकरिजात भयो और यह घने बनमें जात भयो ॥ २८ ॥ नित्यही जीवनके मारता और सदा चोरी करतो और वा पापीने सबेरे वनचर मूसी लिये ॥२९॥ और जो पकरोभी जातो तो लोग वाहि महिष्मत राजाके डरते छोडि देते वह पापी जन्मांतरके पापसू राज्यते भ्रष्ट भयो ॥३०॥ नित्यही मांस खातो अथवा फल खातो परन्तु वाको स्थान वासुदेव भगवानको

जीवघातकरो नित्यं नित्यं स्तेयपरायणः ॥ सर्वं वनचरं तेन मुषितं पापकर्मणा ॥ २९ ॥ गृहीतश्च परित्यक्तो राज्ञो माहिष्मतेर्भयात् ॥ जन्मांतरीयपापेन राज्यभ्रष्टः स पापकृत ॥ ३० ॥ आमिषाभिरतो नित्यं नित्यं वै फलभक्षकः ॥ आश्रमस्तस्य दुष्टस्य वासुदेवस्य संमतः ॥ ३१ ॥ अश्वत्थो वर्तते तत्र जीर्णो बहुलवार्षिकः ॥ देवत्वं तस्य वृक्षस्य वर्तते तद्वने महत् ॥३२॥ तत्रैव निवसंश्चासौ लुंपकः पापबुद्धिमान् ॥ एवं कालक्रमेणैव वसतस्तस्य पापिनः ॥ ३३ ॥ दुष्कर्मनिरतस्यास्य कुर्वतः कर्म निन्दितम् ॥ पौषस्य कृष्णपक्षे तु संप्राप्तं सफलादिनम् ॥ ३४ ॥

सम्मत हो ॥ ३१ ॥ वहां बहुत वर्षको पुरानो एक पीपरको वृक्ष हो बनमें उस पीपरको बडोभारी देवतापन बन वर्त्तमान हो अर्थात् वाहि सब देवता करिके मानत हैं । ३२॥ वहांही यह पापी लुम्पक निवास करतो हो ऐसो कालके क्रमसों वह पापी वहां बहुत वर्षोंतक बसतो भयो ॥३३॥बुरे कर्मनमें लागो भयो और निन्दित काम करनहारो जो लुम्पक हो ताके उद्धार करिवेकूं पौषके कृष्णपक्षकी सफला नाम एकादशी

दिन आवत भयो॥ ३४ ॥हे राजा युधिष्ठिर ! दशमीके दिन रात्रिमें वस्त्रनके विना जाडेके मारे दुःखी वह लुम्पक वा समय चेष्टारहित अर्थात जडसो हो जात भयो ॥ ३५॥ पीपरके समीप जाडेसूं दुःखी रह लुम्पक नींदके सुखको न प्राप्त होत भयो और मरे भयेके समान हो जात भयो ॥ ३६ ॥ और दांतनसो दांत बजातो भयो वाने राति काटी और सूर्यनारायणके उदय होनेहूपै वह लुम्पक चैतन्य न होत भयो ॥ ३७ ॥

दशमीदिवसे राजन् निशायां शीतपीडितः ॥ लुम्पको वस्त्रहीनो वै निश्चेष्टो ह्यभवत्तदा ॥ ३९ ॥ पीड्यमानस्तु शीतेन अश्वत्थस्य समीपतः ॥ न निद्रा न सुखं तस्य गतप्राण इवाभवत् ॥ ३६ ॥ पीडयन्दशनैर्दन्तानेवं च गमिता निशा ॥ भानूदयेऽपि तस्याथ न संज्ञा समजायत ॥ ३७ ॥ लुम्पको गतसंज्ञस्तु सफलादिवसे तदा ॥ मध्याह्नसमये प्राप्ते संज्ञां लेभे स लुंपकः ॥ ३८ ॥ प्राप्तसंज्ञो मुहूर्तेन चोत्थितोऽसौ तदाऽऽसनात् ॥ प्रस्खलंश्च पदन्यासैः पंगुवच्चलितो मुहुः ॥ ३९ ॥ वन मध्ये गतस्तत्र क्षुत्तृषापीडितोऽभवत् ॥ न शक्तिर्जीवघातस्य लुंपकस्य दुरात्मनः ॥ ४० ॥ फलानि भूमौ पतितान्याजहार स लुंपकः ॥ यावत्स चागतस्तत्र तावदस्तमगाद्रविः ॥ ४१ ॥

ऐसे संज्ञारहित वह लुम्पक सफला एकादशीके दिन मध्याह्नके समय संज्ञा जो चैतन्यता है ताहि प्राप्त होत भयो ॥ ३८ ॥ चैतन्य होके वह लुम्पक क्षणभरमेंही आस्ते२उठत भयो और वारंवार गिरतो परतो पंगुवाकी भांति पांव धरत भयो ॥ ३९ ॥ वनके मध्यमें गयो वहां भूख प्यासतें पीडित होत भयो और वा दुष्ट लुम्पकको जीवनको मारिवेकी शक्ति नहीं रही ॥४०॥ तब वह लुम्पक भूमिमें परे भये फलनको लावत

भयो और जबताईं वह अपने स्थानमें आवे तबताईं सूर्य अस्त होत भये॥४१॥हाय बाप कहा होयगो ऐसो कहि कहि अतिदुःखित हो बारंबार विलाप करत भयो और उन सब फलनको वृक्षकी जरमें धरि देत भयो ॥ ४२ ॥ और यह कहत भयो कि, इन फलसूं भगवान् विष्णु प्रसन्न होयँ ऐसे कहि वह लुम्पक बठो रहो रात्रिमें वाको नींद नहीं आई ॥४३॥ वा जागनेसा वाको जागरण होगयो और भगवान् मधुसूदनने फलको

किं भविष्यति तातेति विललापातिदुःखितः ॥ फलानि तानि सर्वाणि वृक्षमूले न्यवेदयत् ॥ ४२ ॥ प्रत्युवाच फलैरेभिः प्रीयतां भगवान्हरिः ॥ उपविष्टो लुंपकश्च निद्रां लेभे न वै निशि ॥ ४३ ॥ तेन जागरणं जातं भगवान्मधुसूदनः फलानां पूजनं मेने सफलायास्तथा व्रतम् ॥ ४४ ॥ कृतमेवं लुंपकेन ह्यकस्माद्व्रतमुत्तमम् ॥ तेन व्रतप्रभावेण प्राप्तं राज्यमकण्टकम् ॥ ४५ ॥ पुण्यांकुरोदयाद्राजन् यथा प्राप्तं तथा शृणु ॥ रवेरुदयवेलायां दिव्योऽश्वश्चाजगाम ह ॥ ४६ ॥ दिव्यवस्तुपरीवारो लुपकस्य समीपतः ॥ तस्थौ स तुरगो राजन्वागुवाचाऽशरीरिणी ॥ ४७ ॥ प्राप्नुहि त्वं नृपसुत स्वं राज्यं हतकण्टकम् ॥ वासुदेवप्रसादेन सफलायाः प्रभावतः ॥ ४८ ॥

पूजन तथा सफलाको व्रत मान लियो ॥४४॥ एसो वा लुम्पक कर् आकस्मात् उत्तम व्रत कियो गयो वा व्रतके प्रभावसों वाने निष्कंटक राज्य पायो ॥ ४५ ॥ हे राजन् ! पुण्यको अकुर उदय होनेसू जसे वाने राज्य पायो सो सुनो कि, सूय उदय समय एक दिव्य घोडा वहां आवत भयो ॥ ४६ ॥ और दिव्य वस्तुनसा शोभित वह घोडा लुम्पकके समीप आयके ठाढ़ो होत भयो वा समय आकाशवाणी हो ॥ ४७ ॥ कि, हे राजाके पुत्र !

वासुदेवके प्रसादसों और सफलाके प्रभावसों तुम अपने निष्कंटक राज्यको प्राप्त हो ॥ ४८ ॥ तुम पिताके समीप जाओ और निष्कंटक अपनो राज्य भोगो ' तथास्तु ' ऐसे कहिके वह लुम्पक दिव्यरूपको धारण करत भयो ॥ ४९ ॥ और वाकी वैष्णवी परम मति श्रीकृष्णजीमें होत भई तब दिव्य आभरणकी शोभाकरिके युक्त वह लुम्पक पिताको प्रणाम करिके घरमें रहत भयो॥५०॥ता पीछे पिताने वा वैष्णवको निष्कंटक राज्य

पितुः समीपं गच्छ त्वं भुङ्क्ष्व राज्यमकंटकम् ॥ तथेत्युक्त्वा त्वसौ तत्र दिव्यरूपधरोऽभवत्॥ ४९ ॥ कृष्णे मतिश्च तस्यासीत् परमा वैष्णवी तथा ॥ दिव्याभरणशोभाढ्यस्तात नत्वा स्थितो गृहे ॥ ५० ॥ वैष्णवाय ततो दत्तं पित्रा राज्यमकण्टकम् ॥ कृतं राज्यं तु तेनैव वर्षाणि सुबहून्यपि ॥ ५१ ॥ हरिवासरसंलीनो विष्णुभक्तिरतः सदा ॥ मनोज्ञास्तस्य पुत्राः स्युर्दाराः कृष्णप्रसादतः ॥ ५२ ॥ ततः स वार्धके प्राप्ते राज्ये पुत्रं निवेश्य च ॥ वनं गतः संयतात्मा विष्णुभक्तिपरायणः ॥ ५३ ॥ साधयित्वा तथात्मानं विष्णुलोकं जगाम ह ॥ गतः कृष्णस्य सानिध्ये यत्र गत्वा न शोचति ॥ ५४ ॥

दियो और वाने बहुत वर्षला राज्य कीनों॥५१॥वह हरिवासर जो एकादशीहै तामें लीन और सदा विष्णुभक्तिमें रत होत भयो और कृष्णकी भक्तिके प्रसादसे वाके मनोहर चारि पुत्र और स्त्री होत भई ॥ ५२ ॥ ता पीछे वह वृद्ध अवस्था आनेके समय पुत्रको राज्यमें स्थापित करि जितेन्द्रिय और कृष्णभक्तिमें परायण होके वनको जात भयो ॥ ५३ ॥ और आत्माको साधन करिके विष्णुलोकको जात भयो और वहां

कृष्णके समीप गयो जहां जायके फिर सोच नहीं रहैहै ॥ ५४ ॥ या प्रकार जे सफला एकादशीको व्रत करे हैं वे या लोकमें सुख पाइके निःसन्देह मोक्षकूं प्राप्त होयँगे ॥५५॥ वे मनुष्य संसारमें धन्य हैं जे सफलाको व्रत करे हैं वे वाही जन्ममें मोक्षको प्राप्त होयँगे यामें सन्देह नहीं

एवं ये वै प्रकुर्वति सफलैकादशीव्रतम् ॥ इह लोके यशः प्राप्य मोक्षं यास्यंत्यसंशयम् ॥ ५५ ॥ धन्यास्ते मानवा लोके सफला व्रतकारिणः ॥ तस्मिञ्जन्मनि ते मोक्षं लभन्ते नात्र संशयः ॥ ५६ ॥ सफलायाश्च माहात्म्यश्रवणाद्धि विशांपते ॥ राजसूयफलं प्राप्य वसेत्स्वर्गे च मानवः ॥ ५७ ॥ इति श्रीपौषकृष्णैकादश्याः सफलानाम्न्या माहात्म्यं सम्पूर्णम् ॥ ३ ॥

है॥५६॥हे राजन् ! सफलाकोमाहात्म्य सुनिवेते मनुष्य राजसूय यज्ञको फल प्राप्त हो स्वर्गमें वास करै है॥५७॥इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनय-पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदीकृतायामेकादशीमाहात्म्यटीकायां दीपिकासमाख्यायां पौषकृष्णैकादशीभाषाव्याख्या समाप्ता ॥ ३ ॥

अथ पौषशुक्लैकादशीमाहात्म्यम्॥अथ पौषस्य शुक्ले या पुत्रदैकादशी स्मृता॥तन्माहात्म्यस्य भाषायां दीपिकां प्रतनोम्यहम्।युधिष्ठिर बोले-कि,हे महा राज कृष्ण!तुमने शुभ सफलानाम एकादशी कही अब प्रसन्नतासों पौषमासके शुक्लपक्षकी जो एकादशी होय है ताहि कहिये॥ १ ॥वाको कहा नामहैऔर वाकी विधि कहाहैऔर वामें कौनसे देवकी पुजा होयहै और हृषीकेश पुरुषोत्तम आप कौनके ऊपर प्रसन्न भये सो सब कथा कहिये॥ २॥श्रीकृष्ण

अथ पौषशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ कथिता वै त्वया कृष्ण सफलैकादशी शुभा ॥ कथयस्व प्रसादेन शुक्ला पौषस्य या भवेत् ॥ १ ॥ किं नाम को विधिस्तस्याः को देवस्तत्र पूज्यते ॥ कस्मै तुष्टो हृषीकेशस्त्वमेव पुरुषोत्तमः ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि शुक्ला पौषस्य या भवेत् ॥ तस्या विधिं महाराज लोकानां च हिताय वै ॥ ३ ॥ पूर्वेण विधिना राजन् कर्त्तव्यैषा प्रयत्नतः ॥ पुत्रदेति च नाम्नाऽसौ सर्वपापहरा परा ॥ नारायणोऽधिदेवोऽस्याः कामदः सिद्धिदायकः ॥ ४ ॥ नातः परतरा काचित्त्रैलोक्ये सचराचरे ॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं करोति च नरं हरिः ॥ ५ ॥

बोले–कि,हे राजन् ! सुनो पौषशुक्ल पक्षकी जो एकादशी होयहै ताहि मैं कहागो और हे महारज!लोकनके हितके लिये वाकी विधिहू कहौंगो ॥ ३ ॥ हे राजन् ! पहले कही भई विधिसों याको व्रत यत्नोंसे करनो चाहिये । पुत्रदा याको नाम और सबपापनकी दूर करनहारी है और कामनाके देनेहारे और सिद्धिनके करन हारे नारायण याके देवता हैं ॥ ४ ॥ और चराचर त्रिलोकीमें याते परे कोई नहीं है और याके व्रतके

प्रभावते हरि मनुष्यको विद्यावान् तथा यशस्वी करि देते हैं ॥५॥ हे राजन् ! पापकी हरनवारी जो याकी कथा है ताहि म कहौं हौं तुम सुनो भद्रावती नाम एक पुरी है तामें सुकेतुमान् नाम एक राजा होत भयो ॥६॥ वा राजाकी शैब्या नाम रानी होत भई पुत्रनकरि हीन वा राजाने मनोरथन करिके समय व्यतीत कियो॥७॥और वह राजा वंशके चलावनहारे पुत्रको न प्राप्त होत भयो तब वाहि राजाने बहुत काललों धर्मते

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि कथां पापहरां पराम् ॥ पुरी भद्रावती नाम्नी राजा तत्र सुकेतुमान् ॥ ६ ॥ तस्य राज्ञोऽथ राज्ञी च शैब्या नाम्नीति विश्रुता ॥ पुत्रहीनेन राज्ञा च कालो नीतो मनोरथैः ॥ ७ ॥ नैवात्मजं नृपो लेभे वंशकर्त्तारमेव च ॥ तेनैव राज्ञा धर्मेण चिंतितं बहुकालतः ॥ ८ ॥ किं करोमि क्व गच्छामि सुतप्राप्तिः कथं भवेत् ॥ न राष्ट्रे न पुरे सौख्य लेभे राजा सुकेतुमान् ॥ शैब्यया कांतया सार्द्धं प्रत्यहं दुःखितोऽभवत् ॥ ९ ॥ तावुभौ दंपती नित्यं चिंताशोकपरायणौ ॥ पितरस्तु जलं दत्त कवोष्णमुपभुञ्जते ॥१०॥ राज्ञः पश्चान्न पश्यामो योऽस्मान्सन्तर्पयिष्यति ॥ इत्येवं संस्मरंतोऽस्य पितरो दुःखिनोऽभवन् ॥ तेषां तद्दुःखमूलं च ज्ञात्वा राजाप्यतप्यत ॥ ११ ॥

चिंतवन कीन्हों॥८॥कहा करौं कहां जाऊं पुत्र कसे प्राप्त होय ऐसे कहतो भयो वह राजा सुकेतुमान् देशमें और नगरमें कहूं सुखको न प्राप्त होत भयो और शैब्या नाम रानीसमेत प्रतिदिन दुःखित होत भयो ॥९ ॥ वे दोनों स्त्रीपुरुष या चिंता और शोकमें नित्यही परायण रहते कि, पितर हमारे दिये भये जलको कुछ उष्ण पान करे हैं॥१०॥कि राजाके पीछे हम काहू नहीं देखे हैं जो हमारो तर्पण करै या प्रकार स्मरण

करिके याके पितर दुःखी होत भये उनको यह दुःखको मूल जानि राजाहूं संतापको प्राप्त होत भयो॥ ११॥वाको न भाई न मित्र न मंत्री न सुहृद् रुचते और न हाथी घोडे प्यादे रुचते॥ १२॥या प्रकार वा राजाको मन निराश होगयो कि, पुत्ररहित मनुष्यनको जन्म निष्फलहै॥ १३॥ पुत्रहीन मनुष्यको घर सूनो रहै है और वाको हृदय सदा दुःखी रहै है और पुत्रके बिना पितृ देवता और मनुष्यको ऋण नहीं दूर होय है

न बांधवा न मित्राणि नामात्याः सुहृदस्तथा ॥ रोचंते तस्य भूपस्य न गजाश्वपदातयः ॥ १२ ॥ नैराश्यं भूपतेस्तस्य मनस्यैवमजायत ॥ नरस्य पुत्रहीनस्य नास्ति वै जन्मनः फलम् ॥ १३ ॥ अपुत्रस्य गृहं शून्यं हृदयं दुःखितं सदा ॥ पितृदेवमनुष्याणां नानृणत्वं सुतं विना ॥ १४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सुतमुत्पादयेन्नरः ॥ इह लोके यशस्तेषां परलोके शुभा गतिः ॥ १५ ॥ येषां तु कर्मकर्तॄणां पुण्यं जन्मशतोद्भवम् ॥ आयुरारोग्यसंपच्च तेषां गेहे प्रवर्तते ॥ १६ ॥ पुत्रपौत्राश्च लोकाश्च भवेयुः पुण्यकर्मणाम् ॥ पुण्यं विना च न प्राप्तिर्विष्णुभक्तिं विना तथा ॥ १७ ॥ पुत्राणां संपदो वापि विद्यायाश्चेति मे मतिः ॥ एवं विचिंत्यमानोऽसौ राजा शर्म न लब्धवान् ॥ १८ ॥

॥ १४॥ताते मनुष्य सब प्रकारके यत्ननसे पुत्रको उत्पन्न करे जिनके पुत्रहै उन मनुष्यनको यालोकमें सुख और परलोकमें शुभगति प्राप्त होयहै॥ १५ जिस शुभ कर्म करनेवाले मनुष्यनके सैकरन जन्मनके पुण्य होय हैं उनके घरमें आयु आरोग्य और संपत्ति सदा रहैहै॥ १६॥ पुण्य कर्म करनेवाले पुरुषनके पुत्र पौत्र और लोक ये सब होय हैं पुण्य विना और विष्णुभक्ति बिना इनकी प्राप्ति नहीं होयहै॥ १७॥पुत्रनकी संपत्ति और वियाकी

संपत्ति पूर्वजन्मके पुण्य विना नहीं मिलती है या प्रकार चिंतवन करतो भयो वह राजा सुखको न प्राप्त होतो भयो ॥ १८ ॥ प्रातःकाल तथा अर्द्धरात्रिके समय वह राजा चिंता करत भयो ता पीछे वह सुकेतुमान् अपनो विनाश विचारत भयो॥१९॥फिर वा समयमें राजा आत्मघातमें दुर्गतिको विचारिके पुत्ररहित अपनी देहको क्षीण देखत भयो॥२०॥फिरि अपनी बुद्धिसों निज हितको कारण विचार घोडेपर चढि बडे घने

प्रत्यूषेऽचिन्तयद्राजा निशीथेऽचिन्तयत्तथा ॥ ° ततश्चात्मविनाशं वै विचार्याथ सुकेतुमान् ॥ १९ ॥ आत्मघाते दुर्गतिं च चिन्तयित्वा तदा नृपः ॥ दृष्ट्वाऽऽत्मदेहं प्रक्षीणमपुत्रत्वं तथैव च ॥ २० ॥ पुनर्विचार्यात्मबुद्ध्या ह्यात्मनो हितकारणम् ॥ अश्वारूढस्ततो राजा जगाम गहनं वनम् ॥ २१ ॥ पुरोहितादयः सर्वे न जानंति गतं नृपम् ॥ गंभीरे विपिने राजा मृगपक्षि निषेविते ॥ २२ ॥ विचचार तदा तस्मिन्वने वृक्षान्विलोकयन् ॥ वटानश्वत्थबिल्वांश्च खर्जूरान् पनसांस्तथा ॥ २३ ॥ बकुलान् सप्तपर्णांश्च तिंदुकांस्तिलकानपि ॥ शालांस्तालांस्तमालांश्च ददर्श सरलान्नृपः ॥ २४ ॥ इंगुदीककुभांश्चैव श्लेष्मातक विभीतकान् ॥ शल्लकीकरमर्दांश्च पाटलान् खदिरानपि ॥ २५ ॥

वनको जात भयो॥२१॥पुरोहित आदि सब गये भये राजाको नहीं जानत भयेहैं राजा मृग और पक्षिन करके सेवन करे गये गहन वनमें गयो ॥२२॥और वा समय वा वनमें वट,पीपर, बेल, खजूर, और कटहरके वृक्षनको देखतो भयो विचारन लगो ॥ २३ ॥ और मौलसरी, सप्तपर्ण, तेंदू, तिलक, शाल, तमाल और सरल इन वृक्षनको देखत भयो ॥ २४ ॥ और हिंगोट, अर्जुन, बमेरा, शल्लकी, करोंदा, पाढल, खैर,

और वैरी इन सब वृक्षनको देखत भयो ॥२५॥ शाखा और ढाक इन सबनको राजा शोभायमान देखत भयो और मृग बाघ और सुअर सिंह तथा वानरनको देखत भयो ॥२३॥ और बाँबीसे निकरे भये सापनको देखत भयो तैसेही अपने बच्चनके साथ मिले भये मत्त जंगली हाथिनको देखत भयो ॥ २७ ॥ नील गवय, काले मृग, गौ, स्यार, शशवन, बिलाव, शल्लक, सुरागौ इन सबनको देखत भयो ॥२८ ॥ चारि दांतनके यूथप

शाखांश्चैव पलाशांश्च शोभितान्ददृशे नृपः ॥ मृगव्याघ्रवराहांश्च सिंहाञ्छाखानृगानपि ॥ २६ ॥ ददर्श भुजगान् राजा वल्मीकादभिनिस्सृतान् ॥ तथा वनगजान्मत्तान्कलभैः सह संगतान् ॥ २७ ॥ गवयान्कृष्णसारान् गाः सृगालाञ्छशकानपि॥ वनमार्जारकान् क्रूराञ्झल्लकांश्चमरानपि ॥२८॥ यूथपांश्च चतुर्दन्तान्करिणीगणमध्यगान् ॥ तान्दृष्ट्वा चिन्तयामास ह्यात्मनस्स गजान्नृपः ॥२९॥ तेषां स विचरन्मध्ये राजा शोकमवाप ह ॥ महदाश्चर्यसंयुक्तं ददर्श विपिनं नृपः ॥ ३० ॥ क्वचिच्छिवारुतं शृण्वन्नुलूकविरुतं तथा ॥ तांस्तान्पक्षिगणान्पश्यन्बभ्राम वनमध्यगः ॥३१॥ एवं ददर्श गहनं नृपो मध्यंगते रवौ ॥ क्षुत्तृड्भ्यां पीडितो राजा इतश्चेतश्च धावति ॥ ३२ ॥

हाथिनको हाथिनियोंके समूहमें स्थित देखत भयो उनको देखके वह राजा अपने हाथिको स्मरण करत भयो॥२९॥उनके मध्यमें विचरतो भयो वह राजा शोकको प्राप्त होत भयो और राजा बड़े आश्चर्य करके युक्त वनको देखत भयो ॥ ३० ॥ कहूं स्यारनको शब्द और उलूकनको शब्द सुनत भयो और नाना प्रकारके पक्षिनके समूहको देखतो भयो वह राजा उनके मध्यमें जायके विचरत भयो॥३१॥ऐसे राजाको वनमें फिरते२

दो पहर होगये तब भूख प्याससे व्याकुल राजा इधर उधर भ्रमण करत भयो ॥३२॥ सूखिगयो है गरो जाको ऐसे राजा अपने मनमें चिन्ता करत भयो कि, मैंने कहा कर्म कियो है जाते मोको ऐसे दुःख प्राप्त भयो॥३३॥मैं यज्ञनसों और पूजासू देवतानकूं संतुष्ट कियो है तैसेही दक्षिणानसों और मीठे भोजननसों ब्राह्मणनको संतुष्ट कीनो है॥३४॥और मैंने यथाकाल पुत्रके समान प्रजानको पालन कीनो है नहीं जानो हौं कि

चिंतयामास नृपतिः संशुष्कगलकन्धरः ॥ मया तु किं कृतं कर्म प्राप्तं दुःखं यदीदृशम् ॥ ३३ ॥ मया च तोषिता देवा यज्ञैः पूजाभिरेव च ॥ तथैव ब्राह्मणा दानैस्तोषिता मिष्टभोजनैः ॥ ३४ ॥ प्रजाश्चैव यथाकालं पुत्रवत्परिपालिताः ॥ कस्माद्दुःखं मया प्राप्तमीदृशं दारुणं महत् ॥ ३५ ॥ इति चिंतापरो राजा जगामाथाग्रतो वनम् ॥ सुकृतस्य प्रभावेण सरो दृष्टं मनोरमम् ॥ ३६ ॥ मानसं स्पर्धमानं च पद्मिनीपरिशोभितम् ॥ कारंडवैश्चक्रवाकै राजहंसैश्च नादितम् ॥ ३७ ॥ मकरैर्बहुभिर्युक्तं मत्स्यैर्जलचरैर्युतम् ॥ समीपे सरसस्तत्र मुनीनामाश्रमान्बहून् ॥ ३८ ॥

ऐसो बड़ो दारुण दुःख काहेत प्राप्त भयो ॥ ३५ ॥ ऐसे चिन्ता करतो भयो वह राजा आगेकू वनमें जात भयो और वाने सुकृतके प्रभावते एक मनोहर सर देख्यो ॥३६॥ वह सर कैसो है कि, मानसरोवर की बराबरी कर रह्यो हैं और कमलनके फूलनसू शोभित हो रह्यो है और जल कुक्कुट चक्रवाक तथा राजहंसन करके शब्दायमान रह्यो है ॥ ३७ ॥ और बहुतसे मगर मच्छी तथा और जलके जीवनकरिके युक्त है और

वा सरके समीप बहुतसे मुनीश्वरनके आश्रमनको देखत भयो ॥३८॥ शुभके कहनवारे निमित्तते करके राजाने वे मुनिनके आश्रम देखे और
राजाको दाहिनो नेत्र तथा भुजा फरकन लगी ॥ ३९ ॥ उनके फरकनेके कारण राजाको शुभको लक्षण सूचित होत भयो और वा तलावके
किनारे वैदिकमन्त्रनको जपत भये मुनि देखे ॥ ४० ॥ तब वो घोडेते उतरिके राजा मुनीश्वरके आगे स्थित होत भयो और उन व्रत करनहारे

ददर्श राजा लक्ष्मीवान्निमित्तैः शुभशंसिभिः ॥ सव्यात्परतरं चक्षुः प्रास्फुरच्च तथा करः ॥ ३९ ॥ स्फुरितस्तस्य राज्ञश्च शंसित
शुभलक्षणम् ॥ तस्य तीरे मुनीन् दृष्ट्वा कुर्वाणान्नैगम जपम् ॥ ४० ॥ अवतीर्य हतातस्मान्मुनीनामग्रतः स्थितः॥पृथक् पृथक्
ववंदे स मुनींस्तान्शंसितव्रतान् ॥४१॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा दण्डवच्च प्रणम्य सः ॥ हर्षेण महताविष्टो वभूव नृपसत्तमः॥४२॥
तमूचुस्तेऽपि मुनयः प्रसन्नाः स्मो वयं तव ॥ कथयस्वाद्य वै राजन् यत्ते मनसि वर्तते ॥ ४३ ॥ राजोवाच ॥ के यूयमग्रतपसः
किमाख्या भवतामपि ॥ किमर्थमागता यूयं वदंतु मम तत्त्वतः ॥ ४४ ॥

मुनीश्वरनको पृथक् २ नमस्कार करत भयो ॥४१॥ वह श्रेष्ठ राजा मुनीश्वरनको हाथ जोरिके दण्डवत् प्रणाम करि अत्यन्त हर्षयुक्त होत भयो
॥४२॥ वे मुनीश्वर वा राजासे बोले—कि, हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हैं हे राजन् ! जो तुम्हारे मनमें वर्त्तमान है सो हमसे कहो ॥ ४३ ॥ राजा
बोले—कि, तपस्विनमें मुख्य आप कौन हैं आपलोगनके नाम कहा हैं और यहां काहेके लिये आये हैं ? यह मोसे ठीक ठीक कहो ॥ ४४ ॥

मुनीश्वर बोले-कि, हे राजन् ! हम विश्वेदेवा हैं यहां स्नान करनेको आये हैं आजके दिनते पांचवें दिन माघको महीना निकट आय गयो है ॥ ४५ ॥ हे राजन् ! आज पुत्रदा नाम एकादशी है यह शुक्लपक्षकी पुत्रदा एकादशी पुत्रकी इच्छावाले मनुष्यको पुत्र देय है ॥ ४६ ॥ राजा बोलो-कि, पुत्रके उत्पन्न करनेमें यह मोको बडो संदेह है जो आपलोग मोपै प्रसन्न होयं तो मोको पुत्र दीजिये ॥ ४७ ॥

मुनय ऊचु ॥ विश्वेदेवा वयं राजन्स्नानार्थमिह चागताः ॥ माघो निकटमायात एतस्मात्पंचमेऽहनि ॥ ४५ ॥ अद्य ह्येकादशी राजन्पुत्रदा नाम नामतः ॥ पुत्रं ददात्यसौ शुक्ला पुत्रदा पुत्रमिच्छताम् ॥४६॥ राजोवाच ॥ एष मे संशयो मह्यं सुतस्योत्पादने महान् ॥ यदि तुष्टा भवन्तो मे पुत्रो वै दीयतां तदा ॥ ४७ ॥ मुनय ऊचुः ॥ अस्मिन्नेव दिने राजन्पुत्रदा नाम वर्त्तते ॥ एकादशीति विख्याता क्रियतां व्रतमुत्तमम् ॥ ४८ ॥ आशीर्वादेन चास्माकं केशवस्य प्रसादतः ॥ अवश्यं तव राजेन्द्र पुत्रप्राप्तिर्भविष्यति ॥ ४९ ॥ इत्येवं वचनात्तेषां कृतं राज्ञा व्रतं शुभम् ॥ द्वादश्यां पारणं कृत्वा मुनीन्नत्वापुनः पुनः ॥ ५० ॥ आजगाम गृहं राजा राज्ञी गर्भं समादधौ ॥ मुनीनांवचनेनैव पुत्रदायाः प्रभावतः ॥ ५१ ॥

मुनि बोले-कि, हे राजन् ! आजहीके दिन पुत्रदा नामसों विख्यात एकादशी है ताते याको उत्तम व्रत करिये॥४८॥हमारे आशीर्वादसे और केशव भगवान्के प्रसादते हे राजन् ! तुमको अवश्य पुत्रकी प्राप्ति होगी ॥ ४९ ॥ या प्रकार उन मुनीश्वरनके वचनते राजाने उत्तम व्रत कीन्हो और द्वादशीके दिन राजा पारण करिके वारंवार मुनीश्वरोंको नमस्कार करत भयो॥५०॥और राजा घरको आवत भयो तब रानी मुनीश्वरनके

वचनते और पुत्रदाके प्रभावसे गर्भको धारण करती भई॥५१॥और समयमें तेजस्वी तथा पुण्य कर्म करनहारो पुत्र उत्पन्न होत भयो वह पिताको संतुष्ट करत भयो और वह प्रजाके पालनमें तत्पर होत भयो॥५२॥हे राजन्! या कारणते पुत्रदाको व्रत करनो चाहिये लोकनके हितके लिये मैंने तुम्हारे आगे कह्यो ॥५३॥ जे मनुष्य पुत्रदा नाम यह व्रत करै हैं उन मोक्षभागी मनुष्यनके अवश्य पुत्र होय हैं ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! याके

पुत्रो जातस्तथा काले तेजस्वी पुण्यकर्मकृत् ॥ पितरं तोषयामास प्रजापालो बभूव सः ॥ ५२ ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्कर्तव्यं पुत्रदाव्रतम ॥ लोकानां च हितार्थाय तवाग्रे कथितं मया ॥ ५३ ॥ एतद्व्रतं तु येमर्त्याः कुर्वंति पुत्रदाभिधम् ॥ तेषां चैव भवेत्पुत्रो ह्यवश्यं मोक्षभागिनाम् ॥ ५४ ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन्नश्वमेधफलं लभेत् ॥ ५५ ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे पौषशुक्लै कादश्याः पुत्रदानाम्न्या माहात्म्यं सम्पूर्णम् ॥ ४ ॥

पढने और श्रवण करनेसों अश्वमेध यज्ञको फल प्राप्त होय हैं॥५५॥इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां पौषशुक्लैकादशीव्याख्या समाप्ता ॥ ४ ॥

अथ माघकृष्णैकादशीकथा ॥ अथ माघस्य कृष्णे या षट्तिलकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां विवृतिं संतनोम्यहम् ॥१॥ दाल्भ्य ऋषि बोले कि, मर्त्यलोकमें प्राप्त जीव पापको करै हैं ब्रह्महत्या आदि तथा नाना प्रकारके अन्य पापन करिके युक्त होत हैं ॥१॥ पराये धनके हरण करनहारे और पराये दुःखसों मोहित पुरुष कैसे नरकको नहीं जाय हैं हे ब्रह्मन् ! मोसों तत्त्वसे कहो ॥२॥ हे भगवन् ! अनायास करिके काहू

अथ माघकृष्णैकादशीकथा ॥ दाल्भ्य उवाच ॥ मर्त्यलोके तु संप्राप्ताः पापं कुर्वंति जन्तवः ॥ ब्रह्महत्यादिपापैश्च ह्यन्यैश्च विविधैर्युताः ॥ १ ॥ परद्रव्यापहाराश्च परव्यसनमोहिताः ॥ कथं न यांति नरकान् ब्रह्मस्तद ब्रूहि तत्त्वतः॥ २ ॥ अनायासेन भगवन्दानेनाल्पेन केनचित् ॥ पापं प्रशममायाति येन तद्वक्तुमर्हसि ॥ ३ ॥ पुलस्त्य उवाच ॥ साधु साधु महाभाग गुह्य मेतदुदाहृतम् ॥ यन्न कस्य चिदाख्यातं ब्रह्मविष्णिवन्द्रदेवतैः ॥ ४ ॥ तदहं कथयिष्यामि त्वया पृष्टो द्विजोत्तम ॥ ततो माघे तु संप्राप्ते शुचिः स्नातो जितेन्द्रियः ॥५॥ कामक्रोधाभिमानेर्ष्यालोभपैशुन्यवर्जितः ॥ देवदेवं च संस्मृत्य पादौ प्रक्षाल्य वारिणा ॥६॥

छोटेसे दानसों जासो पाप शांत होय सो कहनेको योग्य हो ॥ ३ ॥ पुलस्त्य बोले कि, हे महाभाग ! साधु साधु अर्थात् बहुत अच्छी २ तुमने गुह्य बात कही जाको कभी ब्रह्मा विष्णु इन्द्र और देवतानन काहूसों नहीं कह्यो है ॥ ४ ॥ हे द्विजोत्तम ! तुम्हारे पूछनेसों वह गुप्त वस्तु मैं तुमसों कहोगो तो पीछे माघ महीनाके आवनेपै शुद्ध हो स्नान करिके जितेंद्रिय रहै ॥५॥ काम, क्रोध, अभिमान, ईर्षा, लोभ और चुगलीते बचो रहै और निज पांयनको धोयके देवदेव जे विष्णु भगवान् हैं तिनको स्मरण करै ॥ ६ ॥

भूमिमें न गिरो होय ऐसो गोबर ले वामें तिल और कपास मिलाके पिंड बनावै॥७॥एक सौ आठ१०८पिंड बनावै यामें कुछ विचार न करै तो पीछे माघ मासके आनेपै आदिहीसों नियम करै ॥८॥ अथवा कृष्णपक्षके मूलमें तो पीछे पुत्रफलकी देनहारी एकादशीके नियमको ग्रहण करै ताको विधान मोते सुनो॥९॥स्नान करि शुद्ध होके सावधान मनसों देवनके देव जे भगवान्‌हैं तिनको पूजन करै और छींक तथा जँभाई आवै तो

भूमावपतितं ग्राह्यं गोमयं तत्र मानवः ॥ तिलान् प्रक्षिप्य कार्पासं पिण्डकांश्चैव कारयेत् ॥ ७ ॥ अष्टोत्तरशतं चैव नात्र कार्या विचारणा ॥ ततो माघे च संप्राप्ते ह्यादौ चैव भवेद्यदि ॥ ८ ॥ मूले वा कृष्णपक्षस्यैकादश्यां नियमं ततः ॥ गृह्णीयात्पुत्रफलदं विधानं तत्र मे शृणु ॥ ९ ॥ देवदेवं समभ्यर्च्य सुस्नातः प्रयतः शुचिः ॥ कृष्णनामानि संकीर्त्य क्षुज्जृंभासु च सर्वदा ॥ १० ॥ रात्रौ जागरणं कुर्याद्रात्रौ होमं च कारयेत् ॥ अर्चयेद्देवदेवेशं शंखचक्रगदाधरम् ॥ ११॥ चन्दनागरुकर्पूरैर्नैवेद्यैः शर्करादिभिः॥ संस्मृत्य नाम्ना च ततः कृष्णाख्येन पुनः पुनः ॥ १२ ॥ कूष्माण्डैर्नारिकेलैश्च ह्यथवा बीजपूरकैः ॥ सर्वाभावेऽपि विप्रेन्द्र शस्तं पूगीफलं तदा ॥ १३ ॥

सदा कृष्णके नामनको कीर्तनको करै॥१०॥और रात्रिमें जागरण करै और रात्रिहीमें उन एकसौ आठ पिंडनसों होम करै और शंख,चक्र,गदा धारण करे भये जो देवदेवेश भगवान्‌हैं तिनको ध्यान करै॥११॥चंदन अगर कपूर तथा शर्करा आदि नैवेद्यन करिके वारंवार कृष्णनामको उच्चारण करि भगवान्‌को पूजन करै ॥१२॥ कुम्हडों करिके अथवा नारियलों करिके वा बिजौरों करिके पूजन करै जो ये सब वस्तु न हों तो सुपारी सबते उत्तम

है ॥ १३॥ विधिसों अर्घ्य द जनार्दनको पूजन करि ऐसे कहे कि, हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे कृपालो ! हे गतिरहितनको गति देनेहारे ! ॥ १४ ॥ संसाररूपी समुद्रमें डूबे मनुष्यके ऊपर प्रसन्न होउ हे पुण्डरीकाक्ष ! हे विश्वभावन ! तुमको नमस्कार है ॥ १५ ॥ हेसुब्रह्मण्य ! हे महापुरुष ! हे पूर्वज ! हे जगत्पते ! मेरो दियो भयो अर्घ्य लक्ष्मी करिके सहित ग्रहण करो ॥ १६ ॥ ता पीछे छत्र उपानह तथा वस्त्रनकरि ब्राह्मणको

अर्घ्यं दत्त्वा विधानेन पूजयित्वा जनार्दनम् ॥ कृष्ण कृष्ण कृपालो त्वमगतीनांगतिप्रद ॥ १४ ॥ संसारार्णवमग्नानां प्रसीद परमेश्वर ॥ नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ॥ १५ ॥ सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं लक्ष्म्या सह जगत्पते ॥ १६ ॥ ततस्तु पूजयेद्विप्रमुदकुंभं प्रदापयेत् ॥ छत्रोपानहवस्त्रैश्च कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥ १७ ॥ कृष्णा धेनुः प्रदातव्या यथाशक्त्या द्विजोत्तम ॥ तिलपात्रं द्विजश्रेष्ठं दद्यात्तत्र विचक्षणः ॥ १८ ॥ स्नानप्राशनयोः शस्ताः श्वेताः कृष्णस्तिला मुने ॥ तान् प्रदद्यात्प्रयत्नेन यथाशक्त्या द्विजोत्तम ॥ १९ ॥

पूजन करै और मेरे ऊपर प्रसन्न होयँ ऐसे कहिके जलसों भरे भये घटको दान करैं ॥ १७ ॥ और हे ब्राह्मण ! यथाशक्ति कृष्णगौको दान करनो चाहिये हे द्विजश्रेष्ठ ! वा दिन चतुर मनुष्य तिल भरके पात्रको दान करै ॥१८॥ हे मुनि ! नहानेमें तथा खानेमें सफेद और काले दोनों प्रकारके तिल श्रेष्ठहैं अथवा स्नानमें श्वेत और भोजनमें काले तिल उत्तम कहेहैं । हे द्विजोत्तम! उन तिलनका दान यथाशक्ति यत्नसों करै ॥१९॥

जितने तिलनको दान करै उतने हजार वर्षलौं स्वर्गलोकमें आनन्द करै तिल जलमें मिलाके स्नान करै १ तिलनको पीसिके उबटना लगावै २ तिलनको होम करै ३ और तिल मिलाके जल पीवै ४ तिलनको भोजन करै ५ तथा तिलनको दान करै ६ यह छः प्रकारके तिल पापनके नाश करनेहारे हैं॥ नारद मुनि बोले—कि हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे महाबाहो ! हे भक्तभावन ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥२०॥२१॥ षट्तिला एकादशीते

तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥ तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी ॥ २० ॥ तिलभुक् तिलदाता च षट्तिलाः पापनाशकाः ॥ नारद उवाच ॥ कृष्ण कृष्ण महाबाहो नमस्ते भक्तभावन ॥ २१ ॥ षट्तिलैकादशीभूतं कीदृशं फलमश्नुते ॥ सोपाख्यानं मम ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि यादव ॥ २२ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणु ब्रह्मन्यथावृत्तं दृष्टं तत्कथयामि ते ॥ मृत्युलोके पुरा ह्यासीद्ब्राह्मणी तत्र नारद ॥ २३ ॥ व्रतचर्यरता नित्यं देवपूजारता तदा ॥ मासोपवासनिरता मम भक्ता च सर्वदा ॥२४॥ कृष्णोपवाससंयुक्ता मम पूजापरायणा ॥ शरीरं क्लेशितं नित्यमुपवासैर्द्विजोत्तम ॥ २५ ॥

उत्पन्न फल कसो मिलै है हे यादव ! जो आप प्रसन्न हो तो याको उपाख्यान सहित मोसों कहो॥२२॥ श्रीकृष्ण बोले—कि, हे ब्रह्मन् ! जैसे वृत्तांत मैंने देख्यो है सो मैं तुमसे कहौं हे नारद ! पहले समय मृत्युलोकमें एक ब्राह्मणी होती भई ॥ २३ ॥ वह सदा व्रतनके रहनेमें और देवपूजामें लगी रहती सदा मेरी भक्त वह स्त्री महीने भरके व्रत करनेमें तत्पर होत भई ॥२४॥ कृष्णके व्रत करिके युक्त वह मेरी पूजामें परायण होत भई

हे द्विजोत्तम ! सदा व्रत करनेसों वाको शरीर क्लेशित हो जात भयो ॥२५॥ वह अति बुद्धिमती स्त्री दीन ब्राह्मणनको और कुमारिनको भक्ति पूर्वक घर आदिकनको दान सदा देती ॥२६॥ हे द्विज ! वह अति कठिन व्रतनमें तत्पर होत भई व्रतन करिके और कृच्छ्रन करिके वाको शरीर शुद्ध होगयो यामें संदेह नहींहै॥२७॥और वाने कायाके क्लेशसों काहू मँगता ब्राह्मणको अन्नदान नही कीन्हों जासो मेरी परम तृप्ति होती॥२८॥

दीनानां ब्राह्मणानां च कुमारीणां च भक्तितः ॥ गृहादिकं प्रयच्छन्ती सर्वकालं महामतिः ॥ २६ ॥ अतिकृच्छ्ररता सा तु सर्व कालेषु वै द्विज ॥ शुद्धमस्याः शरीरं हि व्रतैः कृच्छ्रैर्न संशयः॥ २७ ॥अर्थिनं वैष्णवं लोकं कायक्लेशेन वै तया॥ न दत्तमन्नदानं हि येन तृप्तिः परा भवेत् ॥ २८ ॥ एतज्जिज्ञासया ब्रह्मन्मृत्युलोकमुपागतः ॥ कापिलं रूपमास्थाय भिक्षापात्रेण याचिता ॥२९॥ ब्राह्मण्युवाच ॥ कस्मात्त्वमागतो ब्रह्मन्वद यस्मात्समागतः॥ पुनरेव मया प्रोक्तं देहि भिक्षां च सुन्दरि॥ ३० ॥ तया कोपेन महता मृत्पिंडस्ताम्रभाजने ॥ क्षिप्तो यावत्तया देव्या पुनः स्वर्गं गतो द्विज ॥३१। ततः कालेन महता तापसी सुमहाव्रता ॥ कदाचित्स्वर्गमायाता व्रतचर्याप्रसादतः ॥ ३२ ॥

हे ब्रह्मन् ! या बातके जानिवेको इच्छा करिके मैं मृत्युलोकमें आयो और कपिलब्राह्मणको रूपधरिके मैने वाते केवल भिक्षा मांगी ॥ २९ ॥ ब्राह्मणी बोली—कि, हे ब्रह्मन्! तुम कहांते आये हो जहाँते आये हो ताहि बताओ परन्तु मैंने फिर यही कही कि हे सुन्दरि ! भिक्षा दे ॥३०॥ हे द्विज ! वाने बहुतसो क्रोध करिके एक माटीको पिंड हमारे ताम्रके पात्रमें डारि दीन्हों फिर हम स्वर्गको गये ॥३१॥ ता पीछे बहुत कालमें

बडी व्रत करनहारी वह तापसी व्रत करनेके प्रसादसों स्वर्गको आवती भई ॥ ३२ ॥ मिट्टीके पिंडके प्रभावते वाने सुन्दर मनोहर घर पायो, हे विप्रर्षे ! वह घर धान्यके भण्डारसों रहितहोत भयो ॥३३॥ जब घरको देख्यो तो वामें कुछ न देखत भई । हे ब्राह्मण ! तब वह घरते निकरिके हमारे समीप आवत भई ॥३४॥ बडे क्रोधसों भरी वह यह वचन बोलत भई कि, मैंने अनेक व्रत और चन्द्रायण कृच्छ्र करिके तथा उपवासन

मृत्पिण्डस्य प्रभावेण गृहं प्राप्तं मनोरमम् ॥ संजातं चैव विप्रर्षे धान्यकोशादिवर्जितम् ॥३३॥ गृहं यावन्निरीक्षेत न किंचित्तत्र पश्यती ॥ तावद्गृहाद्विनिष्क्रांता ममान्ते चागता द्विज ॥३४॥ क्रोधेन महताविष्टा त्विदं वचनमब्रवीत् ॥ मया व्रतैश्च कृच्छ्रैश्च उपवासैरनेकशः ३५ ॥ पूजयाऽऽराधितो देवः सर्वलोकस्य भावनः ॥ न धनं दृश्यते किंचिद्गृहे मम जनार्दन ॥ ३६ ॥ तत श्चोक्ता मया सा तु गृहं गच्छ यथागतम् ॥ आगमिष्यंति सुतरां कौतूहलसमन्विताः ॥ ३७ ॥ देवपत्न्यस्तु त्वां द्रष्टुं विस्मयेन समन्विताः ॥ द्वारं नोद्घाटनीयं हि षट्तिलापुण्यवाचनात् ॥ ३८ ॥ एवमुक्त्वा गता सा तु यदा वै मानुषी तदा ॥ अत्रांतरे समायाता देवपत्न्यश्च नारद ॥ ३९ ॥

करिके अनेक बार ॥३५॥ सब लोकनके भावन जे देव विष्णु हैं तिनको आराधन कियो है हे जनार्दन ! मेरे घरमें किंचित् हू धन नहीं दीखै है ॥ ३६ ॥ तब मैंने वासों कही कि, तू बहुत शीघ्र अपने घरको जा बडे कौतुहलसों देवतानकी स्त्री आवैंगे ॥ ३७ ॥ जब देवतानकी स्त्री विस्मययुक्त हो तेरे देखिवो को आवें तब तु द्वार मत खोलियो षट्तिला एकादशीको पुण्य माँगियो ॥ ३८ ॥ भगवान कहि ऐसे कही गई वह

मानुषी जब वहां अपने घरमें गई तब हे नारद ! वाहि अन्तरमें देवपत्नी आई ॥३९॥ उनके वहां ऐसे कही कि,हम तुम्हारे देखिबेको आई हैं तुम द्वार खोलो । हे सुन्दरी ! हम तुमको देखेंगी ॥ ४० ॥ मानुषी बोली–कि, जो तुम मोको देखा चाहो तो षट्तिलाका पुण्य मोहिं देउ तो मैं द्वार खोलों ॥४१॥ षट्तिला व्रतके नाशके हो जानेसों वहां एक भी न बोलत भई और एकने वहां कही कि, मानषी हमैं देखनीहै याते हम षट्

ताभिश्च कथितं तत्र त्वां द्रष्टुं हि समागताः ॥ द्वारमुद्घाटय त्वं च पश्यामस्त्वां शुभानने ॥४०॥ मानुष्युवाच ॥ यदि द्रष्टुं मया कार्यं सत्यं वाच्यं विशेषतः ॥ ददन्तु षट्तिलापुण्यं द्वारोद्घाटनकारणात् ॥४१॥ एकापि तत्र नावादीत्षट्तिलाव्रतनाशतः ॥ अन्यया कथितं तत्र द्रष्टव्या मानुषी मया ॥ ४२ ॥ ततो द्वारं समुद्घाट्य दृष्टा ताभिश्च मानुषी ॥ न देवी न च गंधर्वी नासुरी न च पन्नगी ॥ दृष्टा पूर्वं मया नारी ईदृशी सा द्विजर्षभ ॥४३॥ रूपकांतिसमायुक्ता क्षणेन समपद्यत ॥ धन्यं धान्यं च वस्त्रादि सुवर्णं रौप्यमेव च ॥ ४४ ॥ सर्वं गृहं सुसंपन्नं षट्तिलायाः प्रसादतः ॥ अतितृष्णा न कर्तव्या वित्तशाठ्यं विवर्जयेत् ॥ ४५॥

तिलाके पुण्य देयँगे ॥४२॥ ता पीछे द्वार खोलिके उन्होंने मानुषी देखी देवी है नहीं गन्धर्वी नहीं है न आसुरी है और न पन्नगी है हे द्विजश्रेष्ठ ! पहले मैंने वा नारीको ऐसी देखी ॥४३॥ फिर वह क्षणमात्रहीमें रूप और कांति करके युक्त हो जात भई वाके घरमें धन धान्य वस्त्र सुवर्ण चांदी ये सब हो जात भये ॥४४॥ और षट्तिलाके प्रभावते वाको घर सब वस्तुनसों सम्पन्न हो जात भयो अतितृष्णा न करनी चाहिये धनकी शठताको वर्जित करै ॥ ४५ ॥

अपने वित्तके अनुसार तिल और वस्त्र आदि दान करे ताते जन्ममें आरोग्यताको प्राप्त होय ॥ ४६ ॥ दरिद्रता न होय न कष्ट होय और न दुर्भाग्य होय हे द्विज श्रेष्ठ ! षट्तिलाको व्रत करनेसों ये कोई बातें नहीं होतीहैं ॥ ४७ ॥ हे राजन् ! या प्रकार तिलनको दान करनेसे सब पातकनते छूटि जायहैं यामें कुछ विचार न करनो चाहिये ॥ ४८ ॥ जो अच्छी भांति विधि पूर्वक दान दियो जाय तो वह सब पापनको नाश करनहारो होय है

आत्मवित्तानुसारेण तिलान्वस्त्रादि दापयेत ॥ लभते चैवमारोग्यं ततो जन्मनि जन्मनि ॥ ४६ ॥ दारिद्र्यं न च कष्टं वै न च दौर्भाग्यमेव च ॥ न भवेद्वै द्विजश्रेष्ठ षट्तिलाया उपोषणात ॥ ४७ ॥ अनेन विधिना राजंस्तिलदानान्न संशयः ॥ मुच्यते पातकैः सर्वैर्नात्र कार्या विचारणा ॥ ४८ ॥ दानं च विधिना सम्यक् सर्वपापप्रणाशनम् ॥ नानर्थभूतो नायासः शरीरे मुनिसत्तम ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे माघकृष्णैकादशीषट्तिलामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ ५ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ ! न कोई अनर्थ होय न शरीरमें खेद होय ॥ ४९ ॥ इति श्रीपण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीयां दीपिकासमाख्यायां माघकृष्णैकादशीषट्तिलामाहात्म्य समाप्तम् ॥ ५ ॥

अथ माघशुक्लैकादशीमाहात्म्य ॥ माघ स्यापरपक्षे या जयाख्यैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य विवृतिं केशवाख्यस्तनोम्यहम्॥ १॥ युधिष्ठिर बोले-
कि, हे आदिदेव ! हे जगत्पते ! हे कृष्ण ! अच्छो वर्णन कीन्हो, स्वदेज, अंडज, जरायुज, उद्भिज्ज, ये चार प्रकारके सृष्टिके जीव हैं ॥ १ ॥
उनके कर्त्ता विकर्ता पालन और क्षय करनहारे आपहीहैं माघके कृष्णपक्षमें आपने षट्तिला एकादशी कही॥ २॥ और जो शुक्लपक्षमें एकादशी
होय है ताहि प्रसन्नतासों कहो वाको कहा नाम है और वाकी विधि कहा है और वामें कौनसे देवकी पूजा कीनी जायहै ॥ ३॥ श्रीकृष्ण बोले-

अथ माघशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ साधु कृष्ण त्वया प्रोक्ता आदिदेव जगत्पते॥ स्वेदजा अंडजाश्चैव उद्भिज्जाश्च
जरायुजाः॥ १॥ तेषां कर्त्ता विकर्त्ता च पालकः क्षयकारकः॥ माघस्य कृष्णपक्षे तु षट्तिला कथिता त्वया॥ २॥ शुक्ले चैकादशी
या च कथयस्व प्रसादतः ॥ किं नाम को विधिस्तस्याः को देवस्तत्र पूज्यते॥ ३॥ श्रीभगवानुवाच॥ कथयिष्यामि राजेन्द्र शुक्ले
माघस्य या भवेत् ॥ जयानाम्नीति विख्याता सर्वपापहरा परा ॥ ४ ॥ पवित्रा पापहंत्री च पिशाचत्वविनाशिनी ॥ नैव तस्या
व्रते जीर्णे प्रेतत्वं जायते नृणाम् ॥५॥ नातः परतरा काचित्पापघ्नी मोक्षदायिनी ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्कर्तव्येयं प्रयत्नतः॥ ६ ॥

कि, हे राजेंद्र ! माघ महीनाके शुक्लपक्षमें सब पापनकी हरनहारी जया नामसों विख्यात एकादशी होय है वाहि मैं कहौंगो॥ ४॥ वह पवित्र और
पापनकी दूर करनहारी और पिशाचयोनिकी छुडावनहारी है वाको व्रत करनेसों मनुष्य प्रेत नहीं होय हैं ॥ ५ ॥ याते परे और कोई पापनकी
दूर करनहारी और मोक्ष देनवारी नहीं है हे राजन् ! या कारणते याको व्रत यत्नसों करनो चाहिये ॥ ६ ॥

हे राजशार्दूल ! पुराणसंबंधिनी जो कथा है वाहि सुनिये याकी महिमा मैंने पद्मपुराणमें कही है ॥७॥ एकबार स्वर्गलोकमें इन्द्र राज्यको करत हो और वा मनोहर स्थानमें देवता सुखसों बास करत भये ॥८॥ अमृतपान करनेमें तत्पर हैं और अप्सरानको समूह उनका सेवन करत हैं और काव्यवृक्षसों शोभित वहां नन्दनवन हो॥९॥वहां देवता अप्सरानके साथ विहार करतेहैं हे राजन् ! एकबार इन्द्र अपनी इच्छासों विहार करि

श्रूयतां राजशार्दूल कथां पौराणिकीं शुभाम् ॥ पङ्कजे च पुराणेऽस्या महिमा कथितो मया ॥ ७ ॥ एकदा नागलोके वै इन्द्रो राज्यं चकार ह ॥ देवाश्च तत्र संख्येन निवसंति मनोरमे ॥ ८ ॥ पीयूषपाननिरता ह्यप्सरोगणसेविताः ॥नन्दनं तु वनं तत्र पारिजातोपशोभितम् ॥ ९ ॥ रमयन्ति रमंत्यत्र ह्यप्सरोभिर्दिवौकसः एकदा रममाणोऽसौ देवेन्द्रः स्वेच्छया नृप ॥ १० ॥ नर्तयामास हर्षात्स पञ्चाशत्कोटिनायिकाः ॥ गन्धर्वास्तत्र गायन्ति गन्धर्वः पुष्पदन्तकः ॥ ११ ॥ चित्रसेनश्च तत्रैव चित्रसेनसुतास्तथा ॥ मालिनीति च नाम्ना तु चित्रसेनस्य कामिनी ॥ १२ ॥ मालिन्यां तु समुत्पन्नः पुष्पवानिति नामतः ॥ पुष्पदन्तस्य पुत्रो वै माल्यवान्नाम नामतः ॥ १३ ॥

रहो हो॥१०॥वह एक बार बडे आनंदसों पचास करोड नायिकनको नचावत भयो और पुष्पदंतसमेत सब गंधर्व वहां गाय रहे हैं ॥११॥ वहां चित्रसेन हो वाके पुत्र हैं और मालिनी नाम चित्रसेनकी स्त्रीहू ही ॥ १२ ॥ और मालिनीते उत्पन्न पुष्वान् नाम चित्रसेनको पुत्र हो और माल्यवान् नाम पुष्पदंतको पुत्र होत भयो ॥ १३ ॥ पुष्पवान् नाम गंधर्वकी कन्या पुष्पवती जाको नाम है वह माल्यवान्में अत्यंत मोहित हो

जातभई और कामके तेज बाणनसों विंधो है अंग जाको ऐसी होजातभई ॥ १४ ॥ वाने हाव भाव दिखाके कटाक्षनसों माल्यवान् वश करि लीन्हों वह सुन्दरता और रूपसों सम्पन्न ही हे राजन् ! वाको रूप सुनो॥१५॥वाकी बाहें ऐसी हैं मानो कि, कामने गलेमें डारनके लिये फांसी बनाई हैं और चन्द्रमाके समान वाको मुख है और वाके नेत्र कानन लों विस्तृत हैं ॥१६॥ हे नृपोत्तम ! वाके कान कुण्डलनसों शोभित हैं और

गन्धर्वी पुष्पवत्याख्या माल्यवत्यतिमोहिता ॥ कामस्य च शरैस्तीक्ष्णैर्विद्धांगी सा बभूव ह ॥ १४ ॥ तया भावैः कटाक्षैश्च माल्यवांश्च वशीकृतः ॥ लावण्यरूपसंपन्ना तस्या रूपं नृप शृणु ॥ १५ ॥ बाहू तस्यास्तु कामेन कण्ठपाशौ कृताविव ॥ चन्द्रवद्वदनं तस्या नयने श्रवणायते ॥ १६ ॥ कर्णौ तु शोभितौ तस्याः कुण्डलाभ्यां नृपोत्तम ॥ कंबुग्रीवायुता चैव दिव्याभरणभूषिता ॥ १७ ॥ पीनोन्नतौ कुचौ तस्याः मुष्टिमात्रं च मध्यमम् ॥ नितम्बौ विपुलौ तस्या विस्तीर्णं जघनस्थलम् ॥१८॥ चरणौ शोभमानौ तौ रक्तोत्पलसमद्युती ॥ ईदृश्या पुष्पवत्या च माल्यवानतिमोहितः ॥ १९ ॥

दिव्य गहननसों भूषित शंखके समान वाको गलो है ॥ १७ ॥ पुष्ट और ऊचे वाके कुच हैं और मुष्टिमें आजाय ऐसी वाकी कमर है और बडे भारी वाके नितंब हैं और जघनस्थल विस्तीर्ण हो ॥ १८ ॥ लाल कमलके समान है शोभा जिनकी ऐसे वाके चरण शोभायमान हैं ऐसी पुष्पवती करिके माल्यवान् अत्यंत मोहित कियो गयो ॥ १९ ॥

इन्द्रकी प्रसन्नताके लिये वे दोनों नाचवेको आवत भये और अप्सरानके समूहमें मिले वे दोनों गान करत भये ॥ २० ॥ उनको चित्त भ्रममें हो याते उनको गावनों शुद्ध न होत भयो कामके बाणनके वशमें होके वे दोनों परस्पर दृष्टि मिलाय रहे हैं ॥ २१ ॥ इन्द्र वहां उन दोनोंके मनको परस्पर उत्कंठित जानिके ताल काल और क्रियामानके लोपसों गीतको बिगडनो जानत भयो ॥ २२ ॥ इन्द्र अपनो तिरस्कार

शक्रस्य परितोषाय नृत्यार्थं तौ समागतौ ॥ गायमानौ च तौ तत्र ह्यप्सरोगणसंगतौ ॥ २० ॥ शुद्धं गानं न गायेतां चित्तभ्रम समन्वितौ ॥ बद्धदृष्टी तथाऽन्योऽन्यं कामबाणवशं गतौ ॥ २१ ॥ ज्ञात्वा लेखर्षभस्तत्र संगतं मानसं तयोः ॥ तालकालक्रिया मानलोपाद्गीतावभुञ्जनात् ॥ २२ ॥ चिन्तयित्वा तु मघवा ह्यवज्ञानं तथाऽऽत्मनः ॥ कुपितश्च तयोरित्थं शापं दास्यन्निदं जगौ ॥ २३ ॥ धिग्वां पापरतौ मूढावाज्ञाभंगकरौ मम ॥ युवां पिशाचौ भवतां दम्पतीरूपधारिणौ ॥ २४ ॥ मृत्यु लोकमनुप्राप्तौ भुञ्जानौ कर्मणःफलम् ॥ एवं मघवता शप्तावुभौ दुःखितमानसौ ॥ २५ ॥ हिमवन्तमनुप्राप्ताविन्द्रशापविमोहितौ ॥ उभौ पिशाचतां प्राप्तौ दारुणं दुःखमेव च ॥ २६ ॥

जानिके उन दोनोंके ऊपर क्रोधित हो शाप देनेको उद्यत हो यह कहत भयो ॥ २३ ॥ मेरी आज्ञाभंग करनहारे जे तुम दोनों पापी और मूर्ख हो तुमको धिक्कार है । स्त्रीपुरुषका रूप धरिके तुम दोनों पिशाच हो जाउ ॥ २४ ॥ और मृत्युलोकमें जायके अपने कर्मको फल भोगो या प्रकार इन्द्रकरि शाप दिये गये वे दोनों मनमें दुःखी होत भये ॥२५॥ इन्द्रके शापसों मोहित वे दोनों हिमालय पर्वतमें जात भये और दोनों पिशाच

ए. भा.
॥२९॥

होके दारुण दुःखको प्राप्त होत भये ॥ २६ ॥ दुःखी हैं मन जिनके ऐसे वे दोनों बड़े कष्टको प्राप्त होत भये और विमोहित होगये कि, जिनको गंध रस स्पर्श इत्यादिको ज्ञान न रहो ॥ २७ ॥ देहपात करनहारे पीडित वे दोनों वा कर्म केरि पीडित हो नींदके सुखको न प्राप्त होत भये ॥ २८ ॥ परस्पर वाद करते भये वे दोनों घने वनमें विचरत भये पालासों उत्पन्न जो शीत है तो करिके पीडित होत भये ॥ २९ ॥ शीतके

सन्तप्तमानसौ तत्र महाकृच्छ्रगतावुभौ ॥ गन्धं रसं च स्पर्शं च न जानन्तौ विमोहितौ ॥२७॥ पीडचमानौ तु दाहेन देहपातकरेण च ॥ तौ न निद्रासुखं प्राप्तौ कर्मणा तेन पीडितौ ॥ २८ ॥ परस्परं वादमानौ चेरतुर्गिरिगह्वरम् ॥ पीडचमानौ तु शीतेन तुषारप्रभवेण तौ ॥ २९ ॥ दन्तघर्षं प्रकुर्वाणौ रोमांचितवपुर्धरौ ॥ ऊचे पिशाचः शीतार्त्तः स्वपत्नीं तां पिशाचिकाम् ॥ ३० ॥ किमावाभ्यां कृतं पापमत्यन्तं दुःखदायकम् ॥ येन प्राप्तं पिशाचत्वं स्वेन दुष्कृतकर्मणा ॥ ३१ ॥ नरकं दारुणं गत्वा पिशाचत्वं च गर्हितम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पापं नैव समाचरेत् ॥ ३२ ॥ इति चिन्तापरौ तत्र ह्यास्तां दुःखेन कर्शितौ ॥ दैवयोगात्तयोः प्राप्ता माघस्यैकादशी सिता ॥ ३३ ॥

मारे दांतनको बजाते भये जे वे दोनों हैं तिनके शरीरके रोम ठाढे हो गये तब शीतसों पीडित पिशाच अपनी स्त्री पिशाचिनीसों बोलत भयो॥ ॥ ३० ॥ अत्यन्त दुःख देनेवालो कौनसो पाप हम दोनोंने किये हैं जो अपने बुरे कर्मसों हमको पिशाचयोनि प्राप्त हुई॥ ३१॥निन्दित पिशाच योनिको घोर मानिके सब जतननसों पाप न करैं ॥३२॥ दुःखसों दुर्बल वे दोनों ऐसे चिन्तामें तत्पर होत भये दैवयोगसे उनको माघ महीनेके

भा. टी.
मा. शु.
॥२९॥

शुक्लपक्षकी एकादशी प्राप्त भई ॥ ३३ ॥ जया नामसों विख्यात वह सबरी तिथिनमें उत्तम तिथि है उस दिन प्राप्त होनेपर वे दोनों बिना आहार रहे ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! और वे जलपानसों वर्जित रहे उनने न तो जीव मारे और न पत्र फल खाये ॥ ३५ ॥ दुःखयुक्त हो वे दोनों पीपरके नीचे पडे रहे । हे राजन् ! वैसेही पडे भये उन दोनोंको सूर्य अस्त होगये ॥ ३६ ॥ दारुण और शीत करनहारी घोर रात्रि प्राप्त होत भई वहां कांपते

जया नाम्नीति विख्याता तिथीनामुत्तमा तिथिः ॥ तस्मिन्दिने तु संप्राप्ते तावाहारविवर्जितौ ॥ ३४ ॥ आसाते तत्र नृपते जलपान विवर्जितौ ॥ न कृतौ जीवघातश्च न पत्रफलभक्षणम् ॥ ३५ ॥ अश्वत्थस्य समीपे तु पतितौ दुःखसंयुतौ ॥ रविरस्तं गतो राजं स्तथैव स्थितयोस्तयोः ॥ ३६ ॥ प्राप्ता चैव निशा घोरा दारुणा शीतकारिणी ॥ वेपमानौ तु तौ तत्र हिमेन च जडीकृतौ ॥ ३७ ॥ परस्परेण संलग्नौ गात्रयोर्भुजयोरपि ॥ न निद्रां न रतिं तत्र न तौ सौख्यमविन्दताम् ॥ ३८ ॥ एवं तौ राजशार्दूल शापेनेन्द्रस्य पीडितौ ॥ इत्थं तयोर्दुःखितयोर्निर्जगाम तदा निशा ॥ ३९ ॥ जयायास्तु व्रते चीर्णे रात्रौ जागरणे कृते ॥ तयोर्व्रतप्रभावेण यथा ह्यासीत्तथा शृणु ॥ ४० ॥ द्वादशीदिवसे प्राप्ते ताभ्यां चीर्णे जयाव्रते ॥ विष्णोः प्रभावान्नृपते पिशाचत्वं तयोर्गतम् ॥ ४१ ॥

भये वे दोनों पालाकरिके जड कारि दिये गये ॥ ३७ ॥ जाडेके मारे आपसमें देहसों देह भुजनसों भुजा मिलाके परे भये उन दोनोंको न तो नींद आई न रति प्राप्त और न वे दोनों सुखको प्राप्त होत भये ॥ ३८ ॥ हे राजशार्दूल ! या प्रकार वे इन्द्रके शापसों पीडित होत भये या प्रकार इन दोनों दुःखियनकी रात्रि व्यतीत होती भई ॥ ३९ ॥ जयाके व्रतके प्रभावसों जसो भयो सो सुनो ॥ ४० ॥ जब वे जयाको व्रत करचुके तब

हे राजन्! विष्णुके प्रतापसों द्वादशीके दिन उनकी पिशाच योनि छूट गई ॥ ४१ ॥ पुष्पवतीको और माल्यवान्को पहलेही रूप हो जात भयो और पुरानी प्रीतियुक्त वे दोनों पहलेही अलंकारनकरिके युक्त हो जात भये ॥ ४२ ॥ विमानमें चढगये और अप्सरानके समूहसों शोभित वे दोनों तुंबुरु आदिक गन्धर्वन करिके स्तुति किये गये ॥ ४३॥ और हाव भाव करिके युक्त वे दोनों मनोहर स्वर्गको जातभये और इन्द्रके आगे

पुष्पवती माल्यवांश्च पूर्वरूपौ बभूवतुः॥पुरातनस्नेहयुतौ पूर्वालंकारसंयुतौ॥४२॥विमानमधिरूढौतावप्सरोगणसेवितौ॥स्तूयमानौतु गंधर्वैस्तुम्बुरुप्रमुखैस्तथा॥४३॥ हावभावसमायुक्तौ गतौ नाके मनोरमे॥देवेन्द्रस्याग्रतो गत्वा प्रणामं चक्रतुर्मुदा॥४४॥तथाविधौतुतौ दृष्ट्वा मघवा विस्मितोऽब्रवीत्॥इन्द्र उवाच॥ वद तं केन पुण्येन पिशाचत्वं विनिर्गतम्॥४५॥मम शापवशं प्राप्तौ केन देवेन मोचितौ माल्यवानुवाच ॥ वासुदेवप्रसादेन जयायाः सुव्रतेन च॥४६॥पिशाचत्वं गतं स्वामिन् सत्यं भक्तिप्रसादतः ॥ इति श्रुत्वा वचस्तस्य प्रत्युवाच सुरेश्वरः॥४७॥ इन्द्र उवाच ॥ पवित्रौ पावनौ जातौ वन्दनीयौ ममापि च॥हरिवासरकर्त्तारौ विष्णुभक्तिपरायणौ॥४८॥

जायके आनंदसों प्रणाम करत भये ॥ ४४ ॥ या प्रकारके उन दोनोंको देखि इन्द्र विस्मित होके बोलत भयो. इन्द्र बोले—कि, तुम दोनों कहो कौनसे पुण्यसों तुम्हारी पिशाचयोनि दूर हुई ॥४५॥ मेरे शापके वशमें आये भये जे तुम दोनों हो तिनको कौनसे देवने छुडायो ! माल्यवान् बोले—कि. वासुदेवके प्रसादसों और जयाके व्रत करिके ॥ ४६ ॥ हे स्वामी ! भक्तिके प्रसादसों हमारो पिशाचत्व दूरिभयो यह सत्यहै वाको यह वचन सुनिके इन्द्र फिरि बोलत भये ॥४७॥ इन्द्र बोले—कि,हरिवासरके करनहारे विष्णुभक्तिमें परायण आप पवित्र और दूसरेकोपवित्रकरनहारेतुम

दोनों मेरेहू नमस्कार करने योग्य भये ॥ ४८ ॥ जे मनुष्य हरिभक्तिमें रत हैं और शिवभक्तिमें रत हैं वे मनुष्य हमकोहू पूज्य और नमस्कारकरने योग्य हैं यामें सन्देह नहीं है ॥ ४९॥ आनंदसों पुष्पवतीके साथ स्वर्गमें विहार करो हे राजन् ! या कारणसों हरिवासर करनो योग्य है ॥५०॥ हे राजेंद्र ! जयाको व्रत ब्रह्महत्याको हरि लेनवारो है हे राजन् ! वाने सब दान दिये और सब यज्ञ किये ॥ ५१ ॥ और वह सब तीर्थनमें भली

हरिभक्तिरता ये च शिवभक्तिरतास्तथा ॥ अस्माकमपि ते मर्त्याः पूज्या वंद्या न संशयः ॥ ४९ ॥ विहरस्व यथासौख्यं पुष्पवत्या सुरालये ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्कर्तव्यो हरिवासरः ॥ ५० ॥ जयाव्रतं तु राजेन्द्र ब्रह्महत्यापहारकम् ॥ सर्वदानानि दत्तानि यज्ञास्तेन कृता नृप ॥ ५१ ॥ सर्वतीर्थेषु स स्नातः कृतं येन जयाव्रतम् ॥ यः करोति नरो भक्त्या श्रद्धायुक्तो जयाव्रतम् ॥ ५२ ॥ कल्पकोटिशतं यावद्वैकुण्ठे मोदते ध्रुवम् ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन्नग्निष्टोमफलं लभेत् ॥ ५३ ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे माघशुक्लैकादशीजयामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ ६ ॥

भांति न्हायो जाने जयाको व्रत कीन्हो । जो मनुष्य श्रद्धायुक्त हो भक्तिसों जयाको करै है ॥ ५२ ॥ वह निश्चय करिके सौ करोड कल्पपर्यंत वैकुण्ठमें आनंद करै है हे राजन् ! या माहात्म्यके पढने और सुननेते अग्निष्टोम यज्ञके फलको प्राप्त होय है ॥ ५३ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशी माहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां माघशुक्लैकादशीकथा समाप्ता ॥ ६ ॥

अथ फल्गुनकृष्णैकादशीकथा ॥ अथ फाल्गुनकृष्णे या विजयैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां कुर्वे प्रदीपिकाम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले—कि, फाल्गुनके कृष्णपक्षमें जो एकादशी होय ताको कहा नाम है हे वासुदेव ! सो मोसो प्रसन्न होके कहो॥१॥श्रीकृष्ण बोले—कि,हेराजेंद्र फाल्गुनके कृष्णपक्षमें जो एकादशी होयहै वाको नाम विजया है व्रत करनेवाले मनुष्यनको सदा जयको देनेहारीहै वाकी कथा मैं कहूँगो ॥ २ ॥

अथ फाल्गुनकृष्णैकादशी कथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ फाल्गुनस्यासिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ वासुदेवप्रसादेन कथयस्व ममाग्रतः ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ कथयिष्यामि राजेंद्र कृष्णे या फाल्गुने भवेत ॥ विजयेति च सा प्रोक्ता कर्तृणां जयदा सदा ॥ २ ॥ तस्याश्च व्रतमाहात्म्यं सर्वपापहरं परम् ॥ नारदः परिपप्रच्छ ब्रह्माणं कमलासनम् ॥ ३ ॥ फाल्गुनस्यासिते पक्षे विजया नाम या तिथिः ॥ तस्या व्रतं सुरश्रेष्ठ कथयस्व प्रसादतः ॥ ४ ॥ इति पृष्टो नारदेन प्रत्युवाच पितामहः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु नारद वक्ष्यामि कथां पापहरां पराम् ॥ ५ ॥ पुरातनं व्रतं ह्येतत्पवित्रं पापनाशनम् ॥ यन्न कस्यचिदाख्यातं मयैतद्विजयाव्रतम् ॥ ६ ॥

वाके व्रतको माहात्म्य सब पापनको हरनवारो है, एक समय नारद मुनि कमलासन ब्रह्मासे पूँछत भये ॥ ३ ॥ कि फाल्गुनको कृष्णपक्षमें विजया नाम जो एकादशी तिथि होय है यह सुरश्रेष्ठ ! ताको व्रत प्रसन्न होके मोसों कहो ॥ ४ ॥ या प्रकार नारदमुनि करि पूछे गये पितामह बोलत भये । ब्रह्मा बोले—कि, हे नारद ! सुनो उत्कृष्ट पापकी हरनहारी वह मैं तुमसों कहोंगो ॥५॥ यह व्रत पुरानो पवित्र है और पापनको नाश करने

हारो है जो यह विजयाको व्रत मैंने काहूसों नहीं कह्यो ॥ ६ ॥ यह विजया मनुष्य को जय देय है यामें कुछ संदेह नहीं है चौदह वर्षनके लिये रामचन्द्र तपोवनको जात भये ॥ ७ ॥ और सीता लक्ष्मण समेत पंचवटी में वास करत भये वहां बसतेभयेउन महात्मा राम की ॥ ८ ॥ सीता नाम तपस्विनी स्त्री रावणने हरि लीन्ही वा दुःखसों वा समय राम मोहको प्राप्त होत भये ॥ ९ ॥और वहां भ्रमण करते हुए वे मरे भयेसे जटायुको

जयं ददाति विजया नृणां चैव न संशयः ॥ रामस्तपोवनं यातो वर्षाण्येव चतुर्दश ॥ ७ ॥ न्यवसत्पञ्चवटयां तु ससीतश्च सलक्ष्मणः ॥ तत्रैव वसतस्तस्य राघवस्य महात्मनः ॥ ८ ॥ रावणेन हृता भार्या सीतानाम्नी तपस्विनी ॥ तेन दुःखेन रामोऽसौ मोहमभ्यागतस्तदा ॥ ९ ॥ भ्रमञ्जटायुषं तत्र ददर्श विगतायुषम् ॥ कबन्धो निहतः पश्चाद्भ्रमतोऽरण्यमध्यतः ॥ १० ॥ राज्ञे विज्ञाप्य तत्सर्वं सोऽपि मृत्युवशं गतः ॥ सुग्रीवेण समं सख्यं रामस्य समजायत ॥ ११ ॥ वानराणामनीकानि रामार्थं सगतानि वै ॥ ततो हनुमता दृष्टा लंकोद्याने तु जानकी ॥ १२ ॥ रामसंज्ञापनं तस्यै दत्तं कर्म महत्कृतम् ॥ समेत्य रामेण पुनः सर्वं तत्र निवेदितम् ॥ १३ ॥

देखते भये फिर पीछे वनमें भ्रमते भये उन्होंने कवंध राक्षसको मारो ॥ १ ॥ राजासों वह सब कहिके मृत्युको प्राप्त होत भयो और सुग्रीवके साथ रामचन्द्रकी मित्रता होत भई॥ ११ ॥और रामचंद्रके लिये वानरकी सेना इकट्ठी भइ तापीछे लंकाके बगीचे में हनुमान्‌जी जानकीको देखतभये ॥ १२ ॥ रामचंद्रके चिह्न (अँगूठी)सीताजीको दई और बडा भारी काम कीन्ह फिर रामचन्द्रसों मिलके वहांका सब वृत्तांत कहते भये ॥ १३ ॥

या पीछे रामचंद्र हनुमान्‌का वचन सुनिके सुग्रीवकी सम्मतिसों यात्रा करत भये॥१४॥वानर जिनको प्यारेहैं ऐसे रामचंद्र वानरों समेत समुद्रके तीरमें जायके वाको दुःखसों उतरिवे योग्य देखि विस्मित होत भये॥१५॥फिरि उत्फुल्ल नेत्र होके लक्ष्मणसों वचन बोलत भये कि,हे सौमित्रे ! अर्थात् सुमित्रापुत्र लक्ष्मण ! कौनसे पुण्यकरिके यह समुद्र उतरो जाय॥१६॥अगाध जलसों पूर्ण है और भयानक मगरों करिके भरो है कोई उपाय नहीं देखा

अथ श्रुत्वा रामचन्द्रो वाक्यं चैव हनूमतः॥सुग्रीवानुमतेनैव प्रस्थानं समरोचयत्॥१४॥ स गत्वा वानरैः सार्धं तीरं नदनदीपतेः॥ दृष्ट्वाऽब्धिं दुस्तरं रामो विस्मितोऽभूत्कपिप्रियः ॥ १५ ॥ प्रोत्फुल्ललोचनो भूत्वा लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ सौमित्रे केन पुण्येन तीर्यते वरुणालयः ॥ १६ ॥ अगाधसलिलैः पूर्णो नक्रैर्मीनैः समाकुलः ॥ उपायं नैवपश्यामि येनायं सुतरो भवेत् ॥१७॥ लक्ष्मण उवाच ॥ आदिदेवस्त्वमेवासि पुराणपुरुषोत्तमः ॥ बकदाल्भ्यो मुनिश्चात्र वर्त्तते द्वीपमध्यतः ॥ १८ ॥ अस्मात्स्थानाद्योजनार्ध माश्रमस्तस्य राघव॥अनेन दृष्टा बहवो ब्रह्माणो रघुनंदन॥१९॥ तं पृच्छ गत्वा राजेन्द्र पुराणऋषिपुङ्गवम्॥इति वाक्यं ततः श्रुत्वा लक्ष्मणस्यातिशोभनम् ॥२०॥ जगाम राघवो द्रष्टुं बकदाल्भ्यं महामुनिम् ॥ प्रणनाम मुनिं मूर्ध्ना रामो विष्णुमिवामराः ॥२१॥

जाता यह सुखसों उतरिवे योग्य होय ॥ १७ ॥ लक्ष्मण बोले–कि, महाराज ! आदिदेव और पुराणपुरुषोत्तम आपही हो यह द्वीपके मध्यमें बकदाल्भ्य नाम मुनि निवास करैं हैं ॥१८॥हे राघव!या स्थानसों दो कोशपर उनको आश्रम है हे रघुनन्दन ! इस मुनिकरके बहुतसे ब्रह्मा देखे गये हैं॥१९॥हे राजेंद्र!वहां जायके उन श्रेष्ठमुनिसे पूछिये ता पीछे लक्ष्मणको यह अतिसुन्दर वचन सुनिके ॥२०॥ रामचन्द्र बकदाल्भ्य मुनिके दर्शनको

जात भये और दूसरे विष्णु के समान बैठे भये मुनिको प्रणाम करते भये ॥ २१ ॥ ता पीछे मुनि रामको पुराणपुरुषोत्तम जानिके बोलत भये कि हे राम ! तुम्हारो आगमन कैसे भयो ॥२॥ रामचन्द्र बोले—कि हे विप्र ! आपके प्रसादसों मैं राक्षसन समेत लंकाके जीतिवेको सेना सहित समुद्रके तटमें आयो हौं ॥२३॥ आपकी अनुकूलतासों जा प्रकार मोकरिके समुद्र उतरो जाय हे मुने ! सो उपाय मोको बताओ हे सुव्रत! प्रसन्न होउ ॥२४॥

मुनिर्ज्ञात्वा ततो रामं पुराणपुरुषोत्तमम् ॥ उवाच स ऋषिस्तत्र कुतो रामस्तवागमः ॥ २२ ॥ राम उवाच ॥ त्वत्प्रसादादहो विप्र वरुणालयसन्निधिम् ॥ आगतोऽत्र ससैन्योऽस्मि लंकां जेतुं सराक्षसाम् ॥ २३ ॥ भवतश्चानुकूल्येन तीर्यतेऽब्धिर्यथा मया ॥ तमुपायं वद मुने प्रसादं कुरु सुव्रत ॥ २४ ॥ मुनिरुवाच ॥ कथयिष्याम्यहं राम व्रतानां व्रतमुत्तमम् ॥ कृतेन येन सहसा विजयस्ते भविष्यति ॥ २५ ॥ लङ्कां जित्वा राक्षसांश्च दीर्घां कीर्तिमवाप्स्यसि ॥ एकाग्रमानसो भूत्वा व्रतमेतत् समाचर ॥ २६ ॥ फाल्गुनस्यासिते पक्षे विजयैकादशी भवेत ॥ तस्या व्रते कृते राम विजयस्ते भविष्यति ॥ २७ ॥ निस्संशयं समुद्रं च तरिष्यसि सवानरः ॥ विधिश्च श्रूयतां राम व्रतस्यास्य फलप्रदः ॥ २८ ॥

मुनि बोले—कि, हे रामचन्द्र ! मैं सब व्रतनमें उत्तम व्रत कहौंगो जाको करनेसों शीघ्रही तुम्हारो विजय होयगो ॥ २५ ॥ और राक्षस समेत लंकाको जीतिके तुम बडी कीर्तिको प्राप्त होउगे एकाग्र मन होके या व्रत को करो ॥२६॥ फाल्गुनके कृष्णपक्षमें विजया नाम एकादशी होय है हे राम ! वाको व्रत करनेसों तुम्हारो विजय होयगो ॥२७॥ औरनिस्संदेह वानरन समेत समुद्रको उतरोगे और फलनके देनेहारे या व्रतकी विधि सुनो ॥२८॥

दशमीको दिन आवे तब सोनेको वा चांदीको वा तांबेको अथवा मिट्टीको एक घट बनवावै ॥ २९ ॥ जलसों भरे भये पत्तों समेत शोभायमान वा कलशको स्थापन करै ताके ऊपर सोनेकी बनीभई प्रभुनारायणकी मूर्ति स्थापित करै ॥३०॥ और एकादशीके दिन प्रातःकाल स्नान करै फिर चन्दन माला आदि चढ़ाके वा कुम्भको निश्चल स्थापित करै॥३१॥अनार तथा नारियलसों विशेष करि वाको पूजन करै और

दशमीदिवसे प्राप्ते कुम्भमेकं च कारयेत् ॥ हैमं वा राजतं वापि ताम्रं वाप्यथ मृन्मयम् ॥ २९ ॥ स्थापयेच्छोभितं कुम्भं जलपूर्णं सपल्लवम् ॥ तस्योपरि न्यसेद्देवं हैमं नारायणं प्रभुम् ॥ ३० ॥ एकादशीदिने प्राप्ते प्रातः स्नानं समाचरेत् ॥ निश्चले स्थापिते कुम्भे गन्धमाल्यानुलेपिते ॥ ३१ ॥ दाडिमैर्नारिकेलैश्च पूजयेच्च विशेषतः ॥ सप्तधान्यान्यधस्तस्य यवानुपरि विन्यसेत् ॥ ॥ ३२ ॥ गन्धैर्धूपैस्तथा दीपैर्नैवेद्यैर्विविधैरपि ॥ कुम्भाग्रे तद्दिने राम नीयते भक्तिभावतः ॥ ३३ ॥ रात्रौ जागरणं चैव तस्याग्रे कारयेद्बुधः ॥ द्वादशे दिवसे प्राप्ते मार्तण्डस्योदये सति ॥३४॥नीत्वा कुम्भं जलोद्देशे नद्यां प्रस्रवणे तथा ॥ तडागे स्थापयित्वा वा पूजयित्वा यथाविधि ॥ ३५ ॥ दद्यात्सदैवतं कुम्भं ब्राह्मणे वेदपारगे ॥ कुम्भेन सह राजेन्द्र महादानानि दापयेत् ॥३६॥

वाके नीचे सतनजा बिछावै और ऊपर सरवामें जौ भरिके धरै ॥३२॥ हे राम ! गंध, धूप, दीप और नानाप्रकारके नैवेद्यनसों कुम्भके उपर जो स्थापित नारायणकी मूर्ति है ताको भक्तिसों पूजन करै ॥ ३३ ॥ और वहां मूर्तिके आगे रात्रिमें जागरण करै और फिर द्वादशीको सूर्यका उदय होने पै ॥ ३४ ॥ कुम्भको लेके नदीमें वा झरनेमें अथवा तालाबके जलमें स्थापित करके यथाविधि पूजा करै ॥ ३५ ॥ फिर वा कुम्भको देवताकी

प्रतिभासमेत वेदपाठी ब्राह्मणको दान करदे और हे राजेन्द्र ! कुम्भके साथ महादानोंको दे ॥ ३६ ॥ हे राम ! या विधिसों अपने यूथप सेनाके अधिकारिनसमेत यत्नसों व्रत करो तुम्हारो विजय होयगो ॥ ३७ ॥ या वचनको सुनिके वा समय मुनिके कहनेके अनुसार जया एकादशीको व्रत करतभये और व्रत करने पै वे रघुनन्दन विजयी होत भये ॥ ३८ ॥ हे राजन् ! जे मनुष्य या विधिसों व्रतको करेंगे तिनको या लोक तथा पर

अनेन विधिना राम यूथपैस्सह संगतः ॥ कुरु व्रतं प्रयत्नेन विजयस्ते भविष्यति ॥ ३७ ॥ इति श्रुत्वा वचो रामो यथोक्तमकरो द्व्रतम् ॥ कृते व्रते स विजयी बभूव रघुनन्दनः ॥ ३८ ॥ अनेन विधिना राजन् ये कुर्वन्ति नरा व्रतम् ॥ इह लोके जयस्तेषां परलोके सदा जयः ॥ ३९ ॥ एतस्मात्कारणात्पुत्र कर्तव्यं विजयाव्रतम् ॥ पठनाच्छ्रवणात्तस्य वाजपेयफलं लभेत् ॥ ४० ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे फाल्गुनकृष्णैकादश्या विजयानाम्न्या माहात्म्यं समाप्तम् ॥ ७ ॥

लोकमें जय होयगो ॥ ३९ ॥ ब्रह्मा नारदमुनिसों कहैं हैं कि, हे पुत्र ! या कारणसों व्रत करनो चाहिये वाके पढने अथवा श्रवण करनेसों वाजपेय यज्ञको फल प्राप्त होय है ॥ ४० इति श्रीमत्पण्डितसुखतनय पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायामेकादशीमाहात्म्यटीकायां दीपिकासमाख्यायां फाल्गुनकृष्णैकादशीकथा समाप्ता ॥ ७ ॥

अथ फाल्गुनशुक्लैकादशी कथा ॥ फाल्गुनस्य सिते पक्षे प्रसिद्धाऽऽमलकीति या ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां व्याख्यां कुर्वे सुदीपिकाम् ॥ १ ॥ मांधाता बोले—कि, हे ब्रह्मयोने ! अर्थात् ब्रह्माके पुत्र हे महाभाग ! हमारे ऊपर आपकी दया है तो ऐसो व्रत कहो जाते हमारो कल्याण होय ॥ १ ॥ वसिष्ठमुनि बोले—कि, रहस्य और इतिहास समेत सब फलके देनेहारे सब व्रतनते उत्तम व्रतको मैं कहौं हौं ॥ २ ॥ हे राजन् !

अथ फाल्गुनशुक्लैकादशीकथा ॥ मान्धातोवाच ॥ वद ब्रह्मन्महाभाग येन श्रेयो भवेन्मम ॥ ईदृग्व्रतं ब्रह्मयोने तेऽनुकम्पाऽस्ति चेन्मयि ॥ १ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ सरहस्यं सेतिहासं व्रतानां व्रतमुत्तमम् ॥ कथयाम्यधुना तुभ्यं सर्वभूतफलप्रदम् ॥ २ ॥ आमलक्या व्रतं राजन् महापातकनाशनम् ॥ मोक्षदं सर्वलोकानां गोसहस्रफलप्रदम् ॥ ३ ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ यथा मुक्तिमनुप्राप्तो व्याधो हिंसासमन्वितः ॥ ४ ॥ वैदिशं नाम नगरं हृष्टपुष्टजनाकुलम् ॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैश्च समलंकृतम् ॥ ५ ॥ रुचिरं नृपशार्दूल ब्रह्मघोषनिनादितम् ॥ न नास्तिको न दुर्वृत्तस्तस्मिन् पुरवरे सदा ॥ ६ ॥

आमलकी नाम एकादशीको व्रत महापातकको नाश करनहारो है, सब लोकनको मोक्ष देनहारो और सहस्र गोदानके फलको देनेहारो है ॥ ३ ॥यहां या पुराने इतिहासको उदाहरण करै हैं जैसे हिंसामें लग्यो भयो व्याध मोक्षको प्राप्त होत भयो ॥ ४ ॥ हृष्ट पुष्ट मनुष्यनसों भरो भयो और ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इनकरिके शोभित वैदिश नाम नगर है॥५॥हे नृपशार्दूल अर्थात् राजनमें श्रेष्ठ!वह नगर बहुतसुन्दर और

वेदध्वनि करिके शब्दायमान हो और वा पुरमें नास्तिक तथा कुचाली कोई मनुष्य नहीं हो ॥ ६ ॥ वा पुरमें चन्द्रवंशी शशबिन्दु नाम विख्यात राजा होत भयो ताके वंशमें सत्यप्रतिज्ञा वारो चैत्ररथ नाम राजा उत्पन्न भयो ॥७॥श्रीमान् वा राजामें दशहजार हाथिनको बलहो शस्त्र और शास्त्रविद्याका पारगामीहो । हे प्रभो ! वाके पृथ्वीमें राज्य करनेके समय ॥८॥ कृपण और कुचाली मनुष्य कोई नहीं दिखाई देतो और वाके

तत्र सोमान्वये राजा विख्यातश्शशबिन्दुकः ॥ राजा चैत्ररथो नाम धर्मात्मा सत्यसंगरः ॥ ७ ॥ नागायुतबलः श्रीमान् शस्त्रशास्त्रार्थपारगः ॥ तस्मिन् शासति धर्मज्ञे धर्मात्मनि धरां प्रभो ॥ ८ ॥ कृपणो नैव कुत्रापि दृश्यते नैव निर्धनः ॥ सुकालः क्षेममारोग्यं तस्मिन् राज्यं प्रशासति ॥ ९ ॥ विष्णुभक्तिरता लोकास्तस्मिन्न पुरवरे सदा ॥ हरपूजारताश्चैव राजाचापि विशेषतः ॥ १० ॥ न कृष्णायां न शुक्लायां द्वादश्यां भुञ्जते जनाः ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य हरिभक्तिपरायणाः ॥ ११ ॥ एवं संवत्सरा जग्मुर्बहवो राजसत्तम ॥ जनस्य सौख्ययुक्तस्य हरिभक्तिरतस्य च ॥ १२ ॥ अथ कालेन संप्राप्ता द्वादशी पुण्यसंयुता ॥ फाल्गुनस्य सिते पक्षे नाम्ना ह्यामलकी स्मृता ॥ १३ ॥

राज्यमें सदा सुकाल क्षेम और आरोग्य रहते ॥ ९ ॥ वाके राज्यमें सब लोग विष्णुभक्तिमें तथा शिवकी पूजामें रत रहते और वह राजा विशेष करि पूजा करतो ॥ १० ॥ शुक्लपक्षकी द्वादशी युक्त एकादशीके दिन कोई भोजन नहीं करते और सब धर्मनको छोडिके हरिकी भक्तिमें तत्पर रहते ॥ ११ ॥ हे राजसत्तम । या प्रकार बहुतसे वर्ष व्यतीत हुए सब मनुष्य वहांके सुखयुक्त हरिभक्तिमें रत भये ॥१२॥ या पीछे कुछकालमें

फाल्गुनके शुक्लपक्षकी द्वादशीके पुण्ययुक्त आमलकी नाम एकादशी प्राप्त भई ॥ १३ ॥ हे राजन् ! वाको प्राप्त होके हे विभो ! बालक बूढे सब लोग नियमसों व्रतको करते भये ॥ १४ ॥ महाफलयुक्त व्रतको जानिके नदीके जलमें स्नान करिके वहां देवालयमें वह महाराजा सब लोगन समेत स्थित होत भयो ॥ १५ ॥ छत्र और उपानहयुक्त तथा पञ्चरत्ननकरि युक्त तथा दिव्य गन्धसों सुगंधित घटको स्थापित करतभयो ॥१६॥

तामवाप्य जनाः सर्वे बालकास्स्थविरा नृप ॥ नियमं चोपवासं च सर्वे चक्रुर्नरा विभो ॥ १४ ॥ महाफलं व्रतं ज्ञात्वा स्नानं कृत्वा नदीजले ॥ तत्र देवालये राजा लोकयुक्तो महाप्रभुः ॥ १५ ॥ पूर्णकुम्भमवस्थाप्य छत्रोपानहसंयुतम् ॥ पंचरत्नसमायुक्तं दिव्यगंधादिवासितम् ॥ १६ ॥ धात्रि धातृसमुद्भूते सर्वपातकनाशिनि ॥ आमलकि नमस्तुभ्यं गृहाणार्घोदकं मम ॥ १७ ॥ धात्रि ब्रह्मस्वरूपाऽसि त्वं तु रामेण पूजिता ॥ प्रदक्षिणविधानेन सर्वपापहरा भव ॥ १८ ॥ तत्र जागरणं चक्रुर्जनाः सर्वे स्वभक्तितः ॥ एतस्मिन्नेव काले तु व्याधस्तत्र समागतः ॥ १९ ॥ क्षुधाश्रमपरिव्याप्तो महाभारेण पीडितः ॥ कुटुम्बार्थं जीवघाती सर्वधर्मबहिस्कृतः ॥ २० ॥

हे ब्रह्मासों उत्पन्न धात्री कहिये आमलके वृक्ष ! हे सब पापोंकी नाश करनहारी आमलकी ! तुमको नमस्कार है मेरो अर्घको जल ग्रहण करो ॥ १७ ॥ हे धात्री ! तुम ब्रह्मस्वरूप हो और तुम रामचन्द्र करिके पूजीगई हो प्रदक्षिणाके करनेसो तुम मेरे सर्व पापनको दूरि करो ॥१८॥ वहां सर्व मनुष्य भक्तिसों जागरण करतभये वाही समय एक बहेलिया वहां आवत भयो ॥ १९ ॥ वह भूँख और श्रमसों व्याप्त होरहो तथा भारी बोझसो

पीडित हो और कुटुंबके लिये जीवको मारनहारो वह सब धर्मनते बाहर हो ॥ २० ॥ क्षुधाकरिके युक्त वह वहां आमलकीको जागरण और वहां धरे दीपनते भरो भयो वह स्थान देख वहां जाय बैठ्यो ॥ २१ ॥ यह क्या है ऐसे सोचिके अत्यंत विस्मयको प्राप्त होत भयो और वहां कुंभ देख्यो ताके ऊपर दामोदर देवको देखत भयो ॥ २२ ॥ और आमलेको वृक्ष देख्यो और वहां धरे दीपकनको देखत भयो और कहते भये मनु

जागरं तत्र सोऽपश्यदामलक्यां क्षुधान्वितः ॥ दीपमालाकुलं दृष्ट्वा तत्रैव निषसाद सः ॥ २१ ॥ किमेतदिति संचिन्त्य प्राप्तो विस्मयतां भृशम् ॥ ददर्श कुम्भं तत्रस्थं देवं दामोदरं तथा ॥ २२ ॥ ददर्शामलकीवृक्षं तत्रस्थांश्चैव दीपकान् ॥ वैष्णवं च तथाऽऽख्यानं शुश्राव पठतां नृणाम् ॥ २३ ॥ एकादश्याश्च माहात्म्यं शुश्राव क्षुधितोऽपि सन् ॥ जाग्रतस्तस्य सा रात्रिर्गता विस्मितचेतसः ॥ २४ ॥ ततः प्रभातसमये विविशुर्नगरं जनाः। व्याधोऽपि गृहमागत्य बुभुजे प्रीतमानसः ॥ २५ ॥ ततः कालेन महता व्याधः पंचत्वमागतः ॥ एकादश्याः प्रभावेण रात्रौ जागरणेन च ॥२६॥ राज्यं प्रपेदे सुमहच्चतुरङ्गबलान्वितम् ॥ जयन्ती नाम नगरी तत्र राजा विदूरथः ॥ २७ ॥

ष्यनते विष्णुकी कथा सुनत भयो ॥ २३ ॥ और भूखे होते हूं एकादशीको माहात्म्य सुनतभयो वा विस्मित मनवालेको रात्री जागतही बीती ॥ २४ ॥ ता पीछे प्रभातके समयमें सर्वलोक नगरको जात भये और व्याधहूं घरमें आयके प्रसन्न मनसों भोजन करत भयो ॥ २५ ॥ता पीछे बहुत कालमें मृत्युको प्राप्त होव भयो एकादशीके प्रभावसों और रात्रिके जागरणसों ॥ २६ ॥ वह व्याध चतुरंगसेना करिके युक्त राज्यको प्राप्त

होतभयो जयंती नाम नगरी ताको राजा विदूरथ नाम होत भयो ॥२७॥ ता राजाको चतुरंग सेना करिके युक्त बलवान् धनधान्ययुक्त वसुरथ नाम पुत्र होत भयो ॥ २८ ॥ वह निर्भय दशहजार ग्रामनको भोग करत भयो वह तेजकरि सूर्यके समान और कांतिकरि चन्द्रमाके समान हो ॥२९॥ और पराक्रमते विष्णुके समान तथा क्षमा करिके पृथ्वीके समान हो और धर्मात्मा सत्यवक्ता तथा विष्णुभक्तिमें परायण होत भयो॥३०॥

तस्मात्स तनयो जज्ञे नाम्ना वसुरथो बली ॥ चतुरङ्गबलोपेतो धनधान्यसमन्वितः ॥ २८ ॥ दशायुतानि ग्रामाणां बुभुजे भयवर्जितः ॥ तेजसाऽऽदित्यसङ्काशः कांत्या चन्द्रसमप्रभः ॥ २९ ॥ पराक्रमे विष्णुसमः क्षमया पृथिवीसमः ॥ धार्मिकः सत्यवादी च विष्णुभक्तिपरायणः ॥ ३० ॥ ब्रह्मज्ञः कर्मशीलश्च प्रजापालनतत्परः ॥ यजते विविधान्यज्ञान्स राजा परदर्पहा ॥ ३१ ॥ दानानि विविधान्येव प्रददाति च सर्वदा ॥ एकदा मृगयां यातो दैवान्मार्गपरिच्युतः ॥ ३२ ॥ न दिशो नैव विदिशो वेत्ति तत्र महीपतिः ॥ उपधाय च दोर्मूलमेकाकी गहने वने ॥ ३३ ॥

ब्रह्मज्ञानी और कर्म करनहारो वह प्रजापालनमें तत्पर होत भयो और शत्रुके गर्वको दूरि करनहारो वह राजा नानाप्रकारके राजसूय आदि यज्ञ करत भयो ॥ ३१ ॥ वह सदा नानाप्रकारके दान देतो एकबार शिकारको गयो भयो वह राजा दैवयोगसों राह भूल जात भयो ॥३२॥ वहां राजाको दिशा विदिशाको ज्ञान नहीं रह्यो तब अपनी बाँह सिरहाने देके परि रहत भयो ॥ ३३ ॥

अत्यन्त थको भयो वह राजा भूखोंही सोय रहत भयो या बीचमें पर्वतनको निवासी म्लेच्छनको समूह ॥ ३४ ॥ वहां आवत भयो जहां शत्रुके बलको नाशकरनहारो वह राजा परोहो राजा करिके वैर किये वे सदा दुःखी हैं ॥ ३५ ॥ ता पीछे वे सब भूरिदक्षिण राजाको घेरि ठाढे होत भये और पहिले वैरसो सिद्ध है बुद्धि जाकी ऐसे या राजाको मारो मारो ऐसे कहत भये ॥३६ ॥पहिले याने हमारे पिता भाई और पुत्र

श्रांतश्च क्षुधितोऽत्यन्तं संविवेश महीपतिः ॥ अत्रान्तरे म्लेच्छगणःपर्वतान्तरवासभाक् ॥ ३४ ॥ आययौ तत्र यत्रास्ते राजा परबलार्दनः ॥ कृतवैरास्तु ते राज्ञा सर्वदैवोपतापिताः ॥ ३५ ॥ परिवार्य ततस्तस्थू राजानं भूरिदक्षिणम् ॥ हन्यतां हन्यतां चायं पूर्ववैरविरुद्धधीः ॥ ३६ ॥ अनेन निहताः पूर्वं पितरो भ्रातरः सुताः ॥ पौत्राश्च भागिनेयाश्च मातुलाश्च निपातिताः ॥ ३७ ॥ निष्कासिताश्च स्वस्थानाद्विक्षिप्ताश्च दिशो दश ॥ एतावदुक्त्वा ते सर्वे तत्रैनं हंतुमुद्यताः ॥ ३८ ॥ पाशैश्च पट्टिशैः खड्गैर्बाणैर्धनुषि संस्थितैः ॥ सर्वतोऽरिगणास्ते च राजानं हन्तुमुद्यताः ॥ ३९ ॥ सर्वाणि शस्त्राणि समाद्रवन्ति न वै शरीरे प्रविशंति तस्य ॥ ते चापि सर्वे हतशस्त्रसंघा म्लेच्छा बभूवुर्गतदेहजीवाः ॥ ४० ॥

मारे हैं और पौत्र भानजे तथा मामाहू मारे हैं ॥ ३७ ॥ और अपने स्थानते निकारे गये हम दशों दिशानमें फैल गये इतना कहिके वे वहां वा राजाके मारिबेको उद्यत होत भये ॥ ३८ ॥पाश,पट्टिश, खड्ग और धनुषमें चढाये भये बाणनसों वे शत्रुनके समूह राजाके मारिबेको उद्यत होत भये ॥३९॥सब शस्त्र दौरते परन्तु वा राजाके शरीरमें नहीं प्रवेश करते तब नष्ट होगये हैं शस्त्रनके समूह जिनके ऐसे म्लेच्छनकेदेहगतजीव अर्थात्

मरेसे हो जाते भये ॥ ४० ॥ वहां वे शत्रु एक पगभरिहू आगे चलनेको न समर्थ होत भये और नष्ट हैं चित्त जिनके ऐसे उन सब म्लेच्छ-
नके शस्त्रहू भोथरे हो जात भये ॥ ४१ ॥ जे राजाके मारनेको आये हैं वे सब दीन होजात भेय याहि समयमें वा राजाके शरीरते ॥ ४२ ॥
सम्पूर्ण अंगनसों शोभायमान एक स्त्री निकसत भई वही दिव्यगन्ध करिके शोभित्त और दिव्यही आभरणसों भूषित ही ॥ ४३ ॥

पदापि चलितुं तत्र न शेकुस्तेऽरयो भृशम् ॥ शस्त्राणि कुण्ठतां जग्मुः सर्वेषां हतचेतसाम् ॥ ४१ ॥ दीना बभूवुस्ते सर्वे यं ते
हन्तुं समागताः ॥ एतस्मिन्नेव काले तु तस्य राज्ञः शरीरतः ॥ ४२ ॥ निःसृता प्रमदा ह्येका सर्वावयवशोभना ॥ दिव्यगन्ध
समायुक्ता दिव्याभरणभूषिता ॥ ४३ ॥ दिव्यमाल्यांबरधरा भ्रुकुटीकुटिलानना । सस्फुलिंगं च नेत्राभ्यां वमन्ती पावकं
बहु ॥ ४४ ॥ चक्रोद्यतकरा चैव कालरात्रिरिवापरा ॥ अभ्यधावत संक्रुद्धा म्लेच्छानत्यन्तदुःखितान् ॥ ४५ ॥ निहताश्च
यदा म्लेच्छास्ते विकर्मरतास्तया ॥ ततो राजा विबुद्धः सन् ददर्श महदद्भुतम् ॥ ४६ ॥ हतान् म्लेच्छगणान्दृष्ट्वा राजा
हर्षमवाप सः ॥ इह केन हता म्लेच्छा अत्यन्तं वैरिणो मम ॥ ४७ ॥

और दिव्यमाला तथा दिव्य ही वस्त्रनको धारण करेही और क्रोधके मारे वाकी भौंह टेढी हो रही हैं और नेत्रकरि चिनगारियों समेत बहुतसी
आगिको उगलती ही ॥ ४४ ॥ दूसरी काल रात्रिके समान क्रोधित हो हाथमें चक्र लेके अति दुखित म्लेच्छनपर दौरत भई ॥ ४५ ॥ जब
निषिद्धकर्ममें लगे भये वे म्लेच्छ वा स्त्री करके मारे गये तब राजा जागो और अद्भुत काम देखत भयो॥४६॥राजा म्लेच्छनको मारे देखि आन

न्दको प्राप्त होत भयो और कहत भयो कि, मेरे बडे बैरी म्लेच्छ यहां किसने मारा ॥ ४७ ॥ हमारे हितको चाहनवारो कौन है जाने यह बडो भारी कर्म कियो वाहि समय आकाशवाणी होत भई ॥ ४८ ॥ विस्मययुक्त बैठे भये वा राजाको देखि आकाशवाणीने कह्यो कि, केशव भगवान्‌ने दूसरो कोई और शरण अर्थात् रक्षक नहीं है ॥ ४९ ॥ वा वनते कुशलसों आयो भयो वह धर्मात्मा राजा पृथ्वीमें इन्द्रके समान राज्य

केन चेदं महत्कर्म कृतमस्मद्धितार्थिना ॥ एतस्मिन्नेव काले तु वाग्बभाषाशरीरिणी ॥ ४८ ॥ तं स्थितं नृपतिं दृष्ट्वा निष्कामं विस्मयान्वितम् ॥ शरणं केशवादन्योनास्तिकोऽपि द्वितीयकः ॥ ४९ ॥ वनात्तस्मात्स कुशली समायातोऽपि भूमिभुक् ॥ राज्यं चकार धर्मात्मा धरायां देवतेशवत् ॥ ५० ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ तस्मादामलकीं राजन् ये कुर्वंति नरोत्तमाः ॥ ते यांति वैष्णवं लोकं नात्र कार्या विचारणा ॥ ५१ ॥ इति श्रीब्रह्मांडपुराणे फाल्गुनशुक्लैकादश्यामलकीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ ८ ॥

करत भयो ॥ ५० ॥ वसिष्ठ मुनि बोले—कि, हे राजन् ! ताते जे उत्तम मनुष्य आमलकीको व्रत करै हैं वे विष्णुलोकको जाँय हैं यामें विचार नहीं करनो चाहिये ॥ ५१ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां फाल्गुनशुक्लैकादशीकथा समाप्ता ॥ ८ ॥

अथ चैत्रकृष्णैकादशीकथा ॥ मधुमास्यसिते पक्षे पापमोचनिकेति या ॥ एकादशी भवेत्तस्या माहात्म्यं विवृणोम्यहम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर बोले-कि फाल्गुनके शुक्लपक्षकी आमलकी नाम एकादशीको माहात्म्य मैंने सुनो चैत्र महीनेके कृष्णपक्षकी एकादशीको कहा नाम है सो कहो ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले-कि, हे राजेंद्र ! अनजाने भये पापकी नाश करनहारी यह एकादशी है जो चक्रवर्ती मान्धाता राजाके पूँछनेसों लोमश ऋषिने

अथ चैत्रकृष्णैकादशी ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ फाल्गुनस्य सिते पक्षे श्रुता साऽऽमलकी मया ॥ चैत्रस्य कृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणु राजेन्द्र वक्ष्यामि पापमोचनिकाव्रतम् ॥ यल्लोमशोऽब्रवीत्पृष्टो मान्धात्रा चक्रवर्तिना ॥ २ ॥ मान्धातोवाच ॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि लोकानां हितकाम्यया ॥ चैत्रमासासिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ ३ ॥ को विधिः किं फलं तस्याः कथयस्व प्रसादतः ॥ लोमश उवाच ॥ श्रूयतां राजशार्दूल कामदा सिद्धिदा तथा ॥ कथा विचित्रा शुभदा पापहा धर्मदायिनी ॥ ४ ॥ पुरा चैत्ररथोद्देशेह्यप्सरोगणसेविते ॥ वसन्तसमये प्राप्ते पुष्पैराकुलिते वने॥५॥

कही वाहि मैं तुमसों कहौं हौं ॥ २ ॥ मान्धाता बोले-कि, हे भगवन् ! लोकनकी हितकामनासों चैत्रके कृष्णपक्षमें जो एकादशी होय है ताको कहा नाम है सो मैं सुना चाहौ हौं ॥ ३ ॥ वाकी विधि कहा है और फल कहा सो आप प्रसन्नतासों कहो ॥ लोमश ऋषि बोले-कि, हे राजन् ! कामनाकी देनहारी सिद्धिकी देनहारी कल्याणकी देनहारी पापनकी नाश करनहारी और धर्मको देनहारी जो विचित्र कथा है ताहि मैं तुमसों कहौं हौं ॥ ४ ॥ पहले बसंतऋतुके आनेपै पुष्प जामें खिले भये हैं ऐसे चैत्ररथ नाम कुबेरके वनमें अप्सरानके समूह विहार कारि रहे

हैं ॥५॥ गंधर्वनकी कन्या वामें किन्नरनके साथ विहार करती हौं और इन्द्र आदि देवता वामें क्रीडा करते हैं ॥६॥ वा चैत्ररथ वनसे सुन्दर कोई वन नहीं है तामें मुनीश्वर बहुतसे तप कर रहे हैं॥७॥ और देवतानकरिके सहित इन्द्र चैत वैशाखमें वहां विहार करता और मेधावी नाम एक मुनि वहां रहतो हो ॥ ८ ॥ अप्सरा वा मुनिवरके मोहित करिवेको उपाय करतभई तिनमें मंजुघोषा नामसों विख्यात अप्सरा वा मुनिको अभिप्राय

गन्धर्वकन्यास्तत्रैव रमंते सह किन्नरैः ॥ पाकशासन मुख्याश्च क्रीडन्ते च दिवौकसः ॥ ६॥ नापरं सुंदरं किंचिद्वनाच्चैत्ररथाद्वनम् ॥ तस्मिन्वने तु मुनयस्तपंति बहुलं तपः ॥ ७ ॥ सह देवैस्तु मघवा रमते मधुमाधवे ॥ एको मुनिवरस्तत्र मेधावी नाम नामतः ॥ ८ ॥ अप्सरास्तं मुनिवरं मोहनायोपचक्रमे ॥ मंजुघोषेति विख्याता भावं तस्य विचिन्वती ॥ ९ ॥ क्रोशमात्रे स्थिता तस्य भयादाश्रमसन्निधौ ॥ गायंती मधुरं साधु पीडयन्ती विपञ्चिकाम् ॥ १० ॥ गायन्तीं तामथालोक्य पुष्पचंदनवेष्टिताम् ॥ कामोऽपि विजयाकांक्षी शिवभक्तं मुनीश्वरम् ॥ ११ ॥ तस्या शरीर संसर्गं शिववैरमनुस्मरन् ॥ कृत्वा भ्रुवोर्धनुः कोटी गुणं कृत्वा कटाक्षकम् ॥ १२ ॥

जानिवेकी इच्छा करतभई ॥ ९ ॥ उनके भयसों आश्रमके समीप कोशभरपै ठहरतभई और मीठे स्वरसों अच्छो गान करती भई वीणाको बजाने लगी ॥१०॥ या पीछे फूल और चंदनसों लिपटी भई वा अप्सराको गावती भई देखि कामहू शिवको भक्त मुनीश्वर हैं ताके जीतिवेकी इच्छा करत भयो॥११॥ कामदेव शिवसों जो वैर भयो हो ताको स्मरण करिके वा शिवभक्त मुनिके शरीरमें संसर्ग करिवेकी इच्छासों वा अप्सराकी

भौंहनको धनुष बनाके वामें कटाक्षनको प्रत्यंचा चढावत भयो ॥१२॥ और या क्रमसों नेत्रवनको पक्षयुक्त बाणकरि वाके कुचनको पटकुटी बनाके विजयके लिये उपस्थित हो भयो ॥ १३ ॥ वहां मंजुघोषाही कामकी सेनाके समान होत भई और मेधावी मुनिको देखि वह अप्सराहू काम करिकै पीडित होत भई ॥ १४ ॥जवानीसों भरि है देह जाकी ऐसो वह मेधावी मुनि अत्यंत शोभित होत भयो और सफेद जनेऊ पहिरेभये वे दंडी मुनि दूसरे कामके समान शोभित वे दंडी मेधावी मुनि च्यवनऋषिको जो सुन्दर आश्रम है तामें वास करत भये ॥ १५ ॥मंजुघोषा वा

मार्गणौ नयने कृत्वा पक्षयुक्तौ यथाक्रमम् ॥ कुचौ कृत्वा पटकुटीं विजयायोपसंस्थितः ॥ १३ ॥ मंजुघोषाऽभवत्तत्र कामस्येव वरू थिनी ॥ मेधाविनं मुनिं दृष्ट्वा साऽपि कामेन पीडिता ॥१४॥ यौवनोद्भिन्नदेहोऽसौ मेधाव्यतिविराजते ॥ सितोपवीतसंवीतो दण्डी स्मर इवापरः ॥ १५ ॥ मेधावी वसति स्मासौ च्यवनस्याश्रमे शुभे ॥ मंजुघोषा स्थिता तत्र दृष्ट्वा ते मुनिपुंगवम् ॥ १६ ॥ मदनस्य वशं प्राप्ता मंदं मंदमगायत ॥ रणद्वलयसंयुक्ता शिंजन्नूपुरमेखला ॥ १७ ॥ गायन्तीं भावसंयुक्तां विलोक्य मुनिपुंगवः ॥ मदनेन ससैन्येन नीतो मोहवशंबलात्॥१८॥मंजुघोषा समागम्य मुनिं दृष्ट्वा तथाविधम्॥हास्यभावकटाक्षैस्तु मोहयामास चांगना ॥१९॥

मुनिश्रेष्ठको देखिके वहां ठहरत भई॥१६॥बजाती भई चरित करिके युक्त और शब्दायमान हैं नूपुर तथा क्षुद्रघंटिका जाकी ऐसी वह जो मंजुघोषा अप्सरा कामके वसमें हौले २ चलती भई ॥१७॥ भावसमेत गावती भइ वा अप्सराको देखि वह श्रेष्ठ मुनि सेनायुक्त जो कामदेव है ता करिके बलसों वशमें कियो गयो ॥ १८ ॥ मंजुघोषा आके मुनिको कामके वशमें देखि वह स्त्री भाव कटाक्षनसों वाहि मोहित करिलेत भई ॥ १९ ॥

वह वाणीको नीचे धरिके वा मुनीश्वरको ऐसे आलिंगनकरत भई जैसे पवनकारि कँपाई भई व्याकुल लता वृक्षसों लिपट जाती है ॥ २० ॥ वह मेधावी मुनिहू वाहि वनमें वाकी देहको उत्तम देखि वाके साथ विहार करत भयो ॥ २१ ॥ वह मुनि कामतत्त्वके वशमें हो गयो वाको शिवतत्त्व जातो रह्यो। वह कामी विहार करते भये राति दिनको न जानत भयो ॥ २२ ॥ मुनिके आचारको लोप करनहारो बहुतसों काल

अधः संस्थाप्य वीणां सा सस्वजे तं मुनीश्वरम् ॥ वल्लीवाकुलिता वृक्षं वातवेगेन वेपिता ॥ २० ॥ सोऽपि रेमेतया सार्द्धं मेधावी मुनिपुंगवः ॥ तस्मिन्नेव वनोद्देशे दृष्ट्वा तद्देहमुत्तमम् ॥ २१ ॥ शिवतत्त्वं गतं तस्य कामतत्त्ववशं गतः ॥ न निशां न दिनं सोऽपि रमञ्जानाति कामुकः ॥ २२ ॥ बहुलश्च गतः कालो मुनेराचारलोपकः ॥ मुंजुघोषा देवलोकगमनायोपचक्रमे ॥ २३ ॥ गच्छन्ती प्रत्युवाचाथ रमन्तं मुनिपुंगवम् ॥ आदेशो दीयतां मह्यं स्वधामगमनाय मे ॥ २४ ॥ मेधाव्युवाच ॥ अद्यैव त्वं समायाता प्रदोषादौ वरानने ॥ यावत्प्रभातसंध्या स्यात्तावत्तिष्ठ ममांतिके ॥ २५ ॥ इति श्रुत्वा मुनेर्वाक्यं भयभीता बभूव सा ॥ पुनर्वै रमयामास तं मुनिं मुनिसत्तमम् ॥ २६ ॥

व्यतीत होत भयो और मंजुघोषा स्वर्गलोकमें जानेको उद्यत होत भई ॥ २३ ॥ रमण करते भये वा मुनिसों बोलत भई कि, हे मुने ! मोहि अपने स्थानमें जानेकी आज्ञा दीजिये ॥ २४ ॥ तब मेधावी बोले—कि, हे वरानने ! तू अबही तो संध्यासमय आई है याते जबताईं प्रभातसंध्या होय तबताई मेरे समीप ठहर ॥ २५ ॥ या प्रकार वा मुनिकोबचन सुनि वह भयभीय होत भई और ऋषिनमें श्रेष्ठ जो वह मुनि है ताहि रमावत

भई ॥ २६ ॥ मुनिके शापके भयसों डरी भई वह अप्सरा बहुतसे वर्षोंताई अर्थात् पचपन वर्ष नौ महीने और तीन दिन पर्यंत॥२७॥वहमुनिके साथ विहार करत भई यह समय मुनिके आधि रातिके समान व्यतीत होत भयो वा कालके बीति जानेपै वह मुनिसों फिरि बोलत भई कि, आज्ञा दीजिये मोको अपने घर जाना है ।।२८।। मेधावी बोले–कि, मेरे वचन सुनिये प्रातःकाल तो अभी है जबताई मैं संध्या करौं तबताई तू ठहर

मुनेः शापभयाद्भीता बहुलान्परिवत्सरान् ॥ वर्षाणां पंचपंचाशन्नवमासान् दिनत्रयम् ॥ २७ ॥ सा रेमे मुनिना तेन निशार्द्ध मिव चाभवत् ॥ सा च तं प्रत्युवाचाथ तस्मिन् काले गते मुनि ॥ आदेशो दीयतां ब्रह्मन् गंतव्यं स्वगृहं मया ॥ २८ ॥ मेधाव्युवाच ॥ प्रातःकालोऽधुनैवास्ते श्रूयतां वचनं मम ॥ कुर्वे संध्यामहं यावत्तावत्त्वं वै स्थिरा भव ॥ २९ ॥ इति वाक्यं मुनेः श्रुत्वा भयेन च समाकुला ॥ स्मितं कृत्वा तु सा किञ्चित् प्रत्युवाच सुविस्मिता ॥ ३० ॥ अप्सरा उवाच ॥ कियत्प्रमाणी विप्रेन्द्र तव संध्या गता न वा ॥ मयि प्रसादं कृत्वा तु गतः कालो विचार्यताम् ॥ ३१ ॥ इति तस्या वचः श्रुत्वा विस्मयो त्फुल्ललोचनः ॥ स ध्यात्वा हृदि विप्रेंद्र प्रमाणमकरोत्तदा ॥ ३२ ॥

२९ ।। मुनिको यह वचन सुनि वह भयसों व्याकुल होत भई फिरि सुंदर मंद है हँसनो जाको ऐसी वह कुछ मुसकुरायके फिर बोलत भई ।। ३० ।। अप्सरा बोली–कि, हे मुने ! तुम्हारी संध्याको कितनो प्रमाण है अभी गई कि नहीं मेरे ऊपर कृपा करिके बीतो भयो काल विचारिये ।।३१।। वाको ऐसो वचन सुनिके विस्मयसों उत्फुल्ल हैं नेत्र जाके ऐसो वह मुनि अपने हृदयमें ध्यान करिके वा समय

प्रणाम करत भयो ॥ ३२ ॥ कि, वाके साथ मेरे सत्तावन वर्ष व्यतीत भये आँखिनते चिनगारीनको छोडतो भयो वह मुनि अति क्रोधित भयो ॥ ३३ ॥ तपका क्षय करनेवाली जो वह अप्सरा है ताहि कालरूप देखत भयो कि,बडे दुःखसों इकट्ठो कियो भयो मेरो तप याने नाशको प्राप्त कीन्हो ॥ ३४ ॥ कांपतो है होठ जाकी और व्याकुल हैं इन्द्रिय जाकी ऐसो मेधावी मुनि वाहि यह शाप देत भयो कि,तू पिशाची होजा॥ ३५॥

समाश्च सप्तपंचाशद्गता मम तया सह ॥ नेत्राभ्यां विस्फुलिंगान्स मुंचमानोऽतिकोपनः ॥ ३३ ॥ कालरूपां च तां दृष्ट्वा तपसः क्षयकारिणीम् ॥ दुःखार्जितं मम तपो नीतं तदनया क्षयम् ॥ ३४ ॥ सकंपोष्ठो मुनिस्तत्र प्रत्युवाचाकुलेन्द्रियः ॥ स तां शशाप मेधावी त्वं पिशाची भवेति च ॥ ३५ ॥ धिक्त्वां पापे दुराचारे कुलटे पातकप्रिये ॥ तस्य शापेन सा दग्धा विनयावनता स्थिता ॥ ३६ ॥ उवाच वचनं सुभ्रूः प्रसादं वांछती मुनिम् ॥ प्रसादं कुरु विप्रेन्द्र शापस्यानुग्रहं कुरु ॥ सतां संगो हि फलति वचोभिः सप्तमे पदे ॥ ३७ ॥ त्वया सह मम ब्रह्मन्गताः सुबहवः समाः ॥ एतस्मात् कारणात्स्वामिन्प्रसादं कुरु सुव्रत ॥ ३८ ॥

अरि पापिनी! अरि दुराचारिणी! तोको धिक्कार है अरि कुलटा पापन करनहारी!तोको धिक्कार है वाके शापसों दग्ध भई वह विनयसोंनम्र होके स्थित होत भई ॥ ३६॥मुनिसों प्रसाद चाहती भई वह सुन्दर भौंहवाली वचन बोलत भई कि,हे विप्रेन्द्र!प्रसन्न होउ और शापको अनुग्रह करो सज्जनोंकी संगति वचनों करिके सातवें पदमें फल देनेहारी होय है॥ ३७॥ हे ब्रह्मन् तुम्हारे साथ मेरे तो बहुतसे वर्ष बीते हैं ताते हे स्वामिन्! मोपै

प्रसन्न होउ ॥३८॥ मुनि बोले—कि- हे भद्रे ! शापको अनुग्रह करनेवालो मेरो वचन सुन मैं कहा करौं अरे पापिनी ! तैंने मेरो बडो तप नाश करदियो ॥ ३९ ॥ चैत्रके कृष्णपक्षमें जो शुभ एकादशी होय है वाको पापमोचनी नाम है वह सब पापनको दूरि करि देय है ॥४०॥ हे सुभ्रु ! वाको करनेसे तेरी पिशाचयोनि छूटि जायगी ऐसे कहिके वह मेधावी पिताके आश्रमको जात भयो ॥ ४१ ॥ वा मेधावीको आयो भयो देखि

मुनिरुवाच ॥ शृणु मद्वचनं भद्रे शापानुग्रहकारणम् ॥ किं करोमि त्वया पापे क्षयं नीतं महत्तपः ॥ ३९ ॥ चैत्रस्य कृष्णपक्षे या भवत्येकादशी शुभा ॥ पापमोचनिका नाम सर्वपापक्षयंकरी ॥ ४० ॥ तस्या व्रते कृते सुभ्रु पिशाचत्वं प्रयास्यति ॥ इत्युक्त्वा तां स मेधावी जगाम पितुराश्रमम् ॥ ४१ ॥ तमागतं समालोक्य च्यवनः प्रत्युवाच ह ॥ किमेतद्विहितं पुत्र त्वया पुण्यक्षयः कृतः ॥ ४२ ॥ मेधाव्युवाच ॥ पापं कृतं महत्तात रमिता चाप्सरा मया ॥ प्रायश्चित्तं ब्रूहि तात येन पापक्षयो भवेत् ॥ ४३ ॥ च्यवन उवाच ॥ चैत्रस्य चासिते पक्षे नाम्ना वै पापमोचनी ॥ यस्या व्रते कृते पुत्र पापराशिः क्षयं व्रजेत् ॥४४॥

च्यवनऋषि बोलत भये कि, हे पुत्र ! तुमने यह कहा कियो जा पुण्यको क्षय कर दीन्हों ॥४२॥ मेधावी बोले—कि, हे पिता ! मन बडो पाप कीन्हों जो मैंने अप्सराके साथ विहार कीन्हों । हे तात ! प्रायश्चित्त बताइये जाते पापको क्षय होय ॥ ४३ ॥ च्यवनऋषि बोले—कि, चैत्रके कृष्णपक्षमें पापमोचनी नाम एकादशी होय है । हे पुत्र ! ताके व्रतको करनेसों पापनको समूह नाशको प्राप्त होयगो ॥ ४४ ॥

पिताके यह वचन सुनिके वाने उत्तम व्रत कीन्हा ताते वाको पाप दूरि होगये और वह पुण्य करिकेयुक्त हो जातभयो ॥४५॥वह मंजुघोषाहू याहि प्रकार या उत्तम व्रतको करिके पापमोचनीके व्रतसों पिशाचयोनिते छूटि जात भई॥४६॥वह श्रेष्ठ अप्सरा दिव्यरूप धारणकरिके स्वर्गलोकको जात भई, लोमश बोले—कि, पापमोचनी एकादशीके व्रतको ऐसो प्रभाव है॥४७॥ हेराजन् ! जो मनुष्य या पापमोचनीके व्रतको करैहैं उनकोजोकुछ

इति श्रुत्वा पितुर्वाक्यं कृतं तेन व्रतोत्तमम् ॥ गतं पापं क्षयं तस्य पुण्ययुक्तो बभूव सः ॥ ४५ ॥ साऽप्येवं मंजुघोषा च कृत्वा तद्व्रतमुत्तमम् ॥ पिशाचत्वविनिर्मुक्ता पापमोचनिकाव्रतात् ॥ ४६ ॥ दिव्यरूपधरा साऽपि गता नाकं वराऽप्सराः ॥ लोमश उवाच ॥इत्थं भूतप्रभावं हि पापमोचनिकाव्रतात् ॥ ४७ ॥ पापमोचनिकां राजन्ये कुर्वंति च मानवाः ॥ तेषां पापं च यत्किं चित्तत्सर्वं क्षयमाव्रजेत् ॥ ४८ ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्रफलप्रदा ॥ ब्रह्महा भ्रूणहा चैव सुरापो गुरुतल्पगः ॥ ४९ ॥ व्रतस्य चास्य करणात्पापमुक्ता भवंति ते ॥ बहुपुण्यप्रदं ह्येतत्करणाद्व्रतमुत्तमम् ॥ ५० ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे चैत्रकृष्णे पापमोचनिकानामैकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ ९ ॥

पाप होय है वह सब नाशको प्राप्त होय है॥४८॥ पढने और सुननेसों हजार गौओंके फलकी देनहारीहै, ब्रह्महत्यारा भ्रूणहा सुरापी और गुरुतल्पगामी ॥४९॥ या व्रतके करनेसों ये सब पापसों छूटि जायँ है यह उत्तम व्रत करनेसों बहुतसेपुण्यको देय है ॥५०॥ इतिश्रीमत्पंडितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां चैत्रकृष्णैकादशीपापमोचनीकथा समाप्ता ॥ ९ ॥

अथ चैत्रशुक्लैकादशी कथा ॥ मधुमासस्य शुक्ले या कामदैकादशी भवेत् ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां रम्यां करोम्यहम् ॥१॥ सूतजीबोले-कि देवकीनन्दन वसुदेवके पुत्र जे कृष्ण हरि हैं तिनको नमस्कार करिके मैं महापातकनको नाश करनेवालो व्रत कहौं हौं ॥१॥ महात्मा जे श्रीकृष्ण हैं तिन करिके नाना प्रकारके पापनके हरनेवाले एकादशीके माहात्म्य युधिष्ठिरके अर्थ कहे गये हैं ॥ २ ॥ उन अठारह महापुराणोंमेंसे छांटके

अथ चैत्रशुक्लैकादशीकथा ॥ सूत उवाच ॥ देवकीनन्दनं कृष्णं वसुदेवात्मजं हरिम् ॥ नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि महापातकनाशनम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिराय कृष्णेन कथितानि महात्मना ॥ एकादशीमहात्म्यानि नानापापहराणि च ॥ २ ॥ अष्टादश पुराणेभ्यो विविच्य सुमहात्मना ॥ चतुर्विंशतिसंख्यानि नानाख्यानैर्युतानि च ॥ ३ ॥ तानि वक्ष्यामि भो विप्राः शृणुध्वं सुसमाहिताः॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ वासुदेव नमस्तुभ्यं कथयस्व ममाग्रतः ॥ ४ ॥ चैत्रस्य शुक्लपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ श्रीकृष्ण उवाच॥ शृणुष्वैकमना राजन् कथामेतां पुरातनीम् ॥ ५ ॥ वसिष्ठो यामकथयत्प्राग् दिलीपाय पृच्छते ॥ दिलीप उवाच ॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि कथयस्व प्रसादतः ॥ ६ ॥

नानाप्रकारकी कथान करिके युक्त चौबीस माहात्म्य कहे हैं ॥ ३ ॥ उनको मैं कहौं हौं हे ब्राह्मणो ! सावधान होके सुनो, युधिष्ठिर बोले--कि, हे वासुदेव ! तुमको नमस्कार है मेरे आगे कहो ॥ ४ ॥ चैत्रके शुक्लपक्षमें कौनसे नामकी एकादशी होय है ? श्रीकृष्ण बोले—कि, हे राजन् ! या पुरानी कथाको तुम एकाग्र मन होके सुनो ॥ ५ ॥ वसिष्ठ मुनिने जाहि पूछनेसों दिलीपके अर्थ सो कही है । दिलीप बोले-कि, हे भगवन् !

मैं सुना चाहौं हौं आप प्रसन्न होके कहिये ॥ ६ ॥ कि, चैत्रके शुक्लपक्षमें कौनसे नामकी एकादशी होय है ? वसिष्ठ बोले—कि, हे नृपश्रेष्ठ ! आपने अच्छो प्रश्न कीन्हों मैं तुम्हारे आगे कहौं हौं ॥ ७ ॥ एकादशी अति पवित्र है और पापरूपी ईंधनके लिये दावानल है। हे राजन् ! पापकी नाश करनहारी और पुत्रको देनहारी या कथाको तुम सुनो ॥ ८ ॥ पहले मनोहर सुवर्ण और रत्नोंकरिके भूषित रत्नपुरनाम नगरमें मदसों

चैत्रमासे सिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ साधु पृष्टं नृपश्रेष्ठ कथयामि तवाग्रतः ॥ ७ ॥ एकादशी पुण्य तमा पापेन्धनदवानलः ॥ शृणु राजन् कथामेतां पापघ्नीं पुत्रदायिनीम् ॥ ८ ॥ पुरा रत्नपुरे रम्ये हेमरत्नविभूषिते ॥ पुण्ड रीकमुखा नागा निवसंति मदोत्कटाः ॥ ९ ॥ तस्मिन्पुरे पुण्डरीको राजा राज्यं करोति च ॥ गन्धर्वैः किन्नरैश्चैव ह्यप्सरोभिः सुसेव्यते ॥ १० ॥ वराऽप्सरा तु ललिता गन्धर्वो ललितस्तथा ॥ उभौ रागेण संयुक्तौ दम्पती कामपीडितौ ॥ ११ ॥ रेमाते स्वगृहे रम्ये धनधान्ययुते सदा ॥ ललितायास्तु हृदये पतिर्वसति सर्वदा ॥ १२ ॥

उद्यत पुंडरीकनाम नाग है मुखिया जिनमें ऐसे नाग वास करत भये ॥ ९ ॥ वा पुरमें पुंडरीक नाम राजा राज्यको करते भयो और वह नगर गन्धर्व किन्नर तथा अप्सरान करिके सेवित हो ॥ १० ॥ ललिता नाम एक श्रेष्ठ अप्सरा ही और ललित नाम एक गन्धर्व हो ये दोनों स्त्री पुरुष प्रीतियुक्त होके काम करिके पीडित होत भये ॥ ११ ॥ और धनधान्यसों युक्त जो अपनो घर है तामें सदा विहार करत भये, ललिताके हृदयमें

पति सदा बसते भयो ॥ १२ ॥ और ललितके मनमें सदा ललिता स्त्री बसती ही एकवार पुंडरीक आदि गन्धर्व सभामें स्थित होके क्रीडा करि रहे हैं ॥ १३ ॥ और वह ललित स्त्रीके विना वा समय गान करतो हो सो ललिताके विना वाकी जीभ ललिताके स्मरणसों पदबंधमें स्खलित हों जात भई ॥ १४ ॥ नागनमें श्रेष्ठ कर्कोटक याको मनको भाव जानिके वाके पदबंधके बिगडनेको पुंडरीकसो कहि देतभयो ॥ १५ ॥ वहां काम करि

हृदये तस्य ललिता नित्यं वसति भामिनी ॥ एकदा पुण्डरीकाद्याः क्रीडंति सदसि स्थिताः ॥ १३ ॥ गीतगानं प्रकुरुते ललितो दयितां विना ॥ पदबंधे स्खलज्जिह्वो बभूव ललितां स्मरन् ॥१४॥ मनोभावं विदित्त्वाऽस्य कर्कोटो नागसत्तमः।पदबन्धच्युतिं तस्य पुण्डरीके न्यवेदयत् ॥ १५ ॥ शशाप ललितं तत्र मदनातुरचेतसम् ॥ राक्षसो भव दुर्बुद्धे क्रव्यादः पुरुषादकः ॥ १६ ॥ यतः पत्नीवशो जातो गायमानो ममाग्रतः ॥ वचनात्तस्य राजेन्द्र रक्षोरूपो बभूव ह ॥ १७ ॥ रौद्राननो विरूपाक्षो दृष्टमात्रो भयंकरः ॥ बाहू योजनविस्तीर्णौ मुखं कन्दरसन्निभम् ॥ १८ ॥

व्याकुल है चित्त जाको ऐसे ललितको पुंडरीक शाप देत भयो कि, हे दुर्बुद्धे ! तू कच्चे मांसको और पुरुषनको खानेवाले राक्षस हो जा ॥ १६ ॥ जाते मेरे आगे गातो भयो ता स्त्रीके वश भयो । हे राजेंद्र ! वाके वचनसों वह राक्षसरूप हो जात भयो ॥ १७ ॥ वाको मुख भयानक होगयो नेत्र बिगड गये जाके देखनेहीसे भय उपजै और जाकी बाहें चार कोसकी लंबी होगई और जाको मुख भयानक कन्दराके समान हो जात भयो ॥१८॥

सूर्य चंद्रमाके समान नेत्र होगये और ग्रीवा पर्वतके समान और नाकके छेद गुफाके समान हो गये और होठ वाके दो कोशके हो जात भये॥१९॥
हे राजन् ! वाको शरीर आठ योजन अर्थात् बत्तीस कोशको ऊँचो होगयो अपने कर्मके फलको भोगतो भयो वह ऐसो राक्षस जातभयो॥२०॥
या पीछे ललिता अपने पतिको विकृतस्वरूप देखिके बडे दुःखसों पीडित हो मनमें चिन्ता करतभई ॥२१॥ कहा करौं और कहां जाऊं मेरो

चन्द्रसूर्यनिभे नेत्रे ग्रीवा पर्वतसन्निभा ॥ नासारन्ध्रे तु विवरे अधरौ योजनार्धकौ ॥ १९ ॥ शरीरं तस्य राजेन्द्र उच्छ्रितं योजनाष्टकम् ॥ ईदृशो राक्षसः सोऽभूद्भुंजानः कर्मणः फलम् ॥ २० ॥ ललिता तमथालोक्य स्वपतिं विकृताकृतिम् ॥ चिन्तयामास मनसा दुःखेन महताऽर्दिता ॥ २१ ॥ किं करोमि क्व गच्छामि ,पतिः पापेन पीडितः ॥ इति संस्मृत्य मनसा न शर्म लभते तु सा ॥ २२ ॥ चचार पतिना सार्द्धं ललिता गहने वने ॥ बभ्राम विपिने दुर्गे कामरूपः स राक्षसः ॥२३॥ निर्घृणः पापनिरतो विरूपः पुरुषादकः ॥ न सुखं लभते रात्रौ न दिवा पापपीडितः ॥ २४ ॥ ललिता दुःखिताऽतीव पतिं दृष्ट्वा तथा विधम् ॥ भ्रमन्ती तेन सार्धं सा रुदती गहने वने ॥ २५ ॥

पति पापसों पीडित भयो ऐसी मनमें चिन्ता करिके वह सुखको न प्राप्त होत भई ॥२२॥ और वह ललिता पतिके साथ घने वनमें विचरत भई और कामरूप वह राक्षस घने वनमें भ्रमण करतभयो ॥ २३ ॥ निर्दयी पापनमें रत बुरे रूपको और मनुष्यनको खानेवालो दुःखी वह राक्षस राति दिन सुखको न प्राप्त होत भयो ॥२४॥ या प्रकार करि पतिको देखके बहुतही दुःखित ललिता रोतीभई वाके साथ घने वनमें भ्रमती ी ॥२५॥

कभी अनेक कौतुकोंकारि युक्त विन्ध्याचलके शिखरपर जात भई वहां ऋष्यशृंग मुनिका शुभ आश्रम देखत भई ॥ २६ ॥ ललिता वहां शीघ्रही गई और विनयसों नम्र होके, स्थित होत भई वाहि देखके मुनि बोले—कि, हे शुभे ! तू कौन है और कौनकी बेटी है ॥ २७ ॥ यहां काहेको आई है मेरे आगे सत्य कह। तब ललिता बोली—कि, हे महाराज ! वीरधन्वा नाम गन्धर्व है वा महात्माकी मैं बेटी हौं ॥ २८ ॥ ललिता मेरो

कदाचिदगमद्विंध्यशिखरे बहुकौतुके ॥ ऋष्यशृङ्गमुनेस्तत्र दृष्ट्वाऽऽश्रमपदं शुभम् ॥ २६ ॥ शीघ्रं जगाम ललिता विनयावनता स्थिता ॥ प्रत्युवाच मुनिर्दृष्ट्वा का त्वं कस्य सुता शुभे ॥ २७ ॥ किमर्थं हि समायात सत्यं वद ममाग्रतः ॥ ललितोवाच ॥ वीरधन्वेति गन्धर्वः सुता तस्य महात्मनः ॥ २८ ॥ ललितां नाम मां विद्धि पत्यर्थमिह चागताम् ॥ भर्ता मे शापदोषेण राक्षसोऽभून्महामुने ॥२९॥ रौद्ररूपो दुराचारस्तं दृष्ट्वा नास्ति मे सुखम् ॥ सांप्रतं शाधि मां ब्रह्मन् प्रायश्चित्तं वद प्रभो ॥३०॥ येन पुण्येन विप्रेन्द्र राक्षसत्वाद्विमुच्यते ॥ ऋषिरुवाच ॥ चैत्रमासस्य रंभोरु शुक्लपक्षस्य सांप्रतम् ॥ ३१ ॥

नाम है मैं यहां पतिके लिये आयी हौं हे महामुने ! मेरो पति शापके दोषते राक्षस होगयो है ॥२९॥ वह भयानकरूप दुराचारीहै वाको देखिके मोको सुख नहीं है हे प्रभो ! या समय मोको शिक्षा देउ और प्रायश्चित्त बताओ ॥ ३० ॥ हे विप्रेन्द्र ! जा पुण्यसों राक्षसयोनितें छूटे । ऋषि बोले—कि, हे रम्भोरु ! चैत्रके शुक्लपक्षकी एकादशी या समय आयी है ॥ ३१ ॥

याको नामकामदा है जाके व्रतके करनेते मनुष्यकी कामना पूरी होय है हे भद्रे ! ताको व्रत कर मैं विधिपूर्वक कहौं हौं ॥ ३२ ॥ वाके व्रतको जो पुण्य है ताहि तू अपने पतिको दे वा पुण्यके देनेसे क्षणमात्रहीमे वाको शापदोष शांत हो जायगो॥ ३३ ॥ मुनिके वचनको सुनिके ललिता हर्षित होत भई हे राजन् ! एकादशीको व्रत करिके द्वादशीके दिन ॥ ३४ ॥ ब्राह्मणके आगे स्थित होके वासुदेवके आगे अपने पतिके तारनेके

कामदैकादशी नाम्नी या कृता कामदा नृणाम् ॥ कुरुष्व तद्व्रतं भद्रे विधिपूर्वं मयोदितम् ॥ ३२ ॥ तस्य व्रतस्य यत्पुण्यं तत्स्वभर्त्रे प्रदीयताम् ॥ दत्ते पुण्यं क्षणात्तस्य शापदोषः प्रशाम्यति ॥ ३३ ॥ इति श्रुत्वा मुनेर्वाक्यं ललिता हर्षिताऽभवत् ॥ उपोष्यैकादशीं राजन् द्वादशीदिवसे तदा ॥ ३४ ॥ विप्रस्यैव समीपे तु वासुदेवाग्रतः स्थिता ॥ वाक्यमूचे तु ललिता स्वपत्युस्तारणाय वै ॥ ३५ ॥ मया तु यद्व्रतं चीर्णं कामदाया उपोषणम् ॥ तस्य पुण्यप्रभावेण गच्छत्वस्य पिशाचता ॥ ३६ ॥ ललितावचनादेव वर्तमानोऽपि तत्क्षणे ॥ गतपापः स ललितो दिव्यदेहो बभूव ह ॥ ३७ ॥ राक्षसत्वं गतं तस्य प्राप्तो गन्धर्वतां पुनः ॥ हेमरत्नसमाकीर्णो रेमे ललितया सह ॥ ३८ ॥

लिये ललिता बचन बोलत भई ॥ ३५ ॥ कि, मैंने जो कामदा एकादशीको व्रत कीन्हों ताके पुण्यके प्रभावसों या मेरे पतिकी पिशाचयोनि दूरी होय ॥ ३६ ॥ वा समय राक्षसदेहमें वर्त्तमानहू वह ललित ललिताके वचनहीते पापरहित होके दिव्य होजात भयो ॥ ३७ ॥ वाको राक्षसपनो जातो रह्यो और फिर गंधर्व हो जात भयो और सुवर्ण तथा रत्नके आभूषण धारण करि फिरि ललिताके साथ विहार करत भयो ॥ ३८ ॥

वे दोनों स्त्री पुरुष कामदाके प्रभावसों पहिले रूपते अधिक रूपवान् हो विमानमें बैठे भये शोभाको प्राप्त होत भये ॥ ३९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! यह जानिके याको व्रत प्रयत्नसों करना चाहिये लोकनके हितके लिये मैं तुम्हारे आगे कही ॥ ४० ॥ यह ब्रह्महत्या आदि पापनकी पिशाच

तौ विमानसमारूढौ पूर्वरूपाधिकावुभौ ॥ दम्पती चापि शोभेतां कामदायाः प्रभावतः ॥ ३९ ॥ इति ज्ञात्वा नृपश्रेष्ठ कर्तव्यैषा प्रयत्नतः ॥ लोकानां च हितार्थाय तवाग्रे कथिता मया ॥ ४० ॥ ब्रह्महत्यादिपापघ्नी पिशाचत्वविनाशिनी ॥ नातः परतरा काचित्त्रैलोक्ये सचराचरे ॥ पठनाच्छ्रवणाद्वाऽपि वाजपेयफलं लभेत् ॥ ४१ ॥ इति श्रीवाराहपुराणे चैत्रशुक्ल कामदानामैकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १० ॥

योनिकी नाश करनेवाली है चराचर त्रिलोकीमें याते परे और कोई नहीं है पढने और सुननेते वाजपेय यज्ञको फल मिले है ॥४१॥ इतिश्रीमत्प ण्डितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां चैत्रशुक्लैकादशीकथा समाप्ता ॥ १० ॥

अथ वैशाखकृष्णैकादशी कथा॥माधवस्याऽसिते पक्षे या च नाम्ना वरूथिनी। तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां संरचयाम्यहम्॥१॥युधिष्ठिरबोलेकि, हे वासुदेव!वैशाखके कृष्णपक्षमें जो एकादशी होय हैं ताको कहा नाम है वाकी महिमा मोसों कहो आपको नमस्कार है॥१॥श्रीकृष्ण बोले—कि, हे राजन्! या लोकमें परलोकमें सौभाग्यको देनेहारी जो वैशाखकी एकादशी है ताको नाम वरूथिनी है॥२॥वरूथिनीके व्रतको जो करै हैं उनको

अथ वैशाखकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ वैशाखस्यासिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ महिमानं कथय मे वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ सौभाग्यदायिनी राजन्निहलोके परत्र च ॥ वैशाखकृष्णपक्षे तु नाम्ना चैव वरूथिनी ॥ २ ॥ वरूथिन्या व्रतेनैव सौख्यं भवति सर्वदा ॥ पापहानिश्च भवति सौभाग्यप्राप्तिरेव च ॥ ३ ॥ दुर्भगाऽपि करोत्येनां स्त्री सौभाग्यमवाप्नुयात् ॥ लोकानां चैव सर्वेषां भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥ ४॥ सर्व पापहरा नृणां गर्भवासनिकृन्तनी ॥ वरूथिन्या व्रतेनैव मांधाता स्वर्गतिं गतः ॥ ५ ॥ धुंधुमारादयश्चान्ये राजानो बहवस्तथा ॥ ब्रह्मकपालनिर्मुक्तो बभूव भगवान् भवः ॥ ६ ॥ दशवर्षसहस्राणि तपस्तप्यति यो नरः ॥ तत्तुल्यं फलमाप्नोति वरूथिन्या व्रतादपि ॥ ७ ॥

सदैव सुख रहै हैं पापनकी हानि और सौभाग्यकी प्राप्ति होय है॥३॥दुर्भगा स्त्री भी या व्रतको करै तौ वह सौभाग्यको प्राप्तहोय यहसबलोकनकोभुक्ति मुक्ति देनहारी है॥४॥और मनुष्यके सब पापनको दूरिकरै है या वरूथिनीके व्रत करनेहीसों मांधाता स्वर्गकी गतिको प्राप्त होतभयो॥५॥तैसेही और भी धुन्धुमार आदि बहुतसे राजा पापनसे तथा भगवान् शिव ब्रह्मकपालसे मुक्त होत भये॥६॥ दश हजार वर्षलों जो मनुष्य तपकरै ताके फलके

समान फल वरूथिनी एकादशीके व्रत करिके मिलै है ॥ ७ ॥ जो श्रद्धावान् मनुष्य वरूथिनीके व्रतको करै है वह पुरुष या लोक और परलोकमें वांछित फलको प्राप्त होय है ॥ ८ ॥ पवित्र और दूसरेको पावन करनहारी यह वरूथिनी महापातकनको नाश करै है हे नृपसत्तम! व्रत करनहारे मनुष्यनको भुक्ति मुक्ति देती है ॥ ९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ! घोडेके दानते हाथीको दान विशेष है और गजके दानते भूमिका दान अधिक है, तिलनकोदान

श्रद्धावान्यस्तु कुरुते वरूथिन्या व्रतं नरः ॥ वाञ्छितं लभते सोऽपि इहलोके परत्र च ॥ ८ ॥ पवित्रा पावनी ह्येषा महापातक नाशिनी ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदा ह्येषा कर्तॄणां नृपसत्तम ॥ ९ ॥ अश्वदानान्नृपश्रेष्ठ गजदानं विशिष्यते ॥ गजदानाद्भूमिदानं तिलदानं ततोऽधिकम् ॥ १० ॥ ततः सुवर्णदानं तु ह्यन्नदानं ततोऽधिकम् ॥ अन्नदानात्परं दानं न भूतं न भविष्यति ॥ ११ ॥ पितृदेवमनुष्याणां तृप्तिरन्नेन जायते ॥ तत्समं कविभिः प्रोक्तं कन्यादानं नृपोत्तम ॥ १२ ॥ धेनुदानं च तत्तुल्यमित्याह भगवान्स्वयम् ॥ प्रोक्तेभ्यः सर्वदानेभ्यो विद्यादानं विशिष्यते ॥ १३ ॥ तत्फलं समवाप्नोति नरः कृत्वा वरूथिनीम् ॥ कन्या वित्तेन जीवन्ति ये नराः पापमोहिताः ॥ १४ ॥

वाहूते अधिक है ॥ १० ॥ ताते सुवर्णदान है और अन्नदान वाहूते अधिक है अन्नदानते परे कोई दान न भयो न होयगो ॥ ११ ॥ पितृ देवता और मनुष्यनकी तृप्ति अन्नहीसों होय है हे नृपोत्तम! कवीश्वरने कन्यादान अन्नदानके समान कह्यो है ॥ १२ ॥ और यह भगवान्ने आप भी कह्यो है कि, गौ को दान वाको बराबर है और कहे भये सब दाननते विद्यादान अधिक है ॥ १३ ॥ वरूथिनीको व्रत करिके मनुष्य वाहिफलको

प्राप्त होय है, जे मनुष्य पापसों मोहित होके कन्याके धनसों जीवै हैं ॥ १४॥ ते मनुष्य महाप्रलयताई नरकमें वास करै हैं ताते सर्व प्रयत्नसों कन्याको धन नहीं लेनो चाहिये ॥ १५ ॥ जो लोभसों कन्याको बेचिके धनको लेते हैं सो निश्चय करिके दूसरे जन्ममें बिलाव होय है यामें सन्देह नहीं ॥१७॥ जो यथाशक्ति धनयुक्त कन्याको अलंकृत करिके दान करै है ताके पुण्यकी संख्या करनेको चित्रगुप्तहू समर्थ नहीं है ॥१७॥ वा फलको

ते नरा नरके यान्ति यावदाभूतसंप्लवम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन न ग्राह्यं कन्यकाधनम् ॥ १५ ॥ यश्च गृह्णाति लोभेन कन्यां क्रीत्वा च तद्धनम् ॥ सोऽन्यजन्मनि राजेन्द्र ओतुर्भवति निश्चितम् ॥ १६ ॥ कन्यां वित्तेन यो दद्याद्यथाशक्ति स्वलंकृताम् ॥ तत्पुण्यसंख्यां कर्त्तुं हि चित्रगुप्तो भवत्यलम् ॥ १७ ॥ तत्फलं समवाप्नोति नरः कृत्वा वरूथिनीम् ॥ कांस्यं मांसं मसूरान्नं चणकान्कोद्रवांस्तथा ॥ १८ ॥ शाकं मधु परान्नं च पुनर्भोजनमैथुने ॥ वैष्णवो व्रतकर्त्ता च दशम्यां दश वर्जयेत् ॥ १९ ॥ द्यूतं क्रीडां च निद्रां च तांबूलं दन्तधावनम् ॥ परापवादं पैशुन्यं पतितैः सह भाषणम् ॥ २० ॥ क्रोधं चैवानृतं वाक्यमेकादश्यां विवर्जयेत् ॥ कांस्यं मांसं मसूरांश्च क्षौद्रं वितथभाषणम् ॥ २१ ॥

मनुष्य वरूथिनी एकादशीके व्रत करनेसों प्राप्त होय है कांसेके पात्रमें न खाय १ मांस २ मसूरकी दाल ३ चना ४ कोदों ५॥१८॥ शाक ६ शहद ७ परायो अन्न ८ ये सबन और दूसरी बार भोजन ९ स्त्रीसंग १० व्रत करनहारे वैष्णव दशमीके दिन ये ऊपर कही भई दश वस्तुनको त्याग करै ॥ १९ ॥ जुवा खेलना १ सोवना २ पान ३ दंतून ४ पराई निंदा ५ चुगली ६ पतितोंके साथ बात करना ७ ॥ २० ॥ क्रोध ८ और झूंठी बात

कहना ९ इन नव बातनको एकादशीके दिन न करै । कांसेके पात्रमें भोजन १ मांस २ मसूर ३ शहद ४ झूठ बोलना ५ ॥२१॥ व्यायाम ६ श्रम ७ दूसरीबार भोजन ८ स्त्रीसंग ९ क्षार कहिये नोन आदि १० तेल ११ पराये अन्न १२ इन बारह वस्तुको द्वादशीके दिन वर्जित करै है ॥ २२ ॥ हे राजन् ! या विधिसों जिन करिके वरूथिनीको व्रत कियो गयो तिनके सब पापनको क्षय करिके यह वरूथिनी अंतमें अक्षय गतिको देय है ॥ २३ ॥ ताते सब जतनसों पापनते डरे भये और क्षपारि जे सूर्य हैं, तिनके तनय जो यमराज हैं ताते डरे भये मनुष्यन करिके

व्यायामं च प्रयासं च पुनर्भोजनमैथुने ॥ क्षारं तैलं परान्नं च द्वादश्यां परिवर्जयेत् ॥ २२ ॥ अनेन विधिना राजन्विहिता यैर्वरूथिनी ॥ सर्वपापक्षयं कृत्वा दद्याच्चान्तेऽक्षयां गतिम् ॥ २३ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कर्तव्या पापभीरुभिः ॥ क्षपारितनयाद्भी तैर्नरदेव वरूथिनी ॥ २४ ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्रफलं लभेत् ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ २५ ॥
इति श्रीभविष्यपुराणे वैशाखकृष्णवरूथिन्येकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ ११ ॥

हे राजन् ! वह वरूथिनी एकादशी करनी योग्य है ॥ २४ ॥ हे राजन् ! याके पढने और सुननेसों हजार गौका फल प्राप्त होय है और सब पापनते मुक्त होके विष्णुलोकमें आनन्द करै है ॥ १५ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्य टीकायां दीपिकासमाख्यायां वैशाखकृष्णपक्षस्य वरूथिन्येकादशीकथा समाप्ता ॥ ११ ॥

अथ वैशाखशुक्लैकादशीकथा ॥ अथ माधवशुक्ले या मोहिन्येकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां सम्यक् तनोम्यहम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर बोले—वैशाखके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होय है ताको कहा नाम है वाको फल कहा है और विधि कैसी है हे जनार्दन ! सो तुम मोते कहो ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले—कि, हे धर्मपुत्र ! मैं या कथाको कहौं हौं तुम मन लगाके सुनो पहले जा कथाके पूछनेपै वसिष्ठमुनिने रामचन्द्रसों

अथ वैशाखशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ वैशाखशुक्लपक्षे तु किं नामैकादशी भवेत् ॥ किं फलं को विधिस्तस्याः कथयस्व जनार्दन ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ कथयामि कथामेतां शृणु त्वं धर्मनन्दन ॥ वशिष्ठो यामकथयत्पुरा रामाय पृच्छते ॥ २ ॥ राम उवाच ॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ सर्वपापक्षयकरं सर्वदुःखनिकृन्तनम् ॥ ३ ॥ मया दुःखानि भुक्तानि सीताविरहजानि वै ॥ ततोऽहं भयभीतोऽस्मि पृच्छामि त्वां महामुने ॥ ४ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ साधु पृष्टं त्वया राम तवैषा नैष्ठिकी मतिः ॥ त्वन्नामग्रहणेनैव पूतो भवति मानवः ॥ ५ ॥

कही ॥ २ ॥ रामचन्द्र बोले—कि, हे भगवन् ! सब पापनको क्षय करनहारो और दुःखनाशक सब व्रतनमें जो उत्तम व्रत है ताहि मैं सुनो चाहौ हौं ॥ ३ ॥ मैंने निश्चय करिके सीताके विरहसों उत्पन्न दुःख भोगे हैं ताते मैं भयभीत हौ और हे महामुने ! तुमसों पूछौ हौ ॥ ४ ॥ वसिष्ठ बोले— कि, हे राम ! तुमने भलो पश्न कीन्हों और तुम्हारी यह नैष्ठिकी मति है तुम्हारे नामके ग्रहणमात्रसों मनुष्य पवित्र हो जाय है ॥ ५ ॥

ताहूपै मनुष्यनके हितकी कामनासों मैं कहौंगो पावन जे ब्रह्मादिक हैं तिनहूंको पवित्र करनहारो सब व्रतनमें उत्तम व्रत कहौंगो ॥६॥ हे राम ! वैशाखके शुक्लपक्षमें द्वादशीयुक्त जो एकादशी होय है वह मोहिनी नामसों विख्यात संपूर्ण पापनकी नाश करनहारी है ॥ ७ ॥ याके व्रतके प्रभावसों मनुष्य मोहजालते और पापनके समूहते छूटि जाय है मैं सत्य कहौ हौ ॥ ८ ॥ हे राम ! याते यह तुमसरीखे मनुष्यनकरिके करनी

तथापि कथयिष्यामि लोकानां हितकाम्यया ॥ पवित्रं पावनानां च व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ ६ ॥ वैशाखस्य सिते पक्षे द्वादशी राम या भवेत् ॥ मोहिनी नाम सा प्रोक्ता सर्वपापहरा परा ॥ ७ ॥ मोहजालात्प्रमुच्येत पातकानां समूहतः ॥ अस्या व्रतप्रभावेण सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ८ ॥ अतस्तु कारणाद्राम कर्त्तव्यैषा भवादृशैः ॥ पातकानां क्षयकरी महादुःखविनाशिनी ॥ ९ ॥ शृणुष्वैकमना राम कथां पुण्यप्रदां शुभाम् ॥ अस्याः श्रवणमात्रेण महापापं प्रणश्यति ॥ १० ॥ सरस्वत्यास्तटे रम्ये पुरी भद्रावती शुभा ॥ द्युतिमान्नाम नृपतिस्तत्र राज्यं करोति वै ॥ ११ ॥ सोमवंशोद्भवो राम धृतिमान्सत्यसंगरः ॥ तत्र वैश्यो निवसति धनधान्यसमृद्धिमान् ॥ १२ ॥

योग्य है यह कैसी है कि, पापनको क्षय करै है और महाःदुखकी नाश करनहारी है ॥ ९ ॥ हे राम ! पुण्यकी देनहारी या शुभ कथाको एकाग्रमन होके सुनो याके श्रवणमात्रहीसों महापाप नाशनको प्राप्त होय हैं ॥ १० ॥ सरस्वती नदीके तटमें एक शुभ भद्रावती नाम पुरी है वामें धृतिमान् नाम राजा राज्य करै है ॥ ११ ॥ हे राम ! चन्द्रवंशमें उत्पन्न वह धृतिमान् राजा सत्यप्रतिज्ञावालो हो वहां धनधान्यकी समृद्धिसों

भरो पूरो एक वैश्य निवास करै हो ॥ १२ ॥ धनपाल वाको नाम हो और वह धर्मके कर्मनको प्रवृत्त करनहारो हो और प्याऊँ और यज्ञशाला आदिको तथा तालाब बगीचा आदिको बनवानेवाले हो ॥ १३ ॥ विष्णुभक्तिमें रत शांतस्वरूप हो वाके पांच पुत्र होतभये सुमना १ द्युतिमान् २ मेधावी ३ तथा सुकृती ४ ॥ १४ ॥ और पांचवों महापापमें सदा रत धृष्टबुद्धि ५ नाम होत भयो वह वेश्याके संगमें रत रहतो और लुच्चनकी गोष्ठीमें चतुर हो ॥१५॥ जुवा आदि व्यसनमें आसक्त हो और पराई स्त्रीनके भोगमें लंपट हो और देवता अतिथि वृद्ध पितर तथा

धनपाल इति ख्यातः पुण्यकर्मप्रवर्त्तकः॥प्रपासत्राद्यायतनतडागारामकारकः ॥ १३ ॥ विष्णुभक्तिपरः शांतिस्तस्यासन्पञ्च पुत्रकाः सुमना द्युतिमांश्चैव मेधावी सुकृती तथा ॥१४॥ पञ्चमो धृष्टबुद्धिश्च महापापरतः सदा ॥ वारस्त्रीसंगनिरतो विटगोष्ठीविशारदः ॥ १५ ॥ द्यूतादिव्यसनासक्तः परस्त्रीरतिलालसः ॥ न देवान्नातिथीन्वृद्धान् पितॄंश्चैव द्विजानपि ॥१६॥ अन्यायकर्त्ता दुष्टात्मा पितुर्द्रव्यक्षयंकरः ॥ अभक्ष्यभक्षकः पापः सुरापानरतः सदा ॥ १७ ॥ वेश्याकण्ठक्षितबाहुर्भ्रमन् भ्रष्टश्चतुष्पथे ॥ पित्रा निष्कासितोगेहात्परित्यक्तश्चबान्धवैः॥१८॥स्वदेहभूषणान्येव क्षयं नीतानि तेनवै ॥ गणिकाभिः परित्यक्तो निन्दितश्च धनक्षयात्॥१९॥

ब्राह्मणनको नहीं मानतो हो ॥ १६ ॥ अन्यायको करनहारो वह दुष्टात्मा पिताके द्रव्यको क्षय करतो हो अभक्ष्य वस्तुनको भक्षण करै और सदा मद्य पान करतो ॥ १७ ॥ वेश्याके गलेमें गलबाहीं डारिके चौराहेमें भ्रमण करतो भयो देख्यो गयो तब पिताकरि घरते निकारचो गयो और भाई बंधुनहूने छोडि दीन्हों ॥ १८ ॥ फिर वह अपने शरीरके आभूषणनको बेचि बेचि खर्च करतो भयो और सब वाकी निन्दाकरनेलगे॥१९

ततश्चिन्तापरो जातो वस्त्रहीनः क्षुधार्दितः ॥ किं करोमि क्व गच्छामि केनोपायेन जीव्यते ॥ २० ॥ तस्करत्वं समारब्धं तत्रैव नगरे पुनः ॥ गृहीतो राजपुरुषैर्मुक्तश्च पितृगौरवात् ॥ २१ ॥ पुनर्बद्धः पुनर्मुक्तः पुनर्मुक्तः ससंभ्रमैः ॥ धृष्टबुद्धिर्दुराचारो निबद्धो निगडैर्दृढैः ॥२२॥ कशाघातैस्ताडितश्च पीडितश्च पुनः पुनः ॥ न स्थातव्यं हि मन्दात्मंस्त्वया मद्देशगोचरे ॥ २३ ॥ एवमुक्त्वा ततो राज्ञा मोचितो दृढबन्धनात्॥निर्जगाम भयात्तस्य गतोऽसौ गहनं वनम्॥२४॥क्षुत्तृषापीडितश्चायमितश्चेतश्च धावति ॥ सिंहवन्निजघानाऽसौ मृगसूकरचित्तलान्॥२५॥ आमिषाहारनिरतो वने तिष्ठति सर्वदा ॥ करे शरासनं कृत्वा निषंगं पृष्ठसन्ततम्॥२६

तब जाकेपास वस्त्र नहीं और भूखसों दुःखी वह अपने मनमें सोचत भयो कि कहा करौ और कहां जाऊं और कौनसे उपायसों जीवौं ॥२०॥ फिर वाहि नगरमें चोरी करने लगा तब राजाके सिपाहियोंने वाहि पकरि लीन्हों ता पीछे राजाके गौरवते छोडि दीन्हों ॥२१॥ फिर वह बांधो गयो और छोडो गयो तब हारिके राजाने वा धृष्टबुद्धि दुराचारीको कारागारमें पुष्ट बेरी डारिके बधुआ करि दीन्हों ॥ २२ ॥ कोडनसों मारचो और बारम्बार पीडा दीन्हीं और वासो कह्यो कि अरे दुष्ट दुराचारी ! तू हमारे देश भरमें मत रहै ॥ २३ ॥ फिरि ऐसे कहिके राजाने वाहि दृढबन्धनते छोडि दीन्हों वाके भयसों वह वहांते निकरि गयो और बडे घने वनमें चलो जात भयो ॥ २४ ॥ भूख प्याससों दुःखी वह वा वनमें इधर उधर भ्रमण करत भयो फिर सिंहके समान मृगनको शूकरनको और चीतनको मारत भयो ॥ २५ ॥ सदा मांस खायके वनमें वास करै और हाथमें धनुष बाण ले पीठमें तर्कस बांधे भये वहां भ्रमता रहै ॥ २६ ॥

और वनके फिरनेवाले पक्षिनको तथा चौपायनको मारो करै और चकोर मोर कंक तीतर मूसे इनको मारतो रहे ॥२७॥ वह धृष्टबुद्धि क्रूरस्वभाव इन कहे भये जीवनको तथा औरनको नित्य मारै पूर्वजन्मके करे भये पापकरिके पापरूप कीचमें फसि गयो है ॥२८॥ दुःख और शोकसे युक्त वह रातदिन चिन्तामें रहत भयो फिर वह कबहूं पुण्यके वशसों कौण्डिन्यऋषिके आश्रममें प्राप्त होत भयो ॥ २९ ॥ वैशाखके महीनेमें कियो है

अरण्यचारिणो हन्ति पक्षिणश्च चतुष्पदान् ॥ चकोरांश्च मयूरांश्च कङ्कांस्तित्तिरिमूषकान् ॥ २७ ॥ एतानन्यान्हन्ति नित्यं धृष्टधीर्निर्गतघृणः ॥ पूर्वजन्मकृतैः पापैर्निमग्नः पापकर्दमे ॥ २८ ॥ दुःखशोकसमाविष्टश्चिन्तयन्सोऽप्यहर्निशम् कौण्डिन्यस्या श्रमपदं प्राप्तः पुण्यवशात्क्वचित ॥ २९ ॥ माधवे मासि जाह्नव्यां कृतस्नानं तपोधनम् ॥ आससाद धृष्टबुद्धिः शोकभारेण पीडितः ॥ ३० ॥ तद्वस्त्रबिंदुस्पर्शेन गतपाप्मा हताशुभः ॥ कौण्डिन्यस्याग्रतः स्थित्वा प्रत्युवाच कृतांजलिः ॥ ३१ ॥ धृष्टबुद्धिरुवाच ॥ प्रायश्चित्तं वद ब्रह्मन् विना यत्नेन यद्भवेत् ॥ आजन्मकृतपापस्य नास्ति वित्तं ममाधुना ॥ ३२ ॥ ऋषिरुवाच॥॥शृणुष्वैकमना भूत्वा येन पापक्षयस्तव ॥ वैशाखस्य सिते पक्षे मोहिनी नाम नामतः ॥ ३३ ॥

गंगाको स्नान जिनने ऐसे ऋषिके समीप शोकके भारसों पीडित वह धृष्टबुद्धि जात भयो ॥३०॥ उनके वस्त्रते गिरो भयो जो जलको बूंदहै वाके स्पर्शसोंगये हैं पापजाके ऐसो वह कौडिन्यके आगे ठाढोहो हाथ जोरिके बोलतभयो॥३१॥ धृष्टबुद्धि बोला-कि, हेब्रह्मन् ! ऐसो प्रायश्चित्त बताओजो यत्नके विनाही हो जाय काहेते कि या समय जन्मसों जो मैंने पाप किये हैं उनके प्रायश्चित्तके योग्य मेरे समीप धननहीं है ॥३२॥ ऋषि बोले—कि

जाते तेरे पापको क्षय होय सो तू एकाग्रमन होके सुन कि वैशाखके शुक्लपक्षकी मोहिनीनाम एकादशी होयहै ॥३३॥ सो तू मेरेबचनकी प्रेरणासों वा एकादशीको व्रतकर । वह एकादशी सुमेरुपर्वतके समानभी मनुष्यनके पापनको नाशकरिदेयहै ॥३४॥ यह मोहिनी व्रत करनेसोंअनेक जन्मके पापक्षीणकरदेती है मुनिको वह बचन सुनिके यह धृष्टबुद्धि अपने मनमें प्रसन्नहोतभयो ॥३५॥ और कौंडिन्यके उपदेशते विधिवत् व्रतकरतभयो हेनृपश्रेष्ठ ! व्रतके करनेसों वह हतपाप होजातभयो ॥३६॥ ता पीछे दिव्यदेह होके गरुडपर चढि सब उपद्रवन करिके रहितजो विष्णुकोलोकहै

एकादशीव्रतं तस्मात्कुरु मद्वाक्यनोदितः ॥ मेरुतुल्यानि पापानि क्षयं नयति देहिनाम् ॥ ३४ ॥ बहुजन्मार्जितान्येषा मोहिनी समुपोषिता ॥ इति वाक्यं मुनेः श्रुत्वा धृष्टबुद्धिर्हसन् हृदि ॥३५॥ व्रतं चकार विधिवत्कौण्डिन्यस्योपदेशतः ॥ कृते व्रते नृपश्रेष्ठ हतपापो बभूव सः ॥३६॥ दिव्यदेहस्ततो भूत्वा गरुडोपरि संस्थितः ॥ जगाम वैष्णवं लोकं सर्वोपद्रववर्जितम् ॥ ३७ ॥ इतीदृशं रामचन्द्र तमोमोहनिकृन्तनम् ॥ नातः परतरं किंचित्त्रैलोक्ये सचराचरे॥३८॥यज्ञादितीर्थदानानि कलां नार्हन्ति षोड शीम् ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्रफलं लभेत्॥३९॥इतिश्रीकूर्मपुराणे वैशाखशुक्लमोहिन्येकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥१२॥

तामें जातभयो ॥३७॥ हे रामचन्द्र! तम और मोहको दूरि करनहारो यह ऐसो व्रतहै और चराचर त्रैलोक्यमें याते अधिक औरकुछ नहीं है॥३८ यज्ञादिक तीर्थ दान याकी सोलहवीं कलाके योग्य नहीं है, हेराजन् ! पढने और सु नेते हजार गोदानको फलप्राप्त है ॥३९॥ इति श्रीमत्पंडित परमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां वैशाखशुक्लैकादशीकथा सम्पूर्णा ॥ १२ ॥

अथ ज्येष्ठकृष्णकादशीकथा ॥ ज्येष्ठस्य कृष्णपक्षे याऽपराख्यैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां दीपिकां संतनोम्यहम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले- कि, ज्येष्ठके कृष्णपक्षकी एकादशीको कहा नाम है वाको माहात्म्य मैं सुनो चाहौं हौं हे जनार्दन ! सो कहिये ॥ १ ॥ श्रीकृष्णजी बोले-कि, हे राजन् ! तुमने लोकनके हितकी कामनाके लिये अच्छो प्रश्न कीन्हो यह एकादशी बहुतसे पुण्यनकी देनहारी और महापातकनकी नाश करनहारी

अथ ज्येष्ठकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ज्येष्ठस्य कृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ श्रोतुमिच्छामि माहात्म्यं तद्वदस्व जनार्दन ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ साधु पृष्टं त्वया राजन् लोकानां हितकाम्यया ॥ बहुपुण्यप्रदा ह्येषा महापातक नाशिनी ॥ २ ॥ अपरा नाम राजेन्द्र अपारफलदायिनी ॥ लोके प्रसिद्धतां याति अपरां यस्तु सेवते ॥ ३ ॥ ब्रह्महत्याभि भूतोऽपि गोत्रहा भ्रूणहा तथा ॥ परापवादवादी च परस्त्रीरसिकोऽपि च ॥ ४ ॥ अपरासेवनाद्राजन् विपाप्मा भवति ध्रुवम् ॥ कूटसाक्ष्यं मानकूटं तुलाकूटं करोति यः ॥ ५ ॥ कूटवेदं पठेद्विप्रः कूटशास्त्रं करोति च ॥ ज्योतिषी कूटगणकः कूटायु वैंदको भिषक् ॥ ६ ॥

है ॥ २ ॥ अपरा याको नाम है हे राजेन्द्र ! यह अपार फलकी देनहारी है जो अपराको सेवन करै है वह लोकमें प्रसिद्ध हो जाय है ॥ ३ ॥ ब्रह्महत्यारो गोत्रहत्यारो भ्रूणहत्यारो तथा पराई निन्दा करनहारो तथा पराई स्त्रीनसों प्रीति करनहारो ॥ ४ ॥ हे राजन् ! ये सब अपराके सेवन करनेसों निश्चय करिके पापरहित होजायँ । जे झूठी गवाही देय हैं तथा जे झूँठे प्रमाण देय हैं तथा जे कमती तोले हैं ॥५॥ जे ब्राह्मण झूँठे वेदको

पाठ करैं हैं और जे झूंठे शास्त्र बनावैं हैं जे ज्योतिषी झूंठी बातैं करैं हैं और झूठीही वैद्यक करनेवालो वैद्य ॥ ६ ॥ ये सब झूंठी गवाही देनेवालेके समान हैं और नरकके निवासी हैं । हे राजन् ! सब अपराके सेवनसों पापनते छूटी जाय हैं । जो क्षत्रिय अपने क्षात्र धर्मको छाँडिके संग्राममें भागिजाय है अपने धर्मते बाहर कियो गयो वह घोर नरकको जाय हैं ॥ ८ ॥ वहभी अपराके सेवन करनेसों पापनको दूरि करिके स्वर्गको

कूटसाक्षिसमा ह्येते विज्ञेया नरकौकसः ॥ अपरासेवनाद्राजन् पापमुक्ता भवन्ति ते ॥ ७ ॥ क्षत्रियः क्षात्रधर्मं यस्त्यक्त्वा युद्धात्पलायते ॥ स याति नरकं घोरं स्वीयधर्मबहिष्कृतः ॥ ८ ॥ अपरासेवनाद्राजन् पापं त्यक्त्वा दिवं व्रजेत ॥ विद्यामधीत्य यः शिष्यो गुरुनिन्दां करोति वै ॥ ९ ॥ महापातकयुक्तोहि निरयं याति दारुणम् ॥ अपरासेवनात्सोऽपि सद्गतिं प्राप्नुयान्नरः ॥ १० ॥ अपरामहिमानं तु शृणु राजन्वदाम्यहम् ॥ पुष्करत्रितये स्नात्वा कार्तिक्यां यत्फलं लभेत ॥ ११ ॥ गंगायां पिण्डदानेन पितॄणां तृप्तिदो यथा ॥ सिंहस्थिते देवगुरौ गौतमीस्नानतो नरः ॥ १२ ॥

जाय है जो शिष्य विद्या पढिके गुरुकी निंदा करे है ॥ ९ ॥ वह महापातकसो युक्त होके दारुण नरकको जाय है वह मनुष्य भी अपराके सेवनसों उत्तम गतिको प्राप्त होय है ॥ १० ॥ हे राजन् ! अपराकी महिमा सुनो मैं कहों हौं तीनों पुष्करोंमें कार्त्तिकीके दिन स्नान करिके जा फलको प्राप्त होय है ॥ ११ ॥ और गंगामें पिंडदान करिके पितरनको तृप्ति देनहारी जैसी सिंहराशिकी बृहस्पतिमें गौतमी नदीमें स्नान करनहारे मनुष्य ॥ १२ ॥

जा फलको प्राप्त होय है और कुंभकी संक्रांतिमें केदारनाथके दर्शनसों जो फल मिलै है और बदरिकाश्रमके दर्शनसों तथा वाहि तीर्थके सेवनसों ॥ १३ ॥ और सूर्यग्रहणमें कुरुक्षेत्रके स्नानसों जो फल प्राप्त होय है और हाथी घोडोंके दान करनेसे यज्ञमें सम्पूर्ण सुवर्णके देनेसों ॥ १४ ॥ और अपराके व्रत करनेसों मनुष्य जो फलको प्राप्त होय है तसेही आधी ब्याई भई गौके दानसों तथा सुवर्ण और पृथिवीके दानसों जो फल मिलै है ॥ १५ ॥ मनुष्य अपरा एकादशीके व्रत करनेसों वाहि फलको प्राप्त होय है यह व्रत पापरूपी वृक्षके काटनेको कुल्हारीरूप है और पापरूपी

यत्फलं समवाप्नोति कुम्भे केदारदर्शनात् ॥ बदर्याश्रमयात्रायां तत्तीर्थसेवनादपि ॥ १३ ॥ यत्फलं समवाप्नोति कुरुक्षेत्रे रविग्रहे॥ गजाश्वहेमदानानि यज्ञे कृत्स्नसुवर्णदः ॥ १४ ॥ यत्फलं समवाप्नोति ह्यपराया व्रतान्नरः ॥ अर्धप्रसूतां गां दत्त्वा सुवर्णं वसुधां तथा ॥ १५ ॥ नरस्तत्फलमाप्नोति अपराव्रतसेवनात् ॥ पापद्रुमकुठारोऽयं पापेन्धनदवानलः ॥ १६ ॥ पापान्धकारसूर्योऽयं पापसारङ्गकेसरी ॥ बुद्बुदा इव तोयेषु पुत्तिका इव जन्तुषु ॥१७॥ जायन्ते मरणायैव एकादश्या व्रतं विना ॥ अपरां समुपोष्यैव पूजयित्वा त्रिविक्रमम् ॥ १८ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं व्रजेन्नरः ॥ लोकानां च हितार्थाय तवाग्रे कथितं मया ॥ १९ ॥

इंधनके लिये दावानल है ॥ १६ ॥ और पापरूपी अंधकारको सूर्य है और पापरूपी मृगके लिये सिंह है पानीमें बुलबुलोंके समान और जीवोंमें भुनगोंके समान ॥ १७ ॥ वे एकादशीव्रतके विना मरनेहीको उत्पन्न होय हैं अपराको व्रत करिके और त्रिविक्रम भगवान्‌को पूजन करिके ॥ १८ ॥ सब पापनसों छूटिके मनुष्य विष्णुलोकको जाय है लोकनके हितके लिये मैंने तुमसे यह कथा कही ॥ १९ ॥

याके पाठ करनेसों और श्रवण करनेसों मनुष्य सब पापनते छूटिजाय है ॥ २० ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां ज्येष्ठकृष्णाऽपरैकादशीकथा समाप्ता ॥ १२ ॥

अथ ज्येष्ठशुक्लैकादशीकथा ॥ शुक्रस्य सितपक्षे या निर्जलैकादशी स्मृता॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां व्याख्यां रम्यां तनोम्यहम्॥ १॥ भीमसेनबोले—

पठनाच्छ्रवणाद्राजन्सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २० ॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ज्येष्ठकृष्णैकादश्यपरामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १२ ॥

अथ ज्येष्ठशुक्लैकादशीकथा ॥ भीमसेन उवाच ॥ पितामह महाबुद्धे शृणु मे परमं वचः ॥ युधिष्ठिरश्च कुन्ती च तथा द्रुपदनंदिनी ॥ १ ॥ अर्जुनो नकुलश्चैव सहदेवस्तथैव च ॥ एकादश्यां न भुञ्जन्ति कदाचिदपि सुव्रत ॥ २ ॥ ते मां ब्रुवंति वै नित्यं मा त्वं भुंक्ष्व वृकोदर ॥ अहं तानब्रुवं तात बुभुक्षा दुःसहा मम ॥३॥ दानं दास्यामि विधिवत्पूजयिष्यामि केशवम् ॥ विनोपवासं लभ्येत कथमेकादशीव्रतम् ॥ ४ ॥

कि, हे महाबुद्धि पितामह ! मेरो परम वचन सुनिये कि, युधिष्ठिर, कुंती और द्रौपदी ॥ १ ॥ अर्जुन, नकुल, सहदेव हे सुव्रत । ये सब एकादशीको कभी भोजन नहीं करैं हैं ॥ २ ॥ वे मोसों सदा कहैं कि हे, हे वृकोदर ! तू भोजन मत कर हे तात ! मैं उनसों कहौं हो कि, मेरी भूख दुःसह है अर्थात् मोपै भूख नहीं रुके है ॥ ३॥ मैं नाना प्रकारके दान विधिपूर्वक करौंगो और केशव भगवान्को

करिकेंगो व्रत करनेके विना ही मोको कैसे उपवासको फल मिले ॥ ४ ॥ भीमसेनको यह वचन सुनिके व्यासजी बोले—कि, जो तुमको स्वर्ग वांछित है और नरक बुरो लगे है ॥५॥ तो दोनों पक्षोंमें एकादशीको भोजन न करनो चाहिये. भीमसेन बोले—कि,हे महाबुद्धि पितामह ! मैं और कहौं ॥६॥ कि, हे मुनि ! एकवारके भोजनसों भी मोसे नहीं रह्यो जाय है तो उपवास कैसे होय ? वृकनाम जो अग्नि है वहसदामेरे

...वः श्रुत्वा व्यासो वचनमब्रवीत ॥ व्यास उवाच ॥ यदि स्वर्गोऽत्यभीष्टस्ते नरको दुष्ट एव च ॥ ५ ॥ एकादश्यां न ...य पक्षयोरुभयोरपि ॥ भीमसेन उवाच ॥ पितामह: महाबुद्धे कथयामि तवाग्रतः ॥ ६ ॥ एकभुक्ते न शक्तोऽहमुपवासः ...मुने ॥ वृकनामाऽपि यो वह्निः स सदा जठरे मम ॥ ७ ॥अतीवान्नं यदाऽश्नामि तदा समुपशाम्यति ॥ एकं शक्तोऽस्म्यहं ...चोपवासं महामुने ॥ ८ ॥ येनैव प्राप्यते स्वर्गस्तत्करोमि यथातथम् ॥ तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥९॥ ...श्राह उवाच ॥ श्रुत्वा मे मानवा धर्मा वैदिकाश्च श्रुतास्त्वया ॥ कलौ युगे न शक्यन्ते ते वै कर्तुं नराधिप ॥१०॥ सुखोपायं चाल्पधनमल्पक्लेशं महाफलम् ॥ पुराणानां च सर्वेषां सारभूत वदामि ते ॥ ११ ॥

...मैं रहे ॥ ७ ॥ जब मैं बहुतही अन्न खाऊँ हौं तब शांत होय है हे महामुने ! मैं एक व्रत करनेको समर्थ हौं ॥ ८ ॥ जासो स्वर्ग प्राप्त होय ...मैं यथार्थ विधिसों करौंगो सो आप वह एक निश्चय करिके बताइये जासों मैं कल्याणको प्राप्त होऊँ ॥९॥ व्यासजीबोले-कि, हे नराधिप ! ...मोते मनुष्यके और वेदके कहे भये धर्म सुने परन्तु कलियुगमें उनको करनो कठिनहै ॥ १० ॥ सहज जाको उपाय है और जामें धनहू

लगै है और क्लेशके विनाही बहुतसो फल मिले है और जो सब पुराणनको सारभूत है सो मैं तुमसों कहौं हौं ॥ ११ ॥ दोनों पक्षोंमें
शीके दिन भोजन नहीं करै है वह नरकको नहीं जाय है ॥ १२ ॥ व्यासको वचन सुनिके भीमसेन पीपरके पत्तेके समान कांप उठे फिर
ह महाबाहु भीमसेन भयभीत होके वचन बोले ॥ १३ ॥ भीमसेन बोले–कि, हे पितामह ! मैं कहा करों व्रत करनेको समर्थ नहीं हौं ताते

दश्यां न भुंजीत पक्षयोरुभयोरपि ॥ एकादश्यां न भुङ्क्ते यो न याति नरकं तु सः ॥ १२ ॥ व्यासस्य वचनं श्रुत्वा
पतोऽश्वत्थपत्रवत् ॥ भीमसेनो महाबाहुर्भीतो वाक्यमभाषत ॥ १३ ॥ भीमसेन उवाच ॥ पितामह न शक्तोऽहमुपवासे
मि किम् ॥ ततो बहुफलं ब्रूहि व्रतमेकं मम प्रभो ॥१४॥ व्यास उवाच ॥ वृषस्थे मिथुनस्थे वा शुक्ला ह्येकादशी भवेत् ॥
ासे प्रयत्नेन सोपोष्या जलवर्जिता ॥ १५ ॥ स्नाने चाचमने चैव वर्जयित्वोदकं बुधः ॥ माषमात्रसुवर्णस्य यत्र मज्जति
॥ १६ ॥ एतदाचमनं प्रोक्तं पवित्रं कायशोधनम् ॥ गोकर्णकृतहस्तेन माषमात्रं जलं पिबेत् ॥ १७ ॥

कि, हे त फल देनहारो एक व्रत मोसों कहिये ॥ १४ ॥ व्यासजी बोले–कि, वृषके मिथुनके सूर्यमें ज्येष्ठके शुक्लपक्षकी एकादशीहोयहै सो
दशीको निर्जल व्रत करनो चाहिये ॥ १५ ॥ स्नानमें और आचमनमें जल वर्जित नहीं है आचमनके जलको प्रमाण कहै हैं कि मासेभर
कि, र्थात् जामें मासेभरकी सुवर्ण डूबि जाय ॥ १६ ॥ यह शरीर शुद्ध करनहारो पवित्र आचमन कह्योहै गौके कानके समान किये भये

करिकेके एक मासेके प्रमाण जल पीवै ॥ १७ ॥ वाते न्यून वा अधिक होय तौ मद्यपानके समान है अन्नको भोजन न करै अन्यथा व्रतको
वांछित न। १८ ॥ एकादशी सूर्योदयते द्वादशीके सूर्योदयताईं न भोजन करै और न जल पीवै तो विनाही यत्न किये बारहों एकादशीन को
और [illegible]द्य ॥ १९ ॥ द्वादशीको निर्मल प्रभात होनेपै स्नान करै फिरि विधिपूर्वक ब्राह्मणके लिये जल तथा सुवर्णको दान करै ॥ २० ॥

[illegible] [illegible]धिकं पीत्वा सुरापानसमं भवेत् ॥ उपभुञ्जात नैवान्नं व्रतभंगोऽन्यथा भवेत् ॥ १८ ॥ उदयादुदयं यावद्वर्जयित्वा
[illegible]म्[illegible] ॥ अप्रयत्नादवाप्नोति द्वादशद्वादशीफलम् ॥१९॥ प्रभाते विमले जाते द्वादश्यां स्नानमाचरेत् ॥ जलं सुवर्णं दत्त्वा
[illegible]जातिभ्यो यथाविधि ॥ २० ॥ भुंजीतकृतकृत्यस्तु ब्राह्मणैः सहितो वशी ॥ एवं कृते तु यत्पुण्यं भीमसेन शृणुष्व तत्
[illegible] २१ ॥ संवत्सरस्य या मध्ये ह्येकादश्यो भवंति वै ॥ तासां फलमवाप्नोति अत्र मे नास्ति संशयः ॥ २२ ॥ इति मां केशवः
प्राह शंखचक्रगदाधरः ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥२३॥ एकादश्यां निराहारान्नरः पापात्प्रमुच्यते ॥ द्रव्यशुद्धिः
कलौ नास्ति संस्कारः स्मार्त एव च ॥ २४ ॥

[illegible] वशी पुरुष कृतकृत्य होके ब्राह्मणके साथ भोजन करे या प्रकार करनेसों जो पुण्य होय है हे भीमसेन ! ताहि तुम सुनो ॥ २१ ॥ संवत्सरके
मध्यमें जे एकादशी होय हैं उन सबनको फल या एकादशीसे प्राप्त होय हैं यामें संदेह नहीं है ॥२२॥ शंख चक्र और गदाके धारण करनहारे
[illegible]गवान्ने मोसो यह कही है कि; सब धर्मनको छोडकर एक मेरे शरण आओ ॥२३॥ एकादशीके दिन निराहार व्रत करनेसों मनुष्य पापनसे छूटि

ाय हैं. कलियुगमें द्रव्यकी शुद्धि नहीं हैं और स्मार्त्त संस्कारहू नहीं है ॥ २४ ॥ और दुष्ट कलियुगके प्राप्त होनेपै वैदिक तो कहां है ? हे वायुपुत्र
मसों बहुत कहनेसों कहा है ॥ २५ ॥ दोनों पक्षनमें एकादशीके दिन भोजन न करै और ज्येष्ठके शुक्लपक्षकी एकादशीके निर्जल व्रत करै ॥२६॥
व्रतको करिके जा फलको प्राप्त होय हैं हे वृकोदर ! सो तुम सुनो सब तीर्थनमें जो पुण्य होय हैं और सब दानमें जो फल होय ॥२७॥

वैदिकश्च कुतश्चास्ते प्राप्ते दुष्टे कलौ युगे ॥ किन्तु ते बहुनोक्तेन वायुपुत्र पुनः पुनः ॥ २५ ॥ एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयो
रुभयोरपि ॥ एकादश्य सिते पक्षे ज्येष्ठस्योदकवर्जितम् ॥ २६ ॥ उपोष्य फलमाप्नोति तच्छृणुष्व वृकोदर ॥ सर्वतीर्थेषु
पुण्यं सर्वदानेषु यत्फलम् ॥ २७ ॥ तत्फलं समवाप्नोति इमां कृत्वा वृकोदर ॥ संवत्सरेण याश्च स्युः शुक्लाः कृष्णा वृको
२८॥ उपोषितास्ताः सर्वाः स्युरेकादश्यो न संशयः ॥ धनधान्यबलायुर्दाः पुत्रारोग्यधनप्रदाः ॥२९॥ उपोषिता नरव्याघ्र
ता॰ वदासिते ॥ यमदूता महाकायाः करालाः कृष्णपिंगला ॥ ३० ॥ दण्डपाशधरा रौद्रा नोपसर्पन्ति तं नरम् ॥ पीतां
लभ॰ म्याश्चक्रहस्ता मनोजवाः ॥ ३१ ॥

कि, हे को व्रत करिके उन सबनको फल प्राप्त होय है जे वर्षभरमें शुक्लपक्ष और कृष्णपक्षकी एकादशीनके होय हैं ॥२८॥ एक एकादशी व्रत कर
दशीके य बल आयुकी देनहारी और पुत्र तथा आरोग्यरूपी फलकी देनहारी जे वे सब एकादशी हैं तिनको फल प्राप्त होयहै ॥२९॥ हे नरव्याघ्र !
कि, मैं सत्य सत्य कहा और बड़े शरीरके भयंकर काले पीले यमके दूत ॥३०॥ भयानक दंड तथा फांसीको लियेभये वाके समीप नहीं आवै हैं

करिके [illegible]ण किये भये सौम्यस्वरूप चक्र हाथमें लिये भये जिनको वेग मनके समान है ॥ ३१ ॥ ऐसे विष्णुके दूत अंतकालमें याके व्रत करनेहारे वांछित [illegible]ष्णुपुरीमें ले जाय हैं ताते सब जतनसों यह निर्जल उपवास करनो योग्य है ॥ ३२ ॥ तापीछे जलधेनुकोदान करिके मनुष्य सब पापनते और [illegible] हे जनमेजय! यह सुनिके ता पीछे पांडव वा व्रतको करत भये ॥ ३३ ॥ हे राजन्! ताते तुमहूं सब पापनकी शांतिके लिये जतनसों उपवास

[illegible] नयन्त्येनं मानवं वैष्णवीं पुरीम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सोपोष्योदकवर्जिता ॥ ३२ ॥ जलधेनुं ततो दत्त्वा सर्वपापैः [illegible] इति श्रुत्वा तदा चक्रुः पाण्डवा जनमेजय ॥ ३३ ॥ तथा त्वमपि भूपाल सोपवासार्चनं हरेः ॥ कुरु त्वं च प्रयत्नेन [illegible] प्रशान्तये ॥ ३४ ॥ करिष्याम्यद्य देवेश जलवर्जमुपोषणम् ॥ भोक्ष्ये परेऽह्नि देवेश ह्यनन्त तव वासरात् ॥ ३५ ॥ [illegible]चार्य ततो मन्त्रमुपवासपरो भवेत् ॥ सर्वपापविनाशाय श्रद्धादमसमन्वितः ॥ ३६ ॥ मेरुमन्दरमानं तु स्त्रियोऽथ पुरुषस्य वा ॥ [illegible]व तद्भस्मतां याति एकादश्याः प्रभावतः ॥ ३७ ॥ सकाञ्चनः प्रदातव्यो घटो वस्त्रेण संवृतः ॥ तोयस्य नियमं तस्यां कुरुते [illegible]वै स पुण्यभाक् ॥ ३८ ॥

[illegible]हित हरिको पूजन करो ॥ ३४ ॥ हे देवदेवेश! आज मैं जलवर्जित व्रत करौंगो हे अनंत देवेश! तुम्हारे वासरते दूसरे दिन भोजन करौंगो ॥ ३५ ॥ [illegible]पीछे या मंत्रको उच्चारण करिके उपवासमें तत्परहोत भयो सबपापनके नाशके लिये श्रद्धा और दम जो इंद्रियोंका वशकरनाहै ता करिकेव्रत करै [illegible] ॥ ३६ ॥ सुमेरु और मंदराचलके समान स्त्रीको वा पुरुषको पाप एकादशीके प्रभावसों भस्म हो जाय है ॥ ३७ ॥ वस्त्रमें लपेटिके सुवर्णसमेत घटकोदान

करनो चाहिये और जो या निर्जला एकादशीमें जलको नियम करै है वही पुण्यको भागी है ॥ ३८ ॥ जो मनुष्य या एकादशीके दिनपहर पहरमें स्नान, दान, जप, होम करै है वह करोड पल सुवर्ण दानके फलको प्राप्त होय है ॥३९॥ वह सब अक्षय कहो गयो है वह कृष्णको वचनहै। हेनृप! निर्जला एकादशीको व्रत कियो तो और धर्म करनेको कहा प्रयोजन है ॥४०॥विधिवत् उपवास करनहारो मनुष्य विष्णुधामको प्राप्त होय है

पलकोटिसुवर्णस्य यामे यामेऽश्नुते फलम् ॥ स्नानं दानं जपं होमं यदस्यां कुरुते नरः ॥ ३९ ॥ तत्सर्वं चाक्षयं प्रोक्तमेतत्कृष्ण भाषितम् ॥ किंवाऽपरेण धर्मेण निर्जलैकादशी नृप ॥ ४० ॥ उपोषिता च विधिवद्वैष्णवं पदमाप्नुयात् ॥ सुवर्णमन्नं वासांसि यदस्यां संप्रदीयते ॥ ४१ ॥ तस्यैव च कुरुश्रेष्ठ सर्वं चाप्यक्षयं भवेत् ॥ एकादशीदिने योऽन्नं भुंक्ते पापं भुनक्ति सः॥४२ तल्लोके स चांडालो मृतः प्राप्नोति दुर्गतिम् । ये प्रदास्यन्ति दानानि द्वादशीं समुपोष्य च ॥ ४३ ॥ ज्येष्ठमासि लभ्यते प्राप्स्यन्ति परमं पदम् ॥ ब्रह्महा मद्यपः स्तेनो गुरुद्वेष्टा सदाऽनृती ॥ ४४ ॥

कि, हे, दो सुवर्ण, अन्न, वस्त्र दियो जाय है ॥४१॥ हे कुरुवंशमें श्रेष्ठ ! वह सब देनेवालेको अक्षय होय और जो एकादशीको अन्न भोजनकरै दशीकोको भोजन करै है ॥४२॥ या लोकमें वह चांडाल होय और मृत्यु होकरिके परलोकमें दुर्गतिको प्राप्तहोय है और जे द्वादशीयुक्त एका- कि, मैं करिके दान करैंगे ॥ ४३ ॥ ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें वे परमपद अर्थात् मोक्षको प्राप्त होयँगे । ब्रह्महत्यारो, मद्यप, चोर, गुरुसों

करिके [illegible]ारो, सदा झूठ बोलनहारो ॥ ४४ ॥ इन सबनमें जो एकादशीको व्रतकरैं हैं वे सब पापनते छूटिजाय हैं हे कुंतीके पुत्र ! निर्जला एका
वांछित न[illegible] जो विशेष हैं ताहि सुनो ॥ ४५ ॥ श्रद्धा तथा दम करिके युक्त होय स्त्री पुरुषनको यह करनो चाहिये कि, जलशायी भगवान्‌को
और [illegible] और जलमयी धेनुका दान करैं ॥ ४६ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! अथवा प्रत्यक्ष गौको दान करैं अथवा घृतकी धेनुको दान करैं और वाके

[illegible]पातकैः सर्वैर्द्वादशी यैरुपोषिता ॥ विशेषं शृणु कौन्तेय निर्जलैकादशीदिने ॥ ४५ ॥ तत्कर्तव्यं नरैस्त्रीभिः श्रद्धादमस
[illegible]मा[illegible] पूज[illegible] ॥ जलशायी तु सम्पूज्यो देया धेनुश्च तन्मयी ॥ ४६ ॥ प्रत्यक्षं वा नृपश्रेष्ठ घृतधेनुरथापि वा ॥ दक्षिणाभिश्च श्रेष्ठाभिर्मि
[illegible]यद्र ॥ [illegible]नान्यन्नैश्च पृथग्विधैः ॥४७॥ तोषणीयाः प्रयत्नेन द्विजा धर्मभृतां वर ॥ तुष्टो भवति वै क्षिप्रं तैस्तुष्टैर्मोक्षदो हरिः ॥ ४८ ॥ आत्म
[illegible]पन्द्रुहिः कृतस्तैस्तु यैरेषा समुपोषिता ॥ पापात्मानो दुराचारा दुष्टास्ते नात्र संशयः ॥ ४९ ॥ कुलानां च शतं साग्रमनाचाररतं
[illegible]तस्[illegible] सदा ॥ आत्मना सह सन्नीतं वासुदेवस्य मन्दिरम् ॥ ५० ॥

[illegible]लो, रहू[illegible]ाथमें नाना प्रकारके मिष्टान्न देके दक्षिणानसों ब्राह्मणनको संतुष्ट करै ॥४७॥ हे धर्मधारिनमें श्रेष्ठ ! यत्नसों ब्राह्मण संतुष्ट करने चाहिये उनके
[illegible]सी संतुष्ट होनेसे मोक्षको देनहारे हरि संतुष्ट होय हैं ॥ ४८ ॥ जिन करिके या एकादशीको व्रत नहीं कियो उन करिके अपने आत्मासों द्रोह कियो
[illegible]यो वे पापात्मा और दुराचारी हैं यामें संदेह नहीं है ॥ ४९ ॥ जो मनुष्यने या एकादशीको व्रत कियो वाने सदा अनाचार करनहारे अपने

लके एकसौ एक पुरुष पीछेके और सौ आगेके आप समेत वासुदेव भगवान्‌के मंदिरमें पहुँचाय दीन्हें ॥ ५० ॥ और जिन सदा शांत और ानमें रत होके रात्रिमें जागरण और हरिका पूजन करिके एकादशीको व्रत किये उनके पिछले सौ पुरुष तथा आगेके सौ वा समेत विष्णु लोकको जायँ हैं ॥५१॥ अन्न, जल, गौ, वस्त्र, शय्या और सुन्दर आसन, कमण्डलु और छत्र ये सब निर्जला एकादशीके दिन देने चाहिये॥५२॥

शान्तैर्दानपरैश्चैव अर्चद्भिश्च तथा हरिम् ॥ कुर्वद्भिर्जागरं रात्रौ यैर्नरैः समुपोषिता ॥ ५१ ॥ अन्नं पानं तथा गावो वस्त्रं शय्याऽऽसनं ...म् ॥ कमण्डलुस्तथा छत्रं दातव्यं निर्जलादिने ॥ ५२ ॥ उपानहौ च यो दद्यात्पात्रभूते द्विजोत्तमे ॥ स सौवर्णेन यानेन ...लोकं व्रजेद् ध्रुवम् ॥ ५३ ॥ यश्चेमां शृणुयाद्भक्त्या यश्चापि परिकीर्त्तयेत् ॥ उभौ तौ स्वर्गतौ स्यातां नात्र कार्या विचारणा ...॥ यत्फलं तु सिनीवाल्यां राहुग्रस्ते दिवाकरे ॥ कृत्वा श्राद्धं लभेन्मर्त्यस्तदस्य श्रवणादपि ॥ ५५ ॥ नियमं च प्रकुर्वीत ...पूर्वकम् ॥ एकादश्यां निराहारो वर्जयिष्यामि वै जलम् ॥ ५६ ॥

कि, हे ...म पात्र ब्राह्मणको उपानह अर्थात् जूतनको दान करै है वह सुवर्णके विमानमें चढि विस्मय करिके विष्णुलोकको जाय है ॥ ५३ ॥ दशीको ...क्तिसों या कथाको सुनै हैं और जो कहैं हैं वे दोनों स्वर्गको जायँ हैं यामें विचार नहीं करनो चाहिये ॥ ५४ ॥ सिनीवाली अमावा कि, ...ग्रहणके समय श्राद्ध करनेसों मनुष्य जा फलको पावै है सो याकी कथा सुननेसों प्राप्त होय है ॥५५॥ दंतून करिके नियम करे कि

करि के ...ीको निराहार व्रत करौंगो और जलहू नहीं पीवौंगो ॥ ५७ ॥ केशव भगवान्की प्रसन्नताके लिये आचमनको छोडि और जल न
...शीके दिन त्रिविक्रमको पूजन करै ॥ ५७ ॥ गंध पुष्प तथा दीपसों और जल करिके हरिको प्रसन्न करै और विधानसों पूजन करि
वांछित ...ारण करै ॥ ५८ ॥ कि हे देवदेव ! हे हृषीकेश ! संसार समुद्रसे तारणवाले ! या जलकुम्भके दान करिके मोको परम गतिको पहुँ
और ...

...ार्थाय अन्यदाचमनादृते ॥ द्वादश्यां देवदेवेशः पूजनीयस्त्रिविक्रमः ॥ ५७ ॥ गन्धपुष्पैस्तथा दीपैर्वारिभिः प्रीणये
...मा पूजयित्वा विधानेन मंत्रमेतमुदीरयेत् ॥ ५८ ॥ देवदेव हृषीकेश संसारार्णवतारक ॥ उदकुम्भप्रदानेन नय मां परमां
...यं ॥ ५९ ॥ ततः कुम्भाः प्रदातव्या ब्राह्मणेभ्यः स्वशक्तितः ॥ सान्ना वस्त्रयुता भीम छत्रोपानत्फलान्विताः ॥ ६० ॥
...ान्यन्यानि देयानि जलधेनुर्विशेषतः ॥ भोजयित्वा ततो विप्रान् स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥ ६१ ॥ एवं यः कुरुते पूर्णां द्वादशीं
...पनाशिनीम् ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः पदं गच्छत्यनामयम् ॥ ६२ ॥

...तरको ॥ ५९ ॥ ता पीछे हे भीम ! यथाशक्ति ब्राह्मणनके लिये अन्न वस्त्र छत्र उपानह और फलन करिके युक्त घटनको दान करै ॥ ६० ॥
...ालो रहू दान देने चाहिये जल धेनु तो विशेष करि देनी योग्य है ता पीछे ब्राह्मणनको भोजन कराके आपहू मौन होके भोजन करै ॥ ६१ ॥
...सी जो पापनकी नाश करनहारी द्वादशीको पूर्ण करै वह सब पापनते मुक्त होके निर्दोष पदको प्राप्त होय है ॥ ६२ ॥

ते लगाके भीम करि यह शुभ एकादशी की गई और पांडवद्वादशी नामसों लोकमें प्रसिद्ध होती भई ॥६३॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनय पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां जेष्ठशुक्लैकादशीनिर्जलामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १४ ॥

ढकृष्णैकादशीकथा ॥ आषाढस्यासिते पक्षे योगिन्येकादशी तु या ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां कुर्वे सुदीपिकाम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर

ः प्रभृति भीमेन कृता ह्येकादशी शुभा ॥ पाण्डवद्वादशी नाम्ना लोके ख्याता बभूव ह ॥ ६३ ॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ष्ठशुक्लनिर्जलैकादशीमाहात्म्यं संपूर्णम् ॥ १४ ॥ छ ॥ अथाषाढकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ ज्येष्ठशुक्ले निर्जलाया त्म्यं वै श्रुतं मया ॥ आषाढकृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ १ ॥ कथयस्व प्रसादेन ममाग्रे मधुसूदन ॥ श्रीकृष्ण व्रतानामुत्तमं राजन्कथयामि तवाग्रतः ॥ २ ॥ सर्वपापक्षयकरं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ आषाढस्यासिते पक्षे योगिनी ल... ॥ ३ ॥ एकादशी नृपश्रेष्ठ महापातकनाशिनी ॥ संसारार्णवमग्नानां पाररूपा सनातनी ॥ ४ ॥

कि, हे हाराज ! ज्येष्ठके शुक्लपक्षकी एकादशीको माहात्म्य मैंने सुनो अब आषाढकृष्णपक्षकी एकादशीको कहा नाम है ॥ १ ॥ दशीको प्रसन्नतासों मेरे आगे कहो श्रीकृष्ण बोले–कि हे राजन् ! तुम्हारे आगे मैं सब व्रतनमें उत्तम व्रत कहौं हौं ॥२॥ सम्पूर्ण पापनकी कि, ... और भुक्ति मुक्तिकी देनहारी है आषाढ़के कृष्णपक्षमें योगिनी नाम एकादशी होय है ॥३॥ हे नृपश्रेष्ठ ! यह एकादशी महापात

करि के पूरनहारी है और संसारसमुद्रमें डूबे भये मनुष्यनको पार करनहारी सनातन है ॥ ४ ॥ हे नराधिप ! तीनों लोकनमें यह योगिनी वांछित [illegible] पुराणमें जो पापनकी हरनेवाली कथा है ताहि मैं कहौं हौं ॥ ५ ॥ अलकापुरीमें स्वामी कुबेरनाम शिवको पूजक है उनके पूज और [illegible]को लावनहारो हेममाली नाम एक यक्ष हो ॥६॥ वाकी स्वरूपवती स्त्रीको विशालाक्षी नामहो वासों वह प्रीतियुक्त होके कामके वशी

[illegible] भूता योगिनीति नराधिप ॥ कथयामि कथां तस्याः पौराणीं पापहारिणीम् ॥ ५ ॥ अलकाधिपतिर्नाम्ना कुबेरः [illegible] ॥ तस्यासीत्पुष्पबटुको हेममालीति नामतः ॥ ६ ॥ तस्य पत्नी सुरूपा च विशालाक्षीति नामतः ॥ स तस्यां प्रत्य[illegible] कामपाशवशं गतः ॥ ७ ॥ मानसात्पुष्पनिचयमानीय स्वगृहे स्थितः ॥ पत्नीप्रेमसमायुक्तो न कुबेरालयं गतः ॥८॥ [illegible] देवसदने करोति शिवपूजनम् ॥ मध्याह्नसमये राजन् पुष्पाणि न समीक्षते ॥ ९ ॥ हेममाली स्वभवने रमते हि तया [illegible] ॥ यक्षराट् प्रत्युवाचाथ कालातिक्रमकोपितः ॥ १० ॥ कस्मान्नायाति भो यक्षा हेममाली दुरात्मवान् ॥ निश्चयः तस्य [illegible]यतामस्य प्रत्युवाच पुनः पुनः ॥ ११ ॥

[illegible] भयो ॥७॥ मानससरोवरते फूलनको ढेर लायके अपने घरमें ठहर जात भयो पत्नीकी प्रीतिके मारे कुबेरके स्थानमें नहीं जात भयो ॥८॥ [illegible]शिवालयमें शिवको पूजन कर रहे हे राजन् ! मध्याह्नके समयमें फूलोंकी राह देखि रहे हैं ॥९॥ और हेममाली तो अपने घरमें विशालाक्षीके [illegible]विहार करि रह्यो हो देरी हो जानेके कारण कुबेर क्रोधित होके बोले ॥ १० ॥ अरे यक्षो ! यह दुष्ट हेममाली काहेसों नहीं आयो है या

को निश्चय करनो चाहिये यह बारंबार कहत भयो ॥११॥ यक्ष बोले–कि हे राजन्! वह स्त्रीकी प्रीतिके मारे अपने घरमें इच्छापूर्वक विहार
उन यक्षनके वचन सुनिके कुबेर बहुतही क्रोधित भयो ॥ १२ ॥ और वा फूल लावनहारे हेममालीको शीघ्रही बुलावत भयो वह बीतो
जानिके भयसों व्याकुलनेत्र होत भयो ॥ १३ ॥ आयो और व्याकुल होके नमस्कार करि कुबेरके आगे ठाढो होत भयो वाहि

ऊचुः ॥ वनिताकामुको गेहे रमते स्वेच्छया नृप ॥ तेषां वाक्यं समाकर्ण्य कुबेरः कोपपूरितः ॥ १२ ॥ आह्वयामास
तूर्णं बटुकं हेममालिनम् ॥ ज्ञात्वा कालात्ययं सोऽपि भयव्याकुललोचनः ॥ १४ ॥ आजगाम नमस्कृत्य कुबेरस्याग्रतः
ः ॥ तं दृष्ट्वा धनदः क्रुद्धः कोपसंरक्तलोचनः ॥ १४ ॥ प्रत्युवाच रुषाविष्टः कोपाद्विस्फुरिताधरः ॥ धनद उवाच ॥ रे पाप
त कृतवान्देवहेलनम् ॥ १५ ॥ अतो भव श्वित्रयुक्तो वियुक्तः कान्तया सदा ॥ अस्मात् स्थानादपध्वस्तो गच्छ स्थान
॥ १६ ॥ इत्युक्ते वचने तेन तस्मात् स्थानात्पपात सः ॥ महादुःखाभिभूतश्च कुष्ठपीडितविग्रहः ॥ १७ ॥

कि, हे धित भये और क्रोधिसे आंख लाल हो गई ॥ १४ ॥ क्रोधसे भरे भये और कोपसों कंपायमान हैं होंठ जिनके ऐसे कुबेर बोलत
दशीको दुष्ट दुराचारी! तैंने देवताकी अवज्ञा कीन्ही ॥ १५ ॥ याते तू श्वित्र नाम सफेद कुष्ठ करिके युक्त और स्त्रीसे सदा वियुक्त हो जा
कि, याते गिरिके अधमस्थानको जा ॥ १६ ॥ जब कुबेरने ऐसे वचन कहे तब वह वहांते गिरत भयो तब वह महादुःखी और श्वित्र

करिके युक्त होत भयो ॥ १७ ॥ वह वा भयानक वनमें न तो अन्न और जल पावत भयो न तो वाको दिनमें सुख होत भयो और न रात्रिमें
वांछित [illegible] ॥ १८ ॥ छायामें जातो तब तो वाके शरीरमें पीडा होती और घाममें दाह होन लगतो परन्तु शिवकी पूजाके प्रतापते वाकी स्मृति गई
और [illegible] १९ ॥ पापन करि दबाय लियो है वाहूपै वाकी पहले कर्मको स्मरण रह्यो ता पीछे भ्रमतो २ सब पर्वतनमें उत्तम जो हिमालय है

[illegible] न भक्ष्यं च वने रौद्रे लभत्यसौ ॥ न सुखं दिवसे तस्य न निद्रां लभते निशि ॥ १८ ॥ छायायां पीडिततनुर्निदा
[illegible]तपीडितः ॥ शिवपूजाप्रभावेण स्मृतिस्तस्य न लुप्यते ॥ १९ ॥ पातकेनाभिभूतोऽपि कर्म पूर्वमनुस्मरन् ॥ भ्रममाणस्त
[illegible]छद्धिमाद्रिं पर्वतोत्तमम् ॥ २० ॥ तत्रापश्यन्मुनिवरं मार्कण्डेयं तपोनिधिम् ॥ तस्यायुर्विद्यते राजन् ब्रह्मणो दिनसप्तकम् ॥
[illegible]१ ॥ आश्रमं स गतस्तस्य ऋषेर्ब्रह्मसदः समम् ॥ ववन्दे चरणौ तस्य दूरतः पापकर्मकृत् ॥ २२ ॥ मार्कण्डेयो मुनिवरो
दृष्ट्वा तं कुष्ठिनं तदा ॥ परोपकरणार्थाय समाहूयेदमब्रवीत् ॥ २३ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ कस्मात्कुष्ठाभिभूतस्त्वं कुतो निन्द्य
[illegible]रो ह्यसि ॥ इत्युक्तः प्रत्युवाचाथ मार्कण्डेयेन धीमता ॥ २४ ॥

[illegible] जात भयो ॥ २० ॥ तहां मुनिनमें श्रेष्ठ जे तपोनिधि मार्कण्डेय ऋषि हैं तिनको देखत भयो उनकी आयु ब्रह्माके सात दिनकी ही ॥ २१ ॥
[illegible]की सभाके समान जो ऋषिको आश्रम हो तामें जात भयो वह पापकर्म करनहारो दूरिते उनके चरणनको नमस्कार करत भयो ॥ २२ ॥ तब
[illegible]य मुनिकर वा कोढीको देखिके परायो उपकार करनेके लिये वाहि बुलायके यह कहत भये ॥ २३ ॥ मार्कण्डेय बोले—कि, तेरे कुष्ठ काहेते

कि, हे ... और तू काहेते निन्दित होगयो है उन बुद्धिमान मार्कण्डेय करि ऐसे कहो गयो वह यक्ष बोलत भयो ॥ २४ ॥ हेममाली बोल्यो—कि, हे महाराज ? मैं कुबेरको सेवक हौं हेममाली मेरो नाम है मैं प्रतिदिन मानससरोवरते पुष्पनको समूह लायके ॥ २५ ॥ शिवपूजन समय कुबेर ... देतो हो सो एक दिन मैंने काललोप कियो अर्थात् देर लगाई ॥ २३ ॥ स्त्रीके सुखमें लग्यो भयो मैं कामसों व्याकुलचित्त हो, हे मुने !

हेममाल्युवाच ॥ यक्षराजस्यानुचरो हेममालीति नामतः ॥ मानसात्पुष्पनिचयमानीय प्रत्यहं मुने ॥ २५ ॥ शिवपूजनवेलायां कुबेराय समर्पये ॥ एकस्मिन् दिवसे काललोपश्च विहितो मया ॥ २६ ॥ पत्नीसौख्यप्रसक्तेन कामव्याकुलचेतसा ॥ ततः क्रुद्धेन ...ऽहं राजराजेन वै मुने ॥२७॥ कुष्ठाभिभूतः संजातो विभक्तः कान्तया सह ॥ अधुना तव सान्निध्यं प्राप्तोऽस्मि शुभकर्मणा ॥ सतां स्वभावतश्चित्तं परोपकरणक्षमम् ॥ इति ज्ञात्वा मुनिश्रेष्ठ शाधि मां च कृतैनसम् ॥ २९ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ ...त्यमिह प्रोक्तं नासत्यं भाषितं यतः ॥ अतो व्रतोपदेशं ते करिष्यामि शुभप्रदम् ॥ ३० ॥

कि, हे कुबेर करि शाप दियो गयो ॥ २७ ॥ मैं कोढी होगयो और स्त्रीते जुदो होगयो अब मेरो कोई ऐसो शुभ कर्म उदय भयो है जाते मैं ... दर्शीका आयो हौं ॥२८॥ सज्जनको चित्त स्वभावहीसों पराये उपकारमें समर्थ होय है हे मुनिश्रेष्ठ ! यह जानिके पाप करनहारो जो मैं हौं कि, ... देउ ॥ २९ ॥ मार्कण्डेय बोले--कि, जाते तैंने यहां सत्य कही झूठ नहीं कही याते मैं ताको कल्याण देनहारे व्रतको उपदेश

करि के यह ॥ तू आषाढके कृष्णपक्षमें योगिनी नाम एकादशीको व्रत कर या व्रतके पुण्यप्रभावसों तू निश्चय कुष्ठते छूटि जायगो ॥ ३१ ॥
वचन सुनिके पृथिवीमे दंडवत् प्रणाम करत भयो और मुनि कारि उठायो गयो तब वह बहुतही प्रसन्न होत भयो ॥३२॥ मार्कंडेय
वांछित नृप सों वाने उत्तम व्रत किया वा व्रतके प्रभावसों वह देवरूप हो जात भयो ॥३३॥ स्त्रीसों संयोगको प्राप्त भयो और उत्तम सुख भोगने
और

पक्षे त्वं योगिनीव्रतमाचर ॥ अस्य व्रतस्य पुण्येन कुष्ठात्त्वं मुच्यसे ध्रुवम् ॥ ३१ ॥ इति वाक्यं मुनेः श्रुत्वा दंडवत्पतितो
त्थापितश्च मुनिना बभूवातीव हर्षितः ॥ ३२ ॥ मार्कण्डेयोपदेशेन कृतं तेन व्रतोत्तमम् ॥ तद्व्रतस्यप्रभावेण देवरूपो
॥ ३३ ॥ संयोगं कान्तया लेभे बुभुजे सौख्यमुत्तमम् ॥ ईदृग्विधं नृपश्रेष्ठ कथितं योगिनी व्रतम् ॥ ३४ ॥ अष्टा
सहस्राणि द्विजान् भोजयते तु यः ॥ तत्फलं समवाप्नोति योगिनीव्रतकृन्नरः ॥३५॥ महापापप्रशमनी महापुण्यफलप्रदा ॥
चो कृष्णैकादशी ते कथिता योगिनी नृप ॥ ३६ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते आषाढकृष्णैकादशीयोगिनीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥१८॥

॥ हे नृपश्रेष्ठ ! ऐसो योगिनीको व्रत मैंने कह्यो ॥३४॥ जो अट्ठासी हजार ब्राह्मनको भोजन करावै है वाके फलको व्रत करनहारो मनुष्य प्राप्त
य है ॥ ३५ ॥ महापापनकी शान्त करनहारी और बड़े पुण्यबलकी देनहारी आषाढकृष्णपक्षकी एकादशी मैंने तुमसों कही ॥३६॥ इति श्रीम
त्पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायामाषाढकृष्णैकादशीयोगिनीकथा समाप्ता ॥ १५ ॥

अथाषाढशुक्लैकादशी देवशयनीकथा ॥ शुचेः शुक्ले तु या देवशयनीति प्रकीर्तिता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां सम्यक्करोम्यहम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले कि, आषाढके शुक्ल पक्षकी एकादशीको कहा नाम है वाकी देवता कौन है और वाकी विधि कैसी है हे केशव ! यह मोसों कहो ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले–कि, हे महाराज ! जाको ब्रह्माने महात्मा नारदके अर्थ कही वा आश्चर्य करावनहारी कथाको मैं तुमसों कहौं हौं ॥ २ ॥ नारद

भा. टी. आ. शु.

॥५२॥

आषाढशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ आषाढस्य सिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ को देवः को विधिस्तस्या स्तदाख्याहि केशव ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ कथयामि महीपाल कथामाश्चर्यकारिणीम् कथयामास यां ब्रह्मा नारदाय महात्मने ॥ २ ॥ नारद उवाच ॥ कथयस्व प्रसादेन विष्णोराराधनाय मे ॥ आषाढशुक्लपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ ३ ॥ [illegible]च । वैष्णवोऽसि मुनिश्रेष्ठ साधु पृष्टं कलिप्रिय ॥ नातः परतरं लोके पवित्रं हरिवासरात् ॥ ४ ॥ कर्तव्यं तु प्रयत्नेन [illegible]पनुत्तये ॥ तस्मात्तेऽहं प्रवक्ष्यामि शुक्ल एकादशीव्रतम् ॥ ५ ॥ एकादश्या व्रतं पुण्यं पापघ्नं सर्वकामदम् ॥ न कृतं यैर्नरै [illegible]रा निरयैषिणः ॥ ६ ॥

कि, हे महाराज ! विष्णुके आराधनके लिये मोसों प्रसन्नतासे कहिये कि, आषाढके शुक्लपक्षमें कौनसे नामकी एकादशी होय है ॥ ३ ॥ [illegible]दशीके [illegible] कि, हे मुनिश्रेष्ठ ! तुम वैष्णव हो हे कलिप्रिय ! तुमने भलो प्रश्न कियो लोकमें हरिवासरसे परे और कोई पवित्र नहीं है ॥ ४ ॥ कि, दे[illegible] दूर करनेके लिये यह यत्नसों कर्त्तव्य है ताते मैं तुमसों शुक्लपक्षकी एकादशीको व्रत कहौंगो ॥ ५ ॥ एकादशी व्रत पवित्र है

करिके युद्ध है और सब कामना देय है जिन मनुष्यनने याको व्रत लोकमें नहीं कीन्हो वे नरकगामी हैं॥६॥आषाढके महीनेमें शुक्लपक्षकी
वांछित[illegible]दशी विख्यात है हृषीकेश भगवानकी प्रीतिके लिये याको उत्तम व्रत करनो योग्य है ॥७॥ मैं तुम्हारे आगे उत्तम पुराणकी कथा
और [illegible] कथाके सुनने मात्रहीतें महापाप नाशको प्राप्त होय है ॥८॥ सूर्यवंशमें उत्पन्न मान्धाता नाम राजानमें ऋषि होतभयो सत्यप्रतिज्ञा

[illegible]मा विख्याता शुचौ ह्येकादशी सिता ॥ हृषीकेशप्रीतये तु कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ॥ ७ ॥ कथयामि तवाग्रेऽहं कथां
[illegible] शुभाम् ॥ यस्याः श्रवणमात्रेण महापापं प्रणश्यति ॥ ८ ॥ मान्धाता नाम राजर्षिर्विवस्वद्वंशसम्भवः ॥ बभूव
[illegible] स सत्यसन्धः प्रतापवान् ॥ ९ ॥ धर्मतः पालयामास प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ॥ न तस्य राज्ये दुर्भिक्षं नाधयो
[illegible]यस्तथा ॥ १० ॥ निरातङ्काः प्रजास्तस्य धनधान्यसमन्विताः ॥ नान्यायोपार्जितं द्रव्यं कोशे तस्य महीपतेः ॥ ११ ॥
[illegible]तस्यैवं कुर्वतो राज्यं बहुवर्षगणो गतः ॥ अथो कदाचित्संप्राप्ते विपाके पापकर्मणः ॥ १२ ॥

[illegible]ालो वह प्रतापवान् चक्रवर्ती होतभयो ॥९॥ वह अपने निज पुत्रनके समान प्रजाको धर्मसों पालन करत भयो वाके राज्यमें दुर्भिक्ष मानसी व्यथा
[illegible]था रोगआदि कोई उपद्रव नहीं होत भयो॥१०॥वाकी प्रजा निरातंक धनधान्यसों भरीपूरी होतभयी और वा राजाके भंडारमें अन्यायसों इकट्ठो
कियो भयो धन नहीं होत भयो ॥११वाको या प्रकार राज्य करते बहुतसे वर्ष व्यतीत होत भये या पीछे कबहूं पापकर्मके परिणामसों ॥१२॥

..के देशमें तीन वर्ष ताईं मेघ नहीं वर्षत भयो याते क्षुधासों पीडित वाकी प्रजा उद्विग्न हो जात भई ॥१३॥ अन्नके न उत्पन्न होनेसों पीडित
..के देश स्वाहा, स्वधा, वषट्कार और वेदके अध्ययन करि वर्जित होजात भये ॥ १४ ॥ या पीछे प्रजानके समूह आयके राजासों यह कहत
भये हे राजन्! प्रजानको हित करनवालो वचन सुनिये॥ १५॥पुराणमें पंडितनने जलको नाम नारा कह्यो है वे जल भगवान्‌के अयन कहिये स्थान है

वर्षत्रयं तद्विषये न ववर्ष बलाहकः ॥ तेनोद्विग्नाः प्रजास्तत्र बभूवुः क्षुधयार्दिता ॥ १३ ॥ स्वाहास्वधावषट्कारवेदाध्ययन
वर्जिताः ॥ बभूवुर्विषयास्तस्य सस्याभावेन पीडिताः ॥ १४ ॥ अथ प्रजाः समागत्य राजानमिदमब्रुवन् ॥ श्रूयतां वचनं राजन्
..ं हितकारकम् ॥ १५ ॥ आपो नारा इति प्रोक्ताः पुराणेषु मनीषिभिः ॥ अयनं ता भगवतस्तेन नारायणः स्मृतः ॥१६॥
.. भगवान् विष्णुः सर्वगतः सदा ॥ स एव कुरुते वृष्टिं वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥ १७ ॥ तदभावेन नृपते क्षयं गच्छन्ति
.. तथा कुरु नृपश्रेष्ठ योगक्षेमो यथा भवेत्॥१८॥राजोवाच ॥ सत्यमुक्तं च भवता न मिथ्याभिहितं वचः ॥ अन्नं
कि..मन्ने सर्वं प्रतिष्ठितम्॥१९॥अन्नाद्भवन्ति भूतानि जगदन्नेन वर्त्तते ॥ इत्ययं श्रूयते लोके पुराणे बहु विस्तरे ॥ २० ॥

दर्श..कहेगये हैं ॥१६॥ वे मेघरूप भगवान् विष्णु सदा सर्वव्यापी हैं वेही वृष्टिको करे हैं ताते अन्न होय है और वा अन्नते प्रजा होय हैं
कि..न् ! वा अन्नके अभावसों प्रजा क्षयको प्राप्त होय है हे नृपश्रेष्ठ ! ऐसो करो जाते आपके देशमें कुशल होय॥१८॥राजा बोले—कि
..कछ मिथ्या नहीं है अन्न ब्रह्ममय कह्यो गयो है अन्नहीमें सब स्थित हैं ॥१९॥ अन्नते जीव होय हैं जगत् अन्नहीसों वर्तमान है

करिके युद्ध सुनो जाय है और बहुत विस्तारयुक्त पुराणनमें हू कह्यो है ॥२०॥ राजानके अपराधसों प्रजानको पीडा होय है मैंने बुद्धिसों विचा
वांछि अपनो कियो दोष नहीं देख्यो है ॥२१॥ ताहूपै प्रजानकी हितकी कामनासों यत्न करौंगो राजा ऐसी मति करिके बहुतसी सेना
और २॥ विधाताको नमस्कार करिके घने वनको जात भयो और मुख्य २ मुनिनके तपकरि बढे भये आश्रमनमें विचरत भयो ॥ २३ ॥ या

मा चारेण प्रजानां पीडनं भवेत ॥ नाहं पश्याम्यात्मकृतं दोषं बुद्ध्या विचारयन् ॥ २१ ॥ तथापि प्रयतिष्यामि
तकाम्यया ॥ इति कृत्वा मतिं राजाऽपरिमेयबलान्वितः ॥२२॥ नमस्कृत्य विधातारं जगाम गहनं वनम् ॥ चचार
जा माश्रमांस्तपसैधिनाम् ॥ २३ ॥ ददर्शाथ ब्रह्मसुतमृषिमाङ्गिरसं नृपः ॥ तेजसा द्योतितदिशं द्वितीयमिव पद्मजम्
कृते बद्धे दृष्ट्वा हर्षितो राजा ह्यवतीर्य च वाहनात् ॥ ननमश्चक्रेऽस्य चरणौ कृताञ्जलिपुटो वशी ॥ २५ ॥ मुनिस्तमभिनन्द्याथ
दिरे वाचनपूर्वकम् ॥ पप्रच्छ कुशलं राज्ये सप्तस्वङ्गेषु भूपतेः ॥ २६ ॥ निवेदयित्वा कुशलं पप्रच्छानामयं नृपः ॥ ततश्च
मुनिना राजा पृष्टागमनकारणः ॥ २७ ॥

छे वह राजा ब्रह्माके पुत्र जे आंगिरस ऋषि हैं तिनको देखत भयो तेजसों प्रकाशमान कीन्ही हैं दिशा जिनने ऐसे वे मुनि दूसरे ब्रह्माके समान स्थित
२४॥ उनको देखिके प्रसन्न वह वशी राजा वाहनते उतरिके उनके चरणको नमस्कार करि हाथ जोरिके स्थित होत भयो ॥२५॥ मुनि स्वस्ति
चनपूर्वक वाको आशीर्वाद देके राज्यमें और राज्यके सातो अंगनमें कुशल पूंछत भयो ॥२६॥ तब राजा अपनी कुशल कहिके मुनिसों कुशल

त भयो ता पीछे मुनिने राजासों आवनेको कारण पूछा ॥ २७ ॥ तब राजा उन मुनिश्रेष्ठसों अपने आगमनको कारण कहत भयो राजा
ले–कि, हे भगवन् ! धर्मकी विधिसों मेरे राज्य करतेहू अनावृष्टि भई है अर्थात् सूखा परो है मैं याको कारण नहीं जानौं हौं ॥२८॥ या सन्दे
को दूर करिवेको आपके समीप आयो हौं योगक्षेमके विधानसों प्रजानको सुख कीजिये ॥२९॥ ऋषि बोले–कि, हे राजन् ! यह सत्ययुग सब

मब्रवीन्मुनिशार्दूलं स्वस्यागमनकारणम् ॥ राजोवाच ॥ भगवन्धर्मविधिना मम पालयतो महीम् ॥ अनावृष्टिः संप्रवृत्ता नाहं
कारणम् ॥ २८ ॥ संशयच्छेदनार्थाय ह्यागतोऽहं तवान्तिकम्॥ योगक्षेमविधानेन प्रजानां निर्वृतिं कुरु ॥ २९ ॥
॥ एतत् कृतयुगं राजन्युगानामुत्तमं स्मृतम् ॥ अत्र ब्रह्मोत्तरा लोका धर्मश्चात्र चतुष्पदः ॥ ३० ॥ तस्मिन्युगे
ब्राह्मणा नेतरे जनाः ॥ विषये तव राजेन्द्र वृषलो यत्तपस्यति ॥ ३१ ॥ अकार्यकरणात्तस्य न वर्षति बलाहकः
वधे यत्नं येन दोषः प्रशाम्यति ॥ ३२ ॥ राजोवाच ॥ नाहमेनं वधिष्यामि तपस्यन्तमनागसम् ॥ धर्मोपदेशं कथय
शनम् ॥ ३३ ॥

यामें लोग वेद बहुत पढे हैं और यामें धर्महूके चारों चरण हैं ॥३०॥ या युगमें ब्राह्मण तप करिके युक्त हैं और जाति नहीं। हे
देशमें जो शूद्र तपस्या करै है ॥३१॥ ताके अयोग्य करनेसों मेघ नहीं बरसै है ताते वाके मारनेको यत्न करो जाते दोष शांत
राजा बोले–कि, मैं तप करते भये या निरपराधिको नही मारौंगो ऐसे धर्मको उपदेश कीजिये जाते उपद्रवको नाश होय ॥३३॥

करिके युक्त राजन् ! ऐसेही हैं तो आषाढके शुक्लपक्षमें पद्मा नाम जो एकादशी प्रसिद्ध है ताको व्रत करो ॥ ३४ ॥ वाके व्रतके प्रभावसों वांछित ...गी यह एकादशी सब सिद्धि देने हारी और उपद्रवकी नाश करने हारी है ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! कुटुम्ब और प्रजा समेत याको व्रतकरो और ...वन सुनिके राजा अपने घरको आवत भयो ॥ ३६ ॥ ता पीछे आषाढ़ महीनेके आनेपै सबरी प्रजासमेत चारों वर्णन करिके युक्त पद्माको

...॥ यद्येवं तर्हि नृपते कुरुष्वैकादशीव्रतम् ॥ शुचिमासे शुक्लपक्षे पद्मानामेति विश्रुता ॥ ३४ ॥ तस्या व्रतप्रभावेण ...र्वमा... ...त ध्रुवम् ॥ सर्वसिद्धिप्रदा ह्येषा सर्वोपद्रवनाशिनी ॥ ३५ ॥ अस्या व्रतं कुरु नृप सप्रजः सपरिच्छदः ॥ इति वाक्यं मुनेः ...गतः ...जा स्वगृहमागतः ॥ ३६ ॥ आषाढमासे संप्राप्ते पद्माव्रतमथाकरोत् ॥ प्रजाभिः सह सर्वाभिश्चातुर्वर्ण्यसमन्वितः ॥ ३७ ॥ ...कृते व्रते राजन्प्रववर्ष बलाहकः ॥ जलेन प्लाविता भूमिरभवत्सस्यमालिनी ॥ ३८ ॥ हृषीकेशप्रसादेन जनाः सौख्यं ...दिरे ॥ एतस्मात्कारणादेव कर्त्तव्यं व्रतमुत्तमम् ॥ ३९ ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव लोकानां सुखदायकम् ॥ पठनाच्छ्रवणादस्याः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४० ॥

...रत भयो ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! या प्रकार व्रत करनेपै मेघ वर्षत भयो जलसों प्लावित पृथ्वी सब प्रकार धान्यनकी माला करिके युक्त ...ई ॥ ३८ ॥ और हृषीकेश भगवान्के प्रसादसों सब जन सुखको प्राप्त होत भये या कारणसों यह उत्तम व्रत करनो योग्य है ॥ ३९ ॥ ...क्तिमुक्तिको देनेहारो और लोकनको सुखदायक है याके पढ़ने और सुननेसों मनुष्य सब पापनते छुटि जाय हैं ॥ ४० ॥

राजन् ! यह एकादशी शयनी कही जाती है विष्णुकी प्रसन्नताकी सिद्धिके लिये यामें शयनव्रत कह्यो है ॥ ४१ ॥ हे राजशार्दूल ! मोक्षकी इच्छा
१. प ...द्वारे मनुष्य करि याको व्रत सदा करनो योग्य है और चातुर्मास्य व्रतहूको आरंभ याहि एकादशी होय है ॥ ४२ ॥ युधिष्ठिर बोले—कि हे
॥५२॥ ...कों ! विष्णुको शयनव्रत कैसे करनो चाहिये हे देव ! सो और चतुर्मास्यके व्रत मोसों कृपा करिके कहो ॥ ४३ ॥ श्रीकृष्ण—बोले कि हे कौंतेय !

इयमेकादशी राजञ्छयनीत्यभिधीयते ॥ विष्णोः प्रसादसिद्ध्यर्थमस्यां च शयनव्रतम् ॥४१॥ कर्तव्यं राजशार्दूल जनै
...र्मोक्षेच्छुभिः सदा ॥ चातुर्मास्यव्रतारंभोऽप्यस्यामेव विधीयते ॥ ४२ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ कथं कृष्ण प्रकर्तव्यं श्रीविष्णोः
...नव्रतम् ॥ तद्ब्रूहि कृपया देव चातुर्मास्यव्रतानि च ॥४३॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि गोविंदशयनव्रतम् ॥
...च यान्युक्तान्यासंस्तानि व्रतानि च ॥ ४४ ॥ कर्कराशिगते सूर्ये शुचौ शुक्ले तु पक्षके ॥ एकादश्यां जगन्नाथं
...सूदनम् ॥४५॥ तुलाराशिस्थिते तस्मिन्पुनरुत्थापयेद्धरिम् ॥ अधिमासेऽपि पतित एष एव विधिः क्रमात् ॥ ४६ ॥
कि, ...पयेद्देवं तथैवोत्थापयेद्धरिम् ॥ आषाढस्य सिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः ॥ ४७ ॥

दश ...के शयनको व्रत कहौंगो और चतुर्मास्यमें जे व्रत कहे गये हैं उनहूंको कहौंगो ॥ ४४ ॥ कर्कराशिमें सूर्यके जानेपै आषाढके शुक्लपक्ष
कि, ...दिन जगत्के स्वामी जे मधुसूदन हैं तिनको शयन करावे ॥ ४५ ॥ फिर सूर्यको तुलाराशिमें जानेपै हरिको जगावे अधिकमासके
...विधि क्रमसों कही है ॥४६॥ या विधिते अन्य देवनको न सुलावे और न उठावे आषाढ महीनेके शुक्लपक्षमें एकादशीके दिनव्रत

करिके युक्त हे युधिष्ठिर ! या प्रकार विष्णुकी प्रतिमाको स्थापन करिके चातुर्मास्यव्रतनकी परिकल्पन करै ॥ ४८ ॥ शंख, चक्र, गदा वांछित । विष्णुकी प्रतिमाको स्नान करावे फिर पीतांबर धारण करावे वा सौम्य मूर्तिको सफेद वस्त्र जापै बिछे हैं और तकिया जापै लगे हैं और सफेदही वस्त्र उढाके शयन करावै ॥४९॥ इतिहास और पुराणको जाननहारोवेदनको पारगामी ब्राह्मण दही, दूध, घी, शहद, शर्करा

र्मास्यव्रतानां तु कुर्वीत परिकल्पनम् ॥ एवं च प्रतिमां विष्णोः स्थापयित्वा युधिष्ठिर ॥ ४८ ॥ स्नापयेत्प्रतिमां विष्णोः शङ्खचक्रगदाधराम् ॥ पीतांबरधरां सौम्यां पर्यंके वै सिते शुभे ॥ सितवस्त्रसमाच्छन्ने सोपधाने युधिष्ठिर ॥४९॥ इतिहासपुराणज्ञो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ स्नापयित्वा दधिक्षीरघृतक्षौद्रसितादिभिः ॥ ५० ॥ समालेप्य शुभैर्गन्धैर्धूपैर्दीपैश्च भूरिशः ॥ पूजयेत्कुसुमैः शस्तैर्मन्त्रेणानेन पांडव ॥ ५१ ॥ शायितस्त्वं हृषीकेश पूजयित्वा श्रिया सह ॥ प्रसादं कुरु देवेश लक्ष्म्या सह जनार्दन ॥५२॥ सुप्ते त्वयि जगन्नाथ जगत सुप्तं चराचरम् ॥ एवं तां प्रतिमां विष्णोः स्थापयित्वा युधिष्ठिर ॥ ५३ ॥

आदि मिलाके पंचामृतसों स्नान करावे ॥५०॥ और उत्तम गंधनसों लेपन करिके बहुतसे धूप दीपनसों और सुन्दर सुगंधित फूलनसों पूजनकरिके हे पांडव ! या मंत्रको पढै ॥ ५१ ॥ हे हृषीकेश ! मैंने पूजन करिके तुमको लक्ष्मीसमेत शयन करायो । हे देवेश ! जनार्दन आप लक्ष्मीसमेत मेरे ऊपर प्रसन्न होउ ॥ ५२ ॥ हे जगन्नाथ ! तुम्हारे सोवनेपै चराचर जगत् सोय गयो हे युधिष्ठिर ! वा पहली कही भई विष्णुकी प्रतिमाको स्थापित

के ॥५३॥ वाही मूर्तिके आगे स्थित होके मनुष्य चातुर्मास्यके व्रतनको नियम करै जो वर्षके चारि मासनमें देवोत्थानी एकादशीलों होय है

॥ ५५ ॥ प्रातःसंध्या और नित्य कर्मनको समाप्त करके शुद्ध जो नियम हैं तिनको मैं ग्रहण करौं हौं हे प्रभो ! मेरे उन कर्मनको निर्विघ्न पूरे

करो ॥ ५५ ॥ ऐसे देवेश जो विष्णु हैं तिनकी प्रार्थना करिके नम्र और शुद्ध मन होके स्त्री होय चाहे पुरुष हो मेरो भक्त धर्मके अर्थ व्रतको

तस्या एवाग्रतः स्थितः । गृह्णीयान्नियमान्नरः ॥ चतुरो वार्षिकान्मासान्देवस्योत्थापनावधि ॥ ५४ ॥ प्रातःसन्ध्यादिकं सर्वं

नित्यं कर्म समाप्य च ॥ ग्रहीष्ये नियमाञ्छुद्धान्निर्विघ्नान्कुरु मे प्रभो ॥ ५५ ॥ इति संप्रार्थ्य देवेशं प्रह्वः संशुद्धमानसः ॥ स्त्री

वा मद्भक्तो धर्मार्थं च धृतव्रतः ॥ ५६ ॥ गृह्णीयान्नियमानेतान्दन्तधावनपूर्वकम् ॥ व्रतप्रारम्भकालस्तु प्रोक्तः पञ्चैव

॥ ५७ ॥ उपक्रमं चतुर्मासव्रतानां च नरः शुचौ ॥ एकादशी द्वादशी च पूर्णिमा च तथाष्टमी ॥ ५८ ॥ कर्कटा चैव

कुर्याद्यथाविधि ॥ चतुर्धा गृह्य वै चीर्णं चातुर्मास्यव्रतं नरः ॥५९॥ कार्तिके शुक्लपक्षे तु द्वादश्यां तत्समापयेत् ॥

कि वक्ष्यामि कर्तॄणां ये पृथक्पृथक् ॥ ६० ॥

॥ ५६ ॥ और दंतधावन करिके इन नियमनको ग्रहण करै और व्रत आरंभ करनेके विष्णुने पांचही काल कहे हैं ॥ ५७ ॥ मनुष्य

में चातुर्मास्य व्रतनको आरंभ करनो एकादशीते वा द्वादशीते वा पूनोंतै अथवा अष्टमीते कह्यो है॥५८॥ और पांचवी कर्ककी संक्रांति

रि प्रकारते ग्रहण करिके चातुर्मास्य व्रतको आरंभ करै ॥ ५९ ॥ फिर कार्तिकके शुक्लपक्षमें द्वादशीको समाप्त करै

करिके युक्त ... जे करनहारे मनुष्यको पृथक् २ मिले हैं ॥ ६० ॥ आषाढके शुक्लपक्ष एकादशीको व्रत करि हे राजन् ! यत्किञ्चित चातु

वांछित फ... ॥ ६१ ॥ अन्यथा काहू यत्नसों वर्षभरके पाप नहीं नाश होय हैं शुक्र और बृहस्पतिको शिशुपन और मूढता अर्थात् अस्त या

और ...न ... बाधक नहीं है ॥ ६२ ॥ मनुष्य पहिले चातुर्मास्य व्रत करनेमें खंडत्वका विचार करि ले कि खंड अंगमें व्यापी सूर्य होय और

...६ ॥ ...कलपक्षे तु एकादश्यामुपोषितः ॥ चातुर्मास्यव्रतं कुर्याद्यत्किंचिदवनीपते ॥ ६१ ॥ नान्यथा चाब्दिकं पापं विनिहन्ति

...र्षमाध्यगः शैशवं चैव मौढचं च शुक्रगुर्वोर्न बाधकम् ॥ ६२ ॥ खण्डत्वे चिन्तयेदादौ चातुर्मास्यविधौ नरः ॥ खण्डाङ्गव्यापि

...यहं पि... यद्यखंडा भवेत्तिथिः ॥ अशुचिर्वा शुचिर्वापि यदि स्त्री यदि वा पुमान् ॥ ६३ ॥ व्रतमेकं नरः कृत्वा मुच्यते सर्व

... ॥ असंक्रान्तं तथा मासं दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ ६४ ॥ मलरूपमशौचं च वर्जयेन्मतिमान्नरः ॥ प्रतिवर्षं तु यः कुर्याद्व्रतं

...रायुग... ...स्मरन् हरिम् ॥ ६५ ॥ देहान्तेऽतिप्रदीप्तेन विमानेनार्कतेजसा ॥ मोदते विष्णुलोकेऽसौ यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ६६ ॥

...तिथि अखंड होय तो आरंभ करै अशुचि होय वा शुचि होय स्त्री होय वा पुरुष होय ॥ ६३ ॥ मनुष्य एक व्रत करिके सब पापनसों छूटि जाय है

...देवकर्म और पितृकर्ममें संक्रांतिरहित मास वर्जित है ॥ ६४ ॥ और बुद्धिमान् मनुष्य मलरूप जो अशौच है ताको वर्जित करै प्रतिवर्ष जो मनुष्य

...रिको स्मरण करतो भयो या व्रतको करै है ॥ ६५ ॥ वह देहके अंतसमय अतिप्रकाशमान और सूर्यके समान है तेज जाको ऐसे विमानमें चढि

...ष्णुलोकमें जायके महाप्रलयपर्यंत आनंद करै है ॥ ६६ ॥

के ानके मंदिरको नित्य झारनो और जलको छिडकाव करनो और गोबरसों लेपनो तथा रंगसों वल्ली आदि करनो ॥६७॥ हे नरश्रेष्ठ ! चातु

यमें जो इन ऊपरके श्लोकमें कही भई रातनको आलस्य छोडिके करै है और व्रतकी समाप्तिमें ब्राह्मण भोजन करावै है ॥६८॥ हे विप्रेन्द्र !

करो ह सात जन्मताई सत्य धर्ममें तत्पर होय है दहीसों दूधसों घीसों शहदसों तथा शर्करासों॥६९॥ हे जनाधिप !इन पांचों वस्तुनसों जो चातुर्मास्यमें

देवतायतने नित्यं मार्जनं जलसेचनम् ॥ प्रलेपनं गोमयेन रङ्गवल्ल्यादिकं तथा ॥ ६७ ॥ यः करोति नरश्रेष्ठ चातुर्मास्यमत नः ॥ समाप्तौ च यथाशक्त्या कृत्वा ब्राह्मणभोजनम् ॥ ६८ ॥ सप्तजन्मसु विप्रेन्द्र सत्यधर्मपरो भवेत् ॥ दध्ना क्षीरेण व क्षौद्रेण सितया तथा ॥ ६९ ॥ स्नापयेद्विधिना देवं चातुर्मास्ये जनाधिप ॥ स याति विष्णुसारूप्यं सुखमक्षय्य ॥ ७० ॥ नृपेण भूमिर्दातव्या यथाशक्त्या च कांचनम् ॥ विप्राय देवमुद्दिश्य सफलं च प्रदक्षिणम् ॥ ७१ ॥ अक्षयाँ स्व स्वर्ग इन्द्र इवापरः ॥ लोकं च समवाप्नोति विष्णोरत्र न संशयः ॥ ७२ ॥ देवाय हैमपद्मं तु दद्यान्नैवेद्यसंयुतम् ॥ वस्त्राद्यैर्यो देवब्राह्मणयोरपि ॥ ७३ ॥

रिके स्नान करावै है वह विष्णुकी सरूपताको प्राप्त होय है और अक्षय सुखको भोगै है ॥ ७० ॥ राजा देवताको उद्देश करिके नारियल और दक्षिणा समेत यथाशक्ति भूमि सुवर्ण देनो चाहिये ॥ ७१ ॥ वह स्वर्गमें दूसरे इन्द्रके समान अक्षय लोकनको प्राप्त लोकको प्राप्त होय है यामें सन्देह नहीं है ॥ ७२ ॥ देव जे भगवान् हैं तिनके अर्थ नैवेद्य युक्त सुवर्णको कमल दान

करिके युक्त ... पुष्प अक्षत आदि करिके देवकी और ब्राह्मणकी पूजा करै है ॥७३॥ चातुर्मास्यमें जो व्रती नर नित्य पूजन करै वह अक्षय वांछित फ... है और इन्द्रके पुरको जाय ॥७४॥ जो चार महीने तुलसीसों हरिको पूजन करै है और सुवर्णकी तुलसी बनवाय ब्राह्मणके अर्थ और ... ॥७५॥ वह सोनेके विमानमें चढिके वैष्णवी गतिको प्राप्त होय है और देवके अर्थ गूगलकी धूप और दीपको अर्पण करै है ॥७६॥

...६ ॥ ... ते नित्यं चातुर्मास्ये व्रती नरः ॥ अक्षयं सुखमाप्नोति पुरन्दरपुरं व्रजेत् ॥ ७४ ॥ यस्तु वै चतुरो मासांस्तुलस्या ...माध्यय... त् ॥ तुलसीं काञ्चनीं कृत्वा ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ७५ ॥ काञ्चनेन विमानेन वैष्णवीं लभते गतिम् ॥ देवाय गुग्गुलुं ...यहं पि... पं चार्पयते नरः ॥ ७६ ॥ स भोगी जायते श्रीमांस्तथा सौभाग्यवानपि ॥ समाप्तौ धूपिकां दद्याद्दीपिकां च विशेषतः ...रायुस ॥ प्रदक्षिणां तु यः कुर्यान्नमस्कारं विशेषतः ॥ अश्वत्थस्याथ वा विष्णोः कार्त्तिक्यामवधिर्भवेत् ॥ ७८ ॥ पादं पादान्तरे वन्दते... करो कृत्वा तु संयुतौ ॥ स्तुतिं वाचि हृदि ज्ञानं चतुरंगा प्रदक्षिणा ॥७९ ॥ संध्यादीपप्रदो यस्तु प्रांगणे द्विजदेवयोः ॥ समाप्तौ दीपिकां दद्याद्वस्त्रं तैलं सकाञ्चनम् ॥ ८० ॥

है ॥... भोगी और श्रीमान् तथा सौभाग्यवान् होय है और समाप्तिमें धूपिकादान करै और विशेष करिके दीपदान करै ॥७७॥ जो पीपरकी अथवा ...ष्णुकी प्रदक्षिणा विशेषकरि करै है ताकी अवधि कार्तिकी है ॥७८॥ पादको पादान्तरमें राखि और हाथनको जोरिके वाणीसों स्तुति करै और ...दयमें ज्ञान राख यह चतुरंगी प्रदक्षिणा है ॥ ७९ ॥ जो संध्याके समय द्विज और देवके आंगनमें दीपदान करै है वह समाप्त होनेपै दीपिका दान ... है ॥

केतैल और सुवर्णको दान करै ॥ ८० ॥ जो पवन करै है वह तेजस्वी होय है और विमानको चढनहारो गंधर्व तथा अप्सरान करिके सेवित
ता होय है ॥८१॥ और जो विष्णुको चरणोदक पीवै है वह कष्टते छूटिजाय है और वह नर विष्णुलोकको प्राप्त होय है । यहां संसारमें फिर
करै उत्पन्न होय है ॥ ८२ ॥ और त्रिकाल जो विष्णुके मन्दिरमें अष्टोत्तरशत गायत्रीको जप करै है वह पापसों नहीं लिप्त होय है ॥ ८३ ॥

माालभते यस्तु तेजस्वी स भवेदिह ॥ वैमानिको भवेद्देवो गन्धर्वाप्सरसेवितः ॥ ८१ ॥ विष्णुपादोदकं यस्तु पिबेत
त्स मुच्यते ॥ विष्णोर्लोकमवाप्नोति न चास्मिञ्जायते नरः ॥ ८२ ॥ शतमष्टोत्तरं यस्तु गायत्रीजपमाचरेत् ॥ त्रिकालं
हर्म्ये न स पापेन लिप्यते ॥ ८३ ॥ अक्षसूत्रं पुस्तकं च धत्ते पद्मं कमण्डलुम् ॥ चतुर्वक्त्रा तु गायत्री श्रोत्रियाणां मुखे
॥ ८४ ॥ सर्वलोकमयी देवी गायत्री या त्रयीमयी ॥ नित्या शास्त्रसमाख्याता लोकान् या तु प्रबोधयेत् ॥ ८५
यति तस्याशु विष्णुलोकं स गच्छति ॥ अत्र चोद्यापनं शास्त्रपुस्तकं दानमेव च ॥ ८६ ॥ सर्वविद्यासमं शांतिकरणं
॥ पुस्तकं सम्प्रयच्छामि प्रीता भवतु भारती ॥ ८७ ॥

क पद्म और कमंडलुको धारण किये हैं और चारि जाके मुख हैं ऐसी गायत्री श्रोत्रिय पुरुषोंके मुखमें स्थित रहै ॥ ८४ ॥ सर्व
यी शास्त्रन में कही भई और नित्या जो गायत्री है वह लोककी रक्षा करै और प्रबोध युक्त करै ॥८५॥ जो गायत्रीको ध्यान और
व्यास प्रसन्न होय है और वह विष्णुलोकको जाय है यामें उद्यापन शास्त्रकी पुस्तकहूको दान कह्यो है ॥ ८६ ॥ सब वियानके

करिके युक्त [illegible]हारो और मनोहर हैं अक्षर जामें ऐसे पुस्तकको मैं दान करौं हौं भारती मोपे प्रसन्न होय ॥ नित्य पुराण वा धर्मशास्त्र सुनै वांछित फ[illegible]गी और सत्य तथा शौचमें परायण होय है ॥ ८८ ॥ ज्ञानवान् लोकमें विख्यात बहुत जाके शिष्य हैं और अच्छा धर्मात्मा हो और [illegible]न हौं करिके युक्त वस्त्र और पुस्तक दान करौं हौं ॥ ८९ ॥ विष्णुके वा शिवके नाम मंत्र और व्रतमें तत्पर होके व्रतकी समाप्तिमें उन

[illegible]द ॥ व[illegible]यान्नित्यं धर्मशास्त्रमथापि वा ॥ पुण्यवान्धनवान् भोगी सत्यशौचपरायणः ॥ ८८ ॥ ज्ञानवाँल्लोकविख्यातो बहु[illegible]माध्ययुधार्मिकः ॥ काञ्चनेन युतं वस्त्रं पुस्तकं च निवेदयेत् ॥८९॥ नाममन्त्रव्रतपरः शंभोर्वा केशवस्य च ॥ समाप्तौ प्रतिमां [illegible]यहं पिंध देवस्य काञ्चनीम्॥९०॥पञ्चवक्रो वृषारूढः प्रतिवक्रं त्रिलोचनः॥ कपालशूलखट्वांगी चन्द्रमौलिः सदाशिवः ॥९१॥ [illegible]रायुम्सुराणाममृतं विहाय हालाहलं संहृतमेव यस्मात् ॥ तथाऽसुराणां त्रिपुरं च दग्धमेकेषुणा लोकहितार्थमीश ॥ ९२ ॥ [illegible]वन्द्रूपदाता बहुपुण्यवांश्च दोषैर्विमुक्तश्च गुणालयोऽहम् ॥ तथा कुरु त्वां शरणं प्रपद्ये मम प्रभो देववर प्रसीद ॥ ९३ ॥

स[illegible]की सुवर्णमयी प्रतिमाको दान करै ॥९०॥ पंचमुख वृषपर चढे भये और प्रत्येक मुखमें त्रिलोचन कपाल शूर खट्वांगको धारण किये भये चन्द्र है ॥ [illegible]नके मस्तकमें है ऐसी सदाशिवकी मूर्ति बनवाके दान करै ॥९१॥ हे ईश ! जाते तुमने देवतानको अमृत छोरके हलाहल विषको संहार कियो दान है ॥ [illegible]सेही लोकके हितके लिये एक बाणसों असुरनको त्रिपुर जरायो॥९२॥ तुम्हारे रूपको दाता और बहुत पुण्यवान् मैं दोषनकरिके मुक्त हो गुणनको

होगयो हौं ऐसे करो जामें तुम्हारे शरणमें आऊ हे देववर ! मेरे ऊपर प्रसन्न होउ॥९३॥ नित्य क्रिया करि सूर्यमंडलके मध्यमें स्थित जनार्दन
को ध्यान करिके सूर्यके लिये अर्घ्यदान करै॥९४॥समाप्तिमें सुवर्णको दान करै लाल वस्त्रको तथा गौको दान करै तो आरोग्य,पूर्ण आयु,कीर्ति,
मी और बल होवै ॥ ९५ ॥ जो चातुर्मास्यमें दिन दिन तिलनको होम भक्तिपूर्वक व्याहृतियुक्त मंत्रनसों अथवा गायत्रीसों व्रतयुक्त होके

तनित्यक्रियो भूत्वा सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत् ॥ सूर्यमण्डलमध्यस्थं देवं ध्यात्वा जनार्दनम् ॥९४॥ समाप्तौ कांचनं दद्याद्रक्तवस्त्रं
गां तथा ॥ आरोग्यं पूर्णमायुश्च कीर्तिर्लक्ष्मीर्बलं भवेत् ॥ ९५ ॥ तिलहोमं तु यः कुर्याच्चातुर्मास्ये दिने दिने ॥ भक्त्या
तेभिर्मन्त्रैर्गायत्र्या वा व्रतान्वितः ॥ ९६ ॥ अष्टोत्तरशतं चाथ अष्टाविंशतिरेव वा ॥ तिलपात्रं समाप्तौ तु दद्या
मते ॥ ९७ ॥ वाङ्मनःकायजनितैः पापैर्मुच्येत संचितैः ॥ न रोगैरभिभूयेन लभेत्संततिमुत्तमाम् ॥ ९८ ॥
न्नाथ वांछितार्थफलप्रद ॥ तिलपात्रं प्रदास्यामि तेन पापं व्यपोहतु ॥ ९९ ॥ अन्नहोमं तु यः कुर्याच्चातुर्मास्यमत
माप्तौ घृतकुम्भं तु वस्त्रकांचनसंयुतम् ॥ १०० ॥

शत वा अट्ठाईस तिलके पात्र समाप्तिमें बुद्धिमान् ब्राह्मणके अर्थ दान करै ॥ ९७ ॥ तो वाणी मन काय करिके संचित करे भये
य और वाको रोग नहोय उत्तम संततिको पावै ॥ ९८ ॥ हे देवदेव ! जगन्नाथ ! वांछित अर्थके फल देनहारे तिलपात्रको मैं
करिके मेरे पाप दूरि होयँ ॥ ९९ ॥ जो आलस्यरहित हो चातुर्मास्यमें अन्नको होम करै और समाप्तिमें वस्त्र तथा सुवर्णयुक्त

करिके युक्त करै है ॥१००॥ वह और अतुल कांतिको पुत्र तथा सौभाग्यकी संपत्तीनको प्राप्त होय है और वाके शत्रुनको क्षय होय है और वांछित फ[illegible]ान हो जाय है ॥१॥ और जो पीपरकी सेवा करै है वह सब पापनते छूटि जाय है पीछे विष्णुकोभक्त होय है और अंतमें और [illegible]न है [illegible]न करै ॥२॥ और सुवर्णसमेत जो ब्राह्मणके लिये दान करै है वह रोगनको नहीं प्राप्त होय है और जो विष्णुकी प्रीति करनहारो [illegible]६ ॥ वह [illegible]

[illegible]माध्ययन[illegible]न्तिमतुलां पुत्रसौभाग्यसम्पदः ॥ शत्रुक्षयं च लभते ब्रह्मणः प्रतिमो भवेत् ॥ १ ॥ अश्वत्थसेवां यः कुर्यात [illegible]यहं पिबे[illegible]मुच्यते ॥ विष्णुभक्तो भवेत्पश्चादन्ते वस्त्रं प्रदापयेत् ॥ २ ॥ सकाञ्चनं ब्राह्मणाय नव रोगान्स विन्दते ॥ तुलसीं [illegible]रायुर[illegible]स्तु विष्णुप्रीतिकरीं शुभाम् ॥ ३ ॥ विष्णुलोकमवाप्नोति सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाद्विष्णुमुद्दिश्य वन्दते[illegible]व ॥ ४ ॥ यस्तु सुप्ते हृषीकेशे दूर्वाममृतसम्भवाम् ॥ सदा प्रातर्वहेन्मूर्ध्नि शुद्धात्मा च ऋतुद्वये ॥५॥ मन्त्रेणानेन राजेन्द्र सम[illegible]मीनाथस्य तुष्टये ॥ त्वं दूर्वेऽमृतजन्मासि वंदिताऽसि सुरासुरैः ॥ ६ ॥

है ।[illegible] तुलसीको धारण करै है ॥ ३ ॥ वह विष्णुलोकको प्राप्त होय है और सब पापनते छूटि जाय है हे पांडव ! पीछे विष्णुके निमित्त ब्राह्मण दान [illegible] भोजन करावै ॥४॥ और जो शुद्धात्मा पुरुष दोनों ऋतुओंमें हृषीकेश भगवान्‌के सोनेपै अमृतसे उत्पन्न दूर्वाको प्रातःकाल सदा मस्तकपै है ॥ १९ [illegible] है ॥५॥ हे राजेन्द्र ! या मंत्रसों लक्ष्मीनाथकी प्रसन्नताके अर्थ वह मंत्र यह है कि, हे दूर्वे ! तू अमृतसों उत्पन्न है और सुर असुरन करिके

होगयो गई ॥६॥ सौभाग्य और संततिको देके शीघ्रही कार्य करनहारी हो, हेकुरुश्रेष्ठ ! व्रतके अंतमें सुवर्णकी बनी हुई दूर्वाका ॥७॥ अग्र
व पत्तोंकरिके युक्त दूर्वाको हे सुव्रत ! वस्त्रसमेत दक्षिणायुक्त या मंत्रसों श्रेष्ठ ब्राह्मणके अर्थ दान करै ॥८॥ जैसे तू शक्ति करिके शाखा प्रशा
नसों पृथ्वीतलमें फैलीहै तैसेही तू मोको अजर अमर संतान दे ॥९॥ ऐसे जो निरालस्य होके चातुर्मास व्रत करै है ताको दुःखको भय नहीं

सौभाग्यं सन्ततिं दत्त्वा सद्यः कार्यकरी भव ॥ व्रतान्ते च कुरुश्रेष्ठ दूर्वां स्वर्णविनिर्मिताम् ॥७॥ साग्रां सर्वदलोपेतां सवस्त्रां
पुंगवे ॥ दद्याद्दक्षिणया सार्द्धं मन्त्रेणानेन सुव्रत ॥८॥ यथा शाखाप्रशाखाभिर्विस्तृतासि महीतले ॥ तथा ममापि सन्तानं
त्वमजरामरम् ॥९॥ एवं व्रतं यः कुरुते चातुर्मास्यमतन्द्रितः ॥ न च दुःखभयं तस्य न च रोगभयं भवेत् ॥१०॥ नाशुभं
ज्ञातु पापेभ्यः प्रविमुच्यते ॥ भुक्त्वा तु सकलान् भोगान् स्वर्गलोके महीयते ॥ ११ ॥ गीतं तु देवदेवस्य केशवस्य
स्य ॥ करोति नित्यमाप्नोति नरो जागरणे फलम् ॥१२॥ व्रतान्ते च व्रती दद्याद्घण्टां देवाय सुस्वराम् ॥ गुरोरवज्ञया
ध्ययनं कृतम् ॥१३॥ सरस्वति जगन्नाथे जगज्जाड्यापहारिणि ॥ साक्षाद्ब्रह्मकलत्रं च विष्णुरुद्रादिभिः स्तुते ॥१४॥

को भय है ॥१०॥ और न कभी अशुभको प्राप्त होय और पापनते छूटीजाय सब भोगनको भोगिके अंतसमय आनंद करै है ॥११॥
यी भगवान् हैं तिनको अथवा शिवजीको गीत नित्य गावै है वह मनुष्य जागरनके फलको प्राप्त होय है ॥१२॥ व्रती मनुष्य व्रतके
नेवाले घंटाको देवके निमित्त दान कर गुरुके अवज्ञासों अनध्यायमें अच्छे पढनेसों जो मैंने पाप कियो है ॥१३॥ हे सरस्वती

करिके युक्त ...नी ! और हे जगत्की जडता दूरि करनहारी ! हे साक्षात ब्रह्माकी स्त्री ! और हे विष्णु रुद्र आदि देवतान करिकै स्तुति वांछित फ... ॥ हे वरानने ! यह मेरी अध्ययनसों उत्पन्न भई जडता दूरि करौ और ब्रह्माणी तथा लोककी पवित्र करनहारी तुम घण्टाके और ...न होउ ॥ १५ ॥ जो मनुष्य चातुर्मास्यमें ब्राह्मणके चरणका धोवन प्रतिदिन भक्तिसों पीवै है और ब्राह्मणको मेरोही रूप जानै ...६ ॥ वह मानसिक वाचिक और कायिक पापनते छूटि जाय है और वाको रोग कबहूं नहीं होय हैं वाकी लक्ष्मी और आयु बढै

...मभाध्ययनोत्पन्नं जाड्य हर वरानने ॥ घण्टानादेन तुष्टा त्वं ब्रह्माणी लोकपावनी ॥ १५ ॥ विप्रपादविनिर्मुक्तं तोयं यः ...यहं पिबेत्॥चातुर्मास्ये नरो भक्त्या मद्रूपं ब्राह्मणं स्मरन्॥१६॥मनोवाक्कायजनितैर्मुक्तो भवति किल्बिषैः॥व्याधिभिर्नाभिभूयेत ...रायुस्तस्य वर्द्धते ॥१७॥ समाप्तौ गोयुगं दद्याद्गामेकां वा पयस्विनीम् ॥ तत्राप्यशक्तौ राजेन्द्र दद्याद्वासोयुगं व्रती ॥१८॥ ब्राह्मणं वन्दते यस्तु सर्वदेवमयं स्मृतम् ॥ कृतकृत्यो भवेत्सद्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१९॥ अक्षय्यं सुखमाप्नोति पितृभक्तिपरो नरः ॥ समाप्तौ भोजयेद्विप्रानायुर्वित्तं च विंदति ॥ १२० ॥

है ॥ १७ ॥ व्रत समाप्त होनेपै दो गोवनको दान करै अथवा दुधारी एकही दे जो वामें भी शक्ति न होय तो व्रती नर वस्त्रनके जोडाको दान करे ॥ १८ ॥ सर्वदेवमय ब्राह्मणके अर्थ जो नित्य नमस्कार करै है वह शीघ्र ही कृतकृत्य हो जाय है और सब पापनते छूटि जाय है ॥ १९ ॥ पितरनकी भक्तिमें तत्पर मनुष्य अक्षय सुखको प्राप्त होय हैं और जो व्रतकी समाप्तिको ब्राह्मणको भोजन करावै है वह आयु और

धनको प्राप्त होय है ॥ २० ॥ जो मनुष्य प्रातःकाल सन्ध्यावन्दनके अन्तमें घृतकुम्भको दान करै हैं वस्त्रनको जोडा तिल तथा घण्टा ब्राह्म
णके अर्थ निवेदन करे ॥ २१ ॥ वह सरस्वतीके तत्त्वको प्राप्त होय और विद्यावान् होय हैं और जो कपिला गौको दान करै है वह सदा
धनी होय है ॥ २२ ॥ वाहि कपिलाको अलंकृत करके दान करै अथवा सब भूमिको दान करै वह दीर्घायु और प्रतापी सार्वभौम राजा होय है

सन्ध्यां प्रातर्नरः कृत्वा समाप्तौ घृतकुम्भदः ॥ वस्त्रयुग्मं तिलान् घण्टां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ २१ ॥ सारस्वतं याति तत्त्वं विद्यावांस्तु भवेदिति ॥ संस्पृशेत्कपिलां यो वै नित्यं स च भवेद्धनी ॥ २२ ॥ तामेवालंकृतां दद्यात्सर्वां भूमिमथापि वा ॥ सार्वभौमो भवेद्राजा दीर्घायुश्च प्रतापवान् ॥ २३ ॥ दानशीलः सदारंभः सर्वसंकटवर्जितः ॥ रूपवान् भाग्यसम्पन्नो लभते सुखमक्षयम् ॥ २४ ॥ स वसेदिन्द्रवत्स्वर्गे वत्सरान् रोमसंमितान् ॥ नमस्करोति यः सूर्यं गणेशं वापि नित्यशः ॥ २५ ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं लभते कान्तिमुत्तमाम् ॥ विघ्नराजप्रसादेन प्राप्नुयादीप्सितं फलम् ॥ २६ ॥ सर्वत्र विजयं चैव नात्र कार्या रणा ॥ रविः कार्यः सुवर्णस्य सिंदूरारुणसन्निभः ॥ २७ ॥

॥ दानशील और सदा आरंभ करनहारो मनुष्य सब संकटनसों वर्जित हो और रूपवान तथा भाग्यसम्पन्न हो अक्षय सुखको प्राप्त
दश्में वह देहरोमोंके प्रमाण वर्षोलोंस्वर्गमें इन्द्रके समान वास करै है और जो गणेशको वा सूर्यको नित्य नमस्कार करै है ॥ २५ ॥
कि, ... गणेशजी हैं तिनके प्रसादसों आयु आरोग्य ऐश्वर्य तथा उत्तम कांतिको और वांछित फलको प्राप्त होय हैं ॥ २६ ॥ और सर्वत्र

करिके युक्त ... है यामें कुछ विचार नहीं है लाल सिंदूरके समान सुवर्णके सूर्य बनवाके ॥ २७ ॥ सब कामोंके अर्थ सिद्धिके लिये
वांछित फ... करै छाती करिके शिर करके मन करिके तथा वचन करिके ॥ २८ ॥ चरणों करिके हाथों करिके घुटनों करिके
और ... ताको अष्टांग प्रणाम कहे हैं या अष्टांग करिके भूमिमें नमस्कारसों पूजन करै है ॥ २९ ॥ वह जो गतिको प्राप्त होय है ताहि सौ
...हू नहीं प्राप्त होय हैं और जो तीनि वर्षाऋतुमें शिवजीकी प्रसन्नताके लिये रूपेको दान करै है ॥ १३० ॥ अथवा शिवजीको प्रसन्न

...वेदयेद्ब्राह्मणाय सर्वकामार्थसिद्धये ॥ उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा ॥ २८ ॥ पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामो
...ष्टांग उच्यते ॥ अष्टाङ्गसहितं भूमौ नमस्कारेण योऽर्चयेत् ॥ २९ ॥ स यां गतिमवाप्नोति न तां क्रतुशतैरपि ॥ यस्तु रौप्यं
...वप्रीत्यै दद्याद्वर्षाऋतुत्रये ॥ १३० ॥ ताम्रं वा प्रत्यहं दद्यात्स्वशक्त्या शिवतुष्टये ॥ सुरूपाँल्लभतेपुत्रान् रुद्रभक्तिपरायणान्
... ३१ ॥ समाप्तौ मधुपूर्णं तु पात्रं राजतमुत्तमम् ॥ प्रदद्यात्ताम्रदानेन ताम्रपात्रं गुडान्वितम् ॥ ३२ ॥ ताम्रं पुष्टिकरं सर्वदेवप्रिय
...करं शुभम् ॥ सर्वरक्षाकरं नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ३३ ॥

...के लिये प्रतिदिन अपनी शक्तिसों जो तांबेको दान करै वह शिव भक्तिमें परायण स्वरूपवान् पुत्रोंको प्राप्त होय है ॥ ३१ ॥ व्रतकी समाप्तिमें
...हदसों पूर्ण चांदीको पात्र उत्तम है ताको दान करै और तांबेके दानमें तांबेको पात्र गुडसों भरिके दान करै ॥ ३२ ॥ तांबो पुष्टि कर
...नहारो और सब देवतानको प्यारो शुभ और सदा रक्षाको करनेहारो है यातें तू मोको शांति दे ॥ ३३ ॥

जो हृषीकेश भगवान्‌के सोनेपै अपनी शक्तिसों सोनेके दान वस्त्रनके जोडे और तिलनसमेत दान करै है वह सब पापनते छूटि जाय है ॥३४॥ और
इस लोकमें बडे भोगनको भोगिनके अन्तमें शिवपुरको जाय है सोना चांदी और तांबा और धान्य इनको नित्य दान है ॥३५॥ नित्यश्राद्ध देवपूजा
ये सब दक्षिणासमेत करनेयोग्य है जो चातुर्मास्यमें ब्राह्मणके अर्थ वस्त्रनको दान करै है ॥३६॥ गन्ध पुष्प आदिसों पूजन करिके ऐसे कहै कि,

सुप्तस्तु सुप्ते हृषीकेशे स्वर्णदानं स्वशक्तितः ॥ वस्त्रयुग्मं तिलैः सार्द्धं दत्त्वा दोषैः प्रमुच्यते ॥ ३४ ॥ इह भुक्त्वा महाभोगानन्ते शिवपुरं व्रजेत् ॥सुवर्णं रजतं ताम्रं नित्यदानं च धान्यकम् ॥ ३५ ॥ नित्यश्राद्धं देवपूजा सर्वमेतत् सदक्षिणम् ॥ वस्त्रदानं तु सा कुर्याच्चातुर्मास्ये द्विजातये ॥ ३६ ॥ अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैः स विष्णुः प्रीयतामिति ॥ शय्यां दद्यात्समाप्तौ तु वासः काञ्चनपट्टकाम् ॥३७॥ अक्षय्यं सुखमाप्नोति धनं च धनदोपमम् ॥ यो गोपीचन्दनं दद्यान्नित्यं वर्षासु मानवः ॥३८ ॥ श्रीपतिस्तस्य सन्तुष्टो मुक्तिं भुक्तिं ददाति च ॥ यद्दै देवांगसंलग्नं कुंकुमादिविलेपनम् ॥ ३९ ॥ जलक्रीडासु गोपीनां द्वारवत्या मृदान्वितम्॥ चन्दनमित्युक्तं मुनीन्द्रैः किल्बिषापहम् ॥ १४० ॥

मेरे ऊपर प्रसन्न होय और व्रतके समाप्त होनेपै मनुष्य शय्यादान करै वस्त्र दे और सोनेकी पट्टी दे ॥३७॥ वह अक्षय सुखको और कुबेरके
दर्शनें प्राप्त होयहैं जो मनुष्य वर्षाऋतुमें नित्य गोपीचन्दनको दान करै ॥ ३८ ॥ श्रीपति सन्तुष्ट होके वाको भुक्ति मुक्ति देय है देवताके
कि, और जो कुंकुम आदि विलेपन है ॥३९॥ और जलकी क्रीडानमें गोपिनके अंगसों गिरो भयो चन्दन आदि द्वारावतीकी मृत्तिका

करिके युक्त पापको नाश करनहारो वह मुनीश्वरनकरिके गोपीचन्दन कहो गयो ॥ १४० ॥ तातें वह यत्नसों देनी चाहिये वाके देनेसों विष्णु वांछित फलको देय हैं और व्रतकी समाप्तिहूमें एक तुला प्रमाण सुन्दर गोपिचन्दनको दान करै ॥ ४१ ॥ वाको आधो फिर वाको आधो वस्त्र और दक्षिणासमेत जो व्रती पुरुष हृषिकेश भगवान्‌के सोनेपै प्रतिदिन देता है ॥ ४२ ॥ और दक्षिणासमेत शर्करा अथवा गुडका दान करै

तस्माद्देयं प्रयत्नेन विष्णुर्दिशति वाञ्छितम् ॥ समाप्तावपि तद्दद्यात्तुलापरिमितं शुभम् ॥ ४१ ॥ तदर्धं वा तदर्धं वा सवस्त्रं च सदक्षिणम् ॥ यस्तु सुप्ते हृषीकेशे प्रत्यहं तु व्रतान्वितः ॥ ४२ ॥ दद्याद्दक्षिणया सार्द्धं शर्करामपि वा गुडम् ॥ अमृतस्य कला प्रोक्ता इक्षुसारजशर्करा ॥ ४३ ॥ तस्या दानेन सन्तुष्टो भानुर्दिशति वांछितम् ॥ एवं व्रतं तु सम्पूर्णं कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥४४॥ कारयेत्ताम्रपात्राणि प्रत्येकं तु पलाष्टकम् ॥ वित्तशाठ्यमकुर्वाणो यद्वा पलचतुष्टयम् ॥ ४५ ॥ अष्टौ चत्वार्येकैकं प्रत्येकं च सशर्करम् ॥ दक्षिणाफलवस्त्रेण प्रत्येकं वेष्टितानि च ॥ ४६ ॥

ईखके सारते उत्पन्न शर्करा अमृतकी कला कही है ॥४३॥ ताके दानसों सन्तुष्ट सूर्य वांछित फल देते हैं या प्रकार व्रतके पूर्ण होनेपै पण्डित नर उद्यापन करै ॥ ४४ ॥ आठ आठ पलके तौलमें होय ऐसे तांबेके पात्र बनवावे धनको लोभ न करै। जो ऐसी शक्ति न हो तो चारि चारि पलके बनवावे ॥ ४५ ॥ शक्तिके अनुसार आठ चारि वा एक बनवावै और प्रत्येकमें शर्करा भरै फिर उनमें

दक्षिणा और नारियल धरिके वस्त्रसों पृथक् २ बांधे ॥४६॥ और धान्यके साथ ब्राह्मणको श्रद्धा करिके दान करे वह शर्करा और सुवर्णकरिके युक्त तांबेके पात्र ॥४७॥ जाते सूर्यकी प्रीतिको करनहारो है पुष्टि तथा कीर्तिको देनहारो है और मनुष्यनकी संतती करनहारो है ॥४८॥ सब कामनाओंको और स्वर्गको देनहारो तथा उत्तम आयुको बढावनहारो है तावे याके दानसों मेरी सदा कीर्ति होय ॥ ४९ ॥ या प्रकार जो व्रत

सहधान्यानि विप्रेभ्यः श्रद्धया प्रतिपादयेत् ॥ ताम्रपात्रं सवस्त्रं च शर्कराहेमसंयुतम् ॥ ४७ ॥ सूर्यप्रीतिकरं यस्माद्रोगघ्नं पापनाशनम् ॥ पुष्टिदं कीर्तिदं नृणां नित्यं सन्तानकारकम् ॥ ४८ ॥ सर्वकामप्रदं स्वर्ग्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥ तस्मादस्य प्रदानेन कीर्तिरस्तु सदा मम ॥ ४९ ॥ एवं व्रतं तु यः कुर्यात्तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ गन्धर्वविद्यासंपन्नः सर्वयोषित्प्रियो भवेत् ॥ १५० ॥ राजापि लभते राज्यं पुत्रार्थी लभते सुतान् ॥ अर्थार्थी प्राप्नुयादर्थं निष्कामो मोक्षमाप्नुयात् ॥ ५१ ॥ यस्तु वै चतुरो मासाञ्छाकमूलफलादिकम् ॥ नित्यं ददाति विप्रेभ्यः शक्त्या यत्सम्भवेद्द्विजः ॥ ५२ ॥ व्रतान्ते वस्त्रयुग्मं च शक्त्या दद्यात्सदक्षिणम् ॥ सुखी भूत्वा चिरं कालं राजयोगी भवेन्नरः ॥ ५३ ॥

करै है ताके पुण्यको फल सुनो कि गंधर्वविद्यासों सम्पन्न वह मनुष्य सब स्त्रीनको प्यारो होय ॥ १५० ॥ राजा राज्यको पावै और पुत्रार्थी पुत्रनको पावै धनकी इच्छावालो धनको पावै और जो वासनारहित है वह मोक्ष को प्राप्त होय ॥ ५१ ॥ जो चारि महीने शाक मूलफल आदि नित्य ब्राह्मणको दान करै है जो शक्ति सों होसके है ॥ ५२ ॥ व्रतके अन्तमें शक्तिके अनुसार दक्षिणासमेत वस्त्रनके जोडाको दान करै तो

वह नर बहुत कालपर्यंत सुखी होके राजयोगी होजाय है ॥ ५३ ॥ जो मनुष्यनको तृप्ति देनेहारो शाक सब देवतानको प्यारो है और मूल पत्र पुष्पसमेत कंद देवर्षिनको प्रिय है ॥ ५४॥ सो मैं तुमको देऊँ हौं तो करिके देवता आदि सदा मंगलको करो जो हृषीकेशके सोवनेपै दो ऋतुनमें प्रतिदिन ॥ ५५ ॥ हे अनघ ! कटुत्रय अर्थात् सोंठ मिरच पीपरिको आदरसों सूर्यकी प्रीतिके लिये दान करै है ॥ ५६ ॥ हे सुव्रत ! दक्षिणा

सर्वदेवप्रियं यस्माच्छाकं तृप्तिकरं नृणाम् ॥ देवर्षिप्रीतिदं कन्दमूलपत्रसपुष्पकम् ॥ ५४ ॥ ददामि तेन देवाद्याः सदा कुर्वन्तु मङ्गलम् ॥ यस्तु सुप्ते हृषीकेशे प्रत्यहं तु ऋतुद्वये ॥ ५५ ॥ दद्यात्कटुत्रयं मर्त्यो गृहपर्याप्तमादरात् ॥ ब्राह्मणाय सुशीलाय दिनेशप्रीतयेऽनघ ॥ ५६ ॥ दक्षिणासहितं विप्रे मन्त्रेणानेन सुव्रत ॥ कटुत्रयमिदं यस्माद्रोगघ्नं सर्वदेहिनाम् ॥५७॥ तस्मादस्य प्रदानेन प्रीतो भवतु भास्करः ॥ एवं कृत्वा व्रतं सम्यक् कुर्यादुद्यापनं बुधः ॥ ५८ ॥ कृत्वा स्वर्णमयीं शुण्ठीं मरिचं मागधीमपि ॥ सवस्त्रां दक्षिणायुक्तां दद्याद्विप्राय धीमते ॥ ५९ ॥ एवं व्रतं यः कुरुते स जीवेच्छरदां शतम् ॥ प्राप्नुयादीप्सितानर्थानन्ते स्वर्गं व्रजेदिति ॥ १६० ॥

सहित ब्राह्मणके अर्थ या मंत्रसों कि, जाते यह त्रिकटु सब देवनके रोगको नाश करनहारो है ॥५७॥ ताते याके दान करिके सूर्य प्रसन्न हो या प्रकार भलीभांति व्रतको करिके बुध नर उद्यापनको करै ॥५८॥ सुवर्णकी सोंठ, मिर्च, पीपर बनवायके वस्त्रयुक्त दक्षिणासमेत बुद्धिमान् ब्राह्मणके अर्थ दान करै ॥ ५९॥ या प्रकार जो व्रतको करै है वह सौ वर्षलों जीवै है और वाञ्छित अर्थको प्राप्त होके अन्तमें स्वर्गको जाय है॥१६०॥

जो उत्तम मतिवाले मनुष्य नित्य ब्राह्मणके अर्थ मोतिनको दान करे है हे राजन् ! वह अन्नवान् कीर्तिवान् और श्रीमान् होय है ॥ ६१ ॥ जो चातुर्मास्यमें प्रतिदिन दूधके घटको उत्तम वस्त्रमें लपेटिके दक्षिणासमेत दान करै है ॥ ६२ ॥ और सुवासिनीको लक्ष्मी मानिके गन्धपुष्पनसों पूजन करै और तांबूलको वा एक फलको " श्रीपतये नमः" ऐसे कहके दानको करै ॥ ६३ ॥ और व्रतकी समाप्तिमें स्त्रीसहित ब्राह्मण को सुन्दर शोभा

मुक्ताफलानि यो दद्यान्नित्यं विप्राय सन्मतिः ॥ अन्नवान्कीर्तिमाञ्छ्रीमाञ्जायते वसुधाधिपः ॥ ६१ ॥ चातुर्मास्ये प्रत्यहं तु क्षीरकुम्भं प्रदापयेत् ॥ वेष्टयित्वा सुवस्त्रेण फलैर्दक्षिणया सह ॥ ६२ ॥ सुवासिनीं श्रियं मत्वा गन्धपुष्पैरथार्चयेत् ॥ तांबूलं फलमेकं वा दद्याच्छ्रीपतये नमः ॥ ६३ ॥ समाप्तौ योषितं विप्रं सूक्ष्मवस्त्रविभूषणैः ॥ मिथुनं पूजयित्वा तु जातिपुष्पैः सुशोभनैः ॥ ६४ ॥ पुमांस्तु स्त्रियमाप्नोति नारी भर्तारमाप्नुयात् ॥ पुमांस्तु श्रियमाप्नोति सकलामिव माधवः ॥ ६५ ॥ ताम्बूलदानं यः कुर्याद्वर्जयेद्वा जितेन्द्रियः ॥ रक्तवस्त्रद्वयं दद्यात्करकं च सदक्षिणम् ॥ ६६ ॥ महालावण्यमाप्नोति सर्वरोगविवर्जितः ॥ मेधावी सुभगः प्राज्ञो रक्तकण्ठश्च जायते ॥ ६७ ॥

यमान चमेलीके फूलन करिके पूजन करै ॥६४॥ तो पुरुष स्त्रीको प्राप्त होय और स्त्री पुरुषको प्राप्त होय और पुरुष श्रीको ऐसे प्राप्त होय है जासे कला समेत लक्ष्मीको माधव प्राप्त भये ॥६५॥ जो जितेन्द्रिय पुरुष तांबूलको दान करै है अथवा उनको छोडि देय है तथा लाल वस्त्रनको जोड और दक्षिणा समेत कमण्डलुको दान करै है ॥ ६६ ॥ वह अत्यन्त सुन्दरताईको प्राप्त होवे है और सब रोगन करि वर्जित रहे है और बुद्धिमान्

सुन्दर पण्डित तथा मधुरकंठ होजाय है ॥ ६७ ॥ गंधर्वत्वको प्राप्त होय हैं और स्वर्ग लोकको जाय है तांबल पान लक्ष्मीको करनहारो और कल्याणको देनहारो है तथा ब्रह्मा विष्णु और शिवरूप हैं ॥६८॥ याके दान करनेसों ब्रह्मा आदि देवता बहुतसी लक्ष्मीको देय हैं। सुपारीमें ब्रह्मा हैं और पत्तेमें हरि हैं और चूनेमें साक्षात् महादेव हैं॥६९॥उन सबनके दान करने सों मेरी भाग्य सम्पति अधिक बढै सुपारीके चूर्ण करि पूरित और

गन्धर्वत्वमवाप्नोति स्वर्गलोकं च गच्छति ॥ तांबूलं श्रीकरं भद्रं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ॥ ६८ ॥ अस्य प्रदानाद्ब्रह्माद्याः श्रियं ददतु पुष्कलाम् ॥ पूगे ब्रह्मा हरिः पत्रे चूर्णे साक्षान्महेश्वरः ॥ ६९ ॥ एतेषां संप्रदानेन सन्तु मे भाग्यसम्पदः ॥ पूरितं पूगचूर्णेन नागवल्लीदलान्वितम् ॥ १७० ॥ सचूर्णं खादिरं चैव पत्रीफलसमन्वितम् ॥ एलालवंगसंमिश्रं गन्धर्वाप्सरसां प्रियम् ॥ ७१ ॥ कनकाढ्यं निरातंकं त्वं प्रासादत्कुरुष्व माम् ॥ चातुर्मास्यव्रतोपेतः सुवासिन्यै द्विजाय च ॥ ७२ ॥ नारी वा पुरुषो वाऽपि हरिद्रां सम्प्रयच्छति ॥ लक्ष्मीमुद्दिश्य गौरीं वा तत्पात्रे दक्षिणान्वितम् ॥ ७३ ॥ प्रदद्याद्भक्तिसंयुक्तं देवी मे प्रीयतामिति ॥ भर्त्रा सह सुखं भुंक्ते नारी नार्या तथा पुमान् ॥ ७४ ॥

नागबेलिके पत्तों करिके युक्त ॥१७०॥ चूना खैर जावित्री और जायफल करिके युक्त इलायची और लौंगों करिके मिला हुआ तांबूल गंधर्व और अप्सरानको प्रिय है ॥ ७१ ॥ तू प्रसन्नतासे मोको सुवर्णयुक्त तथा आतंक रहित कर और चातुर्मास्य व्रत करिके युक्त सुवासिनीके और ब्राह्मणके अर्थ ॥७२॥ नारी वा पुरुष हरिद्राको लक्ष्मी वा गौरीके निमित्त वा पात्रमें दक्षिणा करिके युक्त हरिद्राको दान करै है ॥ ७३ ॥ देवी मोपै

प्रसन्नहोय ऐसे दान कहिके जो भक्तिसों करै है वह नारी पतिके साथ पुरुष स्त्रीके साथ सुख भोग करै है ॥ ७४ ॥ और वह सौभाग्य अक्षय धान्य धन पुत्रवृद्धि और रूप तथा लावण्यको प्राप्त होके स्वर्गलोकमें आनन्द करै है ॥७५॥ जो उमा और महेशका उद्देश करिके चातुर्मास्यमें दिन दिन ब्राह्मणके मिथुन अर्थात् स्त्री पुत्र पुरुषको पूजिके वा विप्रके अर्थ यथाशक्ति ॥७६॥ उमेश प्रसन्न होय ऐसे कहिके दक्षिणा समेत

सौभाग्यमक्षयं धान्यं धनपुत्रसमुन्नतिम् ॥ सम्प्राप्य रूपलावण्ये देवीलोके महीयते ॥७५॥ उमामहेशमुद्दिश्य चातुर्मास्ये दिने दिने ॥ सम्पूज्य विप्रमिथुनं तस्मै विप्राय शक्तितः ॥ ७६ ॥ दद्यात्सदक्षिणं हेममुमेशः प्रीयतामिति ॥ उमेशप्रतिमां हैमीं दद्यादुद्यापने बुधः ॥ ७७ ॥ पंचोपचारैः सम्पूज्य धेनुं सवृषभां नरः ॥ भोजयेदपि मिष्टान्नं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ ७८ ॥ सौभाग्यं पूर्णमायुष्यं सन्ततिश्चानपायिनी ॥ सम्पत्तिश्चाक्षया कीर्तिर्जायते व्रतवैभवात् ॥ ७९ ॥ इह भुक्त्वाऽखिलान् कामानन्ते शिवपुरं व्रजेत ॥ तत्र स्थित्वा चिरं कालमुपभुज्य सुखं महत् ॥ १८० ॥

सुवर्णको दान करै और बुध नर उद्यापनमें सुवर्णकी बनी भई उमेशकी प्रतिमाको दान करै ॥ ७७ ॥ मनुष्य वृष समेत गौको पंचो पचारनसों पूजन करिके उनको मिष्ठान्न भोजन करावै ताको फल सुनो ॥ ७८ ॥ सौभाग्य पूरि आयु जाको कबहूं नाश न होय ऐसी संतति संपत्ति और अक्षय कीर्ति ये सब व्रतके प्रभावसों होय हैं ॥ ७९ ॥ और या लोकमें संपूर्ण कामनाओंको भोगिके अंतमें

शिवपुरको जायहै और वहां चिरकाललों स्थित हो बहुतसों सुख भोग करके ॥ १८० ॥ पुण्यके शेषसों यहां आयके राजा होय और जो चातुर्मास्यमें आलस्य छोडिके फलनको दान करै है ॥८१॥और व्रतकी समाप्तिमें ब्राह्मणके अर्थ चांदीको दानकरै है वह सब मनोरथनको और अनपायिनी संतति पायके ॥ ८२ ॥ फलदानके माहात्म्यसों नंदनवनमें आनन्द करै है पुष्पदानके व्रतमेंहू सुवर्णके पुष्प आदिको दान करै ॥८३॥

पुण्यशेषादिहागत्य जायते धरणीपतिः ॥ फलदानं तु यः कुर्याच्चातुर्मास्यमतन्द्रितः ॥ ८१ ॥ समाप्तौ कलधौतानि तानि दद्याद्द्विजातये ॥ सर्वान्मनोरथान्प्राप्य सन्ततिश्चानपायिनीम् ॥ ८२ ॥ फलदानस्य माहात्म्यान्मोदते नन्दने वने पुष्पदान व्रतेनापि स्वर्णपुष्पादि दापयेत् ॥ ८३ ॥ स सौभाग्यं परं प्राप्य गन्धर्वपदमाप्नुयात् ॥ वासुदेवे प्रसुप्ते तु चातुर्मास्य मतंद्रितः ॥ ८४ ॥ नित्यं वामनमुद्दिश्य दध्यन्नं स्वादु षड्रसम् ॥ भोजयेदथवा दद्यादेकादश्यां न भोजयेत् ॥ ८५ ॥ दानमेवं प्रकुर्वीत ग्रहणादौ तथैव च ॥ अशक्तो नित्यदाने तु कुर्यात्पञ्चसु पर्वसु ॥ ८६ ॥ भूताष्टम्याममायां च पूर्णिमायां तथापि च ॥ प्रत्यर्कवारमथवा प्रतिभार्गववासरम् ॥ ८७ ॥

वह परम सौभाग्यको प्राप्त हो गंधर्वपदको प्राप्त होय है वासुदेवके सोवनेपै चातुर्मास्यमें आलसको छोडिके ॥ ८४ ॥ वामनजीके नामपै दही भात और स्वादयुक्त छहूँ रस भोजन करावै अथवा दान करै परंतु एकादशीको भोजन न करावै ॥ ८५ ॥ या प्रकारसों दान करै और ग्रहण आदि पर्वनहूमें ऐसोही करै जो नित्य दान देवेकी सामर्थ्य न हो तो पांच पर्वनमें दान करै॥८६॥चतुर्दशीमें अष्टमीमें अमावस्यामें और पूर्णिमामें अथवा

प्रत्येक रविवारको वा प्रत्येक शुक्रवारको॥८७॥और दोनों पाखनमें द्वादशीके दिन दान करै याप्रकारकरिके समाप्त होनेपै शक्तिके अनुसार भूमिको दान करै॥८८॥और जो भूमिदान देनेकी सामर्थ्य न होय तो अलंकारनसों शोभित गौको दान करै यामेंहू असमर्थ होय तो वस्त्र सुवर्ण और पादुकानको दान करै॥८९॥तैसेही वस्त्रनसमेत छाते और जूतेको दान सब दाननमें उत्तम है ब्राह्मणको तो भोजन और क्षत्रियको यथासुख भूमि ॥१९०॥

पक्षद्वयेऽपि द्वादश्यामवश्यं दानमेव च ॥ एवं कृत्वा समाप्तौ तु यथाशक्ति महीं ददेत् ॥ ८८ ॥ अशक्तो भूमिदाने तु धेनुं दद्यादलंकृताम् ॥ तत्राप्यशक्तो वासश्च सरुक्मं पादुके तथा ॥ ८९ ॥ छत्रोपानद्वस्त्रयुतं दानं सर्वं प्रशस्यते ॥ द्विजानां भोजनं चैव क्षत्रियस्य यथासुखम् ॥ १९० ॥ भूम्यादि मुनिशार्दूल वैश्यस्य वसुधां विना ॥ ब्राह्मणस्यापि शक्तस्य शूद्रस्यापि तथा मतम् ॥ कुबेरेण पुरा चीर्णं शंकरस्योपदेशतः ॥ ९१ ॥ जह्नुना गौतमेनापि शक्रेणापि कृतं पुरा ॥ अक्षय्यमन्नमाप्नोति पुत्रपौत्रादिसंपदम् ॥ ९२ ॥ दृढाङ्गः पूर्णमायुस्यं लभते वैरिनाशनम् ॥ स स्थिरां विष्णुभक्तिं च प्रयाति हरिमंदिरम् ॥ ९३ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ ! वैश्यको भूमि दान छोडिकै सब दान कहे हैं समर्थ ब्राह्मणहू तथा शूद्रहूको कह्यो है पहले शंकरजीके उपदेशते कुबेरने यह व्रत कियो ॥९१॥ और पहले जह्नु राजाने गौतमऋषिने और इंद्रने यह व्रत कियो या व्रतको करनहारो मनुष्य अन्न और पुत्र पौत्र आदि संपत्तिको प्राप्त होय है ॥ ९२॥ वाको अंग दृढ होय जाय है और पूरी आयु तथा शत्रु नाशको प्राप्त होय हैं और अति स्थिर विष्णुभक्तिको प्राप्त होय है ।

तथा हरिके मंदिर जाय है ॥९३॥ आरोग्य और अतुल सुखरूप तथा संपत्तिको प्राप्त होय है और या व्रतके करनेसे स्त्री कबहूं बांझ न होय यह व्रत अनन्त फलको देनहारो है ॥९४॥ अलंकारसहित कल्याणकी देनहारी पयस्विनी गौको दान करै और शक्तिके अनुसार दक्षिणा देनहारी मनुष्य सर्वज्ञानी होय है ॥९५॥परायो और प्रेष्य नहीं होय है और ब्रह्मलोकको जाय है और वह मनुष्य पितरनसमेत अक्षय सुखको प्राप्त होय

आरोग्यं सौख्यमतुलं रूपं सम्पत्तिमेव च ॥ न वन्ध्या जायते चेदमनन्यफलदायकम् ॥ ९४ ॥ नित्यं पयस्विनीं दद्यात्सालंकारां शुभावहाम् ॥ दत्त्वा तु दक्षिणां शक्त्या स सर्वज्ञानवान् भवेत् ॥ ९५ ॥ न परप्रेष्यतां याति ब्रह्मलोकं च गच्छति ॥ अक्षय्यं सुखमाप्नोति पितृभिः सहितो नरः ॥ ९६ ॥ वार्षिकांश्चतुरो मासान् प्राजापत्यं चरेन्नरः ॥ समाप्तौ गोयुगं दद्यात्कृत्वा ब्राह्मणभोजनम् ॥ ९७ ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥ एकान्तरोपवासे तु दीपानष्टौ प्रदापयेत ॥ ९८ ॥ वस्त्रकाञ्चनयुक्तांश्च शय्यया सह भामिनी ॥ अनडुद्वयसंयुक्तं लांगलं कर्षणक्षमम् ॥ ९९ ॥ सर्वोपस्करसंयुक्तं ददामि प्रीयतां हरिः ॥ शाकमूलफलैर्वापि चातुर्मास्यं नयेन्नरः ॥ २०० ॥

है ॥९६॥ वर्षाके चारि महीनेमें मनुष्य प्राजापत्य व्रत करै और समाप्तिमें दो गौको दान करै और ब्राह्मणको भोजन करावै॥९७. तो सब पापनसों शुद्ध होके सनातन ब्रह्मको प्राप्त होय हैं और जो एक दिन बीचमें देके व्रत करैऔर आठ दीपनको दान करै ॥९८॥ वस्त्र तथा सुवर्ण करिके युक्त शय्यासमेत बैलनकी जोडी करिके युक्त जोतनेके योग्य हल॥९९॥सब सामग्री करिके युक्तमैं दान करौं हौं या दानसों हरि प्रसन्न होय अथवा शाक

मूल वा फलन करिके चातुर्मास व्यतीत करै॥२००॥और समाप्तिमें गौको दान करै तो विष्णुके मंदिरको जाय और दूधको आहार करै है वह सनातन ब्रह्मलोकको प्राप्त होय है ॥१॥ और व्रतनके अन्तमें एक व्याई भई गौको दान करे और जो दोनों ऋतुमें केलाके पात्रमें भोजन करै है॥२॥ और वस्त्रके जोडाको और कांसेके पात्रको दान यथाशक्ति करैं हैं वह सुखी रहे हैं कांसेमें ब्रह्मा हैं शिव लक्ष्मी है और कांसोही अग्नि है ॥

समाप्तौ गोप्रदानेन स गच्छेद्विष्णुमन्दिरम् ॥ पयोव्रती तथाऽऽप्नोति ब्रह्मलोकं सनातनम् ॥ १ ॥ व्रतान्ते च तथा दद्याद्गामेकां च पयस्विनीम् ॥ रंभाफलपलाशेषु यो भुंक्ते च ऋतुद्वये ॥ २ ॥ वस्त्रयुग्मं च कांस्यं च शक्त्या दद्यात्सुखी भवेत् ॥ कांस्ये ब्रह्मा शिवो लक्ष्मीः कांस्यमेव विभावसुः ॥ ३ ॥ कांस्यं विष्णुमयं यस्मादतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥ नित्यं पलाशभोजी च तैलाभ्यंगविवर्जितः ॥ ४ ॥ स निहंत्यतिपापानि तूलराशिमिवानलः ॥ ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्च बालघातकरश्च यः ॥ ५ ॥ असत्यवादिनो ये च स्त्रीघाती व्रतघातकः ॥ अगम्यागामिनश्चैव विधवागामिनस्तथा॥६॥चाण्डालीगामिनश्चैव विप्रस्त्रीगामिनस्तथा ते सर्वे पापनिर्मुक्ता व्रतेनानेन केशव ॥ ७ ॥

॥३॥कांसो जाते विष्णुमय है ताते मोको शांति देय नित्यही पत्रनमें भोजन करै और तेल न लगावे ॥४॥ वह अपने पापनको ऐसे भस्म करि देय जैसे रुईके ढेरको अग्नि जराय देय है ब्रह्महत्यारो, मद्यप और बालकनको हत्यारो ॥५॥ और जो असत्यवादी हैं और जे स्त्री तथा व्रतके घातीहैं और जे अगम्यागामी हैं, और जे विधवागामी हैं॥६॥चांडालीमें गमन करनहारे हैं हे केशव ! ये सब या व्रत करिके पापनते छूटि जायँ हैं ॥७॥

और व्रतकी समाप्तिमें चौसठि पलको भारी कांसेके पात्रको और अलंकारयुक्त पयस्विनी बछडेवालीगौको दान करै॥८॥अलंकृत और विद्वान सुन्दर वस्त्रधारी और सुन्दर है वेषजाको ऐसे ब्राह्मणके अर्थ वह दान देय और जो भूमि लीपिके देव नारायणको स्मरण करतो भयोभोजन करै है॥९॥वाको खेतीके योग्य बहुतसे जलके समीपकी भूमिको यथाशक्ति दान करै तो वह देनहारो आरोग्य और पुत्रन करिकेसंपन्न धर्मात्मा राजा होय॥१०॥

समाप्तौ कांस्यपात्रं तु चतुःषष्टिपलैर्युतम् ॥ सवत्सां गां च वै दद्यात्सालंकारां पयस्विनीम् ॥ ८ ॥ अलंकृताय विदुषे सुवस्त्राय सुवेषिणे ॥ भूमौ विलिप्य यो भुंक्ते देवं नारायणं स्मरन् ॥ ९ ॥ दद्याद्भूमिं यथाशक्ति कृष्यां बहुजलांतिके ॥ आरोग्यपुत्रसंपन्नो राजा भवति धार्मिकः ॥ २१० ॥ शत्रोर्भयं न लभते विष्णुलोकं स गच्छति ॥ अयाचिते त्वनड्वाहं सहिरण्यं सचन्दनम् ॥ ११ ॥ षड्रसं भोजनं दद्यात्स याति परमां गतिम् ॥ यस्तु सुप्ते हृषीकेशे नक्तं च कुरुते व्रतम् ॥ १२ ॥ ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाच्छिवलोके महीयते ॥ एकभक्तं नरः कृत्वा मिताशी च दृढव्रतः ॥ १३ ॥ योऽर्चयेच्चतुरो मासान् वासुदेवं स नाकभाक् ॥ समाप्तौ भोजयेद्विप्रांच्छक्त्या दद्याच्च दक्षिणाम् ॥ १४ ॥

वह शत्रुके भयको नहीं प्राप्त होय हैं और विष्णुलोकको गमन करै हैं और जो आयाचितमें सुवर्ण और चन्दन समेत॥११॥षड्रस भोजन देयहै वह परम गतिको प्राप्त होय है और जो हृषीकेश भगवान्के सोवनेके समय नक्त व्रतको करै है॥१२॥ और जो पीछे व्रतकी समाप्तिमें ब्राह्मणनको भोजन करावै है वह शिवलोकमें आनंद भोगै है मनुष्य एक भक्त व्रत करिके थोरोसो भोजन करै और व्रतमें दृढ रहै ॥ १३ ॥ जो चार महीने

वासुदेवका पूजन करै है वह स्वर्गको भागी होय है और समाप्तिमें ब्राह्मणनको भोजन करावै और शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे॥ १४॥और हृषी केशके सोनेपै जो मनुष्य भूमिमें सोवत है और सामग्री समेत शय्याको दान करै है वह शिवलोकमें आनन्दसों भोगैहै॥ १४। और जो मनुष्य दो ऋतुन भरि पांयनमें तेलको नहीं लगावै है वह मनुष्य ब्राह्मणनके पांवधोवै और उनको भोजन करावै॥ १६॥और यथाशक्ति दक्षिणा दे तो वह विष्णु

यस्तु सुप्ते हृषीकेशे क्षितिशायी भवेन्नरः ॥ शय्यां सोपस्करां दद्याच्छिवलोके महीयते ॥ १५ ॥ पादाभ्यङ्गं नरो यस्तु वर्जयेच्च ऋतुद्वये ॥ पादाभ्यङ्गं नरः कुर्याद्ब्राह्मणानां च भोजनम्॥ १६॥दक्षिणां च यथाशक्त्या स गच्छेद्विष्णुमंदिरम् ॥ आषाढाच्चतुरो मासान्वर्जयेन्नखकृंतनम् ॥ १७ ॥ आरोग्यपुत्रसम्पन्नो राजा भवति धार्मिकः ॥ पायसं लवणं चैव मधु सर्पिः फलानि च ॥ १८ ॥ चातुर्मास्ये वर्जयति गौरीशंकरतुष्टये ॥ कार्त्तिक्यां च पुनस्तानि ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥१९॥ स रुद्रलोकमाप्नोति रुद्र व्रतनिषेवणात् ॥ यवान्नं भक्षयेद्यस्तु अथवा शालयः शुभाः ॥ २० ॥

लोकको जाय आषाढ आदि चारि महीनेमें नख न कटावै ॥ १७ ॥ तो वह आरोग्य और पुत्रन करिके युक्त धर्मात्मा राजा होय और खीर, नोन सहद घी और फलनको जो॥ १८॥चातुर्मासमें गौरीशंकरकी प्रसन्नताके लिये छोडै वह फिरि उन्ही वस्तुनको कार्तिकीके दिन ब्राह्मणनके अर्थ निवेदन करै ॥१९॥ वह रुद्रके व्रतके सेवनेसों रुद्रलोकको प्राप्त होय है और जो चार महीने जवको अथवा सुन्दर चावलनको भोजन करै है ॥२०॥

वह पुरुष पुत्र पौत्रादिकन समेत शिवलोकमें आनन्द करै है तैल लगानेके त्यागि सदा व्रती विष्णुभक्त ॥ २१ ॥ वर्षाऋतुमें विष्णुको पूजन करिके विष्णुकी गतिको प्राप्त होय है और समाप्तिमें सुवर्ण करिके युक्त कांसेके पात्रको ॥२२॥ तेलसों भरिके ब्राह्मणके अर्थ दान करै और वर्षाके चारि महीने शाक आदिको वर्जित करै ॥ २३ ॥ वह विष्णुके लोकमें प्राप्त होय हैं और पितरोंकी तृप्ति होय है व्रतके अन्तमें

पुत्रपौत्रादिभिः सार्द्धं शिवलोके महीयते ॥ तैलाभ्यङ्गपरित्यागी विष्णुभक्तः सदा व्रती ॥ २१ ॥ वर्षासु विष्णुमभ्यर्च्य वैष्णवीं लभते गतिम् ॥ समाप्तौ कांस्यपात्रं च सुवर्णेन समन्वितम् ॥ २२ ॥ तैलेन पूरितं कृत्वा ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ वार्षिकांश्चतुरो मासाञ्छाकादि परिवर्जयेत ॥ २३ ॥ विष्णुलोकमवाप्नोति पितृतृप्तिः प्रजायते ॥ व्रतान्ते हरिमुद्दिश्य पात्रं राजतमेव हि ॥ २४ वस्त्रेण वेष्टयेद्गंधपत्रपुष्पैः समर्चयेत् ॥ मूलपत्रकरीराग्रफलकाण्डाधिरूढकम् ॥ २५ ॥ त्वक्पुष्पं कवचं चेति शाकमष्टविधं स्मृतम् ॥ समभ्यर्च्य यथाशक्त्या ब्राह्मणान्वेदपारगान् ॥ २६ ॥ दद्याद्दक्षिणया सार्धं व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ शिवसायुज्यमाप्नोति प्रसादाच्छूलपाणिनः ॥२७ ॥

हरिके निमित्त चांदीके पात्रको दान करै ॥ २४ ॥ या पात्रको वस्त्रसों लपेट और गंध पत्र पुष्पन करिके पूजन करै मूल पत्र करीरको अग्र फल ॥ २५ ॥ त्वचा पुष्प और कवच यह आठ प्रकारके शाक कह्यो है ताको यथा शक्ति पूजन करिके वेदके पारगामी ब्राह्मणको ॥ २६ ॥ व्रतकी पूर्णताके लिये दक्षिणासमेत दान करे तो वह शूलपाणि जो शिव हैं तिनके प्रसादसों शिवकी सायुज्यताको प्राप्त होय है ॥ २७ ॥

पुआनकों छोडके व्रतको भोजन करैं और कार्तिकमें सुवर्ण गेहूं और वस्त्रनको दान करिके अश्वमेधके फलको प्राप्तहोय है ॥२८॥ गेहूं सब जीवनके और पुष्टिके बढावनहारे हैं और हव्य कव्यमें मुख्य है ताते मोको लक्ष्मीदेय ॥२९॥ आषाढ आदि चार महीनेमें मनुष्य बैंगननको और करेला कोन खाय तूम्बी और परवर न खाय ॥२३०॥ और जो कोई यद्वा तद्वा फल प्यारो होयताहि न खाय तापीछे चातुर्मास्यके पूरे होनेपर इनसबको चांदीके

अपूपवर्जनं कृत्वा भोजनं व्रतमाचरेत् ॥ कार्तिके स्वर्णं गोधूमान्वस्त्रं दत्त्वाऽश्वमेधकृत् ॥ २८ ॥ गोधूमाः सर्वजन्तूनां बल पुष्टिविवर्धनाः ॥ मुख्याश्च हव्यकव्येषु तस्मान्मे ददतु श्रियम् ॥ २९ ॥ आषाढादि चतुर्मासान्वृन्ताकं वर्जयेन्नरः ॥ कार वल्लीफलं वाप्यलाबुं पडवलं तथा ॥ २३० ॥ यद्वा तद्वा फलं वापि यच्च प्रियतमं भवेत् ॥ चातुर्मास्ये ततो वृत्ते रौप्याण्ये तानि कारयेत् ॥ ३१ ॥ मध्ये विद्रुमयुक्तानि ह्यर्चयित्वा तु शक्तितः ॥ दद्याद्दक्षिणया सार्द्धं ब्राह्मणायातिभक्तितः ॥ ३२ ॥ अभीष्टं देवमुद्दिश्य देवो मे प्रीयतामिति ॥ स दीर्घमायुरारोग्यं पुत्रपौत्रान्सुरूपकान् ॥ ३३ ॥ अक्षय्यां सन्ततिं कीर्तिं लब्ध्वा स्वर्गे महीयते ॥ फलत्यागी भवेद्यस्तु विष्णुलोके स पूज्यते ॥ ३४ ॥

बनवावे ॥ ३१ ॥ और बीचमें मूँगे लगावे फिर यथाशक्ति पूजन करिके दक्षिणासहित ब्राह्मणके अर्थ अतिभक्तिसों दान करै ॥ ३२ ॥ अभीष्ट देवताको नाम लेके कि, अमुक देव मेरे ऊपर प्रसन्न होय वह मनुष्य दीर्घ आयु और आरोग्यको प्राप्त होय और सुन्दर रुपवान् पुत्र पौत्रनको प्राप्त होय है ॥ ३३ ॥ और अक्षय संततिको और कीर्तिको प्राप्त होके स्वर्गमें आनन्द करै है औरजो चातुर्मास्यमें फलनका त्याग करे है वह विष्णु

लोकमें पूजित होय है ॥३४॥ और व्रतकी समाप्तिमें उन फलनको चांदीके बनवाके ब्राह्मणनको दान करै सावनमें शाक न खाय और भादोंमें दही न खाय ॥ ३५ ॥ क्वारके महीनेमें दूधको और कार्तिकमें दालिको त्याग करै ये चारि बातें चारों आश्रमको नित्य हैं ॥३६॥ कि, प्रथम मास कहिये श्रावणमें मनुष्यनको शाकव्रत कर्यो चाहिये और दूसरे अर्थात् भादोंके महीनेमें उत्तम दधिको व्रत करने योग्य है ॥३७॥ और

समाप्तौ कलधौतानि तानि दद्याद्द्विजातये ॥ श्रावणे वर्जयेच्छाकं दधि भाद्रपदे तथा ॥ ३५ ॥ दुग्धमाश्वयुजे मासि कार्तिके द्विदलं त्यजेत् ॥ चत्वार्येतानि नित्यानि चतुराश्रमवर्तिनाम् ॥ ३६ ॥ प्रथमे मासि कर्त्तव्यं नित्यं शाकव्रतं नरैः ॥ द्वितीये मासि कर्तव्यं दधिव्रतमनुत्तमम् ॥ ३७ ॥ पयोव्रतं तृतीये तु चतुर्थे द्विदलं तथा ॥ कूष्माण्डं राजमाषांश्च मूलकं गृञ्जनं तथा ॥ ३८ ॥ करमर्द चेक्षुदण्डं चातुर्मास्ये त्यजेन्नरः ॥ मसूरं बहुबीजं च वृन्ताकं चैव वर्जयेत् ॥ ३९ ॥ नित्यान्येतानि विप्रेन्द्र व्रतान्याहुर्मनीषिणः ॥ विशेषाद्बदरीं धात्रीमलाबुं चिञ्चिणीं त्यजेत् ॥ ४० ॥

तीसरे कहिये क्वारमें दूधको और चौथे कहिये कार्तिकमें दालिको व्रत करै अर्थात् इन चारों महीनेमें चारों वस्तु न खाय और कुम्हडा,माष, मूली गाजर इनकोहू न खाय ॥ ३८॥ और चातुर्मास्यमें मनुष्य करौंदा और ईख न खाय और मसूर तथा बहुत बीज जामें होयँ ऐसो फल और बैंगनको न खाय ॥ ३९ ॥ हे विप्रेंद्र ! पण्डितोंने ये नित्यव्रत कहे हैं और विशेष करिके बेर आँवले लौकी और अमिलीको त्याग करै ॥४०॥

पुराने आमले तथा पुरानी अमिली वर्षाके चार महीनेताई भगवान् जनार्दनके सोनेके समय लेने योग्य हैं ॥ ४१ ॥ और बुद्धिमान् मनुष्य मंचान तथा खाटके सोवने को त्याग करै और बिना ऋतु समय स्त्रीगमन न करै और ऋतु समय जो गमन करै तो दोष नहीं है ॥ ४२ ॥ मधुवेलि और सहिजनेको नर चातुर्मास्यमें त्याग करै और बैंगन कलिंदा बेल गूलर तथा भिस्सटा अर्थात् शाकविशेषको त्याग करै ॥४३॥ ये जाके उदरमें जीर्ण

जीर्णं धात्रीफलं ग्राह्यं जीर्णा ग्राह्या च चिञ्चणी ॥ वार्षिकांश्चतुरो मासान्प्रसुप्ते च जनार्दने ॥ ४१ ॥ मञ्चखट्वादिशयनं वर्जयेद्भक्तिमान्नरः ॥ अनृतौ वर्जयेद्भार्यामृतौ गच्छन्न दुष्यति ॥ ४२ ॥ मधुवेलीं च शिग्रुं च चातुर्मास्ये त्यजेन्नरः ॥ वृन्ताकं च कलिंगं च बिल्वोदुम्बरभिस्सटाः ॥ ४३ ॥ उदरे यस्य जीर्यन्ते तस्य दूरतरो हरिः ॥ उपवासस्तथा नक्तमेकभक्तमयाचितम् ॥ ४४ ॥ अशक्तस्तु यथा कुर्यात्सायं प्रातरखंडितम् ॥ स्नानपूजादिसंयुक्तः स नरो हरिलोकभाक् ॥४५॥ गीतवाद्यकरो विष्णोर्गान्धर्वं लोकमाप्नुयात् ॥ मधुभुक्च भवेद्राजा पुरुषो गुडवर्जनात् ॥ ४६ ॥

होय हैं ताते अति दूर रहैं हैं उपवास तथा नक्तव्रत और एक भक्त तथा अयाचित ॥ ४४ ॥ जो इनके करनेको असमर्थ होय तो प्रातःकाल और संध्याको स्नान पूजन आदिको करै तो विष्णुलोकको प्राप्त होय ॥ ४५ ॥और जो विष्णुके आगे गावै बजावै है वह गंधर्वके लोकको प्राप्त होय हैं और मनुष्य गुडके छोडनेसों मीठेको खानहारो राजा होय है ॥ ४६ ॥

और पुत्र पौत्रनकी बढावनहारी संततीको प्राप्त होय है हे राजन् ! तैलके छोड़नेसों सुन्दर है अंग जाको ऐसो हो जाय है॥४७॥ कसुमको तैल छोडनेसों शत्रु नाशको प्राप्त होय हैं और महुआके तेलके त्यागसों सौभाग्यके फलको प्राप्त होय है ॥ ४८ ॥ कटु, तिक्त, मधुर, कषाय लवण इन रसनके त्यागसों विरूपता और दुर्गंधको कबहूं नहीं प्राप्त होय ॥ ४९ ॥ और पुष्प आदि भोगनके त्यागसों स्वर्गलोकमें विद्याधर होय

लभेच्चसंततिं दीर्घां पुत्रपौत्रादिवर्धिनीम् ॥ तैलस्य वर्जनाद्राजन्सुन्दरांगः प्रजायते ॥ ४७ ॥ कौसुम्भतैलसन्त्यागाच्छत्रुनाशमवाप्नुयात् ॥ मधूकतैलत्यागाच्च सुसौभाग्यफलं लभेत् ॥ ४८ ॥ कटु तिक्तं च मधुरं कषायलवणात्रसान् ॥ वर्जयेत् स च वैरूप्यं दौर्गंध्यं नाप्नुयात्सदा ॥ ४९ ॥ पुष्पादिभोगत्यागेन स्वर्गे विद्याधरो भवेत् ॥ योगाभ्यासी भवेद्यस्तु स ब्रह्मपदवीमियात् ॥ ५० ॥ ताम्बूलवर्जनाद्रोगी सद्यो मुक्तामयो भवेत् ॥ पादाभ्यंगपरित्यागाच्छिरोभ्यंगस्य पार्थिव ॥ ५१ ॥ दीप्तिमान् दीप्तकरणो यक्षद्रव्यपतिर्भवेत् ॥ दधिदुग्धपरित्यागी गोलोकं लभते नरः ॥ ५२ ॥ इह लोकमवाप्नोति स्थालीपाकविवर्जनात् ॥एकान्तरोपवासेन ब्रह्मलोके महीयते ॥ ५३ ॥

और जो योगाभ्यासी होय वह ब्रह्मपदवीको प्राप्त होय ॥२५०। और तांबूलको छोड़नेसों रोगी शीघ्रही रोगरहित हो जाय । हे राजन् ! पांयनमें और शिरमें तेल लगानेके छोडनेसों ॥५१॥ दीप्तिमान् और दीप्त इंद्रियहारो यक्ष द्रव्यपति होय है और दही दूधका त्याग करनहारो मनुष्य गोलोकको प्राप्त होय हैं ॥५२॥ स्थालीपाकके त्यागसों या लोकमें सुख पावै है और एक दिन बीचमें देके व्रत करनहारो मनुष्य ब्रह्मलोकमें आनंद

करै है ॥ ५३ ॥ वर्षाके चार महीनेके जो नख और बालनको धारण करै हैं वह नर कल्पस्थाही होय यामें संदेह नहीं है ॥ ५४ ॥ और जो "नमो नारायणाय" या मंत्रको चार महीने जपै है ताको अनन्तफल मिलै है और विष्णुके चरणकमलोंके स्पर्शसों मनुष्य कृतार्थ हो जाय है ॥५५॥ और जो हरिके मंदिरमें एक लाख प्रदक्षिणा करै वह हंसयुक्त विमानमें स्थित होके विष्णुपुरमें जाय है ॥ ५६ ॥ तीनि रात्रि पर्यंत भोजनके

चतुरो वार्षिकान्मासान् नखरोमाणि धारयेत् ॥ कल्पस्थायी भवेद्राजन्स नरो नात्र संशयः ॥ ५४ ॥ नमो नारायणायेति जपित्वाऽनन्तकं फलम् ॥ विष्णुपादांबुजस्पर्शात्कृतकृत्यो भवेन्नरः ॥ ५५ ॥ लक्षप्रदक्षिणा यस्तु करोति हरिमंदिरे ॥ हंसयुक्तविमानेन स याति वैष्णवीं पुरीम् ॥ ५६ ॥ त्रिरात्रभोजनत्यागान्मोदते दिवि देववत् ॥ परान्नवर्जनाद्राजन्देवो वै मानुषो भवेत् ॥ ५७ ॥ प्राजापत्यं चरेद्यो वै चातुर्मास्यव्रतान्नरः ॥ मुच्यते पातकैः सर्वैस्त्रिविधैर्नात्र संशयः ॥ ५८ ॥ तप्तकृच्छ्रातिकृच्छ्राभ्यां यः क्षिपेच्छयनं हरेः ॥ स याति परमं स्थानं पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥ ५९ ॥ चान्द्रायणेन यो राजन् क्षिपेन्मासचतुष्टयम् ॥ दिव्यदेहो भवेत्सोऽथ शिवलोकं च गच्छति ॥ २६० ॥

त्यागतों स्वर्गमें देवतानके समान आनंद करै है और हे राजन् ! पराये अन्नके त्यागसों मनुष्य देवता हो जाय है ॥५७॥ जो चार महीने हे राजन् ! प्राजापत्य व्रतको चातुर्मास्य करै वह कायिक वाचिक मानसिक तीनों प्रकारके पापनते छूटिजाय है यामें संदेह नहीं है ॥५८॥ और जो तप्तकृच्छ्र और अतिकृच्छ्र करिके हरिके शयनको व्यतित करै है वह पुनरावृति करिकेवर्जित परम स्थानको प्राप्त होय है ॥५९॥ हे राजन् !

जो चांद्रायण व्रत करिके चारि महीने व्यतीत करै हैं वह दिव्य देह होके शिवलोकको जाय है ॥ २६० ॥ जो मनुष्य चातुर्मास्यमें अन्न आदिको भोजन छोड देय है वह हरिकी सायुज्यताको प्राप्त होय है फिरी या लोकमें जन्म नहीं लेय है ॥६१॥ जो चातुर्मास्यमें भिक्षा मांगिके भोजन करै है वह वेदको पारगामी होय है हे राजन् ! जो मनुष्य पयोव्रत करिके चारि महीनाको व्यतीत करै है ॥६२॥ ताके वंशको कभी नाश नहीं होय है

चातुर्मास्ये नरो यो वै त्यजेदन्नादिभक्षणम् ॥ स गच्छेद्धरिसायुज्यं न भूयस्तु प्रजायते ॥ ६१ ॥ भिक्षाभोजी नरो यो हि स भवेद्वेदपारगः ॥ पयोव्रतेन यो राजन् क्षिपेन्मासचतुष्टयम् ॥ ६२ ॥ तस्य वंशसमुच्छेदः कदाचिन्नोपपद्यते ॥ पञ्चगव्याशनः पार्थ चान्द्रायणफलं लभेत ॥ ६३ ॥ दिनत्रयं जलत्यागान्न रोगैरभिभूयते ॥ एवमादिव्रतैः पार्थ तुष्टिमायाति केशवः ॥ ६४ ॥ दुग्धाब्धिवीचिशयने भगवाननंतो यस्मिन्दिने स्वपिति चाथ विबुध्यते च ॥ तस्मिन्ननन्यमनसामुपवासभाजां पुंसां ददाति च गतिं गरुडासनोऽसौ ॥ २६५ ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे विष्णोः शयन्येकादशीचातुर्मास्यमाहात्म्यं सम्पूर्णम् ॥ १६ ॥

और जो पंचगव्यको भोजन करै हैं हे युधिष्ठिर ! वह चांद्रायण व्रतके फलको प्राप्त होय हैं ॥६३॥ और तीन दिन ताईं जलके त्यागसों रोगन करिके नहीं दबायो जाय हैं हे युधिष्ठिर ! इत्यादि व्रतन करिके केशव भगवान् संतुष्ट होय हैं ॥६४॥ दूधके समुद्रकी लहरीमें जादिन भगवान् सोवै हैं और जा दिन जागै हैं वा दिन अनन्य मन होके व्रत करनहारे मनुष्यनको गरुडासन भगवान् गतिको देय हैं ॥ २६५ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायामाषाढशुक्लैकादशीदेवशयनीकथा समाप्ता ॥ १६ ॥

अथ श्रावणकृष्णैकादशीकामिकाकथा ॥ नमस्यकृष्णपक्षे या कामिकैकादशी भवेत् ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां विवृतिं सन्तनोम्यहम् ॥ १ ॥
युधिष्ठिर बोले–कि, आषाढके शुक्लपक्षमें जो देवशयन व्रत होय है सो मैंने पहिले पुराणमें बहुत विस्तारसहित सुनो है ॥ १ ॥ श्रावणमासके कृष्णपक्षमें कौनसे नामकी एकादशी होय है हे वासुदेव ! हे गोविन्द ! यह कहिये आपके लिये नमस्कार हैं ॥२॥ श्रीकृष्ण बोले–कि, हे राजन् !

अथ श्रावणकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ आषाढशुक्लपक्षे तु यद्देवशयनव्रतम् ॥ तन्मया श्रुतपूर्वं हि पुराणे बहुविस्तरम् ॥ १ ॥ श्रावणे कृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ एतत्कथय गोविन्द वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥शृणु राजन्प्रवक्ष्यामि व्रतं पापप्रणाशनम् ॥ नारदाय पुरा राजन्पृच्छते च पितामहः ॥ ३ ॥ परं यदुक्तवांस्तात तदहं ते वदामि च ॥ नारद उवाच ॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि त्वत्तोऽहं कमलासन ॥ ४ ॥ श्रावणस्यासिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ को देवः को विधिस्तस्याः किं पुण्यं कथय प्रभो ॥ ५ ॥

सुनो पापनको नाश करनहारे व्रत मैं कहौं हौं जो व्रत पहले जो पूछनहारो नारद मुनि हैं तिनके अर्थ पितामहने ॥३॥ जो उत्कृष्ट कथन कियो है हे तात ! सो मैं तुमसों कहौं हौं । नारद बोले–कि, हे भगवन् ! हे कमलासन ! तुमसो मैं सुनो चाहौं हौं ॥४॥ कि श्रावणके कृष्णपक्षकी एकादशीको कहा नाम है और वाको देवता कौन हैं और वाकी विधि कहा हैं और पुण्य कहा है हे प्रभो ! सो हमसों कहो ॥ ५ ॥

ब्रह्मा बोले—कि, हे नारद ! लोकनके हितकी कामनासों मैं तुमसों कहौं हौं तुम सुनों कि, श्रावणके कृष्णपक्षकी एकादशीको कामिका नाम है॥६॥ ताके श्रवणमात्रहीसों वाजपेय यज्ञको फल मिलै है और वा एकादशीके दिन जो शंख चक्र और गदा धारण करनहारे देवको पूजन करै ॥७॥ श्रीधर है नाम जिनको ऐसे जे हरि विष्णु माधव मधुसूदन हैं तिनको जो पूजन और ध्यान करै है ताके पुण्यका फल सुनो॥८॥जो फल विष्णुके

ब्रह्मोवाच ॥ शृणु नारद ते वच्मि लोकानां हितकाम्यया ॥ श्रावणैकादशी कृष्णा कामिकेति च नामतः ॥ ६ ॥ तस्याः श्रवणमात्रेण वाजपेयफलं लभेत् ॥ तस्यां तु पूजयेद्देवं शंखचक्रगदाधरम् ॥ ७ ॥ श्रीधराख्यं हरिं विष्णुं माधवं मधुसूदनम् ॥ यजते ध्यायते यो वै तस्य पुण्यफलं शृणु ॥८॥ न गङ्गायां न काश्यां वै नैमिषे न च पुष्करे ॥ तत्फलं समवाप्नोति यत्फलं विष्णुपूजनात् ॥ ९ ॥ केदारे च कुरुक्षेत्रे राहुग्रस्ते दिवाकरे ॥ न तत्फलमवाप्नोति यत्फलं कृष्णपूजनात् ॥१०॥ ससागरवनोपेतां यो ददाति वसुन्धराम् ॥ गोदावर्यां गुरौ सिंहे व्यतीपाते च गण्डके ॥११॥ न तत्फलमवाप्नोति यत्फलं कृष्णपूजनात् ॥ कामिकाव्रतकारी च द्वावुभौ समफलौ स्मृतौ ॥ १२ ॥

पूजनसों प्राप्त होय है वह न गंगामें न काशीमें न नैमिषारण्यमें न पुष्ककरमें प्राप्त होय है ॥९॥ केदारक्षेत्रमें और कुरुक्षेत्रमें सूर्यग्रहणके समय वहफल नहीं मिलै है जो फल कृष्णके पूजनसों प्राप्त होय है ॥१०॥ समुद्र और वन करिके युक्त भूमिको जो दान करै है और सिंहके बृहस्पतिमें गोदावरीमें और व्यतीपातमें गण्डकी नदीके स्नानसों वह फल नहीं मिलै है ॥ ११ ॥ जो कृष्णके पूजनसों प्राप्त होय है वह फल और कामिका एकादशी

व्रत करनहारेको फल समानहैं ॥ १२ ॥ ब्याई भई गौ जो सामग्री समेत दान करै है। वह जो फलको प्राप्त होय है वाही फलको एकादशीके व्रतकोकरनहारो नर प्राप्त होय है ॥१३॥ जो उत्तमनर श्रावणमें श्रीधर देव भगवान्‌को पूजन करै है वा करिके देवतागंधर्व उरगऔर पन्नग ये सब पूजे गये ॥ १४ ॥ ताते सब यत्नसों कामिका एकादशीके दिन पापनसों डरे भये मनुष्य करिके यथाशक्ति हरिको पूजन करना योग्य है ॥१५॥

प्रसूयमानां यो धेनुं दद्यात् सोपस्करां नरः ॥ तत्फलं समवाप्नोति कामिकाव्रतकारकः ॥ १३ ॥ श्रावणे श्रीधरं देवं पूजयेद्यो नरोत्तमः ॥ तेनैव पूजिता देवा गन्धर्वोरगपन्नगाः ॥ १४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कामिकादिवसे हरिः ॥ पूजनीयो यथाशक्ति मनुष्यैः पापभीरुभिः ॥ १५ ॥ संसारार्णवमग्ना ये पापपङ्कसमाकुलाः ॥ तेषामुद्धरणार्थाय कामिकाव्रतमुत्तमम् ॥ १६ ॥ नातः परतरा काचित्पवित्रा पापहारिणी ॥ एवं नारद जानीहि स्वयमाह पुराः हरिः ॥ १७ ॥ अध्यात्मविद्यानिरतैर्यत्फलं प्राप्यते नरैः ॥ ततो बहुतरं विद्धि कामिकाव्रतसेवनात् ॥ १८ ॥ रात्रौ जागरणं कुर्यात्कामिकाव्रतकृन्नरः ॥ न पश्यति यमं रौद्रं नैव पश्यति दुर्गतिम् ॥ १९ ॥

जो संसाररूपी समुद्रमें डूबे भये और पापरूपी कीचसों व्याकुल मनुष्य हैं तिनके उद्धारके लिये कामिकाको व्रत उत्तम है ॥१६॥ याते परे पवित्र और कोई पापकी नाश करन हारी नहीं । हे नारद! ऐसो जानो यह भगवान्‌ने पहले आप कही है ॥१७॥ अध्यात्मविद्यामें लगे म ष्यनको जो फल मिलै है ताते बहुत अधिक कमिका एकादशीके व्रत करनहारेको जानो ॥१८॥ कामिकाको व्रत करनहारो जो मनुष्य रात्रिमें जागरण

करै है वह भयानक यमको और उसकी दुर्गतिको नहीं देखे है ॥१९॥ और कामिकाके व्रतके सेवनसों बुरी योनिको नहीं देखे है कामिकाहीके व्रत करिके योगी कैवल्यमुक्तिको प्राप्त भये हैं ॥२०॥ तुलसीते उत्पन्न पत्रन करिके जो मनुष्य हरिको पूजन करै है निश्चय करिके वह पापनसों ऐसे लिप्त नही होय है जैसे जल करिके कमलको पत्र लिप्त नहीं होय है ॥२१॥ एक भार सुवर्णताते चौगुनी चांदीको दान करिकेजे फलको प्राप्त

न पश्यति कुयोनिं च कामिकाव्रतसेवनात् ॥ कामिकाया व्रतेनैव कैवल्यं योगिनो गताः ॥ सर्वैः सर्वप्रयत्नेन कर्तव्या नियतात्मभिः ॥ २० ॥ तुलसीप्रभवैः पत्रैर्यो नरः पूजयेद्धरिम् ॥ न वै स लिप्यते पापैः पद्मपत्रमिवांभसा ॥ २१ ॥ सुवर्ण भारमेकं तु रजतं च चतुर्गुणम् ॥ दत्त्वा यत्फलमाप्नोति तत्फलं तुलसीदले ॥ २२ ॥ रत्नमौक्तिकवैडूर्यप्रवालादिभिरर्चितः ॥ न तुष्यति तथा विष्णुस्तुलसीपूजनाद्यथा ॥ २३ ॥ तुलसीमञ्जरीभिस्तु पूजितो येन केशवः ॥ आजन्मकृतपापस्य तेन सम्मार्जिता लिपिः ॥ २४ ॥ या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुः पावनी रोगाणामभिवन्दिता निरशनी सिक्ताऽन्तक त्रासिनी ॥ प्रत्यासन्न विधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥ २५ ॥

है ता फलको तुलसीदलमें प्राप्त होय है ॥२२॥ रत्न मोती वैडूर्य मणि और मूंगा आदिसों पूजन किये गये भगवान् ऐसे प्रसन्न नहीं होय हैं जैसे कि तुलसीदलके पूजनसों प्रसन्न होयहैं ॥२३॥ जा मनुष्यने तुलसीके मञ्जरीनसों केशव भगवान्‌को पूजन कियो वाने जन्मते करे भये पापनको लेख मेटि दियो ॥२४॥ जो दर्शनसों संपूर्ण पापनके समूहको शांतिकरि देती है और स्पर्श करनेसों शरीरको पवित्र करदेतीहै और नमस्कार करनेसे रोगनको

दूरिकरदेती है और सींचनेसों यमको त्रास दूरकर देती है और लगानेसों भगवान्‌की निकटताको करती है और उनके चरणनमें चढानेसोंजो मुक्तिको देती है वा तुलसीके अर्थ नमस्कार है॥ २५॥जोमनुष्य हरिके दिनमें रात्रिदिन दीपक करै है वाके पुण्यकी संख्याको चित्रगुप्त हू नहीं जानै है॥२६॥ एकादशीके दिन कृष्णके आगेजाको दीपदान जलैहै स्वर्गमेंस्थित ताके पितर अमृतसों तृप्त होय है॥ २७॥ घृतसों वा तिलके तेलसों दीपकप्रज्वलित करिके मनुष्य सैंकडों करोड़ों दीपको करिके युक्त हो सूर्यके लोकमें जाय है॥ २८॥मैंने तुम्हारे आगे इसकी महिमा कही यातें सब पापनकी हरनेवाली

दीपं ददाति यो मर्त्यो दिवारात्रौ हरेर्दिने तस्य पुण्यस्य संख्यानं चित्रगुप्तोऽपि वेत्ति न ॥ २६ ॥ कृष्णाग्रे दीपिको यस्तु ज्वलेदेकादशीदिने ॥ पितरस्तस्य तृप्यंति अमृतेन दिवि स्थिताः ॥२७॥घृतेन दीपं प्रज्वाल्य तिलतैलेन वा पुनः॥प्रयाति सूर्यलोकेऽसौ दीपकोटिशतैर्वृतः ॥२८॥ अयं तवाग्रे कथितः कामिकामहिमा मया॥ अतो नरैः प्रकर्तव्या सर्वपातकहारिणी ॥ २९ ॥ ब्रह्महत्याऽपहरणी भ्रूणहत्याविनाशिनी॥त्रिदिवस्थानदात्री च महापुण्यफलप्रदा ॥३०॥ श्रुतं माहात्म्यमेतस्या नरः श्रद्धासमन्वितः॥विष्णुलोकमवाप्नोति सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३१ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे श्रावणकृष्णैकादशीकामिकामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १७ ॥

यह एकादशी मनुष्यनको करनो योग्य है॥२९॥यह ब्रह्महत्याकी हरनेवाली और भ्रूणहत्याकी नाश करनेवाली है और महापुण्यफलकी देनेहारी यह स्वर्गमें स्थान देती है॥३०॥मनुष्य श्रद्धासमेत याकोमाहात्म्य सुनिके विष्णुलोकको प्राप्त होय है और सब पापनसों छूटि जाय है॥३१॥इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभा०टी०दीपिकासमाख्यायां श्रावणकृष्णैकादशीकामिकाकथा समाप्ता॥ १७

अथ श्रावणशुक्लैकादशी पुत्रदा कथा ॥ श्रावणस्यासिते पक्षे पुत्रदैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां दीपिकां संतनोम्यहम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले–कि, श्रावणके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होय है वाको कहा नाम है हे मधुसूदन ! सो प्रसन्नतासों मेरे आगे कहिये ॥१॥ श्रीकृष्ण बोले कि, हे राजन् ! पापनकी हरनेवाली या कथाको मैं कहौं हौं तुम सावधान होके सुनो जाके श्रवणमात्रहीसों वाजपेययज्ञको फल प्राप्त होय है ॥ २ ॥

अथ श्रावणशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ श्रावणस्य सिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ कथयस्व प्रसादेन ममाग्रे मधुसूदन ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणुष्वावहितो राजन् कथां पापहरां पराम् ॥ यस्याः श्रवणमात्रेण वाजपेयफलं लभेत् ॥२॥ द्वापरस्य युगस्यादौ पुरा माहिष्मतीपुरे ॥ राजा महीजिदाख्यातो राज्यं पालयति स्वयम् ॥ ३ ॥ पुत्रहीनस्य तस्यैव न तद्राज्यं सुखप्रदम् ॥ अपुत्रस्य सुखं नास्ति इह लोके परत्र च ॥४॥ यततोऽस्य सुतप्राप्तौ कालो बहुतरो गतः ॥ न प्राप्तश्च सुतो राज्ञा सर्वसौख्यप्रदो नृणाम् ॥ ५ ॥ दृष्ट्वाऽऽत्मानं प्रवयसं राजा चिन्तापरोऽभवत् ॥ सदोगतः प्रजामध्य इदं वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥

द्वापरयुगके आदिमें पहिले माहिष्मती पुरमें महीजित् नामसों प्रसिद्धराजा आप राज्यकरै हो॥३॥ पुत्रहीन उस राजाको वह राज्यसुखकारीनहीं हो काहेसों कि, पुत्ररहित मनुष्यकूं या लोकमें तथा परलोकमें सुख नहीं है ॥४॥ पुत्रकी प्राप्तिमें यत्न करते भये या राजाको बहुतरों काल बीति गये परन्तु मनुष्यनको सम्पूर्ण सुख देनहारो पुत्र वा राजाने नहीं पायो ॥५॥ और अपनी अधिक अवस्था देखिकै राजा चिन्तामें तत्पर होत

भयो और सभामें बैठि प्रजानके मध्यमें यह वचन बोलत भयो॥६॥कि,हे लोगो ! या जन्ममें तो मैंने पापनको न कियो है और न मैंने अन्यायसों उपार्जित धन भंडारमें डारो है ॥ ७ ॥ और न मैंने कबहूं ब्राह्मणको तथा देवतानको धन ग्रहण कियो है बहुतसे पापकी देनहारी काहूकी धरोहरिहू नहीं दबाई ॥८॥और पुत्रकी भांति प्रजानको पालन कियो है तथा धर्मसों पृथिवी जीतिहै और भाई वापुत्रके समानहू दुष्ट मनुष्यनको

इह जन्मनि भो लोका न मया पातकं कृतम् ॥ अन्यायोपार्जितं वित्तं क्षिप्तं कोशे मया न हि ॥ ७ ॥ ब्रह्मस्वं देवद्रविणं न गृहीतं मया क्वचित् ॥ न्यासापहारो न कृतः परस्य बहुपापदः ॥ ८ ॥ सुतवत्पालिता लोका धर्मेण विजिता मही ॥ दुष्टेषु पातितो दण्डो बन्धुपुत्रोपमेष्वपि ॥ शिष्टाः सुपूजिता लोका द्वेष्याश्चापि महाजनाः ॥ ९ ॥ इत्येवं व्रजतो मार्गे धर्मयुक्ते द्विजोत्तमाः ॥ कस्मान्मम गृहे पुत्रो न जातस्तद्विचार्यताम् ॥ १० ॥ इति वाक्यं द्विजाः श्रुत्वा सप्रजाः सपुरोहिताः ॥ मंत्रयित्वा नृपहितं जग्मुस्ते गहनं वनम् ॥ ११ ॥ इतस्ततश्च पश्यन्तश्चाश्रमानृषिसेवितान् ॥ नृपतेर्हितमिच्छन्तो ददृशु मुनिसत्तमम् ॥ १२ ॥

दण्ड दियो है और द्वेष करने योग्य हूं शिष्ट मनुष्यको मैंने सत्कार किया है ॥९॥ हे श्रेष्ठब्राह्मणो ! या प्रकार धर्मयुक्त मार्गमें चलतो जो मैं हौं ताके घरमें पुत्र काहेते नहीं भयो है सो विचार करिके ॥१०॥ प्रजा और पुरोहितन सहित सब ब्राह्मण राजाको यह वचन सुनिकै राजाके हितकी सलाह करिके वे ब्राह्मण घने वनको जात भये ॥ ११ ॥ राजाके हितकी इच्छासों जहां ऋषिन करि सेवित आश्रमनको देखते २ अतिश्रेष्ठ

मुनिको देखत भये ॥ १२ ॥ घोर तपको करिरहे हैं चिदानन्दरूप और निरामय हैं और जितात्मा हैं जितक्रोध हैं और सनातन हैं ॥ १३ ॥ धर्मतत्त्वके ज्ञाता और सब शास्त्रनमें प्रवीण और बडी है आयु जिनकी अनेक ब्रह्मके तुल्य ऐसे महात्मा लोमशऋषिको देखत भये ॥१४॥ कल्पके बीतनेपै जिनको एक रोम उखेड़ है याते उनको लोमश नाम है वे महामुनि त्रिकालके ज्ञाता हैं ॥ १५ ॥ उनको देखि सब प्रसन्न होके उनके

तप्यमानं तपो घोरं चिदानन्दं निरामयम् ॥ निराहारं जितात्मानं जितक्रोधं सनातनम् ॥ १३ ॥ लोमशं धर्मतत्त्वज्ञं सर्वशास्त्र विशारदम् ॥ दीर्घायुषं महात्मानमनेकब्रह्मसम्मितम् ॥ १४ ॥ कल्पे गते यस्य एकमेकं लोम विशीर्यते ॥ अतो लोमश नामानं त्रिकालज्ञं महामुनिम् ॥ १५ ॥ तं दृष्ट्वा हर्षिताः सर्वे ह्याजग्मुस्तस्य सन्निधिम् ॥ यथान्यायं यथार्हं ते नमश्चक्रुर्यथोदि तम् ॥ १६ ॥ विनयाऽवनताः सर्वे ऊचुश्चैव परस्परम् ॥ अस्मद्भाग्यवशादेव प्राप्तोऽयं मुनिसत्तमः ॥ १७ ॥ तांस्तथा प्रणतान्न दृष्ट्वा ह्युवाच मुनिसत्तमः ॥ लोमश उवाच ॥ किमर्थमिह संप्राप्ताः कथयध्वं सकारणम् ॥ १८ ॥ मद्दर्शनाह्लादगिरः स्तुवन्त इव मां किमु ॥ असंशयं करिष्यामि भवतां यद्धितं भवेत् ॥ १९ ॥

समीप जात भये यथान्याय और यथायोग्य वे सब उनको नमस्कार करत भये॥१६॥और विनयसों नम्र होके वे सब आपसमें बोलत भये कि,हमारे ही सबके भाग्यके वशसों ये मुनिसत्तम मिले हैं ॥ १७ ॥ उन सबको या प्रकार प्रणत देखिके वे मुनिश्रेष्ठ बोलत भये । लोमश बोले–कि,तुमसब यहां काहेको आये हो सो कारण समेत कहो ॥१८॥ मेरे दर्शनसों आनंदयुक्त वाणीनसे मेरी स्तुतिहीसी करिरहे हो याते जामें तुम्हारा हित होय

सो मैं अवश्य करौंगो॥ १९॥ हम सरीखे मनुष्यनको जन्म परोपकारहीके लिये है यामें संदेह नहीं है.जन बोले—कि, सुनिये हम अपने आवनेको कारण कहैंगे॥२०॥संदेहके दूर करनेके लिये हम आपके समीप आये हैं ब्रह्मातै परतर तुमते श्रेष्ठ और कोई नहीं है॥२१॥याहि कारणते कार्यके वशसों हम सब आपके समीप आये हैं कि, यह महीजित नाम राजा या समय पुत्र करिके रहित है ॥२२॥ हे ब्रह्मन्!हम वाकी प्रजा हैं वा करिके

परोपकृतये जन्म मादृशानां न संशयः ॥ जना ऊचुः ॥ श्रूयताममिधास्यामो वयमागमकारणम् ॥ २० ॥ संशयच्छेदनार्थाय तव सन्निधिमागताः ॥ पद्मयोनेः परतरस्त्वत्तः श्रेष्ठो न विद्यते ॥ २१ ॥ अतः कार्यवशात्प्राप्ताः समीपं भवतो वयम् ॥ महीजिन्नाम राजाऽसौ पुत्रहीनोऽस्ति सांप्रतम् ॥ २२ ॥ वयं तस्य प्रजा ब्रह्मन्पुत्रवत्तेन पालिताः ॥ तं पुत्ररहितं दृष्ट्वा तस्य दुःखेन दुःखिनः ॥ २३ ॥ तपः कर्तुमिहायाता मतिं कृत्वा तु नैष्ठिकीम् ॥ तस्य भाग्यवशाद्दृष्टस्त्वमस्माभिर्द्विजोत्तम ॥ २४ ॥ महतां दर्शनेनैव कार्यसिद्धिर्भवेन्नृणाम् ॥ उपदेशं वद मुने राज्ञः पुत्रो यथा भवेत् ॥ २५ ॥ इति तेषां वचः श्रुत्वा मुहूर्तं ध्यानमास्थितः ॥ प्रत्युवाच मुनिर्ज्ञात्वा तस्य जन्म पुरातनम् ॥ २६ ॥

पुत्रके समान पालन किये हैं वाही पुत्ररहित देखि वाके दुःखी हैं ॥ २३ ॥ नैष्ठिकी मति करिके यहां तप करनेको आये हैं हे द्विजोत्तम ! वा राजाके भाग्यसों आपके दर्शन हमको भये हैं ॥ २४ ॥बडोंके दर्शनहीसे मनुष्यकी कार्यसिद्धि होती है हे मुने ! ऐसो उपदेश कीजिये जाते वाके पुत्र होय ॥ २५ ॥ उनको यह वचन सुनिके मुनि क्षणभर ध्यानमें स्थित होते भये और वा राजाके पहलो जन्म जानिके बोलत भयो॥२६॥

लोमश बोले—कि यह राजा पूर्वजन्ममें धन करिके हीन क्रूर कर्म करनहारो वैश्य हो और एक ग्रामते दूसरे ग्राममें जाके व्यापारमें लगो रहतो हो ॥२७॥ एक समय ज्येष्ठ महीनेके शुक्लपक्षमें द्वादशीके दिन मध्याह्नमें सूर्यके प्राप्त होनेके समय ग्रामकी सीमामें जलाशय हो ॥ २८ ॥ जल समेत कूपिकाको देखि जलके पीवनकी इच्छा करत भयो वा समय हालकी ब्याई भई गौ बछरा समेत वहीं आवत भई ॥२९॥ प्यारसों घबराई

लोमश उवाच ॥ पूर्वजन्मनि वैश्योऽय धनहीनो नृशंसकृत् ॥ वाणिज्यकर्मनिरतो ग्रामद्ग्रामान्तरं भृशम् ॥ २७ ॥ ज्येष्ठमासे सिते पक्षे द्वादशीदिवसे तथा ॥ मध्याह्ने द्युमणौ प्राप्ते ग्रामसीम्नि जलाशयम् ॥ २८ ॥ कूपिकां सजलां दृष्ट्वा जलपाने मनो दधौ ॥ सद्यः सूता सवत्सा च धेनुस्तत्र समागता ॥ २९ ॥ तृषातुरा निदाघार्ता तस्यामम्बु पपौ तु सा ॥ पिबवन्तीं वारयित्वा तामसौ तोयं स्वयं पपौ ॥ ३० ॥ कर्मणस्तस्य पापेन स पुत्ररहितो नृपः ॥ पूर्वजन्मकृतात्पुण्यात्प्राप्तं राज्यमकंटकम् ॥ ३१ ॥ जनाः ऊचुः ॥ पुण्यात्पापं क्षयं याति पुराणे श्रूयते मुने ॥ पुण्योपदेशं कथय येन पापक्षयो भवेत् ॥ ३२ ॥ यथा भवत्प्रसादेन पुत्रोऽस्य भविता तथा ॥ लोमश उवाच ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु पुत्रदा नाम विश्रुता ॥ ३३ ॥

भई घामसों दुःखी वह गौ वामें जल पीवती भई तब वह वैश्य पीवती भई वा गौको हटायके जलको आप पीवत भयो ॥३०॥ वाकर्मके पापसों वह पुत्ररहित राजा भयो पूर्वजन्ममें करे भयो पुण्यसों वाने अकंटक राज्य पायो ॥३१॥ जन बोले—कि, हे मुने ! पुण्यसों पापको क्षय होय है यह पुराणनमें सुनो जाय है ताते आप पुण्यको उपदेश करिये जाते पापको क्षय होय ॥३२॥ जैसे आजके प्रसादसों याके पुत्र हो सो कहिये लोमश

बोले-कि. श्रावणके शुक्लपक्षमें पुत्रदा नामसों प्रसिद्ध ॥ ३३ ॥ एकादशी तिथि होय है हे जनो ! तुम सब यथाविधि न्यायसों जागरण समेत वाको व्रत करो ॥ ३४ ॥ और वाको विमल फल राजाको देउ ऐसे करनेसे निश्चय करिके राजाके पुत्र होयगो ॥ ३५ ॥ यह लोमशऋषिको वचन सुनिके आनंदसों प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके ऐसे वे सब अपने घरको जात भये ॥ ३६ ॥ और श्रावणको प्राप्त हो लोमश ऋषिके वचनको

एकादशी तिथिश्चास्ति कुरुध्वं तद्व्रतं जनाः ॥ यथाविधि यथान्यायं यथोक्तं जागरान्वितम् ॥ ३४ ॥ तस्याः पुण्यं सुविमलं ददतां नृपतेर्जनाः ॥ एवं कृते सुनियतं राज्ञः पुत्रो भविष्यति ॥ ३५ ॥ श्रुत्वैतल्लोमशवचस्तं प्रणम्य द्विजोत्तमम् ॥ प्रजग्मुः स्वगृहान्सर्वे हर्षोत्फुल्लविलोचनाः ॥३६ ॥ श्रवणं तु समासाद्य स्मृत्वा लोमशभाषितम्॥राज्ञा सह व्रतं चक्रुः सर्वे श्रद्धासमन्विताः ॥ ३७ ॥ द्वादशीदिवसे पुण्य ददुर्नृपतये जनाः ॥ दत्ते पुण्ये यथा राज्ञी गर्भमाधत शोभनम् ॥ ३८ ॥ प्राप्ते प्रसवकाले सा सुषुवे पुत्रमूर्जितम् ॥ एवमेषा नृपश्रेष्ठ पुत्रदा नाम विश्रुता ॥ ३९ ॥ कर्तव्या सुखमिच्छद्भिरिह लोके परत्र च ॥ ४० ॥

स्मरण करिके सब श्रद्धासमेत राजा सहित व्रतको करत भये॥३७॥ और वे जन द्वादशीके दिन वह पुण्य राजाको दे देत भये पुण्यके देनेपै वह रानी सुन्दर गर्भको धारण करत भई ॥ ३८ ॥ और प्रसवकालके आवनेपै तेजस्वी पुत्रको उत्पन्न करत भई हे राजनमें श्रेष्ठ ! या प्रकार वह पुत्रदा नामसों विख्यात भई ॥ ३९ ॥ या लोकमें और परलोककी सुखकी इच्छा करनहारे मनुष्यनको यह व्रत करनो उचित है ॥ ४० ॥

याको माहात्म्य सुनिके मनुष्य सब पापनते छूटि जाय है और या लोकमें पुत्रके सुखको प्राप्त हो परलोकमें स्वर्गकी गतिको प्राप्त होय हैं॥ ४१॥
इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां श्रावणशुक्लैकादशीपुत्रदाकथा सम्पूर्णा॥ १८॥ अथ भाद्रपदकृष्णैकादश्यजाकथा॥ "भाद्रस्य कृष्णपक्षे या अजाख्यैकादशी स्मृता॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां कुर्वे प्रदीपिकाम्॥ १॥"

श्रुत्वा माहात्म्यमेतस्याः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ इह पुत्रसुखं प्राप्य परत्र स्वर्गतिर्भवेत् ॥ ४१ ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे श्रावणशुक्लैकादशीपुत्रदामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १८ ॥ छ ॥ अथ भाद्रपदकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ भाद्रस्य कृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं कथयस्व जनार्दन ॥१॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणुष्वैकमना राजन्कथयिष्यामि विस्तरात् ॥ अजानाम्नीति विख्याता सर्वपापप्रणाशिनी ॥ २ ॥ पूजयित्वा हृषीकेशं व्रतं तस्याः करोति यः ॥ पापानि तस्य नश्यन्ति व्रतस्य श्रवणादपि ॥ ३ ॥ नातः परतरा राजँल्लोकद्वयहितावहा ॥ सत्यमुक्तं मया ह्येतन्नासत्यं भाषितं मम ॥ ४ ॥

युधिष्ठिर बोले-कि, भादोंके कृष्णपक्षकी एकादशीको कहा नाम हैं हे जनार्दन ! यह सुनिबेकी मेरी इच्छा है सो आप कहिये ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले-कि, हे राजन् ! एकाग्रमन होके सुनिये मैं विस्तारपूर्वक कहौंगो । अजा नामसों विख्यात वह सब पापनको नाश करै है ॥२॥ जो मनुष्य हृषीकेश भगवान्को पूजन करिके वाको व्रत करै है ताके पाप व्रतके श्रावणहीते नाशको प्राप्त होय है ॥३॥ हे राजन् ! दोनों लोकनमें हितकी

करनहारी याते परे और कोई नहीं है मैंने यह सत्य कही मेरो वचन झूठा नहीं है ॥४॥ पहले हरिश्चन्द्र नाम एक राजा होत भयो वह चक्रवर्ती हो और सत्यप्रतिज्ञावालो हो और सब भूमिको स्वामी हो ॥ ५ ॥ काहू कर्मके योगसों वह राज्यते भ्रष्ट हो जात भयो और स्त्री तथा पुत्रको बेंचिके आपनोहू विक्रय करत भयो ॥ ६ ॥ वह पुण्यात्मा राजा चांडालको दास हो जात भयो, हे राजेंद्र ! सत्यको ग्रहण करिके मृतकनके वस्त्र

हरिश्चन्द्र इति ख्यातो बभूव नृपतिः पुरः ॥ चक्रवर्ती सत्यसन्धः समस्ताया भुवः पतिः ॥५॥ कस्यापि कर्मणो योगाद्राज्यभ्रष्टो बभूव सः ॥ विक्रीय वनितां पुत्रान्स चकारात्मविक्रयम् ॥६॥ पुल्कसस्य च दासत्वं गतो राजा स पुण्यकृत् ॥ सत्यमालंब्य राजेन्द्र मृतचैलापहारकः ॥ ७ ॥ सोमवन्नृपतिश्रेष्ठो न सत्याच्चलितस्तथा ॥ एवं गतस्य नृपतेर्बहवो वत्सरा गताः ॥ ८ ॥ ततश्चितापरो राजा बभूवात्यन्तदुःखितः ॥ किं करोमि क्व गच्छामि निष्कृतिर्मे कथं भवेत् ॥ ९ ॥ इति चिन्तयतस्तस्य मग्नस्य वृजिनार्णवे ॥ आजगाम मुनिः कश्चिज्ज्ञात्वा राजानमातुरम् ॥ १० ॥ परोपकरणार्थाय निर्मितो ब्रह्मणा द्विजः ॥ स तं दृष्ट्वा द्विजवरं ननाम नृपसत्तमः ॥ ११ ॥

नको हरण करै हो ॥ ७ ॥ और वह श्रेष्ठ राजा अपने सत्यते चलायमान नहीं होत भयो, या विधिसों राजाको बहुतसे वर्ष व्यतीत होत भये॥८॥ ता पीछे चिंतामें परो वह राजा अत्यंत दुःखित होत भयो कहा करौं और कहाँ जाऊँ मेरो कैसे उद्धार होय ॥ ९ ॥ पापरूप समुद्रमें डूबो भयो वह राजा या प्रकार चिंतवन कर रहो हो ता समय राजाको आतुर जानि कोई मुनि आवत भयो ॥ १० ॥ पराये उपकार करनेके निमित्त ब्रह्मा

करिके ब्राह्मण बनायो है वह श्रेष्ठ राजा वा ब्राह्मणको देखिके नमस्कार करत भयो ॥ ११ ॥ वह राजा हाथ जोरिके गौतमके आगे ठाडो होत भयो और दुःखसंयुक्त अपने वृत्तांतको कहत भयो ॥१२॥ राजाके वचन सुनिकै गौतम विस्मय करिके युक्त होत भयो फिर मुनिने राजाके अर्थ या व्रतको उपदेश कियो ॥१३॥ हे राजन् ! भादोंके महीनेके कृष्णपक्षमें सुन्दर अतिपुण्यकी देनहारी अजा नाम एकादशी आई है ॥१४॥

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा गौतमस्याग्रतः स्थितः ॥ कथयामास वृत्तांतमात्मनो दुःखसंयुतम् ॥१२॥ श्रुत्वा नृपतिवाक्यानि गौतमो विस्मयान्वितः ॥ उपदेशं नृपतये व्रतस्यास्य मुनिर्ददौ ॥ १३ ॥ मासि भाद्रपदे राजन् कृष्णपक्षे तु शोभना ॥ एकादशी समायाता अजानाम्न्यतिपुण्यदा ॥ १४ ॥ तस्याः कुरु व्रतं राजन् पापनाशो भविष्यति ॥ तव भाग्यवशादेषा सप्तमेऽह्निसमागता ॥ १५ ॥ उपवासपरो भूत्वा रात्रौ जागरणं कुरु ॥ एवं तस्या व्रते चीर्णे सर्वपापक्षयो भवेत् ॥ १६ ॥ तव पुण्यप्रभावेण चागतोऽहं नृपोत्तम ॥ इत्येवं कथयित्वा तु मुनिरन्तरधीयत ॥ १७ ॥ मुनिवाक्यं नृपः श्रुत्वा चकार व्रतमुत्तमम् ॥ कृते तस्मिन् व्रते राज्ञः पापस्यान्तोऽभवत्क्षणात् ॥ १८ ॥

हे राजन् ! ताको तुम व्रत करो पापको नाश होय जायगो तुम्हारे भाग्यके वशसों सातवे दिन आई है ॥ १५ ॥ उपवासमें तत्पर होके रात्रिमें जागरण करो या प्रकार वाके करनेसों सम्पूर्ण पापनको क्षय हो जायगो ॥ १६ ॥ हे नृपोत्तम ! मैं तुम्हारे पुण्यके प्रभावसों आयो हौं या प्रकार कहिके मुनि अन्तर्धान हो जात भये ॥१७॥ मुनिको वाक्य सुनिके राजाने उत्तम व्रत कियो वा करनेपै राजाके पापको अंत क्षणमात्रहीमें हो

जात भयो ॥ १८ ॥ हे राजशार्दूल ! या व्रतको प्रभाव सुनिये जो दुःख बहुत वर्षकरिके भोगने योग्य है ताको क्षय हो गयो ॥ १९ ॥ या व्रतके प्रभावसो राजा दुःखके पार होगयो और स्त्रीके साथ योगको साथ पुत्रक जीवको प्राप्त होत भयो ॥ २० ॥ देवतानके नगारे बजे और आकाशते फूलनकी होत भई और एकादशीके प्रभावते वाने अकंटक राज्य पायो ॥ २१ ॥ राजा हरिश्चन्द्र पुरवासिन समेत और

श्रूयतां राजशार्दूल प्रभावोऽस्य व्रतस्य च ॥ यद्दुःखं बहुभिर्वर्षैर्भोक्तव्यं तत्क्षयो भवेत् ॥ १९ ॥ निस्तीर्णदुःखो राजासीद् व्रतस्या प्रभावतः ॥ पत्न्या सह समायोगं पुत्रजीवनमाप सः ॥१२॥ देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवर्षमभूद्दिवः ॥ एकादश्याः प्रभावेण प्राप्तं राज्यमकण्टकम् ॥ २१ ॥ स्वर्गं लेभे हरिश्चन्द्रः सपुरः सपरिच्छदः ॥ ईदृग्विधं व्रतं राजन्ये कुर्वंति द्विजोत्तमाः ॥ २२ ॥ सर्व पापविनिर्मुक्तास्त्रिदिवं यान्ति ते ध्रुवम् ॥ पठनाच्छ्रवणाद्राजन्नश्वमेधफलं लभेत् ॥ २३ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्त्तपुराणे भाद्रपदकृष्णे अजानामैकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ १९ ॥

अपने सब परिवारसमेत स्वर्गको प्राप्त होत भयो हे राजन् ! या प्रकारके व्रतको जे द्विजोत्तम करैं हैं ॥ २२ ॥ वे सब पापनसों मुक्त होके निश्चय स्वर्गको जाय हैं । हे राजन् ! पढने और सुननेसों वाजपेय यज्ञको फल मिला है ॥ २३ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डित केशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां भाद्रपदकृष्णैकादश्यजाकथा समाप्ता ॥ १९ ॥

अथ भाद्रपदशुक्लैकादशीजयन्तीकथा ॥ भाद्रस्य शुक्लपक्षे या जयन्त्येकादशी भवेत् ॥ तन्माहात्म्यमहं सम्यग्विवृणोमि स्वभाषया ॥१॥युधिष्ठिर बोले—कि भादों शुक्लपक्षकी एकादशीको कहा नाम है और वाकी विधि कैसी है और पुण्य कहा है सो मोसों कहो ॥१॥श्रीकृष्ण बोले—कि हे राजन् ! बडो है पुण्य जाको और स्वर्ग तथा मोक्षको देनहारी और सब पापनकी हरनहारी उत्कृष्ट जो वामन एकादशी ताहि कहौं हौं ॥ २ ॥

अथ भाद्रपदशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ नभस्यसितपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत ॥ को देवः को विधिस्तस्याः किं पुण्यं च वदस्व नः ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ कथयामि महापुण्यां स्वर्गमोक्षप्रदायिनीम् ॥ वामनैकादशी राजन्सर्वपापहरां पराम् ॥ २ ॥ इमामेव जयत्याख्यां प्राहुरेकादशीं नृप ॥तस्या श्रवणमात्रेण सर्वपापक्षयो भवेत् ॥ ३ ॥ वाजपेयफलं प्रोक्तं नातः परतरं नृणाम् ॥ पपिनां पापशमनं जयन्तीव्रतमुत्तमम् ॥ ४ ॥ नातः परतरा राजन्न वै मोक्षप्रदायिनी ॥ एतस्मात् कारणाद्राजन्न कर्तव्या गतिमिच्छता ॥ ५ ॥ वैष्णवैर्मम भक्तैस्तु मनुजैर्मत्परायणैः ॥ नभस्ये वामनो यैस्तु पूजितस्तैर्जगत्त्रयम् ॥ ६ ॥

हे नृप ! याहीको जयन्ती एकादशी कहैं हैं ताके श्रवणमात्रहीते सब पापनको क्षय हो जाय है ॥ ३ ॥ मनुष्यनको याके पुण्यते अधिक वाजपेय यज्ञको फल नहीं कह्यो है यह उत्तम जयन्तीको व्रत पापी मनुष्यनके पापनको शांत करनहारो है ॥४॥ और याते परे और कोई मोक्षकी देनेहारी नहीं है हे राजन् ! या कारणते गतिके चाहनहारे मनुष्यनको याको व्रत करनो योग्य है॥५॥मेरे भक्तसों मैं परायण निजको ऐसे वैष्णव मनुष्यन

करिके भादोंमें वामनको पूजनकियो गयो तिन करिके तीनों लोक पूज गये ॥ ६ ॥वा पूजा करिके वे मनुष्य हरिके निकट जाय हैं यामें सन्देह नहीं है कमलके समान नेत्र हैं जिनके ऐसे वामन जिन करिके कमलके फूलनसों पूजे गये ॥७॥ भादोंके शुक्लपक्षमें जाने जयन्ती एकादशीको व्रत कियो ताने सब जगत्को पूजन कियो और तीनों सनातन देवता अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेशको हू पूजो ॥८॥ हे राजन् ! या कारणते हरि

पूजितं नात्र संदेहस्ते यान्ति हरिसन्निधिम् ॥ वामनः पूजितो येन कमलैः कमलेक्षणः ॥ ७ ॥ नभस्यसितपक्षे तु जयंत्येका दशीदिनम् ॥ तेनार्चितं जगत्सर्वं त्रयो देवाः सनातनाः ॥ ८ ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्कर्तव्यो हरिवासरः ॥ अस्मिन् कृते न कर्तव्यं किंचिदस्ति जगत्त्रये ॥ ९ ॥ अस्यां प्रसुप्तो भगवानेत्यङ्गपरिवर्त्तनम् ॥ तस्मादेनां जनाः सर्वे वदंति परिवर्तिनीम् ॥ १० ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ संशयोऽस्ति महान्मह्यं श्रूयतां च जनार्दन ॥ कथं सुप्तोऽसि देवेश कथं यास्यङ्गवर्तनम् ॥ ११ ॥ किमर्थं देवदेवश बलिर्बद्धस्त्वयाऽसुरः ॥ सन्तुष्टा पृथिवी देवाः किमकुर्वञ्जनार्दन ॥ १२ ॥

वासर करना चाहिये याके करनेपै तीनों लोकनमें और कुछ नहीं कर्तव्य है ॥ ९ ॥ सोये भये भगवान् या एकादशीके दिन करवट लेवे हैं याते याको नाम सब लोग परिवर्तिनी कहैं हैं॥ १० ॥युधिष्ठिर बोले–कि,हे जनार्दन!मोको बडो संदेह है ताहि आप सुनिये हे देवेश!आप कैसे सोये हैं और कैसे अंगपरिवर्तन करते हो अर्थात् करवट लेते हो ॥ ११ ॥ हे देवदेवेश ! आपने बली नाम असुरको काहेके लिये बांधो ? हे जनार्दन ! संतुष्ट

होके ब्राह्मणने कहा कियो ॥१२॥ चतुर्मास्य व्रत करने हारे मनुष्यनके लिये कौनसी विधि है और कहा व्रत है हे प्रभो! हे जगन्नाथ। तुम्हारे सोनेपै मनुष्य कहा करैं हैं ॥१३॥ यह विस्तारसों कहो और मेरे संदेहको दूरि करो. कृष्ण बोले—कि, हे राजशार्दूल! पापनको नाश करनहारी उत्कृष्ट कथाको सुनो ॥१४॥ हे नृप! पहले त्रेतायुगमें बलि नाम दानव होतभयो, मोमें परायण और मेरो भक्त वह बलि नित्यही मेरो पूजन करत

को विधिः किं व्रतं चैव चातुर्मास्यमुपासताम् ॥ त्वयि सुप्ते जगन्नाथ किं कुर्वंति जनाः प्रभो ॥ १३ ॥ एतद्विस्तरतो ब्रूहि संशयं हर मे प्रभो ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ श्रूयतां राजशार्दूल कथां पापहरां पराम् ॥ १४ ॥ बलिर्वै दानवः पूर्वमासीत्त्रेतायुगे नृप ॥ अपूजयच्च मां नित्यं मद्भक्तो मत्परायणः ॥ १५ ॥ जपैस्तु विविधैः सूक्तैर्यजते मां स नित्यशः ॥ द्विजानां पूजको नित्यं यज्ञकर्मकृताशयः ॥ १६ ॥ परं त्विन्द्रकृतद्वेषी देवलोकमजीजयत् ॥ मद्दत्तमिन्द्रलोकं वै जितं तेन महात्मना ॥१७॥ विलोक्य च ततः सर्वे देवाः संहत्य मंत्रयन् ॥ सर्वैर्मिलित्वा गंतव्यं देवं विज्ञापितुं प्रभुम् ॥ १८ ॥ ततश्च देवऋषिभिः साकमिन्द्रो गतः प्रभुम् ॥ शिरसा ह्यवनिं गत्वा स्तुत इन्द्रेण सूक्तिभिः ॥१९॥

भयो ॥१५॥ नानाप्रकारके जप और सूक्तन करिके वह नित्य मेरो पूजन करै है और नित्य ब्राह्मणनको पूजन तथा यज्ञकर्म करै हो ॥ १६ ॥ परन्तु वह इंद्रसों द्वेष करिके देवलोकोंको जीतलेत भयो वा महात्मा करिके मेरा दियो भयो देवलोक जीतिगयो ॥१७॥ या बातको देखि सब देवता इकठे होके मंत्र करत भये कि सब मिलिके देव जे प्रभु हैं तिनसों विज्ञापन करनेको चलनो चाहिये ॥ १८ ॥ ता पीछे देवर्षिनके साथमें इंद्र प्रभुके

समीप जातो भयो और मस्तक भूमिमें लगाके इन्द्रकरि सूक्तनसा मैं स्तुति कियो गयो ॥१९॥ देवताओं समेत बृहस्पति करिके मैं बहुधा पूजन कियो गयो ता पीछे वामनरूप ह्वेके मैंने पांचवों अवतार लियो ॥२०॥ तब सब ब्रह्माण्डमें व्याप्त ऐसो उग्ररूप धारण करनहारो जो मैं बालक वह ता करिकै सत्यमें स्थित वह बलि जीतो गयो ॥२१॥ युधिष्ठिर बोले—कि; देवेश ! वामनरूप जो तुम हो तिन करिके यह असुर कैसे जीतो गयो

गुरुणा दैवतैः सार्द्धं बहुधा पूजितो ह्यहम् ॥ ततो वामनरूपेण ह्यवतीर्णश्च पञ्चमे ॥ २० ॥ अत्युग्ररूपेण तदा सर्वब्रह्मांडरूपिणा बालकेन जितः सो वै सत्यमालम्ब्य तस्थिवान् ॥ २१ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ त्वया वामनरूपेण सोऽसुरश्च जितः कथम् ॥ एतत्कथय देवेश मह्यं भक्ताय विस्तरात् ॥ २२ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ मया बालेन स बलिः प्रार्थितो बटुरूपिणा ॥ पदत्रयमितां भूमिं देहि मे भुवनत्रयम् ॥२३॥ दत्तं भवति ते राजन्नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्तश्च मया राजा दत्तवांस्त्रिपदां भुवम् ॥२४॥ संकल्पमात्राद्ववृधे देहस्त्रैविक्रमः परम् ॥ भूर्लोके तु कृतौ पादौ भुवर्लोके तु जानुनी ॥ २५ ॥

वह भक्त जो मैं हौं तोसों विस्तारपूर्वक कहो ॥२२॥ श्रीकृष्ण बोले—कि, ब्रह्मचारी रूप जो बालक मैं ता करिके बलि प्रार्थना किये गये कि, तीनि पैग प्रमाण भूमि देउ वह मोको त्रिभुवन है ॥२३॥ हे राजन् ! यह दनो है यामें विचार न करनो चाहिये मुझ करिके ऐसो कहो गयो वह राजा बलि तीनि पैग भूमि देत भयो॥२४॥ संकल्प मात्रहीसों वह त्रिविक्रमको देह बहुतही बढत भयो भूर्लोकमें तो पांय किये और भुर्लोवकमें

जंघा कियो ॥२५॥ और स्वर्गलोकमें कटिको स्थापित करिके तैसे ही महर्लोकमें पेटको राखि और जनलोकमें हृदय और तपोलोकमें कंठको ॥२६॥ और सत्यलोकमें मुखको स्थापित करि वाके ऊपर शिर स्थापित कियो तथा चंद्र सूर्य आदि ग्रह और योगन करि युक्त नक्षत्रगण ॥२७॥ और इंद्र समेत देवता तथा शेष और नाग वेदते उत्पन्न भये नाना प्रकारके सूक्तन करिके मेरी स्तुति करत भये ॥२८॥ तब मैंने बलिको हाथ पकरिके ऐसा

स्वर्लोके तु कटिं न्यस्य महर्लोके तथोदरम् जनलोके तु हृदय तपोलोके च कण्ठकम् ॥ २६ ॥ सत्यलोके मुखं स्थाप्य उत्तमांगं तथोर्ध्वतः ॥ चन्द्रसूर्यग्रहाश्चैव भगणो योगसंयुतः ॥ २७ ॥ सेन्द्राश्चव तथा देवानागाः शेषादयः परे ॥ स्तुवंतो वेद संभूतैः सूक्तैश्च विविधैस्तु माम् ॥२८॥ करे गृहीत्वा तु बलिमब्रुवं वचनं तदा ॥ एकेनपूरिता पृथ्वी द्वितीयेन त्रिविष्टपम् ॥२९॥ तृतीयस्य तु पादस्य स्थानं देहि ममानघ ॥ एवमुक्ते मया सोऽपि मस्तकं दत्तवान्बलिः ॥ ३० ॥ ततो वै मस्तके ह्येकं पदं दत्तं मया तदा ॥ क्षितो रसातले राजन्दानवो मम पूजकः ॥ ३१ ॥ विनयावनतं दृष्ट्वा प्रसन्नोऽस्मि जनार्दनः ॥ बले वसामि सततं सन्निधौ तव मानद ॥ ३२ ॥ इत्यवोचं महाभागं बलिं वैरोचनं तदा ॥ नभस्यशुक्लपक्षे तु परिवर्तिनि वासरे ॥ ३३ ॥

कह्यो कि, एक पगमें तो मैंने पृथ्वी पूर्ण करि और दूसरेपग करिके स्वर्ग पूरो कियो ॥२९॥ हे निष्पाप ! तीसरे पादको स्थान दीजिये मेरे ऐसे कहनेपै बलिने अपनो मस्तक दियो ॥ ३० ॥ वा पीछे मैंने वाके मस्तकपै तीसरे पाव दियो और मेरो पूजनहारो दानव पातालको पठाये गयो ॥३१॥ वा वलिको विनयसों नम्र देखि जनार्दन मैं प्रसन्न भयो हे बलि ! हे मानद ! निरंतर मैं तेरे समीप वास करौं हौं ॥३२॥ औ वा समय

मैं विरोचनके पुत्र बलिसों ऐसे कहत भयो कि, भादोंके शुक्लपक्षमें परिवर्तिनी एकादशीको व्रत कर ॥३३॥ वहां पातालमें एक मेरी मूर्ति बलिको आश्रय लेके स्थित है और दूसरी समुद्रोंमें उत्तम क्षीरसागरमें शेषनागकी पीठिपर ॥३४॥ जबताई कार्तिक आवे तब ताई हृषीकेश शयन करें हैं उनके शयनसमयमें जो पुण्य होय हैं सो सब पुण्यनमें उत्तम होय है ॥३५॥ हे राजन्! या कारणते महापुण्य पवित्र और पापकी हरनहारी यह

ममैका तत्र मूर्त्तिश्च बलिमाश्रित्य तिष्ठति ॥ द्वितीया शेषपृष्ठे वै क्षीराब्धौ सागरोत्तमे । ३४ ॥ सुप्यते च हृषीकेशो यावच्चा याति कार्त्तिकी ॥ तावद्भवति तत्पुण्यं सर्वपुण्योत्तमोत्तमम् ॥ ३५ ॥ एतस्मात्कारणाद्राजन्कर्तव्या च प्रयत्नतः ॥ एकादशी महापुण्या पवित्रा पापहारिणी ॥ ३६ ॥ अस्यां प्रसुप्तो भगवानेत्यंपरिवर्त्तनम् ॥ एतस्यां पूजयेद्देवं त्रैलोक्यस्य पितामहम् ॥ ३७ ॥ दधिदानं प्रकर्तव्यं रौप्यतंडुलसंयुतम् ॥ रात्रौ जागरणं कृत्वा मुक्तो भवति मानवः ॥ ३८ ॥ एवं यः कुरुते राजन्नेकादश्यां व्रतं शुभम् ॥ सर्वपापहरं चैव भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ ३९ ॥

एकादशी करनी चाहिये ॥३६॥ या एकादशीके दिन सोये भये भगवान् करवट लेय हैं यामें तीनों लोकम पितामह जे देव हैं तिनको पूजन करनो चाहिये ॥ ३७ ॥ दहीको दान करनो चाहिये और चावलोंके साथमें चांदीको दान करै और रात्रिमें जागरण कारिके मनुष्य मुक्त हो जाय है ॥३८॥ हे राजन्! या प्रकार जो शुभ एकादशीको व्रत करै हैं यह व्रत सब पापनको हरनहारो और भुक्ति मुक्तिको देनहारो है ॥ ३९ ॥

वह देवलोकमें प्राप्त होके चन्द्रमाके समान शोभित होय है और जो मनुष्य पापनकी हरनहारी या कथाको सुनै है वह मनुष्य एक हजार अश्वमेध यज्ञके फलको प्राप्त होय है ॥४०॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनय पंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां भाद्रपदशुक्लैकादशीपरिवर्तिनीकथा समाप्ता ॥ २० ॥

स देवलोकं संप्राप्य भ्राजते चन्द्रमा यथा ॥ शृणुयाच्चैव यो मर्त्यः कथां पापहरां पराम् ॥ अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥ ४० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे भाद्रपदशुक्लपरिवर्तिनीनामैकादशीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २० ॥ ॥ छ ॥ छ ॥ अथाश्विनकृष्णैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ कथयस्व प्रसादेन ममाग्रे मधुसूदन ॥ आश्विने कृष्णपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ आश्विनस्यासिते पक्षे इंदिरा नाम नामतः ॥ तस्या व्रतप्रभावेण महापापं प्रणश्यति ॥ २ ॥ अधोयोनिगतानां च पितॄणां गतिदायिनीम् ॥ शृणुष्वावहितो राजन् कथां पापहरां पराम् ॥ ३ ॥

अथाश्विनकृष्णपक्षे इंदिरैकादशीकथा ॥ आश्विनस्यासिते पक्षे इंदिरैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां विवतिं रचयाम्यह ॥१॥ युधिष्ठिर बोले–कि, हे मधुसूदन ! आश्विनके कृष्णपक्षम कौनसे नामकी एकादशी होय है सो आप मेरे आगे प्रसन्नतासों कहिये ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले–कि, आश्विनके कृणपक्षमें इंदिरा नाम एकादशी होय है वाके व्रतके प्रभावते महापातक नाश होय जायँ हैं ॥ २ ॥ नरकमें प्राप्त जे पितर

है तिनको मोक्ष देनहारी और पापनकी नाश करनहारी जो कथा है ताहि सावधान मन होके सुनिये ॥३॥ जाके श्रवणमात्रहीसों वाजपेययज्ञको फल प्राप्त होय है, पहिले सत्ययुगमें रिपुसूदन अर्थात् शत्रुनको दंड देनहारो राजा होत भयो ॥४॥ वह इंद्रसेन नामसों प्रसिद्ध माहिष्मती पुरीको राजा होत भयो यश करिके युक्त वह राजा धर्म करिके प्रजानको पालन करत भयो ॥ ५ ॥ पुत्र पौत्रन करिके युक्त और धनधान्य समायुक्त

यस्याः श्रवणमात्रेण वाजपेयफलं लभेत् ॥ पुरा कृतयुगे राजा बभूव रिपुसूदनः ॥ ४ ॥ इन्द्रसेन इति ख्यातः पुरीं माहिष्मतीं प्रति ॥ स राज्यं पालयामास धर्मेण यशसाऽन्वितः ॥ ५ ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनधान्यसमन्वितः ॥ माहिष्मत्यधिपो राजा विष्णुभक्तिपरायणः ॥६॥ जपन् गोविन्दनामानि मुक्तिदानि नराधिपः ॥ कालं नयति विधिवदध्यात्मस्य विचिन्तकः ॥ ७ ॥ एकस्मिन्दिवसे राज्ञि सुखासीने सदोगते ॥ अवतीर्यागमद्धीमानम्बरान्नारदो मुनिः ॥ ८ ॥ तमागतमभिप्रेक्ष्य प्रत्युत्थाय कृताञ्जलिः ॥ पूजयित्वार्घविधिना चासने संन्यवेशयत् ॥ ९ ॥

माहिष्मतीको स्वामी वह राजा विष्णुभक्तिमें परायण हो ॥६॥ मुक्तिके देनहारे गोविंदके नामको जप करतो वह राजा विधिवत् अध्यात्म विद्याको चिंतवन करतो जप तपमें कालको व्यतीत करतो भयो ॥७॥ एक दिन वह राजा सुखसों सभामें बैठो तब बुद्धिमान् नारद मुनि आकाशते उतरिके वाके समीप आवत भये ॥ ८ ॥ उनको आये भये देखि राजा सुखसों हाथ जोरि अर्घकी विधिसों पूजन करत भयो और

आसन पर बैठावत भयो ॥ ९ ॥ सुखसों बैठे भये नारदमुनि वा राजासों बोलत भये कि हे राजेन्द्र ! तुम्हारे राज्यके सातों अंगनमें कुशल ॥ १० ॥ तुम्हारी मति धर्ममें है और तुम विष्णुकी भक्तिमें रत हो यह देवर्षिके वचन सुनि राजा उनसों बोलत भयो ॥ ११ ॥राजा बोले—कि हे मुनिश्रेष्ठ ! आपके प्रसादसे मेरे सर्वत्र कुशल है आज सब यज्ञकी क्रिया आपके दर्शनते सफल भई ॥१२॥ हे विप्रेंद्र ! प्रसन्न होवो और अपने

सुखोपविष्टः स मुनिः प्रत्युवाच नृपोत्तमम् ॥ कुशलं तव राजेन्द्र सप्तस्वङ्गेषु वर्तते ॥ १० ॥ धर्मे मतिर्वर्तते ते विष्णुभक्तिरतिस्तथा ॥ इति वाक्यं तु देवर्षेः श्रुत्वा राजा तमब्रवीत् ॥ ११ ॥ राजोवाच ॥ त्वत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ सर्वत्र कुशलं मम ॥ अद्य क्रतुक्रियाः सर्वाः सफलास्तव दर्शनात् ॥ १२ ॥ प्रसादं कुरु विप्रर्षे ब्रूह्यागमनकारणम् ॥ इति राज्ञो वचः श्रुत्वा देवर्षिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥ नारद उवाच ॥ श्रूयतां राजशार्दूल मद्वचो विस्मयप्रदम् ॥ ब्रह्मलोकादहं प्राप्तो यमलोकं नृपोत्तम ॥ १४ ॥ शमनेनार्चितो भक्त्या उपविष्टो वरासने ॥ धर्मशीलः सत्यवांस्तु भास्क सम्मुपासते ॥ १५ ॥ बहुपुण्यप्रकर्ता च व्रतवैकल्पदोषतः ॥ सभायां श्राद्धदेवस्य मया दृष्टः पिता तव ॥ १६ ॥

आवनेको कारण कहो राजाको यह वचनसुनिकेदेवर्षि वचन बोलत भये ॥ १३ ॥ नारद बोले—कि हे राजशार्दूल ! विस्मयको देनहारो मेरो वचन सुनिये हे नृपोत्तम ! मैं यमलोकते ब्रह्मलोकमें आयो ॥ १४ ॥ यमराजकरि भक्तिसो पूजन कियो भयो मैं श्रेष्ठ आसनपै बैठि वहां धर्मशील और सत्यवान् यमको उपासना करैं हैं॥१५॥बहुतसे पुण्यको करनहारो तुम्हारो पिता व्रतके बिगारि जानेके दोषते यमकी सभामें मैंने देख्यो॥१६॥

वाने जो संदेशा कह्यो है हे जनेश्वर ! ताहि सुनिये कि, माहिष्मतीपुरीका स्वामी इंद्रसेन नाम राजा है ॥ १७ ॥ हे ब्रह्मन् ! पूर्व जन्ममें भयो जो कोई विघ्न है तासों यमराजके समीप स्थित मोको आगे कहो ॥ १८ ॥ कि, हे पुत्र ! इंदिरा नाम एकादशीको जो व्रत है ताके दानसों स्वर्गमें मोको पठावो हे राजन् ! तुम्हारे पिताकरि ऐसो कहो गयो मैं तुम्हारे समीप आयो हौं ॥१९॥ हे राजन् ! पिताकी स्वर्गगतिके

कथितस्तेन सन्देशस्तं निबोध जनेश्वर ॥ इन्द्रसेन इति ख्यातो राजा माहिष्मतीप्रभुः ॥ १७ ॥ तस्याग्रे कथय ब्रह्मन् स्थितं मां यमसन्निधौ ॥ केनापि चांतरायेण पूर्वजन्मोद्भवेन वै ॥ १८ ॥ स्वर्गं प्रेषय मां पुत्र इंदिराव्रतदानतः ॥ इत्युक्तोऽहं समायातः समीपं तव पार्थिव ॥ १९ ॥ पितुः स्वर्गतये राजन्निन्दिराव्रतमाचर ॥ तेन व्रतप्रभावेण स्वर्गं यास्यति ते पिता ॥ २० ॥ राजोवाच ॥ कथयस्व प्रसादेन भगवन्निन्दिराव्रतम् ॥ विधिना केन कर्तव्यं कस्मिन्पक्षे तिथौ तथा ॥ २१ ॥ नारद उवाच ॥ शृणु राजन् हितं वच्मि व्रतस्यास्य विधिं शुभम् ॥ आश्विनस्यासितेपक्षे दशमी दिवसे शुभे ॥ २२ ॥ प्रातः स्नानं प्रकुर्वीत श्रद्धायुक्तेन चेतसा ॥ ततो मध्याह्नसमये स्नानंकृत्वा बहिर्जले ॥ २३ ॥

लिये तुम इंदिराको व्रत करो वा व्रतके प्रभावसों तुम्हारे पिता स्वर्गको जायगो ॥ २० ॥ राजा बोले–कि हे भगवन् ! आप प्रसन्न होके मोसे इंदिराको व्रत कहिये कि वह व्रत कौनसी विधिसों करनो चाहिये और कौनसे दिन तथा कौनसे पक्षमें सो कहिये॥२१॥नारद बोले–कि हे राजन् ! सुनिये या व्रतकी शुभ विधिको मैं कहैं हों आश्विनके कृष्णपक्षमें सुन्दर दशमीके दिन ॥ २२ ॥ श्रद्धायुक्त चित्त होके प्रातःकाल

नान करै ता पीछे मध्याह्नमें स्नान करि जलके बाहर आवै ॥ २३ ॥ फिर श्रद्धायुक्त होके पितरोंकी प्रीतिके लिये श्राद्ध करे ता पीछे एकबार भोजन करिके भूमिमें सोवै ॥ २४ ॥ फिर निर्मल प्रभात होनेपै जब एकादशीको दिन प्राप्त हो तब दंतधावन करिके मुखको धोवै॥ २५॥ फिर भक्ति भावते व्रतके नियमनको ग्रहण करै कि,आज निराहार रहिके सब भोगनको वर्जित करौंगो॥ २६॥कल्हके दिनभोजन करौंगो,हे पुंडरीकाक्ष

पितॄणां प्रीतये श्राद्धं कुर्याच्छ्रद्धासमन्वितः ॥ एकभक्तं ततः कृत्वा रात्रौ भूमौ शयीत च ॥ २४ ॥ प्रभाते विमले जाते प्राप्ते चैकादशीदिने ॥ मुखप्रक्षालनं कुर्याद्दन्तधावनपूर्वकम् ॥२५॥ उपवासस्य नियमं गृह्णीयाद्भक्तिभावतः ॥ अद्य स्थित्वा निराहारः सर्वभोगविवर्जितः ॥ २६ ॥ श्वो भोक्ष्ये पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥ इत्येवं नियमं कृत्वा मध्याह्नसमये तथा ॥ २७ ॥ शालग्रामशिलाग्रे तु श्राद्धं कृत्वा यथाविधि ॥ भोजयित्वा द्विजाञ्छुद्धान्दक्षिणाभिः सुपूजितान् ॥ २८ ॥ पितृशेषं समाघ्राय गवे दद्याद्विचक्षणः ॥ पूजयित्वा हृषीकेशं धूपगन्धादिभिस्तथा॥२९॥रात्रौ जागरणं कुर्यात्केशवस्य समीपतः ॥ ततःप्रभातसमये सम्प्राप्ते द्वादशीदिने ॥३०॥ अर्चयित्वा हरिं भक्त्या भोजयित्वा द्विजानथ ॥ बन्धुदौहित्रपुत्राद्यैः स्वयं भुंजीत वाग्यतः ॥३१॥

हे अच्युत ! तुम मेरे रक्षक हो या प्रकार नियम करिके मध्याह्नके समय॥२७॥ शालग्राम शिलाके आगे विधिपूर्वक श्राद्ध करिके शुद्ध ब्राह्मणको भोजन कराय दक्षिणासों पूजै॥२८॥पितरनसों जो शेष रहै ताहि सूँघिकर विचक्षण पुरुष गौके अर्थ देवे और धूपगंध आदिसों हृषीकेश भगवान्‌को पूजन करि ॥ २९ ॥ रात्रिमें केशव भगवानके समीप जागरण करै ता पीछे प्रभात समय द्वादशीके दिन ॥ ३० ॥ भक्तिसों हरिको पुजन करि

और ब्राह्मणकोभोजन कराय दौहित्र बंधु और पुत्र आदिसमेत मौन होके आप भोजन करै॥३१॥हे राजन्!या विधिसों आलस्यरहित होकेव्रतको करो हे राजन्! तो तुम्हारे पितर विष्णुलोकको जायँगे॥३२॥हे राजन्!या प्रकार वा नृपतिसों कहिके नारद मुनि अन्तर्धान होजात भये और वह राजा कही भई विधिके अनुसार उत्तम व्रतको करत भयो ॥३३॥रनवास तथा पुत्रन और भृत्यन समेत राजाके व्रत करनेपर हे कुंतीपुत्र ! आकाशते फूलनकी वर्षा होत भइ॥३४॥और वा राजाको पिता गरुडपर चढिके विष्णुलोकमें जात भयो और इन्द्रसेन राजर्षिहू अकंटक राज्यकरिके

अनेन विधिना राजन्कुरु व्रतमतन्द्रितः ॥ विष्णुलोकं प्रयास्यंति पितरस्तव भूपते ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वा नृपतिं राजन्मुनिरन्तरधीयत ॥ यथोक्तविधिना राजा चकार व्रतमुत्तमम्॥३३॥अन्तःपुरेण सहितः पुत्रभृत्यसमन्वितः ॥ कृते व्रते तु कौन्तेय पुष्पवृष्टिरभूद्दिवः ॥ ३४ ॥ तत्पिता गरूडारूढो जगाम हरिमंदिरम् ॥ इन्द्रसेनोऽपि राजर्षिः कृत्वा राज्यमकण्टकम् ॥३५॥ राज्यं निवेश्य तनयं जगाम त्रिदिवं स्वयम् ॥ इंदिराव्रतमाहात्म्यं तवाग्रे कथितं मया ॥३६॥ पठनाच्छ्रवणाच्चास्य सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ भुक्त्वेह निखिलान् भोगान् विष्णुलोके वसेच्चिरम्॥३७॥इति श्रीब्रह्मवैवर्ते॰ आश्विनकृष्णैकादशीन्दिरामाहात्म्यं समाप्तम् ॥२१॥

॥३५॥पुत्रको राज्यमें स्थापित करि आप स्वर्गको जात भयो यह इन्दिरा व्रतको माहात्म्य मैंने तुम्हारे आगे कह्यो॥३६॥याके पढने और श्रवण करनेसों मनुष्य सब पापनते छूटि जाय है और विष्णुलोकमें वास करै ॥३७॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायामिंदिरैकादशीकथा समाप्ता ॥ २१ ॥

अथ आश्विनशुक्लैकादशीकथा ॥ आश्विनस्य सिते पक्षे यास्ति पाशांकुशाभिधा ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां वच्मि प्रदीपिकाम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले—कि, हे भगवन् ! हे मधुसूदन ! क्वारके शुक्लपक्षमें कौनसे नामकी एकादशी होय है सो आप मोसों प्रसन्न होके कहो ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले—कि, हे राजेन्द्र ! क्वारके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होय है ताको पापनको नाश करनहारो माहात्म्य मैं कहौं हौं सो तुम सुनो ॥२॥ पापांकुशा वाको नाम है वह सब पापनकी नाश करनहारी है वामें मनुष्य पद्मनाभ नाम भगवान्‌को पूजन करै ॥३॥ संपूर्ण वांछित फलनकी प्राप्तिके लिये

अथ आश्विनशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ कथयस्व प्रसादेन भगवन्मधुसूदन ॥ इषस्य शुक्लपक्षे तु किंनामैकादशी भवेत् ॥१॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ शृणु राजेन्द्र वक्ष्यामि माहात्म्यं पापनाशनम् ॥ शुक्लपक्षे चाश्वयुजे भवेदेकादशी तु या ॥ २ ॥ पापांकुशेति विख्याता सर्वपापहरा परा ॥ पद्मनाभाभिधानं तु पूजयेत्तत्र मानवः ॥ ३ ॥ सर्वाभीष्टफलप्राप्त्यै स्वर्गमोक्षप्रदं नृणाम् ॥ तपस्तप्त्वा नरस्तीव्रं चिरं मुनियतेंद्रियः ॥ ४ ॥ यत्फलं समवाप्नोति तं नत्वा गरुडध्वजम् ॥ कृत्वापि बहुशः पापं नरो मोहसमन्वितः ॥ ५ ॥ न याति नरकं घोरं नत्वा पापहरं हरिम् ॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च ॥ ६ ॥

मनुष्यनको स्वर्ग और मोक्षको देनहारो यह व्रत करै, मनुष्य बहुत कालपर्यंत जितेंद्रिय हो अतितीव्र तपको करिके ॥४॥ जा फलको प्राप्त होय है ताहि फलको गरुडध्वज भगवान्‌के नमस्कार करनेसों प्राप्त होय है. मनुष्य अज्ञानसों युक्त बहुतसे पापनकों करिकेहू ॥५॥ पापनके हरनहारे हरिको नमस्कार करिके घोर नरकमें नहीं जाय है पृथ्वीमें जे तीर्थ हैं और पवित्र स्थान हैं ॥ ६ ॥

उन सबको विष्णुके नामकीर्तनते प्राप्त होय है । शार्ङ्गधनुषके धारण करनहारे जनार्दन देवजे विष्णु हैं तिनकी शरणमें जे जायँ हैं ॥ ७ ॥ उन मनुष्यनको निश्चय करिके कबहू यमलोक नहीं होय है मनुष्य प्रसंगहूते एक एकादशीको व्रत करिके ॥ ८ ॥ अतिदारुण पाप करने हूँ पर यमकी यातनाको नहीं प्राप्त होय है जो मनुष्य वैष्णव होके शिवकी निन्दाको करै है॥९॥और जो वैष्णवलोककी निंदा करै है वह निश्चय नरकमें जाय है

तानि सर्वाण्यवाप्नोति विष्णोर्नामानुकीर्तनात् ॥ देवं शार्ङ्गधरं विष्णुं ये प्रपन्ना जनार्दनम् ॥ ७ ॥ नतेषांयमलोकश्च नृणां वै जायते क्वचित् ॥ उपोष्यैकादशीमेकां प्रसंगेनापि मानवाः ॥ ८ ॥ न यांति यातनां याम्यां पापं कृत्वातिदारुणम् ॥ वैष्णवः पुरुषो भूत्वा शिवनिन्दां करोति यः ॥९॥ यो निंदेद्वैष्णवं लोकं स याति नरकं ध्रुवम् ॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि च ॥१०॥ एकादश्युपवासस्य कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ एकादशीसमं पुण्यं किञ्चिल्लोके न विद्यते ॥ ११ ॥ नेदृशं पावनं किञ्चित्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ यादृशं पद्मनाभस्य दिनं पातकहानिदम् ॥ १२ ॥ यावन्नोपोष्यते जंतुः पद्मनाभदिनं शुभम् ॥ तावत्पापानि देहेऽस्मिंस्तिष्ठन्ति मनुजाधिप ॥ १३ ॥ नैकादशीसमं किञ्चित्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ व्याजेनापि कृता राजन्न दर्शयति भास्करिम् ॥१४॥

हजारों अश्वमेध और सैकड़ों राजसूय यज्ञनको फल॥१०॥एकादशीके व्रतको जो फल है ताकी सोलहवीं कलाको भी नहीं प्राप्त होय है। एकादशीके समान पुण्य लोकमें कोई नहीं है ॥ ११॥ ऐसो पवित्र तीनों लोकमें कुछ नहीं है जैसा यह पद्मनाभ दिन पापनको नाश करनहारो है ॥१२॥ जबताईं मनुष्य या शुभ पद्मनाभके दिनको व्रत नहीं करै हे मनुजाधिप ! तबही ताईं मनुष्यके या देहमें पाप वास करै हैं ॥ १३ ॥ एकादशीके समान

तीनों लोकनमें कुछ नहीं है हे राजन् ! काहू बहानेहूसों जो याको व्रत कियो जाय तो यमके दर्शन नहीं होयँ ॥ १४ ॥ यह स्वर्ग और मोक्षकी देनहारी है और शरीरको आरोग्य करनहारी है यह सुन्दर स्त्रीकी देनहारी है और धन धान्यकी बढावनहारी है ॥ १५ ॥ हे राजन् ! न गंगा न गया न काशी न पुष्कर और न कुरुक्षेत्र हरिके दिनते पवित्र हैं अर्थात् वह हरिवासर सबसे श्रेष्ठ है ॥ १६ ॥ हरिवासरको व्रत करि रात्रिमें जागरण करिके हे राजन् ! विना परिश्रमके विष्णुपद प्राप्त होय है ॥ १७ ॥ या एकादशीको व्रत करनहारो मनुष्य दश पीढी

स्वर्गमोक्षप्रदा ह्येषा शरीरारोग्यदायिनी॥सुकलत्रप्रदा ह्येषा धनधान्यप्रदायिनी॥१५॥न गंगा न गया राजन्न काशी न च पुष्करम्॥ न चापि कौरवं क्षेत्रं पुण्यं भूपहरेर्दिनात्॥१६॥रात्रौजागरणं कृत्वा समुपोष्य हरेर्दिनम्॥अनायासेन भूपाल प्राप्यते वैष्णवंपदम् १७ दश वै मातृपक्षे च दश राजेन्द्र पैतृके ॥ प्रियाया दश पक्षे तु पुरुषानुद्धरेन्नरः ॥१८॥ चतुर्भुजा दिव्यरूपा नागारिकृतकेतनाः॥ स्रग्विणः पीतवस्त्राश्च प्रयान्ति हरिमंदिरम् ॥ १९ ॥ बालत्वे यौवनत्वे च वृद्धत्वेऽपि नृपोत्तम ॥ उपोष्य द्वादशीं नूनं नैति पापोऽपि दुर्गतिम् ॥ २० ॥ पापांकुशामुपोष्यैव आश्विने चासितेतरे ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो हरिलोकं स गच्छति ॥ २१ ॥

माताके पक्षकी और दशही पिताके पक्षकी और दश स्त्रीके पक्षकी तारि देय है ॥ १८ ॥ वे सब चतुर्भुज दिव्यरूप और गरुड जिनकी ध्वजामें है मालाको धारण किये भये और पीताम्बरको धारण किये हरिके लोकको जायँ हैं ॥ १९ ॥ बालकपनमें जवानीमें यों बुढापे हे राजन् ! एकादशीको व्रत करिके पापीहू दुर्गतिको नहीं प्राप्त होय है ॥ २० ॥ क्वारके शुक्लपक्षमें पापांकुशाको व्रत करिके पापनते मुक्त हो वह मनुष्य

हरिके लोकको जाय है ॥२१॥ सुवर्ण, तिल, भूमि, गौ, अन्न, जल, जूता और छत्र आदिको दान करिके मनुष्य यमको नहीं देखै है ॥ २२ ॥ जाको दिन पुण्यहीन व्यतीत होय वह लोहारकी धौंकनिके समान श्वासको लेता है परंतु जीवता नहीं है हे नरोत्तम ! चाहे दरिद्री ही होय परन्तु शक्तिके अनुसार स्नान दान आदि क्रियानको करतो भयो दिननको सफल बितावै ॥ २३ ॥ तालाव, बाग, महल, यज्ञ तथा और पुण्यनका करनहारो धीर मनुष्य वा यमकी यातनाको नहीं देखै ॥ २४ ॥ पुण्य करनहारे मनुष्य लोकमें बडी आयुके धनाढ्य कुलीन और रोगरहित

दत्त्वा हेमतिलान्भूमिं गामन्नमुदकं तथा ॥ उपानद्वस्त्रच्छत्रादि न पश्यति यमं नरः ॥ २२ ॥ अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद्दरिद्रोऽपि नृपोत्तम ॥ समाचरन्यथाशक्ति स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥ २३ ॥ तडागारामसौधानां सत्राणां पुण्यकर्मणाम् ॥ कर्तारो नैव पश्यन्ति धीरास्तां यमयातनाम् ॥ २४ ॥ दीर्घायुषो धनाढ्याश्च कुलीना रोगवर्जिताः ॥ दृश्यन्ते मानवा लोके पुण्यकर्तार ईदृशाः ॥ २५ ॥ किमत्र बहुनोक्तेन यान्त्यधर्मेण दुर्गतिम् ॥ आरोहंति दिवं धर्मैर्नात्र कार्या विचारणा ॥ २६ ॥ इति ते कथितं राजन्यत् पृष्टोऽहं त्वयानघ ॥ २७ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे आश्विनशुक्लैकादशीपाशांकुशामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २२ ॥

दिखाई देय हैं ॥ २५ ॥ यहां बहुत कहनेसों कहा है अधर्मते दुर्गतिको प्राप्त होय हैं और धर्मते स्वर्गको जायँ हैं और यामें कुछ विचार नहीं है ॥ २६ ॥ हे अनघ ! हे राजन् ! जो तुमने पूछो सो मैंने तुमसों कह्यो॥२७॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायामाश्विनशुक्लपाशांकुशानाम्न्येकादशीकथा समाप्ता ॥ २२ ॥

अथ कार्तिककृष्णैकादशीरमाकथा ॥ उर्ज्जस्य कृष्णपक्षे तु रमाख्यैकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां रम्यां करोम्यहम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर बोले—कि, हे जनार्दन ! कार्तिकके कृष्णपक्षमें जो एकादशी होय है ताको कहा नाम है सो आप मेरेपर स्नेहसों प्रसन्न होके कहो ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले—कि, हे राजशार्दूल ! सुनिये मैं तुम्हारे आगे कहों हों कि, कार्तिकके कृष्णपक्षमें रमानाम सुन्दर शोभायमान एकादशी होय

अथ कार्तिककृष्णैकादशी कथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ कथयस्व प्रसादेन मम स्नेहाज्जनार्दन ॥ कार्तिकस्यासिते पक्षे किंनामैकादशी भवेत् ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ श्रूयतां राजशार्दूल कथयामि तवाग्रतः ॥ कार्तिके कृष्णपक्षे तु रमानाम्नी सुशोभना ॥ २ ॥ एकादशी समाख्याता महापापहरा परा ॥ अस्याः प्रसंगतो राजन्माहात्म्यं प्रवदामि ते ॥ ३ ॥ मुचुकुन्द इति ख्यातो बभूव नृपतिः पुरा ॥ देवेन्द्रेण समं यस्य मित्रत्वमभवन्नृप ॥४॥ यमेन वरुणेनैव कुबेरेण समं तथा॥ विभीषणेन चैतस्य सखित्वमभवत्सह ॥५॥ विष्णुभक्तः सत्यसन्धो बभूव नृपतिः सदा ॥ तस्यैवं शासतो राजन् राज्यं निहतकण्टकम् ॥ ६ ॥

है ॥ २ ॥ यह एकादशी महापातकको हरनेवाली उत्कृष्ट कही गई है । हे राजन् ! प्रसंगसों अब याके माहात्म्य तुमसों कहौं हौं ॥३॥ पहले मुचुकुन्द या नामसा प्रसिद्ध राजा होत भयो । हे नृप ! इन्द्रके साथ जाकी मित्रता रही ॥ ४ ॥ तैसेही यह वरुण और कुबेरहूके साथ और विभीषणहूके साथ वाकी मित्रता रही ॥ ५ ॥ वह राजा सदा विष्णुभक्त और सत्यप्रतिज्ञावालो हो । हे राजन् ! या प्रकार निष्कंटक राज्य

करतो जो वह राजा है ॥ ६ ॥ ताके घर नदीनमें श्रेष्ठ चन्द्रभागा नाम पुत्री उत्पन्न होतभई वह शोभन नाम चन्द्रसेनके पुत्रको दी गयी ॥७॥ हे नृप ! वह शोभन कबहूं श्वशुरके घर आयो वा समय सुन्दर पुण्यको देनहारो एकादशीको व्रत आयो ॥ ८ ॥ व्रत दिनके आनेपै चन्द्रभागा चिन्तवन करत भई कि हे देवेश ! कहा होयगो मेरो पतिहू दुर्बल है ॥९॥ वह क्षुधाको नहीं सहै और मेरे पिताको शासन उग्र है दशमीको दिन

बभूव दुहिता गेहे चन्द्रभागा सरिद्वरा ॥ शोभनाय च सा दत्ता चन्द्रसेनसुताय वै ॥ ७ ॥ स कदाचित्समायातः श्वशुरस्य गृहे नृप ॥ एकादशीव्रतमिदं समायातं सुपुण्यदम् ॥ ८ ॥ समागते व्रतदिने चन्द्रभागा त्वचिंतयत् ॥ किं भविष्यति देवेश मम भर्ताति दुर्बलः ॥ ९ ॥ क्षुधां न सहते सोऽपि पिता चैवोग्रशासनः ॥ पटहस्ताडयते यस्य संप्राप्ते दशमीदिने ॥ १० ॥ न भोक्तव्यं न भोक्तव्यं न भोक्तव्यं हरेर्दिने ॥ श्रुत्वा पटहनिर्घोषं शोभनस्त्वब्रवीत्प्रियाम् ॥ ११ ॥ किं कर्तव्यं मया कान्ते देहि शिक्षां सुशोभने ॥ कृतेन येन मे सम्यग्जीवितं न विनश्यति ॥१२॥ चन्द्रभागोवाच ॥ मत्पितुर्वेश्मनि विभो भोक्तव्यं नैव केनचित् ॥ गजैरश्वैस्तथा चान्यैरन्यैः पशुभिरेव च ॥ १३ ॥

जब आवै है तब वाको ढोल बजे है ॥१०॥ कि, हरिके दिन भोजन न करनो चाहिये, न करनो चाहिये, न करनो चाहिये या प्रकारको वा ढोलको शब्द सुनि शोभन अपनी प्रियासों बोलत भयो ॥११॥ कि, हे कान्ते ! मोको अब कहा कर्त्तव्य है हे सुशोभने ! तू मोको शिक्षा दे जाके करनेसों मेरे जीवितको नाश न होय ॥१२॥ चन्द्रभागा बोली—कि, हे प्रभो ! मेरे पिताके घरमें आज कोई नहीं भोजन करैगो. हाथी, घोडे और ऊंट तथा अन्य

पशु भी नहीं भोजन करैंगे॥१३॥घासको अन्नको तैसेही जलको हरिके दिनमें कोई नहीं खायगो हे पति ! मनुष्य तो हरिवासरके दिन कैसे खायँगे ॥१४॥हे पति ! जो तुम भोजन करोगे तो घरते जाइये, मनमें ऐसे विचारिके अपने मनको दृढ कीजिये॥१५॥ शोभन बोले—तैने सत्य कही मैं व्रत करौंगो दैवने जो जैसे रची है वैसीही होयगी ॥१६॥ ऐसे भाग्यमें मति करके वह उत्तम व्रतको करत भयो भूख प्याससों पीडित है शरीर जाको

तृणमन्नं तथा वारि न भोक्तव्यं हरेर्दिने ॥ मानवैश्च कुतः कान्त भुज्यते हरिवासरे ॥ १४ ॥ यदि त्वं भोक्ष्यसे कान्त ततो गेहात्प्रयास्यताम् ॥ एवं विचार्य मनसा सुदृढं मानसं कुरु ॥ १५ ॥ शोभन उवाच ॥ सत्यमेतत्त्वयैवोक्तं करिष्येऽहमुपोषणम्॥ दैवेन विहितं यद्व तत्तथैव भविष्यति ॥ १६ ॥ इति दिष्टे मतिं कृत्वा चकार व्रतमुत्तमम् ॥ क्षुत्तृषापीडिततनुः स बभूवाति दुःखितः ॥ १७ ॥ इति चिन्तयतस्तस्य ह्यादित्योऽस्तमयाद्गिरिम् ॥ वैष्णवानां नराणां सा निशा हर्षविवर्द्धिनी ॥ १८ ॥ हरि पूजारतानां च जागरासक्तचेतसाम् ॥ बभूव नृपशार्दूल शोभनस्यातिदुःसहा ॥ १९ ॥ रवेरुदयवेलायां शोभनः पञ्चतां गतः ॥ दाहयामास राजा तं राजयोग्यैश्च दारुभिः ॥ २० ॥

ऐसो वह शोभन अतिदुःखित होत भयो ॥१७॥ वाको ऐसे चिंतवन करते२ सूर्य अस्ताचलको प्राप्त होत भये वैष्णव मनुष्यनको वह रति हर्षकी बढावनहारी भई ॥१८॥ तैसेही हरिकी पूजामें लगे भये जे वैष्णव हैं तिनकेहू हर्षकी बढावनहारी भई हे नृपशार्दूल ! वह शोभनको अतिदुस्सह होत भई ॥ १९ ॥ सूर्यके उदयसमयमें शोभन मृत्युको प्राप्त भये तब राजाने उनको राजाके योग्य चन्दन आदि काष्ठन करके दाह

करायो ॥२०॥ और पिताकारि मना की गई चन्द्रभागा अपने देहको नहीं जरावत भई फिरि वाको प्रेतकृत्य करिके पिताहीके घरमें स्थित होती भई ॥२१॥ हे नृपश्रेष्ठ ! रमाको जो व्रत कियो ताके प्रभावते शोभित मंदराचलके शिखरपर मनोहर देवपुर पायो ॥२२॥ वह देवपुर कैसो है कि, सबते उत्तम है और जाको कोई दबाय नहीं सकै है और असंख्य गुणन करिके युक्त है रत्न और वैडूर्य मणिनसों जडे भये हैं

चन्द्रभागा नात्मदेहं ददाह पितृवारिता ॥ कृत्वौर्ध्वदेहिकं तस्य तस्थौ जनकवेश्मनि ॥ २१ ॥ शोभनेन नृपश्रेष्ठ रमाव्रत प्रभावतः ॥ प्राप्तं देवपुरं रम्यं मन्दराचलसानुनि ॥ २२ ॥ अनुत्तममनाधृष्यमसंख्येयगुणान्वितम् ॥ हेमस्तंभमयैः सौधै रत्नवैडूर्यमण्डितैः ॥ २३ ॥ स्फाटिकैर्विविधाकारैर्विचित्रैरुपशोभितम् ॥ सिंहासनसमारूढः सुश्वेतच्छत्रचामरः ॥ २४ ॥ किरीट कुण्डलयुतो हारकेयूरभूषितः ॥ स्तूयमानश्च गन्धर्वैरप्सरोगणसेवितः ॥ २५ ॥ शोभनः शोभते तत्र देवराडपरो यथा ॥ सोमशर्मेति विख्यातो मुचुकुन्दपुरे वसन् ॥ तीर्थयात्राप्रसंगेन भ्रमन्विप्रो ददर्श तम् ॥ २६ ॥

सुवर्णके खंभ जिनमें ऐसे महलनसों शोभित हैं ॥२३॥ नाना प्रकारके हैं आकर जिनके ऐसे विचित्र स्फटिकमणिन करिके शोभित है ऐसे मंदिरमें शोभन सिंहासनपर बैठे हैं उनके ऊपर श्वेत छत्र लगो है और चमर ढुर रहे हैं ॥२४॥ किरीट माथेपर है कुण्डल धारण किये हैं हार और केयूर जे बाजू हैं तिन करिके गन्धर्व स्तुति कर रहे हैं और अप्सरानके गण सेवन करि रहे हैं ॥ २५ ॥ वहां शोभन ऐसो शोभित है मानो

कि, दूसरो इन्द्र है सोमशर्मा नामसों विख्यात मुचुकुन्दके पुरको वसनहारा एक ब्राह्मण तीर्थयात्राके प्रसंगसों भ्रमतो भयो शोभनको देखत भयो ॥२६॥ वह राजाको जमाई जानि उनके समीप जात भयो तब शोभन शीघ्रही आसनते उठिके वा उत्तम द्विजको नमस्कार करत भयो ॥२७॥ और ससुरा जो राजा हो ताकी कुशल पूछत भयो और स्त्री जो चन्द्रभागा हैं ताकी तथा नगरकी कुशल पूछत भयो॥ २८ ॥सोमशर्मा बोले—कि,

नृपजामातरं ज्ञात्वा तत्समीपं जगाम सः ॥ आसनादुत्थितः शीघ्रं नमश्चक्रे द्विजोत्तमम् ॥ २७ ॥ चकार कुशलप्रश्नं श्वशुरस्य नृपस्य च ॥ कांतायाश्चन्द्रभागायास्तथैव नगरस्य च ॥२८॥ सोमशर्मोवाच ॥ कुशलं वर्तते राजञ्छ्वशुरस्य गृहे तव ॥ चन्द्रभागा कुशलिनी सर्वतः कुशलं पुरे ॥ २९ ॥ स्ववृत्तं कथ्यतां राजन्नाश्चर्यं परमं मम ॥ पुरं विचित्रं रुचिरं न दृष्टं केनचित्क्कचित् ॥ ३० ॥ एतदाचक्ष्व नृपते कुतः प्राप्तमिदं त्वया ॥ शोभन उवाच ॥ कार्त्तिकस्यासिते पक्षे नाम्ना चैकादशीरमा ॥ ३१ ॥ तामुपोष्य मया प्राप्तं द्विजेन्द्र पुरमध्रुवम् ॥ ध्रुवं भवति येनैव तत्कुरुष्व द्विजोत्तम् ॥ ३२ ॥

हे राजन्! तुम्हारे ससुरेके घरमें कुशल है और चन्द्रभागाहू कुशलिनी है और सब पुरमें कुशल है ॥२९॥ हे राजन् ! अपनो वृत्तांत कहिये मोको बडो आश्चर्य है सो विचित्र सुन्दर पुर है कि, जैसो कबहू काहूने कहूं न देखो होय ॥ ३० । हे राजन् ! यह कहिये कि, तुमने याहि कैसो पायो शोभन बोले—कि, कार्त्तिकके कृष्णपक्षमें रमा नाम एकादशी होय है॥३१॥ हे द्विजेंद्र ! वाको व्रत करिके मैंने यह अध्रुवपुर पायो है हे द्विजेंद्र !

जाते यह ध्रुव हो जाय सो उपाय करिये ॥ ३२ ॥ द्विजेंद्र बोले-कि,यह कैसे अध्रुव है और कैसे ध्रुव होय हे राजेन्द्र! सो आप कहिये वाको मैं वैसोही करौं यामें अन्यथा नहीं है॥३३॥ शोभन बोले-हे द्विजोत्तम ! ! मैंने या उत्तम व्रतको श्रद्धाहीन कियो है ताते मैं याको अध्रुव मानौं हौं और जाते ध्रुव होय सो सुनिये ॥३४॥ सुन्दर शोभायमान चन्द्रभागा नाम मुचुकुंदकी पुत्री है तासों तुम यह वृत्तांत कहो तो यह ध्रुव हो जायगो

द्विजेन्द्र उवाच ॥ कथमध्रुवमेतद्धि हि भवति ध्रुवम् ॥ तत्त्वं कथय राजेन्द्र तत्करिष्यामि नान्यथा ॥३३ ॥ शोभन उवाच ॥ मयैतद्विहितं विप्र श्रद्धाहीनं व्रतोत्तमम् ॥ तेनाहमध्रुवम् मन्ये ध्रुवं भवति तच्छृणु ॥ ३४ ॥ मुचुकुन्दस्य दुहिता चन्द्रभागा सुशोभना ॥ तस्यै कथय वृत्तान्तं ध्रुवमेतद्भविष्यति ॥ ३५ ॥ तच्छ्रुत्वाथ द्विजवरस्तस्यै सर्वं न्यवेदयत् ॥ श्रुत्वाऽथ सा द्विजवचो विस्मयोत्फुल्ललोचना ॥ ३६ ॥ प्रत्यक्ष मथवा स्वप्नस्त्वयैतत्कथ्यते द्विज ॥ सोमशर्मोवाच ॥ प्रत्यक्षं पुत्रि ते कांतो मया दृष्टो महावने ॥३७ ॥ देवतुल्यमनाधृष्यं दृष्टं तस्य पुरं मया ॥ अध्रुवं तेन तत्प्रोक्तं ध्रुवं भवति तत्कुरु ॥ ३८ ॥

॥ ३५ ॥ सो सुनिके वह ब्राह्मण वा चन्द्रभागासों सब वृत्तांत कहिदेत भयो या पीछे वह ब्राह्मणको वचन सुनिके विस्मयसों उत्फुल्ल हैं नेत्र जाके ऐसी होत भई॥३६॥ हे द्विज ! यह प्रत्यक्ष कहते हो अथवा स्वप्न कहते हो ? सोमशर्मा बोले-कि हे पुत्रि ! मैंने तुम्हारो पति महावनमें प्रत्यक्ष देख्यो है॥३७॥देवपुरके तुल्य जाहि कोऊ दवाय न सकै ऐसो मैंने उनको पुर देख्यो हैं बाने कही अध्रुव कहो जाते वह ध्रुव होय सो करो ॥३८॥

चन्द्रभागा बोली—कि,हे विप्रर्षे! मोको तुम वहां ले चलो पतिके दर्शनकी मेरी बडी लालसा है मैं अपने व्रतके पुण्यसों वा पुरको ध्रुव करि देऊँगी ॥३९॥ हे द्विज! जैसे हम दोनोंको संयोग होय सो करो यह निश्चय है कि, वियोगीको योग कराके बडो पुण्य प्राप्त होय है ॥४०॥ यह सुनिके सोमशर्मा वाहि साथ लेके वहां जात भयो जहां मन्दराचल नाम पर्वतके समीप वामदेव ऋषिको आश्रम हो ॥ ४१ ॥ वामदेव उन दोनोंको

चन्द्रभागोवाच ॥ तत्र मां नय विप्रर्षे पतिदर्शनलालसाम् ॥ आत्मनो व्रतपुण्येन करिष्यामि पुरं ध्रुवम् ॥ ३९ ॥ आवयोर्द्विज संयोगो यथा भवति तत्कुरु ॥ प्राप्यते महत्पुण्यं कृत्वा योगं वियुक्तयोः ॥ ४० ॥ इति श्रुत्वा सह तया सोमशर्मा जगाम ह ॥ आश्रमं वामदेवस्य मन्दराचलसन्निधौ ॥ ४१ ॥ वामदेवोऽशृणोत्सर्वं वृत्तान्तं कथितं तयोः ॥ अभ्यषिञ्चच्चन्द्रभागां वेदमंत्रैरथोज्ज्वलाम् ॥ ४२ ॥ ऋषिमंत्रप्रभावेण विष्णुवासरसेवनात् ॥ दिव्यदेहा बभूवासौ दिव्यां गतिमवाप ह ॥ ४३ ॥ पत्युः समीपमगमत्प्रहर्षोत्फुल्ललोचना ॥ सहर्षः शोभनोऽतीव दृष्ट्वा कान्तां समागताम् ॥ ४४ ॥ समाहूय स्वके वामे पार्श्वे तां संन्यवेशयत् ॥ सा चोवाच प्रियं हर्षाच्चन्द्रभागा शुभं वचः ॥ ४५ ॥

कहो भयो सब वृत्तांत सुनत भये ता पीछे वामदेव वेदके मंत्रनसों उज्ज्वल वा चन्द्रभागाको अभिषेक करावत भये ॥४२॥ ऋषिको जो मंत्र है ताके प्रभावते और हरिवासरके सेवनते वह चन्द्रभागा दिव्यदेह होजात भई और दिव्य ही गतिको प्राप्त होत भई ॥ ४३ ॥ और आनंदसों प्रफुल्लित नेत्र होके पतिके समीप जाती भई और शोभनहू कांताको आई भई देखि बहुतही हर्षित होत भयो ॥४४॥ और वा चन्द्रभागाको बुलायके

अपनी बाईं ओर बैठाय लेत भयो । वह चन्द्रभागा बडे हर्षते पतिसों शुभ वचन बोलत भई ॥४५॥ हे कांत ! हितवचन सुनिये जो पुण्य मोमें विद्यमान हैं जब मैं पिताके घरमें आठ वर्षते अधिक भई ॥४६॥ मैं तबसों लगाके एकादशीको व्रत श्रद्धायुक्त मनते यथोक्त विधिपूर्वक कियो हैं ॥४७॥ ता पुण्यके प्रभावसों तुम्हारा पुर ध्रुव होजायगो और कल्पके क्षय पर्यंत सब कामनासों भरो पूरो रहैगा ॥४८॥ हे नृप शार्दूल ! या प्रकार वह

शृणु कान्त हितं वाक्यं तत्पुण्यं विद्यते मयि ॥ अष्टवर्षाधिका जाता यदाऽहं पितृवेश्मनि ॥ ४६ ॥ मया ततः प्रभृति च कृत मेकादशीव्रतम् ॥ यथोक्तविधिसंयुक्तं श्रद्धायुक्तेन चेतसा ॥ ४७ ॥ तेन पुण्यप्रभावेण भविष्यति पुरं ध्रुवम् ॥ सर्वकामसमृद्धं च यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ४८ ॥ एवं सा नृपशार्दूल रमते पतिना सह ॥ दिव्यभोगा दिव्यरूपा दिव्याभरणभूषिता ॥ ४९ ॥ शोभनोऽपि तया सार्द्धं रमते दिव्यविग्रहः ॥ रमाव्रतप्रभावेण मन्दराचलसानुनि ॥ ५० ॥ चिन्तामणिसमा ह्येषा कामधेनुसमाऽथवा ॥ रमाभिधाना नृपते तवाग्रे कथिता मया ॥ ५१ ॥ ईदृशं च व्रतं राजन्ये कुर्वंति नरोत्तमाः ब्रह्महत्यादिपापानि नाशं यान्ति न संशयः ॥ ५२ ॥

पतिके साथ रमण करती दिव्य वाको भोग हो और दिव्यही रूप हो और दिव्यही आभूषण करिके भूषित हो ॥४९॥ और दिव्य हैं विग्रह जाको ऐसो शोभन रमाके व्रतके प्रभाव करिके मन्दराचलके शिखरपर वाके साथ विहार करत भयो ॥५०॥ यह रमानाम चिंतामणिके समान है अथवा कामधेनुके तुल्य है हे नृप ! मैंने तुम्हारे आगे कही॥५१॥जे उत्तम मनुष्य या प्रकारको व्रत करै हैं तिनके ब्रह्महत्या आदि सबपाप नाशको प्राप्त होय

यामें सन्देह नहीं है ॥५२॥ दोनों पक्षकी एकादशीनके व्रतनमें जैसी कृष्णपक्षकी है वैसेही शुक्लपक्षकी है तिथिनको भेद नहीं करै ॥५३॥ सेवन करी गई एकादशी मनुष्यको भुक्ति मुक्तिकी देनहारीहै, जैसे काली गौ तथा सफेद दोनोंको दूध एकसो होय है॥ ५४ ॥तैसेही दोनों एकादशी तुल्य फलकी देनहारी हैं

एकादशीव्रतानां च पक्षयोरुभयोरपि ॥ यथा शुक्ला तथा कृष्णा तिथिभेदं न कारयेत् ॥ ५२ ॥ सेवितैकादशी नृणां भुक्ति मुक्तिप्रदायिनी ॥ धेनुः कृष्णा यथा श्वेत उभयोः सदृशं पयः ॥ ५४ ॥ तथैव तुल्यफलदं स्मृतमेकादशीव्रतम् ॥ एकादशी व्रतानां च माहात्म्यं शृणुयान्नरः ॥ ५५ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ ५६ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्त्तपुराणे कार्तिककृष्णै कादशी रमामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २३ ॥

एकादशीके जे माहात्म्य हैं तिनको जो सुनै है ॥५५॥ वह सब पापनते छूटिके विष्णलोकमें आनन्द करै है ॥५६॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुख तनयपण्डितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां कार्त्तिककृष्णैकादशीरमाकथा समाप्ता ॥ २३ ॥

अपनी बाईं ओर बैठाय लेत भयो । वह चन्द्रभागा बडे हर्षते पतिसों शुभ वचन बोलत भई ॥४५॥ हे कांत ! हितवचन सुनिये जो पुण्य मोमें विद्यमान हैं जब मैं पिताके घरमें आठ वर्षते अधिक भई ॥४६॥ मैं तबसों लगाके एकादशीको व्रत श्रद्धायुक्त मनते यथोक्त विधिपूर्वक कियो हैं ॥४७॥ ता पुण्यके प्रभावसों तुम्हारा पुर ध्रुव होजायगो और कल्पके क्षय पर्यंत सब कामनासों भरो पूरो रहैगा ॥४८॥ हे नृप शार्दूल ! या प्रकार वह

शृणु कान्त हितं वाक्यं तत्पुण्यं विद्यते मयि ॥ अष्टवर्षाधिका जाता यदाऽहं पितृवेश्मनि ॥ ४६ ॥ मया ततः प्रभृति च कृत मेकादशीव्रतम् ॥ यथोक्तविधिसंयुक्तं श्रद्धायुक्तेन चेतसा ॥ ४७ ॥ तेन पुण्यप्रभावेण भविष्यति पुरं ध्रुवम् ॥ सर्वकामसमृद्धं च यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ४८ ॥ एवं सा नृपशार्दूल रमते पतिना सह ॥ दिव्यभोगा दिव्यरूपा दिव्याभरणभूषिता ॥ ४९ ॥ शोभनोऽपि तया सार्द्धं रमते दिव्यविग्रहः ॥ रमाव्रतप्रभावेण मन्दराचलसानुनि ॥ ५० ॥ चिन्तामणिसमा ह्येषा कामधेनुसमा ऽथवा ॥ रमाभिधाना नृपते तवाग्रे कथिता मया ॥ ५१ ॥ ईदृशं च व्रतं राजन्ये कुर्वंति नरोत्तमाः ब्रह्महत्यादिपापानि नाशं यान्ति न संशयः ॥ ५२ ॥

पतिके साथ रमण करती दिव्य वाको भोग हो और दिव्यही रूप हो और दिव्यही आभूषण करिके भूषित हो ॥४९॥ और दिव्य हैं विग्रह जाको ऐसो शोभन रमाके व्रतके प्रभाव करिके मन्दराचलके शिखरपर वाके साथ विहार करत भयो ॥५०॥ यह रमानाम चिंतामणिके समान है अथवा कामधेनुके तुल्य है हे नृप ! मैंने तुम्हारे आगे कही ॥५१॥ जे उत्तम मनुष्य या प्रकारको व्रत करै हैं तिनके ब्रह्महत्या आदि सबपाप नाशको प्राप्त होय

यामें सन्देह नहीं है ॥५२॥ दोनों पक्षकी एकादशीनके व्रतनमें जैसी कृष्णपक्षकी है वैसेही शुक्लपक्षकी है तिथिनको भेद नहीं करै ॥५३॥ सेवन करी गई एकादशी मनुष्यको भुक्ति मुक्तिकी देनहारीहैं, जैसे काली गौ तथा सफेद दोनोंको दूध एकसो होय है॥५४॥तैसेही दोनों एकादशी तुल्य फलकी देनहारी हैं

एकादशीव्रतानां च पक्षयोरुभयोरपि ॥ यथा शुक्ला तथा कृष्णा तिथिभेदं न कारयेत् ॥ ५२ ॥ सेवितैकादशी नृणां भुक्ति मुक्तिप्रदायिनी ॥ धेनुः कृष्णा यथा श्वेत उभयोः सदृशं पयः ॥ ५४ ॥ तथैव तुल्यफलदं स्मृतमेकादशीव्रतम् ॥ एकादशी व्रतानां च माहात्म्यं शृणुयान्नरः ॥ ५५ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ ५६ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्त्तपुराणे कार्तिककृष्णै कादशी रमामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २३ ॥

एकादशीके जे माहात्म्य हैं तिनको जो सुनै है ॥५५॥ वह सब पापनते छूटिके विष्णलोकमें आनन्द करै है ॥५६॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुख वनयपण्डितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां कार्त्तिककृष्णैकादशीरमाकथा समाप्ता ॥ २३ ॥

अथ कार्त्तिकशुक्लैकादशीप्रबोधिनीकथा ॥ ऊर्जाऽपरदले या तु बोधिन्येकादशी स्मृता ॥ तन्माहात्म्यस्य भाषायां टीकां वच्मि मनोहराम् ॥१॥
ब्रह्मा बोले–कि, प्रबोधिनी जो एकादशी है ताको माहात्म्य पापनको नाश करनहारो और पुण्यको बढावनहारो है और सुबुद्धि मनुष्यनके
मुक्तिको देनहारो हैं हे मुनिश्रेष्ठ ! ताहि सुनिये ॥१॥ हे विप्रेंद्र ! पृथ्वीमें तबहिलों गंगभागीरथी गर्जै हैं जबलों कार्तिकमें पापनकी नाश करनहारी
हरिबोधिनी तिथि नहीं आवै हैं ॥२॥ और तबहीलों समुद्रपर्यंत तीर्थ और सर गर्जे हैं जबताईं कार्तिकमें विष्णुकी प्रबोधिनी तिथि नहीं आवै

अथ कार्त्तिकशुक्लैकादशीकथा ॥ ब्रह्मोवाच ॥ प्रबोधिन्याश्च माहात्म्यं पापघ्नं पुण्यवर्धनम् ॥ मुक्तिप्रदं सुबुद्धीनां शृणुष्व मुनि
सत्तम ॥१॥ तावद्गर्जति विप्रेन्द्र गङ्गा भागीरथी क्षितौ ॥ यावन्नायाति पापघ्नी कार्त्तिके हरिबोधनी ॥ २ ॥ तावद्गर्जंति
तीर्थानि ह्यासमुद्रं सरांसि च ॥ यावत्प्रबोधिनी विष्णोस्तिथिर्नायाति कार्त्तिकी ॥३॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि च ॥
एकेनैवोपवासेन प्रबोधिन्यां लभेन्नरः ॥ ४ ॥ नारद उवाच ॥ एकभुक्तेन किं पुण्यं किं पुण्यं नक्तभोजने ॥ उपवासेन किं पुण्यं
तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ ५ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ एकभुक्तेन जन्ममोत्थं नक्तेन द्विजनुर्भवम् ॥ सप्तजन्मभवं पापमुपवासेन नश्यति ॥६॥

॥ ३ ॥ हजार अश्वमेधको और राजसूययज्ञनको फल मनुष्य एक ही प्रबोधिनीके व्रतसों प्राप्त होय है ॥ ४ ॥ नारद बोले–कि, एकबार भोजन
करनेसों और रात्रिमें भोजन करनेसों तथा उपवास करनेसों कहा पुण्य होय है हे पितामह ! सो मोसों कहिये ॥ ५ ॥ ब्रह्मा बोले–कि, एकबार
भोजन करनेसों एक जन्मको और रात्रिके भोजनसों दो जन्मको और उपवास करनेसों सात जन्मको पाप दूरि होजाय है ॥ ६ ॥

और जो दुर्लभ हैं और अप्राप्य है और जो त्रिलोकीमें नहीं दृष्टिगोचर है और हे पुत्र ! जो अप्रार्थित है ताको हरिबोधनी देय है ॥७॥ मेरु तथा मंदराचलके प्रमाणते पाप हैं उन सबको यह पापहारिणी भस्म करि देय है ॥८॥ हजार पूर्वले जन्मन करिके जो दुष्कर्म इकट्ठो कियो है वह प्रबोधिनीके रात्रि जागरणसों रुईके ढेरके समान भस्म होजाय है॥९॥हे मुनिशार्दूल!जो मनुष्य स्वभावहीसों विधिपूर्वक प्रबोधिनीकोव्रतकरै है

यद्दुर्लभं यदप्राप्यं त्रैलोक्ये न तु गोचरम् ॥ यदप्यप्रार्थितं पुत्रददाति हरिबोधिनी ॥७॥ मेरुमन्दरमात्राणि पापान्युग्राणि यानि तु ॥ एकेनैवोपवासेन दहते पापहारिणी ॥ ८ ॥ पूर्वजन्मसहस्रैस्तु यद्दुष्कर्म उपार्जितम् ॥ जागरेण प्रबोधिन्यां दहते तूलराशिवत् ॥ ९ ॥ उपवासं प्रबोधिन्यां यः करोति स्वभावतः ॥ विधिवन्मुनिशार्दूल यथोक्तं लभते फलम् ॥ १० ॥ यथोक्तं सुकृतं यस्तु विधिवत्कुरुते नरः ॥ स्वल्पं मुनिवरश्रेष्ठ मेरुतुल्यं भवेत्फलम् ॥ ११ ॥ विधिहीनं तु यः कुर्यात्सुकृतं मेरुमात्रकम् ॥ अणुमात्रं न चाप्नोति फलं धर्मस्य नारद ॥ १२ ॥ सन्ध्याहीने व्रतभ्रष्टे नास्तिके वेदनिन्दके ॥ नैतेषां तिष्ठते देहे धर्मशास्त्रविदूषके ॥१३॥ परदाररते मूर्खे कृतघ्ने वन्धके तथा ॥ धर्मो न तिष्ठते देहे एतेषामपि देहिनाम् ॥ १४ ॥

वह यथोक्त फलको प्राप्त होय है॥१०॥जो मनुष्य यथोक्त सुकृतको विधिपूर्वक करैहै हे मुनिश्रेष्ठ ! वह मेरुके थोरोहू तुल्य फल होय है॥११॥और जो विधिहीन कियो जाय है वह मेरुके प्रमाणहू हे नारद!वह अणुमात्रहू धर्मको फल नहीं मिलै है॥१२॥ संध्याहीनमें व्रतभ्रष्टमें नास्तिकमें वेदनके निंदकमें और धर्मशास्त्रके दूषण देनहारेमें॥१३॥पराई स्त्रीसों भोग करनहारेमें मूर्ख कृतघ्नी वंचकमें इन देहियोंको देहमें धर्म नहीं स्थित होय है ॥१४॥

ब्राह्मण हो अथवा शूद्र हो पराई स्त्रीको सेवन करै है और विशेष करि ब्राह्मणीको तो वे दोनों चांडालके समान हैं ॥ १५ ॥ पतियुक्त होय वा विधवा हो ऐसी ब्राह्मणीको जो ब्राह्मण सेवन करै है हे मुनिशार्दूल ! वह वंशसमेत क्षयको प्राप्त होय है ॥१६॥ जो अधम ब्राह्मण पराई स्त्रीसों गमन करै है वाके संतति नहीं होय है और जन्मनको इकठो कियो भयो पुण्य नष्ट हो जाय है ॥ १७॥ जो गुरुके और ब्राह्मणके साथ अहंका

ब्राह्मणीं वापि शुद्रो वा सेवते परयोषितम् ॥ ब्राह्मणीं च विशेषेण चाण्डलसदृशावुभौ ॥ १५ ॥ सभर्तृकां वा विधवां ब्राह्मणीं ब्राह्मणो यदि ॥ सेवते मुनिशार्दूल सान्वयो याति संक्षयम् ॥ १६ ॥ परदाराभिगमनं कुरुते यो द्विजाधमः ॥ सन्ततिर्न भवेत्तस्य फलं जन्मार्जितं नहि ॥ १७ ॥ गुरुणा सह विप्रैश्च योऽहंकारेण वर्तते ॥ सुकृतं नश्यते शीघ्रं धनं नाप्नोति सन्ततिम् ॥ १८ ॥ आचारभ्रष्टदेहानां वृषलीगामिना तथा ॥ दुर्जनं सेवमानानां धर्मस्तेषां पराङ्मुखः ॥ १९ ॥ पतितैः सह संगं च तद्गृहे गमनं तथा ॥ ये कुर्वन्ति नृपश्रेष्ठ ते गच्छन्ति यमालये ॥ २० ॥ धर्मो नष्टो नृणां येषां स्वागतासनभोजनैः ॥ तेषां वै नश्यते वत्स कीर्तिरायुः प्रजास्सुखम् ॥ २१ ॥

रसों वर्ते ताको सुकृत शीघ्रही नष्ट हो और वह धन तथा संततिको नहीं प्राप्त होय है ॥ १८ ॥ जिनके देह आचारते भ्रष्ट हैं और जे चांडालीमें गमन करै हैं और जे दुष्टनकी सेवा करैं इन सबको धर्म नष्ट होजाय है ॥ १९ ॥ जे पतित मनुष्यनको संग करै हैं और उनके घरमें जायँ हैं वे यमलोकमें जायँ हैं ॥ २० ॥ स्वागत आसन और भोजन करिके जिन मनुष्यनको धर्म नष्ट होगयो है हे वत्स ! कीर्ति आयु संतति और

सुख नाशको प्राप्त होय हैं ॥ २१ ॥ जे अधम नर साधुको अपमान करै हैं वे त्रिवर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ कामसों रहित हो नरकरूप अग्नि करिके जराये जाते हैं ॥ २२॥ जे अधम साधुनको अपमान करिके प्रसन्न होय हैं और जे मूर्ख उनको मने नहीं करै हैं वे कुलक्षयको देखै हैं ॥ २३॥ जाको देह आचारते भ्रष्ट हैं और जो चुगल है वह दान करै तथा होम करै ताहूपै वाको गति नहीं होय हैं ॥२४॥ तातें किञ्चित् भी लोकमें

साधूनामपमानं तु ये कुर्वन्ति नराधमाः ॥ त्रिवर्गफलहीनास्ते दह्यन्ते नरकाग्निना ॥ २२ ॥ कृत्वाऽवमानं साधूनां ये हृष्यन्ति नराधमाः ॥ वारयन्ति न ये मूढास्ते पश्यन्ति कुलक्षयम् ॥२३॥ आचारभ्रष्टदेहस्य पिशुनस्य शठस्य च ॥ ददतो जुह्वतो वापि गतिस्तस्य न विद्यते ॥ २४ ॥ तस्मान्नत्वाचरेत्किञ्चिदशुभं लोकगर्हितम् ॥ सदाचारवता भाव्यं यथा धर्मो न नश्यति ॥ २५ ॥ ये ध्यायन्ति मनोवृत्त्या करिष्यामः प्रबोधिनीम् ॥ तेषां विलीयते पापं पूर्वजन्मशतोद्भवम् ॥ २६ ॥ समतीतं भविष्यं च वर्तमानं कुलायुतम् ॥ विष्णुलोकं नयत्याशु प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ २७ ॥ वसन्ति पितरो हृष्टा विष्णुलोकेऽत्य लंकृताः ॥ विमुक्ता नारकैर्दुःखैः पूर्वकर्मसमुद्भवैः ॥ २८ ॥

निंदित अशुभ कर्म न करैं सदाचारवान् होय जाते धर्मको नाश न होय ॥२५॥ जो अपने मनमें ऐसो सोचे है कि, हम प्रबोधिनीको व्रत करैं उनको पहले सौ जन्मनको पाप नाशको प्राप्त होय हैं ॥ २६ ॥ प्रबोधिनीकी रात्रि. जो जागरण करै है वह पिछले अगले और वर्तमान दश हजार कुलनको विष्णुलोकमें पहुँचाय देय है ॥ २७ ॥ वाके पितर कर्मसों उत्पन्न भये नरकके दुःखनते छूटिकै प्रसन्न और अति

अलंकृत हो विष्णुके लोकमें वास करैं हैं ॥ २८ ॥ मनुष्य ब्रह्महत्या आदि घोरपाप करिके जो प्रबोधिनीकी रात्रिमें जागरण करै हैं वाके सब पाप छूटि जायँ हैं ॥२९॥ जो फल सुन्दर अश्वमेध आदि यज्ञनसों बडी कठिनाईते मिलै है वह फल प्रबोधिनीरात्रिमें जागरण करनेसों सहज हीमें प्राप्त होय हैं ॥ ३० ॥ सब तीर्थनमें स्नान करिके और गौ, सुवर्ण करिके तथा भूमि देकै वा फलको नहीं प्राप्त होयहैं जो हरिको जागरण

कृत्वा तु पातकं घोरं ब्रह्महत्यादिकं नरः ॥ कृत्वा तु जागरं विष्णोर्धौतपापो भवेन्मुने ॥ २९ ॥ दुष्प्राप्यं यत्फलं रम्यैरश्वमेधादिभिर्मखैः ॥ प्राप्यते तत्सुखेनैव प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ ३० ॥ आप्लुत्य सर्वतीर्थेषु दत्त्वा गाः काञ्चनं महीम् ॥ न तत्फलमवाप्नोति यत्कृत्वा जागरं हरेः ॥३१॥ जातः स एव सुकृती कुलं तेनैव पावितम् ॥ कार्तिके मुनिशार्दूल कृता येन प्रबोधिनी ॥ ३२ ॥ यथा ध्रुवं नृणां मृत्युर्धननाशस्तथा ध्रुवम् ॥ इति ज्ञात्वा मुनिश्रेष्ठ कर्तव्यं वैष्णवं दिनम् ॥ ३३ ॥ यानि कानि च तीर्थानि त्रैलोक्ये सम्भवन्ति च ॥ तानि तस्य गृहे सम्यग्यः करोति प्रबोधिनीम् ॥ ३४ ॥ सर्वकृत्यं परित्यज्य तुष्ट्यर्थं चक्रपाणिनः ॥ उपोष्यैकादशी रम्या कार्त्तिके हरिबोधिनी ॥ ३५ ॥

करनेसों मिलै है ॥ ३१ ॥ वही सुकृती उत्पन्न हुआ और वाहीने अपनो कुल तारो है हे मुनिशार्दूल ! जाने कार्तिकमें प्रबोधिनी एकादशीको व्रत कियो ॥३२॥ जैसे मनुष्यनको नाश ध्रुव कहिये निश्चित हैं तैसे धनको नाश निश्चित हैं हे मुनिश्रेष्ठ ! या बातको जानिके वैष्णवदिनको व्रत करनो योग्य है ॥ ३३ ॥ तीनों लोकनमें जे कोई तीर्थ हैं वे सब प्रबोधिनी करनहारेके घरमें वास करै हैं ॥ ३४ ॥ सब कर्मनको छोडि चक्रपाणिकी

प्रसन्नताके अर्थ कार्तिकमें हरिकी बोधनी एकादशीको व्रत करनो योग्य है ॥ ३५ ॥ वही ज्ञानी है, वही योगी है, वही तपस्वी हैं और वही जितेंद्रिय है और वाहीको भोग तथा मोक्ष है जो हरिबोधिनीको व्रत करै है ॥ ३६ ॥ धर्मनके सारकी देनहारी यह एकादशी विष्णुकी अत्यंत प्यारी है एकबार याका व्रत करिके मनुष्य मुक्तिको भागी होय है ॥ ३७ ॥ प्रबोधिनीको व्रत करिके मनुष्य गर्भमें नहीं प्रवेश करै हैं हे नारद !

स ज्ञानी स च योगी च स तपस्वी जितेन्द्रियः ॥ भोगो मोक्षश्च तस्यास्ति ह्युपास्ते हरिबोधिनीम् ॥ ३६ ॥ विष्णुप्रियतरा ह्येषा धर्मसारस्य दायिनी ॥ सकृदेनामुपोष्यैव मुक्तिभाक् च भवेन्नरः ॥ ३७ ॥ प्रबोधिनीमुपोषित्वा न गर्भे विशते नरः ॥ सर्व धर्मान्परित्यज्य तस्मात्कुर्वीत नारद॥३८॥कर्मणा मनसा वाचा पापं यत्समुपार्जितम्॥तत्क्षालयति गोविन्दः प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ ३९ ॥ स्नानं दानं जपो होमः समुद्दिश्य जनार्दनम् ॥ नरैर्यत्क्रियते वत्स प्रबोधिन्यां तदक्षयम् ॥ ४० ॥ येऽर्चयन्ति नरास्तस्यां भक्त्या देवं च माधवम् ॥ समुपोष्य प्रमुच्यन्ते पापैस्ते शतजन्मभिः ॥ ४१ ॥

तातें सर्व धर्मनको त्याग करिके याको व्रत करै ॥ ३८ ॥ कर्म करिके मन करिके वचन करिके जो पाप संचित कियो है वाको प्रबोधिनीको जागरणसों हरि धोय देय हैं॥ ३९ ॥ स्नान, दान, जप, होम जनार्दनके नामपैं प्रबोधिनीको दिन मनुष्य करिके कियो जाय है सो अक्षय होय है ॥ ४० ॥ जे मनुष्य वा एकादशीके दिन भक्तिसों माधवदेवको पूजन करै हैं वे व्रतको करिके सौ जन्मके पापनते छूटि जायँ हैं ॥ ४१ ॥

हे पुत्र ! यह बडो व्रत पापनके समूहको नाश करनहारो है यह जो विष्णुके प्रबोधको दिन है ताको व्रत विधिवत् करै ॥४२॥ या व्रतकरिके देवेश जो जनार्दन हैं तिनको संतुष्ट करिके सब दिशानको प्रकाशित करतो भयो हरिके धामको जाय है ॥४३॥ हे द्विपदोंमें श्रेष्ठ ! द्वादशीयुक्त यह कार्तिकमें प्रबोधिनी एकादशी कान्तिके चाहनेहारे पुरुषन कारि यत्नसों करनी चाहिये॥४४॥हे वत्स ! बालकपनमें जवानीमें और बुढापेमें

महाव्रतमिदंपुत्र महापापौघनाशनम् ॥ प्रबोधवासरं विष्णोर्विधिवत्समुपोषयेत् ॥ ४२ ॥ व्रतेनानेन देवेशं परितोष्य जनार्दनम् ॥ विराजयन्दिशः सर्वाः प्रयाति भवनं हरेः ॥ ४३ ॥ कर्तव्यैषा प्रयत्नेन नरैः कांतिमभीप्सुभिः ॥ द्वादशी द्विपदां श्रेष्ठ कार्तिके तु प्रबोधिनीम् ॥ ४४ ॥ बाल्ये यच्चार्जितं वत्स यौवने वार्धके तथा ॥ शतजन्मकृतं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥ ४५ ॥ शुष्कमार्द्रं मुनिश्रेष्ठ स्वगुह्यमपि नारद ॥ तत्क्षालयति गोविन्दमस्यामभ्यर्च्य भक्तितः ॥ ४६ ॥ धनधान्यवहा पुण्या सर्वपाप हरापरा ॥ तामुपोष्य हरेर्भक्त्या दुर्लभं न भवेत्क्वचित् ॥ ४७ ॥ चन्द्रसूर्योपरागे च यत्फलं परिकीर्तितम् ॥ तत्सहस्रगुणं प्रोक्तं प्रबोधिन्यां तु जागरात् ॥ ४८ ॥

जे पाप सौ जन्ममें इकठे किये गये हैं थोडे होयँ वा बहु॥४५॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! हे नारद ! सूखा गीला और अपने छिपाने योग्य जो पाप हैं ताको या एकादशीके दिन गोविंदको भक्तिसों पूजिके मनुष्य धोय देय ॥४६॥ धन धान्यकी देनहारी पवित्र और सब पापनकी उत्कृष्ट हरनहारी है ताको भक्तिसों व्रत करिके कुछ दुर्लभ नहीं ॥ ४७ ॥ चन्द्रमा और सूर्यके ग्रहणमें जो फल कह्यो है वाते हजार गुनो प्रबोधिनीके जागरणको

फल है ॥४८॥ स्नान, जप, होम, स्वाध्याय और हरिको पूजन प्रबोधिनीके दिन करनेते इन सबनको पुण्यफलकरि दुगुनो अधिक होय है ॥४९॥ जन्मसों लगाके मनुष्यन करि जो पुण्य इकट्ठो कियो है वह सब कार्तिककी एकादशीको व्रत न करनेसों वृथा होजाय है ॥ ५० ॥ विष्णुको नियम विना किये जो मनुष्य कार्तिकको व्यतीत करै है हे नारद ! वह सब जन्मभरिके जोरे भये पुण्यके फलको नहीं प्राप्त होय है ॥५१॥

स्नानं दानं जपो होमः स्वाध्यायोऽभ्यर्चनं हरेः॥तत्सर्वं कोटितुल्यं तु प्रबोधिन्यां तु यत्कृतम् ॥ ४९ ॥ जन्मप्रभृति यत्पुण्यं नरेणाभ्यर्जितं भवेत् ॥ वृथा भवति तत्सर्वमकृत्वा कार्तिकव्रतम् ॥ ५० ॥ अकृत्वा नियमं विष्णोः कार्तिकं यः क्षिपेन्नरः ॥ जन्मार्जितस्य पुण्यस्य फलं नाप्नोति नारद ॥ ५१ ॥ तस्मात्त्वया प्रयत्नेन देवदेवो जनार्दनः ॥ उपासनीयो विप्रेन्द्र सर्वकामफलप्रदः ॥ ५२ ॥ परान्नं वर्जयेद्यस्तु कार्तिके विष्णुतत्परः ॥ परान्नवर्जनाद्धत्स चांद्रायणफलं लभेत् ॥ ५३ ॥ न तथा तुष्यते यज्ञैर्न दानैर्वा गजादिभिः ॥ यथा शास्त्रकथालापैः कार्तिके मधुसूदनः ॥ ५४ ॥ ये कुर्वंति कथां विष्णोर्ये शृण्वन्ति समाहिताः ॥ श्लोकं वा श्लोकपादं वा कार्तिके गोशतं फलम् ॥ ५५ ॥

हे विप्रेंद्र ! याते तुम करिके यत्नसों सब कामनाओंके फलके देनहारे देवदेव जनार्दनकी उपासना करने योग्य है ॥ ५२ ॥ जो विष्णुतत्पर मनुष्य कार्तिकमें पराये अन्नको त्याग करै है तो वह पराये अन्नके त्यागसों चांद्रायणव्रतके फलको प्राप्त होय है ॥ ५३ ॥ कार्तिकमें जैसे भगवान् मधुसूदन शास्त्रकी कथाओंके कहनेसों होय हैं तैसे यज्ञनसों घोडे और हाथिनके दानसों नहीं प्रसन्न होय है ॥ ५४ ॥ जे कार्तिकमें विष्णुकी कथाको

एक श्लोक वा आधा श्लोक कहै है और सावधान होके सुने है वे भी गोदानके फलको प्राप्त होय है ॥ ५५ ॥ कार्तिकके महीनेमें सब धर्मोंको छोड़िके मेरे आगे सदा मनुष्यन करि शास्त्रको अवधारण और श्रवण करनो चाहिये ॥५६॥ हे मुनिशार्दूल ! कल्याणको लोभकी बुद्धिसों जो मनुष्य कार्तिकमें हरिकथाको कहै है वह अपने सौ कुल तारै है ॥५७॥ जो मनुष्य नित्य शास्त्रके विनोदसों कार्तिकमासको व्यतीत करै है वह सब

सर्वधर्मान्परित्यज्य ममाग्रे कार्तिके नरैः ॥ शास्त्रावधारणं कार्यं श्रोतव्यं च सदा मुने ॥ ५६ ॥ श्रेयसां लोभबुद्ध्या वा यः करोति हरेः कथाम् ॥ कार्तिके मुनिशार्दूल कुलानां तारयेच्छतम् ॥५७॥ नित्य शास्त्रविनोदेन कार्तिकं यः क्षिपेन्नरः ॥ निर्दहेत्सर्वपा पानि यज्ञायुतफलं लभेत् ॥ ५८ ॥ नियमेन नरो यस्तु शृणुते वैष्णवीं कथाम् ॥ कार्तिके तु विशेषेण गोसहस्रफलं लभेत् ॥ ॥ ५९ ॥ प्रबोधवासरे विष्णोः कुरुते यो हरेः कथाम् ॥ सप्तद्वीपवतीदाने तत्फलं लभते मुने ॥ ६० ॥ श्रुत्वा विष्णुकथां दिव्यां येऽर्चयन्ति कथाविदम् ॥ स्वशक्त्या मुनिशार्दूल तेषां लोकाः सनातनाः ॥ ६१ ॥

पापनको जला देय है और दशहजार यज्ञके फलनको प्राप्त होय हैं ॥५८॥ जो मनुष्य नियम करिके हरिकी कथाको सुने है सो विशेष करिके कार्तिकमें सहस्र गोदानके फलनके प्राप्त होय हैं ॥५९॥ विष्णुके प्रबोधदिनमें जो हरिकी कथा कहै हे मुने ! वह सात द्वीपन करि युक्त भूमिमें दानको फल पावै हैं ॥ ६० ॥ जे मनुष्य दिव्य विष्णुकी कथाको सुनिके कथा बाँचनेवालेको अपनी शक्तिके अनुसार पूजन करैं हैं हे मुनिशार्दूल !

उनको सनातन लोक प्राप्त होय हैं ॥६१॥ ब्रह्माको वचन सुनिके नारद फिर बोलत भये, नारद बोले—कि, हे स्वामिन् ! हे सुरोत्तम ! मोसों एकादशीको विधान कहो ॥६२॥ हे भगवन् ! जाके करनेसों जैसो फल प्राप्त होय है। नारदको वह वचन सुनिके ब्रह्मा वचन बोलत भये॥६३॥ ब्रह्मा बोले—कि हे द्विजोत्तम ! एकादशीको ब्राह्म मुहूर्त कहिये दो घडी रात्रि रहे उठि दंतधावन करिके स्नान करनो चाहिये ॥६४॥ नदीमें वा

ब्रह्मणो वचनं श्रुत्वा नारदः पुनरब्रवीत् ॥ नारद उवाच ॥ विधानं ब्रूहि मे स्वामिन्नेकादश्याः सुरोत्तम ॥ ६२ ॥ चीर्णेन येन भगवन्याद्दशं फलमाप्नुयात् ॥ नारदस्यवचः श्रुत्वा ब्रह्मा वचनमब्रवीत्॥६३ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय ह्येकादश्यां द्विजोत्तम ॥ स्नानं चैव प्रकर्त्तव्यं दंतधावनपूर्वकम् ॥ ६४ ॥ नद्यां तड़ागे कूपे वा वाप्यां गेहे तथैव च ॥ केशवश्चैव संपूज्यः कथायाः श्रवणं तथा ॥ ६५ ॥ नियमार्थं महाभाग इमं मंत्रमुदीरयेत् ॥ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहनि परे ह्यहम्॥६६॥ भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत॥अमुं मन्त्रं समुच्चार्य देवदेवस्य चक्रिणः॥६७॥ भक्तिभावेन तुष्टात्मा ह्युपवासं समर्पयेत् ॥ रात्रौ जागरणं कार्यं देवदेवस्य सन्निधौ ॥ ६८ ॥

कूपमें अथवा बावडीमें तथा घरमें फिरि केशवको पूजन और कथाको श्रवण करै ॥६५॥ और हे महाभाग ! नियमके अर्थ यह श्लोक पढै मैं एकादशीके दिन निराहाररहिके द्वादशीके दिन ॥६६॥ भोजन करौंगो, हे पुंडरीकाक्ष ! हे अच्युत ! मेरे रक्षक होउ, देवदेव जे चक्री भगवान् हैं तिनके आगे या मंत्रको उच्चारण करै ॥६७॥ फिरि भक्तिभावसों तुष्टात्मा होके उपवासको समर्पण करै फिरि देवदेवके समीप रात्रिमें जागरण करै ॥६८॥

हे मुने ! जो गीत नृत्य वाद्य और कृष्णकी कथाको करै है वह पुण्यात्मा त्रिलोकीके ऊपर स्थित है ॥६९॥ बहुतसे फूलों और फलन करिके और कपूर अगर कुम्कुम करिके कार्तिकमें बोधनीके दिन हरिकी पूजा करनी चाहिये ॥७०॥ हरिवासरके प्राप्त होनेपै धनको लोभ न करै हे मुनिसत्तम ! जाते असंख्य पुण्य प्राप्त होय हैं ॥७१॥ प्रबोधिनीमें जागरणके समय नानाप्रकारके दिव्य फलनसों पूजन करै और शंखमें जल लेके जनार्दनको

गीतं नृत्यं च वाद्यं च तथा कृष्णकथां मुने ॥ यः करोति स पुण्यात्मा त्रैलोक्योपरि संस्थितः ॥ ६९ ॥ बहुपुष्पैर्बहुफलैः कर्पूरागुरुकुङ्कुमैः ॥ हरेः पूजा विधातव्या कार्तिक्यां बोधवासरे ॥७०॥ वित्तशाठ्यं न कर्त्तव्यं संप्राप्ते हरिवासरे ॥ यस्मात्पुण्यमसंख्यातं प्राप्यते मुनिसत्तम ॥ ७१ ॥ फलैर्नानाविधैर्दिव्यैः प्रबोधिन्यां तु जागरे ॥ शङ्खे तोयं समादाय ह्यर्घो देयो जनार्दने ॥ ७२ ॥ यत्फलं सर्वतीर्थेषु सर्वदानेषु यत्फलम् तत्फलं कोटिगुणितं दत्त्वार्घं बोधवासरे ॥७३॥ अगस्त्यकुसुमैर्दिव्यैः पूजयेद्यो जनार्दनम् ॥ देवेन्द्रोपि मुनिश्रेष्ठ करोति करसंपुटम् ॥ ७४ ॥ न तत्करोति विप्रेन्द्र तपसा तोषितो हरिः ॥ यत्करोति हृषीकेशो मुनिपुष्पैरलंकृतः ॥७५॥ बिल्वपत्रैश्च ये कृष्णंकार्त्तिके कलिवर्धन ॥ पूजयन्ति महाभक्त्या मुक्तिस्तेषां मयोदिता॥७६॥

अर्घ देनो चाहिये ॥७२॥ जो फल सब तीर्थनमें और जो फल सब दाननमें हैं वाते करोड गुणोफल बोधक दिनमें प्राप्त हेय है ॥ ७३ ॥ जो दिव्य अगस्त्यके फूलनसों पूजन जनार्दनको करै है तो वाके आगे हे मुनिश्रेष्ठ ! देवेंद्रहू हाथ जोरे है ॥ ७४ ॥ हे विप्रेंद्र ! तप करिके सन्तुष्ट किये गये हरि वह नहीं करते हैं जो अगस्त्यके पुष्पनसों शोभित हृषीकेश भगवान् करैं हैं ॥ ७५ ॥ हे कलिवर्द्धन ! जे कार्तिकमें बडी भक्तिसों

विल्वपत्रन करिके कृष्णको पूजन करै हैं उनको मेरी कही मुक्ति मिले है ॥ ७६ ॥ जे कार्तिकमें तुलसीदलन करिके और पुष्पन करिके जना र्दनको पूजन करै हैं हे वत्स ! वे दशहजार जन्मको सब पाप जलाय देय हैं ॥ ७७ ॥ देखी गई स्पर्श करी अथवा ध्यान करी गई नमस्कार करी गई स्तुती करी गई तुलसी शुभकी देनहारी है ॥७८॥ जे नवप्रकारकी तुलसीकी भक्ति [ ] नि दिन करै हैं वे कोटि हजार युगों ताईं हरिके

तुलसीदलपुष्पैश्च पूजयं [ ] ति जनार्दनम् ॥ कार्त्तिके सकलं वत्स पापं जन्मायुतं दहेत् ॥७७॥ दृष्टा स्पृष्टाऽथवा ध्याता कीर्तिता नमिता स्तुता ॥ रोपिता सेचिता नित्यं पूजिता तुलसी शुभा ॥ ७८ ॥ नवधा तुलसीभक्तिं ये कुर्वंति दिनेदिने ॥ युगकोटि सहस्राणि ते वसंति हरेर्गृहे ॥ ७९ ॥ रोपिता तुलसी यावत्कुरुते मूलविस्तरम् ॥ यावद्युगसहस्राणि तनोति सुकृतं मुने ॥८०॥ यावच्छाखाप्रशाखाभिर्बीजपुष्पदलैर्मुने ॥ रोपिता तुलसी पुंभिर्वर्धते वसुधातले ॥८१॥ कुले तेषां तु ये जाता ये भविष्यंति ये गताः ॥ आकल्पयुगसाहस्रं तेषां वासो हरेर्गृहे ॥ ८२ ॥

मन्दिरमें वास करै हैं ॥७९॥ लगाई भई तुलसी जितनी जडनको विस्तार करै है हे मुने ! उतने हजार युगलों सुकृतको विस्तारित करै है ॥ ॥ ८० ॥ हे मुने ! पुरुषों करि लगाई भई तुलसी जबताईं शाखा और प्रशाखा और बीज पुष्प और दलन करिके पृथ्वीमें बढै है ॥ ८१ ॥ उन लगावनहारे मनुष्यनके कुलमें जे उत्पन्न हैं और होयँगे और जे होगये हैं इनको दो हजार कल्पता हरिके घरमें वास होय है ॥ ८२ ॥

जे नर कदंबके फूलनसों जनार्दनदेवको पूजन करै हैं उनको चक्रपाणिके प्रसादसों यमको घर नहीं मिलै है ॥८३॥ कदंबके फूलनको देखिकै केशव भगवान् प्रसन्न होय हैं हे विप्र ! पूजाकरनेसे सब कामनाओंके देनहारे हरि प्रसन्न होयँ तो फिर क्या कहनो है ॥८४॥ जो फिरी वसंतऋतुमें पाटलाके फूलन करिके परम भक्तिसों गरुडध्वजको पूजन करै है वह निश्चय मुक्तिको भागी होय है ॥८५॥ बकुल और अशोकके फूलनसों जे

कदम्बकुसुमैर्देवं येऽर्चयन्ति जनार्दनम् ॥ तेषां यमालयो नैव प्रसादाच्चक्रपाणिनः ॥ ८३ ॥ दृष्ट्वा कदम्बकुसुमं प्रीतो भवति केशवः ॥ किं पुनः पूजितो विप्र सर्वकामप्रदो हरिः ॥८४। यः पुनः पाटलापुष्पैर्वसन्ते गरुडध्वजम् ॥ अर्चयेत्परया भक्त्या मुक्तिभागी भवेद्धि सः ॥ ८५ ॥ बकुलाशोककुसुमैर्येऽर्चयन्ति जगत्पतिम् ॥ विशोकास्ते भविष्यंति यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥८६॥ येऽर्चयन्ति जगन्नाथं करवीरैः सितासितैः ॥ चतुर्युगानि विप्रेन्द्र प्रीतो भवति केशवः ॥ ८७ ॥ मञ्जरीं सहकारस्य केशवोपरि ये नराः ॥ यच्छंति ते महाभागा गोकोटिफलभागिनः ॥ ८८ ॥ दूर्वांकुरैर्हरेर्यस्तु पूजाकाले प्रयच्छति ॥ पूजाफलं शतगुणं सम्यगाप्नोति मानवः ॥ ८९ ॥

जगत्पतिको पूजन करै हैं वे जबलों सूर्य चन्द्रमा रहैंगे तबताईं शोकरहित होयँगे ॥ ८६ ॥ जे श्वेत अथवा लाल कनेरके फूलनसों जगन्नाथको पूजन करै हैं हे विप्रेन्द्र ! उनपै चारि युगनलों भगवान् केशव प्रसन्न रहै हैं ॥८७॥ जे मनुष्य केशवके ऊपर आमकी मंजरी चढावै हैं वे महाभाग पुरुष कोटि गोदानके फलनको प्राप्त होयँ हैं ॥८८॥ जे दूबके अंकुरोंकरिके समयमें हरिको पूजन करैं वा पूजाको फल मनुष्यनको भली भांति

सौगुनो प्राप्त होय है ॥ ८९ ॥ जे सुख देनहारे भगवान् शमीपत्रसों पूजे हैं हे नारद ! उन करिके महाघोर यमको मार्ग निस्तीर्ण कियो गयो ॥ ९० ॥ जे मनुष्य वर्षाऋतुमें देवेश भगवान्को चम्पाके फूलनसों पूजे हैं वे संसारमें फिरि नहीं आवे हैं ॥ ९१ ॥ हे विप्रर्षे ! कुंभी जो पाटला ताके फूल जे जनार्दनपर चढावैं हैं हे मुने ! वे सुवर्णके पलमात्र चढानेके फलको पावे हैं ॥ ९२ ॥ जो पीली केतकीके फूल जनार्दनपर चढावैं

शमीपत्रैस्तु ये देवं पूजयन्ति सुखप्रदम् ॥ यममार्गं महाघोरो निस्तीर्णस्तैस्तु नारद ॥ ९० ॥ वर्षाकाले तु देवेशं कुसुमैश्चम्पकोद्भवैः ॥ येऽर्चयन्ति न ते मर्त्याः संसरेयुः पुनर्भवे ॥ ९१ ॥ कुम्भीपुष्पं तु विप्रर्षे ये यच्छन्ति जनार्दनम् ॥ सुवर्णपलमात्रं ते लभन्ते वै फलं मुने ॥ ९२ ॥ सुवर्णकेतकीपुष्पं यो ददाति जनार्दने ॥ कोटिजन्मार्जितं पापं दहते गरुडध्वजः ॥ ९३ ॥ कुंकुमारुणवर्णां च गन्धाढ्यां शतपत्रिकाम् ॥ यो ददाति जगन्नाथे श्वेतद्वीपालये वसेत् ॥ ९४ ॥ एवं सम्पूज्य रात्रौ च केशवं भुक्तिमुक्तिदम् ॥ प्रातरुत्थाय च ब्रह्मन् गत्वा तु सजलां नदीम् ॥ ९५ ॥ तत्र स्नात्वा जपित्वा च कृत्वा पूर्वाह्णिकीः क्रियाः ॥ गृहे गत्वा च सम्पूज्यः केशवो विधिवन्नरैः ॥ ९६ ॥

हैं उनके कोटि जन्मके जोरे भये पापनको गरुडध्वज जलाय देवे हैं ॥ ९३ ॥ कुंकुमके समान है अरुण वर्ण जाको ऐसी शतपत्रिका गंधयुक्त जो जगन्नाथको अर्पण करै है वह श्वेतद्वीपमें वास करै है ॥ ९४ ॥ या प्रकार भुक्ति मुक्तिके देनहारे केशव भगवान्को रात्रिमें पूजा कारि हे ब्रह्मन् ! प्रातःकाल उठि सजल नदीको जाय ॥ ९५ ॥ वहां स्नान जप और प्रातःकालकी क्रियानको करि घरमें जायके विधिवत् केशव भगवान्को पूजन करैं ॥ ९६ ॥

और व्रतके पूर्ण होनेके अथ सुधी नर ब्राह्मणको भोजन करावै फिरि भक्तियुक्त चित्त होके शिर करिके क्षमापन करावै ॥ ९७ ॥ ता पीछे भोजन वस्त्र आदिसों गुरुकी पूजा करै और इन करिके चक्रपाणिकी प्रसन्नताके अर्थ दक्षिणा देनी चाहिये ॥ ९८ ॥ ब्राह्मणनके अर्थ यत्नसों बहुतसी दक्षिणा देनी चाहिये और ब्राह्मणके आगे पहले करे भये नियमनको यत्नसों त्याग करै ॥ ९९ ॥ ब्राह्मणनके अर्थ कहिके शक्तिके

व्रतस्य पूरणार्थाय ब्राह्मणान् भोजयेत्सुधीः ॥ क्षमापयेच्च शिरसा भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ९७ ॥ गुरुपूजा ततः कार्या भोजनाच्छादनादिभिः ॥ दक्षिणा तैश्च दातव्या तुष्टचर्थं चक्रपाणिनः ॥ ९८ ॥ भूयसी चैव दातव्या ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः ॥ नियमश्चैव सन्त्याज्यो ब्राह्मणाग्रे प्रयत्नतः ॥ ९९ ॥ कथयित्वा द्विजेभ्यस्तद्द्याच्छक्त्या च दक्षिणाम् ॥ नक्तभोजी नरो राजन्ब्राह्मणान् भोजयेच्छुभान् ॥ १०० ॥ अयाचिते बलीवर्द सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥ आमांसाशी नरो यस्तु प्रदद्द्गां सदक्षिणाम् ॥ १ ॥ धात्रीस्नायी नरो दद्याद्दधिमाक्षिकमेव च ॥ फलानां नियमे राजन् फलदानं समाचरेत् ॥ २ ॥ तैलस्थाने घृतंदेयं घृतस्थाने पयः स्मृतम् ॥ धान्यानां नियमे राजन् दीयन्ते शालितण्डुलाः ॥ ३ ॥

अनुसार दक्षिणा देय हे राजन् ! नक्तभोजी मनुष्य शुभ ब्राह्मणको भोजन करावै ॥ १०० ॥ अयाचित व्रतमें सुवर्णसहित बलवान् बैलको दान करै और जो नर चार महीने मांसको नहीं खाय है वह दक्षिणासमेत गौका दान करै ॥ १ ॥ और आमलेनसों स्नान करनहारो मनुष्य दही और शहदको दान करै हे राजन् ! फलनके नियममें फलनकाही दान करै ॥ २ ॥ और तैलके स्थानमें घीको दान करै और घीके स्थानमें दूध

कह्यो है हे राजन् ! धान्यके नियममें धानके चावल दिये जाते हैं।।३।।और भूमिके सोवनेमें तूला और सामग्रीसमेतशय्या दान करै हे राजन् ! पत्ता नमें भोजन करनहारो मनुष्य घीसमेत पात्रनको दान करै।।४।।और मौनव्रतमेंतिल और सुवर्णयुक्त घंटाको दान कर और घीके नियममें स्त्री पुरुषको घृतयुक्त भोजन करावै।।५।।केशनके रखानेमें बुध दर्पणको दानकरै और जूता छोड़नेमें जतोंके जोडाको दान करै।।६।।और नोनकेछोडनेमें

दद्याद्भूशयने शय्यां सतूलां सपरिच्छदाम् ॥ पत्रभोजी नरो राजन् भोजनं घृतसंयुतम् ॥ ४ ॥ मौने घण्टां तिलांश्चैव सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥ दंपत्योर्भोजनं देयं निःस्नेहं सर्पिषा युतम् ॥ ५ ॥ धारणेन स्वकेशानामादर्शं दापयेद्बुधः ॥ उपानहौ प्रदातव्ये उपानत्परिवर्जनात् ॥ ६ ॥ लवणस्य च संत्यागे शर्करां च प्रदापयेत ॥ नित्यं दीपः प्रदेयस्तु विष्णोर्वा विबुधालये ॥ ७ ॥ सदीपं सघृतं ताम्रं कांचनं वा दशायुतम् ॥ प्रदद्याद्विष्णुभक्ताय संपूर्णव्रतहेतवे ॥ ८ ॥ एकांतरोपवासे तु कुम्भानष्टौ प्रदापयेत् ॥ सवस्त्रान् कांचनोपेतान्सर्वान् सालंकृताञ्छुभान् ॥ ९ ॥ सर्वेषामप्यलाभे तु यथोक्तकरणं विना ॥ द्विजवाक्यं स्मृतं राजन्संपूर्णव्रतसिद्धिदम् ॥ ११० ॥

शर्कराको दान करै और नित्य विष्णुके मन्दिरमें वा देवालयमें दीपक प्रज्वलित करनो चाहिये।।७।।दीपक और घी समेत बाती धरिके तांबेको वा सोनेको दीपक व्रतकी पूर्णताके लिये विष्णुभक्तके अर्थ दान करै ।।८।। एकांत व्रतमें आठ कुंभनको दान करै उन सब कुंभनको वस्त्र तथा सुवर्णसों युक्त करि अलंकृत करै।।९।।सबनके अलाभमें जो यथोक्त न होसके तो हे राजन्! ब्राह्मणको वाक्य संपूर्ण व्रतनकी सिद्धिको देनहारो

कह्यो है ॥ ११० ॥ नमस्कार करिके ब्राह्मणका विसर्जन करै ता पीछे आप भोजन करै जो चार महीने छोडो है वाकी समाप्ति करै॥ ११॥ जो प्राज्ञ मनुष्य या प्रकार करै है वह अनंत फलको प्राप्त होय है हे राजेंद्र ! अन्तमें विष्णुपुरको जाय हैं॥ १२॥ हे नृप ! जो या प्रकार चातुर्मास्य व्रतको निर्विघ्न समाप्त करै है वह कृतार्थ होजाय है और फिरि मनुष्यको जन्म नहीं पावै है ॥ १३ ॥ हे राजन् ! यह करनेसो व्रत पूर्ण होजाय है और

नत्वा विसर्जयेद्विप्रांस्ततो भुञ्जीत च स्वयम् ॥ यत्त्यक्तं चतुरो मासान्समाप्तिं तस्य चाचरेत् ॥ ११ ॥ एवं य आचरेत्प्राज्ञः सोऽनन्तफलमाप्नुयात् ॥ अवसाने तु राजेन्द्र वासुदेवपुरं व्रजेत् ॥ १२ ॥ यश्चाविघ्नं समाप्यैवं चातुर्मास्यव्रतं नृप ॥ स भवेत कृतकृत्यस्तु न पुनर्मानुषो भवेत् ॥ १३ ॥ एतत्कृत्वा महीपाल परिपूर्णं व्रतं भवेत ॥ व्रतवैकल्यमासाद्य ह्यंधः कुष्ठीप्रजायते ॥ १४ ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥ पठनाच्छ्रवणाद्वापि लभेद्गोदानजं फलम् ॥ ११५ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे कार्तिकशुक्लैकादशीप्रबोधिनीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २४ ॥

जो व्रत बिगरि जाय तो अन्धा अथवा कोढी होय ॥ १४ ॥ जो तुमने मोसों पूछो सो वह सब मैंने तुमसों कह्यो याके पढने और सुननेसे गोदानके फलको प्राप्त होय है ॥ ११५ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनय–पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां कार्त्तिकशुक्लैकादशीप्रबोधनीकथा समाप्ता ॥ २४ ॥

अथ पुरुषोत्तममासशुक्लैकादशीपद्मिनीकथा ॥ पुरुषोत्तममासे या शुक्ला चैकादशी स्मृता ॥ पद्मिनी नाम तस्यास्तु माहात्म्यं विवृणोम्यहम् ॥ १ ॥
युधिष्ठिर बोले-कि, मलमासके शुक्लपक्षमें कौनसी एकादशी होय है वाको कहा नाम है और कहा विधि है हे जनार्दन ! सो मोसों कहो ॥१॥
श्रीकृष्ण बोले-कि, मेरे मासकी जो पवित्र एकादशी होय है ताको नाम पद्मिनी जो यत्नसों उपवास की जाय तो पद्मनाभके पुरको ले

अथाधिकमासशुक्लैकादशीकथा ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ मलिम्लुचस्य मासस्य का वा एकादशी भवेत् ॥ किं नाम को विधि स्तस्याः कथयस्व जनार्दन ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ मम मासस्य या पुण्या प्रोक्ता नाम्ना च पद्मिनी ॥ सोपोषिता प्रयत्नेन पद्मनाभपुरं नयेत् ॥ २ ॥ मम मासे महापुण्या कीर्तिता कल्मषापहा ॥ तस्याः फलं कथयितुं न शक्तश्चतुराननः ॥ ३ ॥ नार दाय पुरा प्रोक्त विधिना व्रतमुत्तमम् ॥ पद्मिन्याः पापराशिघ्नं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ४ ॥ श्रुत्वा वाक्यं मुरारेस्तु प्रोवाचातिमुदा न्वितः ॥ युधिष्ठिरो जगन्नाथं विधिं पप्रच्छ धर्मवित् ॥ ५ ॥

जाय ॥२॥ मेरे मासमें अतिपवित्र और पापनकी नाश करनहारी कही गई ताके फलके कहनेको ब्रह्माहू समर्थ नहीं है ॥३॥ पहले ब्रह्मा करिके नारदके अर्थ पापसमूहको नाश करनहारो और भुक्ति तथा मुक्तिरूप फलनको देनहारी यह उत्तम पद्मिनीको व्रत कह्यो गयो ॥४॥ मुरारिको वचन सुनिके अति आनंद करिके युक्त धर्मज्ञ राजा युधिष्ठिर महाराज श्रीकृष्णसों याकी विधि पूँछतभये ॥ ५ ॥

राजाको वचन सुनिके प्रीतिसों विकसित हैं नेत्र जिनके ऐसे श्रीकृष्णजी बोले–कि, हे राजन्! सुनो जो मुनीश्वरनहूको दुर्लभ है सो व्रत मैं तुमसों कहौंगो ॥ ६ ॥ दशमीको आरंभ कियो जाय है कांसेके पात्रमें भोजन, मांस, मसूर अन्न चने तथा कोदों ॥ ७ ॥ साग शहद और पराया अन्न इन दश वस्तुनको दशमीके दिन त्याग करै हविष्य अन्न अर्थात् जब चावल आदिको भोजन करै और खारी तथा

श्रुत्वा राज्ञस्तु वचनं प्रीत्युत्फुल्लांबुजेक्षणः ॥ शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि मुनीनामप्यगोचरम् ॥ ६ ॥ दशमीदिवसे प्राप्ते व्रतारम्भो विधीयते ॥ कांस्यं मांसं मसूरांश्च चणकान् कोद्रवांस्तथा ॥ ७ ॥ शाकं मधु परान्नं च दशम्यां दश वर्जयेत् ॥ हविष्यान्नं च भुञ्जीत अक्षारलवणं तथा ॥ ८ ॥ भूमिशायी ब्रह्मचारी भवेच्च दशमीदिने ॥ ९ ॥ एकादशीदिने प्राप्ते प्रातरुत्थाय सादरम् ॥ विधाय च मलोत्सर्गं न कुर्याद्दन्तधावनम् ॥ १० ॥ कृत्वा द्वादश गण्डूषाञ्छुचिर्भूत्वा समाहितः ॥ सूर्योदये शुभे तीर्थे स्नानार्थं प्रव्रजेत्सुधीः ॥ ११ ॥ गोमयं मृत्तिकां गृह्य तिलान् दर्भाञ्छुचिस्तथा ॥ चूर्णैरामलकीभूतैर्विधिना स्नानमाचरेत् ॥ १२ ॥

नोनको भोजन न करै ॥ ८ ॥ दशमीके दिन पृथ्वीमें सोवै और ब्रह्मचर्य होके रहै ॥ ९ ॥ एकादशीको जो दिन है ताके आवनेपै आदरपूर्वक प्रातःकाल उठिकै मलको त्याग करै दंतधावन न करै ॥ १० ॥ सुधी पुरुष बारह कुल्ले करिके शुद्ध तथा सावधान होके सूर्य उदय होनेके समय शुभ तीर्थमें स्नानके लिये जाय ॥ ११ ॥ गोवर, मिट्टी, तिल और दर्भनको लेकै शुद्ध हो आमलेके चणको लगायके विधिपूर्वक स्नान करै ॥ १२ ॥

सौ हैं बाहु जिनके ऐसे जो वराहरूप कृष्ण हैं तिन करिके तू उठाई गई है और परशुराम करिके ब्राह्मणनके अर्थ दी गई है और कश्यप करिके अभि मंत्रिता ॥ १३ ॥ और नेत्रोंमें तथा बालोंमें लगी भई तू मेरे अंगनको पवित्र कर और मोको हरिपूजनके योग्य कर. हे मृत्तिके ! तेरे अर्थ नमस्कार है ॥ १४ ॥ सब औषधिनसों उत्पन्न और गौके पेटमें स्थित भूमिको पवित्र करनहारो गोबर मोको पवित्र करै ॥ १५ ॥ ब्रह्माके थूकते उत्पन्न भुवनको पवित्र

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना ॥ मृत्तिके ब्रह्मदत्तासि कश्यपेनाभिमंत्रिता ॥१३॥ त्वं मे कुरु पवित्राङ्गं लग्ना नेत्रे शिरो रुहे हरिपूजनयोग्यं मां मृत्तिके कुरुते नमः ॥१४॥ सर्वौषधिसमुत्पन्नं गवोदरमधिष्ठितम् ॥ पवित्रकरणं भूमेर्मांपावयतु गोमयम् ॥१५॥ ब्रह्मष्ठीवनसंभूता धात्री भुवनपावनी ॥ संस्पृष्टा पावयांगं मे निर्मलं कुरु ते नमः ॥१६॥ देवदेव जगन्नाथ शंखचक्र गदाधरः ॥ देहि विष्णो ममानुज्ञां तव तीर्थावगाहने ॥१७॥ वारुणांश्च जपेन्मंत्रान्स्नानं कुर्याद्विधानतः॥ गंगादितीर्थं संस्मृत्य यत्र कुत्र जलाशये ॥१८॥ पश्चात्संमार्जयेद्गात्रं विधिना नृपसत्तम् ॥ मुखे पृष्ठे च हृदये बाह्वोः शिरसि चाप्यधः ॥ १९ ॥ परिधाय सुखं वासःशुक्लं शुचि ह्यखंडितम् ॥ ततः कुर्याद्धरेः पूजां महापापं विनश्यति ॥ २० ॥

करनहारी स्पर्श करी भई तू धात्री मेरे अंगको पवित्र तथा निर्मल कर तेरे अर्थ नमस्कार है ॥ १६ ॥ हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! हे शंखचक्रगदाधर ! हे विष्णो ! ! अपने तीर्थनमें स्नान करनेकी आज्ञा दीजिये ॥१७॥ वरुणके मंत्रनको जप करै गंगा आदि तीर्थनको स्मरण करके जा काहू जलाशयमें विधिसों स्नान करै ॥१८॥ हे नृपश्रेष्ठ! मुखमें पीठिमें हृदयमें बाहुमें शिरमें और नीचे विधिकरिके शरीरको संमार्जन करै ॥१९॥ फिरि सुखकारी

सफेद शुद्ध और अखंडित वस्त्र पहरिके पीछे हरिको पूजन करै तो महापाप नाशको प्राप्त होय ॥२०॥ विधिपूर्वक संध्योपासन करि पितृ और देवतानको तर्पण करे फिरि हरिके मंदिरमें आयके कमलापति भगवान्को पूजन करै ॥ २१ ॥ सुवर्णके बने भये राधिकासहित कृष्णको और पार्वतीसहित शिवको विधिपूर्वक पूजन करै ॥२२॥ घटके ऊपर तांबेके वा मट्टीके पात्रमें दिव्य वस्त्रन करिके युक्त और दिव्य गंधनसों सुगंधित

संध्यामुपास्य विधिना तर्पयेच्च पितृन्सुरान् ॥ हरेर्मंदिरमागत्य पूजयेत्कमलापतिम् ॥ २१ ॥ स्वर्णमात्रं कृतं देवं राधिकासहितं हरिम् ॥ पार्वत्या सहितं देवं पूजयेद्विधिपूर्वकम् ॥ २२ ॥ कुम्भोपरि न्यसेद्देवं ताम्रपात्रेऽथ मृन्मये ॥ दिव्यवस्त्रसमायुक्ते दिव्य गन्धानुवासिते ॥२३॥ तस्योपरि न्यसेत्पात्रं ताम्रं रौप्यं हिरण्मयम् ॥ तस्मिन्संस्थापयेद्देवं विधिना पूजयेत्ततः ॥२४॥ संस्नाप्य सलिलैः श्रेष्ठैर्गंधधूपादिवासितैः ॥ चंदनागुरुकर्पूरैःपूजयेद्देवमीश्वरम् ॥२५॥ नानाकुसुमकस्तूरींकुंकुमेन सितांबुजैः॥तत्कालजातैः कुसुमैःपूजयेत्परमेश्वरम् ॥ २६ ॥ नैवेद्यैर्विविधैः शक्त्या तथा नीराजनादिभिः ॥ धूपैर्दीपैः सकर्पूरैः पूजयेत्केशवं शिवम् ॥२७॥

करिके देवको स्थापित करै ॥२३॥ वा घटके ऊपर तांबेके रूपेके अथवा सोनेके पात्रको धरै वामें देवको स्थापित करिके ईश्वर देवको पूजन करै ॥२४॥२५॥ नाना प्रकारके फूल कस्तूरी केसर और श्वेत कमल करिके और वा समयमें उत्पन्न भये फूलन करिके परमेश्वरको पूजन करै ॥२६॥ और यथाशक्ति नाना प्रकारके नैवेद्यन तथा नीराजन आदि करिके और कर्पूरसहित धूपदीपन करिके केशव और शिवको पूजन करै ॥ २७ ॥

और भक्तिपूर्वक उनके आगे नृत्य तथा गीत करै पतितन और पापीनसों बात न करै और न उनका स्पर्श करै ॥२८॥ झूठ वचननको न बोले सत्यसों पवित्र वचन बोलै रजस्वला स्त्रीको न स्पर्श करै ब्राह्मण तथा गुरुकी निंदा न करै ॥ २९ ॥ और विष्णुके आगे वैष्णवनके साथ पुराण सुनै और जो मलमासके शुक्लपक्षमें एकादशी होती है वाको व्रत निर्जल करनो चाहिए ॥३०॥ जलपान करिके अथवा दूधको आहार करिके व्रत

नृत्यं गीतं तदग्रे तु कुर्याद्भक्तिपुरःसरम् ॥ नालपेत्पतितान्पापांस्तस्मिन्नहनि न स्पृशेत् ॥ २८ ॥ नानृतं हि वदेद्वाक्यं सत्यपूतं वचो वदेत् ॥ रजस्वलां न स्पृशेच्च न निन्देद्ब्राह्मणं गुरुम् ॥ २९ ॥ पुराणं पुरतो विष्णोः शृणुयात्सह वैष्णवैः ॥ निर्जला सा प्रकर्तव्या या च शुक्ले मलिम्लुचे ॥ ३० ॥ जलपानेन वा कुर्याद्दुग्धाहारेण नान्यथा ॥ रात्रौ जागरणं कुर्याद्गीतवादित्रसंयुतम् ॥ ३१ ॥ प्रथमे प्रहरे पूजा नारिकेलार्घमुत्तमम् ॥ द्वितीये श्रीफलैश्चैव तृतीये बीजपूरकैः ॥ ३२ ॥ चतुर्थे पूजयेत्पूगैर्नारंगैश्च विशेषतः ॥ प्रथमे प्रहरे पुण्यमग्निष्टोमस्य जायते ॥ ३३ ॥ द्वितीये वाजपेयस्य तृतीये हयमेधजम् ॥ चतुर्थे राजसूयस्य जाग्रतो जायते फल ॥ ३४ ॥

करै अन्यथा नहीं और गाने बजाने समेत रात्रिमें जागरण करै॥ ३१॥ पहले पहरमें नारियल फलन करिके अर्घ करि पूजन करनो उत्तम है और दूसरेमें श्रीफल जे बेलके फल है तिनसों और तीसरेमें बिजौरेके फलन करिके॥ ३२॥ और चौथे पहरमें पूग जो सुपारी हैं तिन करिके और विशेष करिके नारंगीसों पूजन करै। प्रथम प्रहरमें अग्निष्टोम यज्ञको फल प्राप्त होय॥ ३३॥ दूसरेमें वाजपेयको तीसरेमें अश्वमेधको और चौथे प्रहरके जाग

रणमें राजसूययज्ञको फल मिलै है ॥ ३४ याते परतर कोई पुण्य नहीं है और न याते परे कोई यज्ञ है और न याते परे कोई विद्या है न याते परे को तप है ॥३५॥ पृथ्वीमें जे तीर्थ हैं क्षेत्र हैं और स्थान हैं ते सब वा मनुष्य करिके देखे गये जा करिके हरिको व्रत कियो ॥ ३६ ॥ या प्रकार सूर्योदयपर्यंत जागरण करै और सूर्योदय होने पर शुभ तीर्थमें जाके स्नान करै ॥ ३७ ॥ स्नान करि आयके भक्तिसों देव ईश्वरको पूजन

नातःपरतरं पुण्यं नातः परतरा मखाः ॥ नातः परतरा विद्या नातःपरतरं तपः ॥ ३५ ॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि क्षेत्राण्यायतनानि च ॥ तानि स्नातानि दृष्टानि येनाकारि हरेर्व्रतम् ॥३६॥ एवं जागरणं कुर्याद्यावत्सूर्योदयं भवेत् ॥ सूर्योदये शुभेतीर्थे गत्वा स्नानं समाचरेत् ॥३७॥ स्नात्वैवागत्य भावेन पूजयेद्देवमीश्वरम् ॥ पूर्वोदितेन विधिना भोजयेद्ब्राह्मणाञ्छुभान्॥३८॥ कुम्भादिकं च यत्सर्वं प्रतिमां केशवस्य च ॥ पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय समर्पयेत॥३९॥एवंविधं व्रतं योवै कुरुते भुवि मानवः ॥ सफलं जायते तस्य व्रतं मुक्तिफलप्रदम् ॥४०॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वयाऽनघ ॥ मलिम्लुचस्य मासस्य शुक्लाया विधिमुत्तमम ॥ ४१ ॥ व्रतानि तेन चीर्णानि सर्वाणि नृपनन्दन ॥ पद्मिन्याःप्रीतियुक्तो यः कुरुते व्रतमुत्तमम् ॥ ४२ ॥

पहले कही भईविधिसों और सुन्दर ब्राह्मणनको भोजन करावै॥३८॥कुंभ आदि जे सब वस्तुहैं और केशवकी प्रतिमा है ताहि विधिपूर्वक पूजन करिके ब्राह्मणनके अर्थ दान करै ॥ ३९ ॥ जो मनुष्य पृथ्वीमें या प्रकारके व्रतको करै ताको भुक्ति और मुक्ति देनेहारो यह व्रत सफल होय है ॥ ॥४०॥ हे अनघ ! जो तुमने मोसों पूछो सो यह सब मैंने मलमासके शुक्लपक्षकी एकादशीकी विधि तुमसों कही॥४१॥हे नृपनन्दन ! प्रीतियुक्त जो

मनुष्य पद्मिनी एकादशीको व्रत करै है ताने मानो सम्पूर्ण व्रत करि लिये ॥४२॥ मलमासके कृष्णपक्षहूकी एकादशीको यही विधि है वा सब पापनकी नाश करन हारीको नाम परमा है ॥४३॥ यामें मैं तुमसों एक मनोहर कथा कहोगो जाहि पुलस्त्य मुनिने नारदके अर्थ विस्तारसों कही हो ॥४४॥ कार्तवीर्य करि कारागृहमें डारे भये रावणको देखि पुलस्त्य मुनिने वा राजासों याचना करिके वाहि छुडायो ॥ ४५ ॥ वा

कृष्णाया मलमासस्य विधिस्तस्यापि तादृशः ॥ परमा स तु विज्ञया सर्वपापक्षयकरी ॥ ४३ ॥ अत्र ते कथयिष्यामि कथामेकां मनोरमाम् ॥ नारदाय पुलस्त्येन विस्तारेण निवेदिताम् ॥ ४४ ॥ कार्तवीर्येण कारायां निक्षिप्तं वीक्ष्य रावणम् ॥ विमोचितः पुलस्त्येन याचयित्वा महीपतिम् ॥ ४५ ॥ तदाश्चर्यं तदा श्रुत्वा नारदो दिव्यदर्शनः ॥ पप्रच्छ च यथा भक्त्या पुलस्त्ये मुनिपुंगवम् ॥ ४६ ॥ दशाननेन विजिताः सर्वे देवाः सवासवाः ॥ कार्तवीर्येण विजितः कथं रणविशारदः ॥ ४७ ॥ नारदस्य वचः श्रुत्वा पुलस्त्यो मुनिमब्रबीत् ॥ शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि कार्तवीर्यसमुद्भवम् ॥ ४८ ॥ पुरा त्रेतायुगे राजन्माहिष्मत्यां बृहत्तरः ॥ हैहयानां कुले जातः कृतवीर्यो महीपतिः ॥ ४९ ॥

समय यह आश्चर्य सुनिके दिव्य है दर्शन जिनको ऐसे नारदमुनि भक्ति करिके पुलस्त्यसों पूँछत भये ॥४६॥ इन्द्र समेत सब देवता दशानन करिके जीते गये तो रण करनेमें वह रावण कार्तवीर्य करिके कैसे जीतो गयो सो कहिये ॥ ४७ ॥ नारदमुनिके यह वचन सुनिके पुलस्त्य मुनि बोलत भये हे वत्स ! सुनो मैं कार्तवीर्यकी उत्पत्ति तुमसों कहोंगो ॥ ४८ ॥ पहले त्रेतायुगमें माहिष्मती नाम पुरीमें हैहय नाम राजनके

कुलमें उत्पन्न कृतवीर्य राजा होत भयो ॥ ४९ ॥ वा राजाके प्राणसमान प्यारी एक हजार स्त्री होत भई उन स्त्रीनमें काहूते राज्यके भारको धारण करनहारो राजा पुत्रको नहीं प्राप्त होत भयो ॥ ५० ॥ देवतानको पितृनको सिद्धनको और बहुत बड चिकित्सनको पूजन करतो और उनके वचनसों व्रतनको करतो वह राजा वा समय पुत्रको न प्राप्त होत भयो ॥ ५१ ॥ तब पुत्रके विना वह राज्य राजाके सुखके लिये ऐसे नहीं

सहस्रं प्रमदास्तस्य नृपस्य प्राणवल्लभाः न तासां तनयं कश्चिल्लेभे राजधुरंधरः ॥ ६० ॥ यजन्देवान्पितॄन्सिद्धान्प्रचिकित्सान् बृहत्तरान् ॥ तेषां वाक्याद्व्रतं कुर्वन्न लब्धस्तनयस्तदा ॥ ५१ ॥ सुतं विना तदा राज्यं न सुखाय महीपतेः ॥ क्षुधितस्य यथा भोगा न भवन्ति सुखप्रदाः ॥ ६२ ॥ विचार्य चित्ते नृपतिस्तपस्तप्तुं मनो दधे ॥ तपसैव सदा सिद्धिर्जायते मनसेप्सिता ॥ ६३ ॥ इत्युक्तश्च सहभार्यश्च चीरवासा जटाधरः ॥ तपस्तप्तुं गृहं न्यस्य सुविचार्य सुमन्त्रिणे ॥ ६४ ॥ निर्गतं नृपतिं वीक्ष्य पद्मिनी प्रमदोत्तमा ॥ हरिश्चंद्रस्य तनया इक्ष्वाकुकुलसम्भवा ॥ ६६ ॥

होत भयो जैसे भूखे मनुष्यको भोग सुखके देनहारे नहीं हैं ॥ ५२ ॥ राजा अपने मनमें विचारिके तप करनेमें मनको लगावत भयो कि तपहीसे मनकी चाही भई सिद्धि होय है ॥ ५३ ॥ ऐसे कहिके स्त्री समेत चीर वस्त्रको पहिरि जटानको धारण करि उत्तम मंत्रीको घर सौंपिके तप करिवेके अर्थ यात्रा करत भयो ॥ ५४ ॥ वा समय हरिश्चन्द्र राजाकी पुत्री इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न और सब स्त्रीनमें उत्तम पद्मिनी राजाको निकारो भयो देखिके ॥ ५५ ॥

वह पतिव्रता तपके लिये है उद्योग जाने ऐसे पतिको देखि गहने उतारिके एक चीरको धारण करत भई ॥५६॥ और पतिके साथ गंधमादन नाम पर्वतको जातभई वहां जायके राजा दश हजार वर्षलों तपको करत भयो ॥५७॥ गदाधरदेवका ध्यान करते रहै परंतु राज्यमें पुत्रको नहीं प्राप्त होत भयो तब वहस्त्री हाड और नसें हैं शेष जामें ऐसे पतिको देखि॥५८॥विनयसे युक्त वह रानी बडी साध्वीजो अनुसूया तिनसों पूंछत भईकि, हेसाध्वी!मेरे

पतिव्रता प्रियं दृष्ट्वा तपस्तप्तुं कृतोद्यमम् ॥ भूषणानि परित्यज्य चीरमेकं समाश्रयत् ॥ ५६ ॥ जगाम पतिना सार्द्धं पर्वते गन्धमादने ॥ गत्वा तत्र तपस्तेपे वर्षाणामयुतं नृपः ॥ ५७ ॥ न लेभे तनयं राज्ये ध्यायन्देवं गदाधरम् ॥ अस्थिस्नायुमयं कान्तं दृष्ट्वा सा प्रमदोत्तमा ॥ ५८ ॥ अनसूयां महासाध्वीं पप्रच्छ विनयान्विता ॥ भर्तुः प्रतपतः साध्वि वर्षाणामयुतं गतम् ॥ ५९ ॥ तथापि न प्रसन्नोऽभूत्केशवः कष्टनाशनः ॥ व्रतं मम महाभागे कथयस्व यथातथम् ॥ ६० ॥ येन प्रसन्नो भगवान् मम भक्त्या प्रजायते ॥ येन मे जायते पुत्रश्चक्रवर्ती बृहत्तरः ॥ ६१ ॥ श्रुत्वा तस्यास्तु वचनं पतिव्रतपरायणा ॥ यं प्रव्रजन्तं नृपतिं स्वयं वव्राज दीक्षितम्॥६२॥तदा प्रोवाच संहृष्टा पद्मिनीं पद्मलोचनाम् ॥ स्नात्वा मलिम्लुचे शुभ्रु मासद्वादशसंमते॥६३॥

पतिकोतपकरते दशहजार वर्ष व्यतीत होगये॥५९॥परंतु क्लेशके नाश करनेहारे केशव भगवान् प्रसन्न नहीं भये हे महाभागे ! मोसों यथार्थ व्रत कहो ॥६०॥जा व्रतसों मेरी भक्तिकारिके भगवान् प्रसन्न होयँ जासोंमेरे चक्रवर्ती और बहुतबडो पुत्र होय॥६१॥पतिव्रतमें परायण जो तपकी दीक्षायुक्त पतिको तपके लिये जाते देखि आपहू पतिके साथ चलती भई ऐसी पद्मलोचना पद्मिनीसों ॥ ६२ ॥ अनसूया प्रसन्न होके बोली कि, हे सुभ्रु !

बारह मासके मत जो मलमास है तामें तू स्नान कर ॥६३॥ हे शुभानने ! तीस दिननकरिके एक मास पूरो होय है ताके मध्यमें दो द्वादशीयुक्त दो एकादशी हैं एक पद्मिनी और दूसरी परमा ॥ ६४ ॥ विधिपूर्वक जागरणके साथ उनको व्रत करनो योग्य है या व्रतसों पुत्रके देनहारे भगवान् शीघ्र ही होयगो ॥६५॥ हे नृप ! ऐसी कहिके कर्दमऋषिकी पुत्री अनसूया प्रसन्न होके पहले मेरी कही भई विधिको

त्रिंशद्दिनैश्च भवति मासः पूर्णः शुभानने ॥ तन्मध्ये द्वादशीयुग्मं पद्मिनी परमा तथा ॥ ६४ ॥ उपोष्य तत्प्रकर्तव्यं विधिना जागरैः समम् ॥ शीघ्रं प्रसन्नो भगवान्भविष्यति सुतप्रदः ॥ ६५ ॥ इत्युक्त्वाकथयत्सर्वं मया पूर्वोदितं नृप ॥ विधिं व्रतस्य विधिवत्प्रसन्ना कर्दमाङ्गजा ॥ ६६ ॥ श्रुत्वा व्रतविधिं सर्वं यथोक्तमनसूयया ॥ चार्वंग्यकृत तत्सर्वं पुत्रप्राप्तिमभीप्सती ॥ ६७ ॥ एकादश्यां निराहारा सदा जाता च निर्मला ॥ जागरेण युता रात्रौ गीतनृत्यसमन्विता ॥ ६८ ॥ पूर्णे व्रते च वै शीघ्रं प्रसन्नः केशवः स्वयम् ॥ बभाषे गरुडारूढो वरं वरय शोभने ॥ ६९ ॥ श्रुत्वा वाक्यं जगद्धातुः स्तुत्वा प्रीत्या शुचिस्मिता ॥ ययाचेऽद्य वरं देहि मम भर्तुर्बृहत्तरम् ॥ ७० ॥

कहती भई ॥ ६६ ॥ अनसूयाने जैसी कही ता धिको सुनिके सुन्दर अंगवाली पद्मिनी पुत्रप्राप्तिकी इच्छासों वा सबको करत भई ॥ ६७ ॥ एकादशीको सदा वह निर्मल निराहार रहती और रात्रिमें गीत नृत्य समेत जागरण करती ॥६८॥और व्रत र्ण होनेपै शीघ्रही प्रसन्न गरुडपै चढे भये केशव भगवान् आय बोले कि, हे शोभने ! तू वरको मांग ॥६९॥ जगद्धाता जे श्रीभगवान् हैं तिनको बचन सुनिके वह शुद्ध दह ास्य

वाली प्रीतिसों भगवान्की स्तुति करिके मांगती भई कि, मेरे पतिको अब बहुत बडो वर दीजिये॥७०॥पद्मिनीको यह वचन सुनिकेकृष्ण प्रिय वचन बोले हे भद्रे!तो करिके प्रसन्न कियो हौं यह जनार्दन बोलत भये॥७१॥यह मलमासको महीनो जसो मोको प्यारो है तैसो और नहीं है ताके मध्यमें मेरी प्रीतिकी बढ़ावनहारी सुन्दर एकादशी होय है ॥७२॥ हे सुभ्रु ! तैंने वा एकादशीको व्रत यथोक्तविधिसों कियो है हेसुभगानने!ताते

पद्मिन्यास्तद्वचः श्रुत्वा कृष्णः प्रीतः प्रियंवदः ॥ त्वयाऽहं तोषितो भद्रे प्रत्युवाच जनार्दनः ॥ ७१ ॥ मलिम्लुचश्च मासोऽसौ नाऽन्यो मे प्रीतिदायकः ॥ तन्मध्यैकादशी रम्या मम प्रीतिविवर्धिनी ॥ ७२ ॥ सा त्वयोपोषिता सुभ्रु यथोक्तविधिनामुना ॥ तेन त्वया प्रसन्नोऽहं कृतोस्मि सुभगानने ॥ ७३ ॥ तव भर्तुः प्रदास्यामि वरं यन्मनसेप्सितम् ॥ इत्युक्त्वा नृपतिं प्राह विष्णु विश्वार्तिनाशनः ॥ ७४ ॥ वरं वरय राजेन्द्र यत्ते मनसि कांक्षितम् ॥ सन्तोषितोऽहं प्रियया तव सिद्धिचिकीर्षया ॥ ७५ ॥ श्रुत्वा तद्वचनं विष्णोः प्रसन्नो नृपसत्तमः ॥ वव्रे सुतं महाबाहुं सर्वलोकनमस्कृतम् ॥ ७६ ॥ न देवैर्मानुषैर्नागैर्दैत्यदानव राक्षसैः ॥ जेतुं शक्यो जगन्नाथ विना त्वां मधुसूदन ॥ ७७ ॥

मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हौं॥७३॥तेरे पतिके मनको चाहो भयो वर देऊंगो ऐसे कहिके विश्वके दुःख दूरि करनहारे विष्णु राजासों बोलत भये॥७४॥ हे राजेन्द्र ! तुमने जो वरमनसों चाहो है ताहि मांगो तुम्हारी सिद्धिके करनेकी इच्छासों मैं तुम्हारी प्रियाकारि संतुष्टकिये गयो हौं॥७५॥विष्णुके या वचनको सुनिके प्रसन्न वह राजा सब लोकन करिके नमस्कार कियो गयो ऐसो जो महाबाहु पुत्र है ताहि मांगत भयो॥७६॥ हे मधुसूदन! वह

पुत्र ऐसो होय जो देवता मनुष्य नाग दैत्य दानव राक्षस इनमेंते तुम्हारे विना काहूते न जीतो जाय ॥७७॥ ऐसे कहे गये भगवान् 'बहुतअच्छा' ऐसे कहिकै वहीं अंतर्धान हो जात भये. प्रसन्न है आत्मा जाको ऐसो राजाहू प्रिया समेत हृष्टपुष्ट होके॥७८॥नर और नारी करिके मनोहर जो आपको नगर है तामें आवत भयो और वह राजा पद्मिनी रानीमें कार्त्तवीर्य नाम महाबली पुत्रको प्राप्त होत भयो॥७९॥ तीनों लोकनमें वाके समान कोई

इत्युक्तो बाढमित्युक्त्वा तत्रैवान्तरधीयत ॥ नृपोऽपि सुप्रसन्नात्मा हृष्टः पुष्टः प्रियायुतः ॥ ७८ ॥ समायात्स्वपुरं रम्यं नरनारी मनोरमम् ॥ सपद्मिन्यां सुतं लेभे कार्त्तवीर्यं महाबलम् ॥ ७९ ॥ न तेन सदृशः कश्चित्त्रिषु लोकेषु मानवः ॥ तस्मात्पराजितः संख्ये रावणो दशकन्धरः ॥ ८० ॥ न त जेतुं समर्थोऽस्ति त्रिषु लोकेषु कश्चन ॥ विना नारायणं देवं चक्रपाणिं गदाधरम् ॥८१ ॥ न त्वया विस्मयः कार्यो रावणस्य पराजये ॥ मलिम्लुचप्रसादेन पद्मिन्याश्चाप्युपोषणात् ॥ ८२ ॥दत्तो देवाधिदेवेन कार्तवीर्यो महाबलः ॥ इत्युक्त्वा प्रययौ विप्रः प्रसन्नेनान्तरात्मना ॥ ८३॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वयानघ ॥ मलिम्लुचस्य मासस्य शुक्लायाः सम्भवो महान् ॥ ८४ ॥

मनुष्य न होत भयो ताते दशकंधर रावण युद्धमें तासों हारिजात भयो॥८०॥चक्रपाणिगदाधर नारायण देवके विना तीनोंलोकनमें वाहि जीतबेको कोई समर्थ नहीं है ॥ ८१ ॥ मलमासके प्रसादसों और पद्मिनीव्रतके करनेसों रावणके हारनेमें तुमको विस्मय न करनो चाहिये॥८२॥देवाधिदेव जे भगवान् हैं तिन करिके कार्त्तवीर्य महाबली दियो गयो है ऐसे कहिके प्रसन्नहृदय हो वह पुलस्त्य जात भयो ॥ ८३ ॥ और कृष्ण बोले—कि

हे अनघ ! जो तुमने पूँछो सो सब मने तुमसों मलमासके शुक्लपक्षकी एकादशीको सम्भव कह्यो ॥ ८४ ॥ जे मनुष्य याको व्रत करेंगे वे हरिके पदको प्राप्त होयँगे । हे राजेन्द्र ! जो वांछित वस्तुको चाहते हो तुमहू ऐसेही करो ॥८५॥ यह केशव भगवान्‌को वचन सुनि अतिहर्षित राजा युधिष्ठिर बन्धुनकरिके युक्त हो विधानपूर्वक व्रतको करत भये ॥८६॥ सूतजी बोले—कि, हे द्विज ! जो तुमने पहिले पूँछो हो सो यह मैंने तुमसों

ये करिष्यन्ति मनुजास्ते यास्यन्ति हरेः पदम् ॥ त्वमेवं कुरु राजेन्द्र यदि चेष्टमभीप्ससि ॥ ८५ ॥ केशवस्य वचः श्रुत्वा धर्म राजोऽतिहर्षितः ॥ चक्रे व्रतं विधानेन बन्धुभिः परिवारितः ॥ ८६ ॥ सूत उवाच॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोऽहं पुरा द्विज ॥ पुण्यं पवित्रं परमं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥८७॥ एवंविधं येऽपि व्रतं मनुष्या भक्त्या करिष्यंति मलिम्लुचस्य ॥ उपोषिता यैस्तु सुखप्रदात्री या शुक्लपक्षे भुवि तेऽपि धन्याः ॥ ८८ ॥ श्रोष्यन्ति ये तस्य विधिं समग्रं तेऽप्यंशभाजा मनुजा प्रशस्ताः ॥ ये वै पठिष्यन्ति कथां समग्रां ते वै गमिष्यन्ति हरेर्निवासम् ॥८९ ॥ इत्यधिकशुक्लैकादशीकथा समाप्ता ॥ २९ ॥

कह्यो । सो कैसो पुण्य है और परम पवित्र है अब फिर आप कहा सुनो चाहो हो ॥८७॥ जे मनुष्य या प्रकारके मलमासके व्रतको भक्तिसों करैंगे और जिन करिके सुखकी देनहारी शुक्ल पक्षकी एकादशी करी गई वे पुरुषहू या पृथिवीमें धन्य हैं ॥८८॥ और याकी संपूर्ण विधिको सुनैंगे वे उत्तम मनुष्य धन्य हैं और कथाको समग्र पढैंगे वे निश्चय करि हरिके निवासको जायँगे ॥ ८९ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुख तनयपण्डितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायां मलमासशुक्लपक्षैकादशीपद्मिनीकथा समाप्ता ॥ २९ ॥

अथाधिकमासकृष्णैकादशीपरमाकथा ॥ मलिम्लुचे कृष्णपक्षे परमैकादशी तु या ॥ तन्माहात्म्यस्य विवृतिं नृगिरा संतनोम्यहम् ॥१॥ युधिष्ठिर बोले–कि, हे विभो ! मलमासके कृष्णपक्षकी एकादशी कौनसी कही जाती है और वाको कहा नाम है और वाकी विधि कैसी है?हे जगत्के स्वामी ! सो कहिये ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण बोले–कि, परमा नामसों प्रसिद्ध वह एकादशी पवित्र और पापनकी नाश करनहारी है, हे युधिष्ठिर ! मनुष्यनको

अथाधिककृष्णकादशी कथा ॥ युधिष्ठिर उवाच॥ मलिम्लुचस्य मासस्य कृष्णा का कथ्यते विभो ॥ किं नाम को विधिस्तस्याः कथयस्व जगत्पते ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ परमेति समाख्याता पवित्रा पापहारिका ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदा णां भोगदा च युधिष्ठिर ॥ २ ॥ पूर्वोक्तविधिना कार्या शुक्लायाः सदृशेन वै ॥ पूजयेत्परया भक्त्या नाम्ना देवं नरोत्तमम् ॥३॥ अत्रते कथयिष्यामि कथामेतां मनोरमाम् ॥ काम्पिल्यनगरे जातां मुनीनामग्रतः श्रुताम् ॥४॥ आसीदद्विजवरः कश्चित्सुमेधा नाम धार्मिकः ॥ तस्य पत्नी पवित्राख्या पातिव्रत्यपरायणा ॥ ५ ॥ कर्मणा केनचिद्विप्रो धनधान्यविवर्जितः ॥ न क्वापि लभते भिक्षां याचन्नपि नरान् बहून् ॥ ६ ॥

भुक्ति और मुक्तिकी तथा भोगकी देनहारी है ॥ २ ॥ पहले जो शुक्लाकी विधि कही है वाहि सदृश याहूको व्रत करनो चाहिये और यामें परम भक्ति करिके नरोत्तम देवको पूजन करै ॥ ३ ॥ यहां मैं तुमसों एक मनोहर कथा कहौं हा जो कांपिल्य नगरमें भई मैंने मुनिनके आगे सुनी है ॥४॥ सुमेधा नाम कोई धर्मात्मा ब्राह्मण होत भयो और वाकी स्त्री पतिव्रताके धर्ममें परायण पवित्रा नाम होत भई ॥५॥ काहू कर्म करिके वह धन

और धान्य करि रहित हो जात भयो वह बहुत मनुष्यनसों मांगतो हो परंतु वाहि भिक्षा कहूं नहीं मिलती ॥६॥ न कहीं भोजन पावतो वस्त्र तथा मण्डन न पावतो और रूप तथा यौवनकी मधुरता करि युक्त जो वह पति ब्राह्मण है ताहिकी वाको स्त्री सेवा करती ॥७॥ जो कबहूं अतिथिको पूजन करती तो वह विशालाक्षी घरमें भूखी स्थित रहती परंतु वाको मुख कबहूं म्लान नहीं होतो ॥ ८ ॥ वह जो सुन्दर दांतनवाली भार्या

न भोज्यं लभते तादृङ्न वस्त्रं नैव मण्डनम् ॥ रूपयौवनमाधुर्यं नारी शुश्रूषते पतिम् ॥ ७ ॥ अतिथिं पूजयेत्क्वापि तदा सा क्षुधिता गृहे ॥ तिष्ठत्येव विशालाक्षी न म्लानमुखपङ्कजा ॥ ८ ॥ विलोक्य भार्यां सुदतीं कर्शतीं स्वकलेवरम् ॥ न भर्त्तारं क्वचिच्चैव नास्त्यन्नमिति भाषते ॥ ९ ॥ विचार्य ब्राह्मणश्चित्ते भार्यायाः प्रेमबन्धनम् ॥ निन्दन्भाग्यं स्वकं विप्रः प्रोचे वाक्यं प्रियंवदाम् ॥ १० ॥ कान्ते करोमि किं कार्यं न मया लभ्यते धनम् ॥ याचयामि नरान् भव्यान्न यच्छंति च मे धनम् ॥ ११ ॥ किं करोमि क्व गच्छामि त्वं मे कथय शोभने ॥ विना धनेन सुश्रोणि गृहकार्यं न सिध्यति ॥ १२ ॥

है ताहि अपने शरीरको कसती भई देखि और यहू देख्यो कि, वह पतिसों कबहूं नहीं कहती कि, घरमें अन्न नहीं है ॥९॥ वह ब्राह्मण भार्याके दृढ प्रेमको देखि अपने भाग्यकी निन्दा करतो भयो प्रियंवदासा वचन बोलत भयो ॥ १० ॥ हे कान्ते! मैं कहा काम करौं मोको धन नहीं मिलै है, उत्तम मनुष्यनसों याचनाहू करौं हौ परन्तु मोको धन नहीं देय है ॥ ११ ॥ कहा करौं और कहा जाऊं हे शोभने ! तू मोसों कह हे सुश्रोणि !

धनके बिना घरको काम नहीं चलै है ॥ १२ ॥ मोको परदेशको आज्ञा देउ मैं धनकी प्राप्तिके लिये जाऊँ वा देशमें जो होनहार होयगो सो वहाँहू भाग्यहीसों मिलैगो ॥१३॥ उद्यमके विना कामोंकी सिद्धि नहीं होय है ताते पंडित सर्वथा शुभ उद्यमकी प्रशंसा करें हैं ॥१४॥ पतिको वचन सुनि वह सुलोचना आँखनमें आँसू भरि हाथ जोरि नम्रतासों झुकी है ग्रीवा जाकी ऐसे हो बोलत भई ॥ १५ ॥ तुमते कोऊ अधिक

देह्याज्ञां परदेशाय गच्छामि धनलब्धये ॥ तस्मिन्देशे च यद्भाव्यं भाग्ये तत्रैव लभ्यते ॥ १३ ॥ उद्यमेन विना सिद्धिः कर्मणां नोपलभ्यते ॥ तस्माद्बुधाः प्रशंसंति सर्वथैव शुभोद्यमम् ॥ १४ ॥ श्रुत्वा कान्तस्य वचनं साश्रुनेत्रा विचक्षणा ॥ प्रोवाच प्राञ्जलि र्भूत्वा विनयानतकंधरा ॥ १५ ॥ त्वत्तो नास्ति सुविज्ञाता त्वयाऽऽज्ञप्ता ब्रवीम्यहम् ॥ हितैषिणो नरा ब्रूयुः शश्वदापद्गता अपि ॥ १६ ॥ पूर्वदत्तं हि लभते यत्र कुत्र महीतले ॥ विना दानं न लभ्येत मेरौ कनकपर्वते ॥ १७ ॥ पूर्वदत्ता हि या विद्या पूर्वदत्तं हि यद्धनम् ॥ पूर्वदत्ता हि या भूमिरिह जन्मनि लभ्यते ॥ १८ ॥ यद्धात्रा लिखितं भाले तत्तत्रैव हि लभ्यते ॥ विना दत्तेन किं क्वापि लभ्यते नैव किञ्चन ॥ १९ ॥

ज्ञानी नहीं तुम करिके आज्ञा दी गई मैं कहौं सदा आपत्तिमें स्थिरहू हितके चाहनहारे मनुष्य कहैं हैं ॥१६॥ जहां कहीं भूतलमें पूर्व जन्मको दियो भयो मिले है बिना दानके सुवर्णके मेरु पर्वतहूमें नहीं मिले है ॥ १७ ॥ पूर्वकी दी भई जो विद्या है और पूर्वको दियो जो धन है और पूर्वको दी भई जो भूमि है वह या जन्ममें मिलै है ॥ १८ ॥ विधिनाने जो माथेमें लिखि दिया है वह वहां ही मिलि जाय है क्या कबहूं

कुछ विना दत्तहूके मिले है ? ॥१९॥हे विप्रेंद्र ! पहले जन्ममें न मैंने और न तुमने कुछ थोरो वा बहुत धन सत्पात्रनके हाथमें दियोहै ॥२०॥वा देशमें अथवा परदेशमें दियो भयो सर्वत्र मिलैहै और विश्वेश अन्नमात्र तौ विना दत्तहू वाको दे देय हैं ॥२१॥ हे विप्रेंद्र ! ताते तुमको मोको यहाँही रहनो चाहिये हे महामुने ! तुम्हारे विना मैं क्षणमात्रहू नहीं रहिसकौं हौं॥२२॥न माता न पिता न भाई न सास न ससुर न जन और न भाई बंधु

पूर्वजन्मनि विप्रेन्द्र न मया न त्वया क्वचित् ॥ सत्पात्राणां करे दत्तं स्वल्पं भूर्यपि सद्धनम् ॥ २० ॥ इह देशे परे वापि दत्तं सर्वत्र लभ्यते ॥ अन्नमात्रं तु विश्वेशो विना दत्तं च यच्छति ॥ २१ ॥ तस्मादत्रैव भो विप्र स्थातव्यं भवता मया ॥ भवद्विना न तिष्ठामि क्षणमात्रं महामुने ॥ २२ ॥ न माता न पिता भ्राता न श्वश्रूः श्वशुरो जनाः ॥ न सत्कुर्वन्ति तं केऽपि स्वजनाश्च पुरो गताः ॥ २३ ॥ भर्तृहीनां विनिन्दन्ति दुर्भगेति वदन्ति ताम् ॥ तस्मादत्र स्थिरो भूत्वा विहरस्व यथासुखम् ॥ २४ ॥ भवतां भाग्ययोगेन प्राप्तिश्चात्र भविष्यति ॥ श्रुत्वा तस्यास्तु वचनं स्थितस्तत्र विचक्षणः ॥ २५ ॥ तावत्तत्र समायातः कौण्डिन्यो मुनिसत्तमः ॥ दृष्ट्वा समागतं हृष्टः सुमेधा द्विजसत्तमः ॥ २६ ॥

जो आगे स्थित हैं वाको कोई नहीं आदर करे हैं ॥२३॥ पति करके हीन स्त्रीको निंदा करे हैं और वाको दुर्भगा कहैं हैं ताते यहां स्थित होके यथासुख विहार करो॥२४॥तुम्हारे भाग्यके योग्य यहाँही प्राप्ति होयगी यह वाको वचन सुनिके दह विचक्षण वहांही स्थित होत भयो॥२५॥तबवहां

मुनिनमें श्रेष्ठ कौंडिन्य ऋषि आवत भये उनको आये भये देखि प्रसन्न भयो वह श्रेष्ठ ब्राह्मण सुमेधा ॥ २६ ॥ स्त्रीसमेत शीघ्रही उठिके शिर करिके बार बार नमस्कार करत भयो और कहत भयो कि, मैं धन्य हौं कृतार्थ हौं आज मेरो जन्म सफल भयो ॥२७॥ जो बडे भाग्यसों आपके दर्शन भये मुनीश्वरसों कहत भयो और सुन्दर आसन देके उनको पूजन करत भयो ॥२८॥ और विधिसों भोजन करायकै वह उत्तमस्त्री पूछत

सभार्यः सहसोत्थाय ननाम शिरसाऽसकृत् ॥ धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि सफलं जीवितं मम ॥ २७ ॥ यद्दृष्टोऽसि महद्भाग्या दित्युवाच मुनीश्वरम् ॥ दत्त्वा सुविष्टरं तस्मै पूजयामास तं द्विजम् ॥२८॥ भोजयित्वा विधानेन पप्रच्छ प्रमदोत्तमा ॥ विद्वन्केन प्रकारेण दारिद्र्यस्य क्षयो भवेत् ॥ २९ ॥ विना दत्तं कथं लभ्येद्धनं विद्यां कुटुंबिनीम् ॥ मां भर्त्ता परित्यज्य गन्तुकामोऽद्य वर्त्तते ॥ ३० ॥ अन्यदेशं पराँल्लोकान् याचितुं परपत्तने ॥ रक्षितोऽस्ति मया विद्वन् हेतुभिः कैर्महत्तरैः ॥ ३१ ॥ नादत्तं लभ्यते किञ्चिदित्युक्त्वा स निवारितः ॥ मम भाग्यान्मुनीन्द्राद्य त्वमत्रैव समागतः ॥ ३२ ॥

भई कि, हे विद्वन् ! किस प्रकारसे मेरे दारिद्र्यको क्षय होय ॥२९॥ पूर्वजन्मके विना धनको विद्याको और स्त्रीको कैसे प्राप्त होय,मेरो पतिमोको छोडिके अब जानेकी इच्छा करै है ॥३०॥ दूसरे देशके रहनेवाले मनुष्यनसों पराये नगरमें मांगनेको जाय है सो मैंने वाहि बहुतसे बडे २ कारण करिके राखो है ॥ ३१ ॥ अदत्त कुछ भी नहीं मिले है ऐसे कहिके वाहि निवारण कियो हैं हे मुनींद्र ! मेरे भाग्यसों अब आप यहाँ आय गये

हो ॥ ३२ ॥ आपके प्रसादसों मेरो दरिद्र निस्संदेह नष्ट हो जायगो हे विप्रेंद्र ! कौनसे उपाय करिके निश्चय मेरो दरिद्र निकरि जाय ॥ ३३ ॥ हे कृपासिंधो ! ऐसे व्रत तीर्थ और तप आदि और कहिये वे मुनिश्रेष्ठ सुशीलाको वचन सुनिकै ॥ ३४ ॥ चित्तमें श्रेष्ठ तथा उत्तम व्रत विचारिके सब पापनके समूहको शांत करनहारे और दुःख तथा दरिद्रको नाश करनहारे उत्तम व्रतको कहत भये ॥ ३५ ॥ परमा नामसों विख्यात सबते

त्वत्प्रसादाद्दरिद्रं मे शीघ्रं नश्यत्यसंशयम् ॥ केनोपायेन विप्रेन्द्र दरिद्रं नश्यति ध्रुवम् ॥ ३३ ॥ कथयस्व कृपासिन्धो व्रतं तीर्थं तपादिकम् ॥ श्रुत्वा तस्याः सुशीलाया भाषितं मुनिपुङ्गवः ॥ ३४ ॥ प्रोवाच प्रवरं चित्ते विचार्य व्रतमुत्तमम् ॥ सर्वपापौघशमनं दुःखदारिद्र्यनाशनम् ॥ ३५ ॥ परमा नाम विख्याता विष्णोस्तिथिरनुत्तमा ॥ मलिम्लुचे तु या कृष्णा भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥ ३६ ॥ तस्या उपोषणं कृत्वा धनधान्ययुतो भवेत् ॥ विधिना जागरैः साकं गीतनृत्यादिकं चरेत ॥ ३७ ॥ धनदेन पुरा चीर्णं व्रतमेतत्सुशोभनम् ॥ तदा तुष्टेन रुद्रेण धनानामधिपः कृतः ॥ ३८ ॥ हरिश्चन्द्रेण च कृतं धनानामधिपः कृतः ॥ पुनः प्राप्ता प्रिया तेन राज्यं निहतकण्टकम् ॥ ३९ ॥

उत्तम विष्णुको तिथि जो मलमासके कृष्णपक्षमें भुक्तिमुक्तिरूप फलकी देनहारी होय है ॥ ३६ ॥ ताको व्रत करिके धनधान्यसों युक्त हो जाय है विधिपूर्वक जागरणके सा गीत और नृत्य आदि करै ॥ ३७ ॥ यह सुशोभन व्रत पहले कुबेर करिके कियो गयो तब शिवजीने प्रसन्न होके धनको स्वामी करि दियो ॥ ३८ ॥ हरिश्चंद्रन यो तो बहुत धनको स्वामी कियो गयो और वाने फिर स्त्री पाई और अकंटक राज्य पायो ॥ ३९ ॥

हे विशालाक्षि ! ताते तू या उत्तम व्रतको विधिपूर्वक कर और विधि करिके युक्त जो यह व्रत है ताके साथ जागरण कर ॥४०॥ हे पांडव ! ऐसे कहिके वाकी सब विधि प्रीतिसों परम सतुष्ट होके भक्तिसों प्रसन्नतापूर्वक कहत भये ॥४१॥ फिर वा ब्राह्मणसों शुभ पंचरात्रिव्रत कहत भये जाके करनेही मात्रसों भुक्ति और मुक्ति प्राप्त होती है ॥४२॥परमाके दिन प्रातःकाल पूर्वाह्णिक विधिको करिके पंचारात्रिव्रतके आदरसों शक्तिके अनु

तस्मात्कुरु विशालाक्षि व्रतमेतत्सुशोभनम् ॥ विधिना विधियुक्तेन समं जागरणेन च ॥ ४० ॥ इत्युक्त्वा तद्विधिं सर्वं कथयामास पाण्डव ॥ प्रीत्या परमसन्तुष्टस्ततो भक्त्या प्रसादतः ॥ ४१ ॥ पुनः प्रोवाच तं विप्रं पञ्चरात्रिव्रतं शुभम् ॥ यस्यानुष्ठानमात्रेण भुक्तिर्मुक्तिश्च प्राप्यते ॥ ४२ ॥ परमादिवसे प्रातः कृत्वा पौर्वाह्णिकं विधिम् ॥ कुर्यात्सुनियमाञ्छक्त्या पञ्चरात्रिव्रतादरात् ॥ ४३ ॥ प्रातः स्नात्वा निराहारो यस्तिष्ठेद्दिनपञ्चकम् ॥ स गच्छेद्वैष्णवं स्थानं पितृमातृप्रियासमम् ॥ ४४ ॥ एकाशनस्तु यो भूयाद्दिनानां पञ्चकं नरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गे लोके महीयते ॥ ४५ ॥ स्नात्वा यो भोजयेद्विप्रं दिनानां पञ्चकं नरः ॥ भोजितं तेन विधिना सदेवासुरमानुषम् ॥ ४६ ॥

सार सुन्दर नियमको करै ॥ ४३ ॥ प्रातःकाल स्नान करिके जो पुरुष पांच दिननलों निराहार रहै वह पिता माता और स्त्री समेत विष्णुके स्थानको जाय है ॥ ४४ ॥ फिर जो मनुष्य पांच दिन एक बार भोजन करिके रहै वह सब पापनते छूटिके स्वर्गलोकमें आनंद करै है ॥ ४५॥ और पांच दिननलों स्नान करिके ब्राह्मणनको भोजन करायो वाने विधिपूर्वक देवता असुर और मनुष्यनसमेत सब त्रिलो-

कीको भोजन करायो ॥ ४६ ॥ जो मनुष्य जल भरे कुंभको ब्राह्मणके अर्थ दान करै वानै मानो चराचरसहित ब्रह्मांडको दान कियो ॥ ४७ ॥ जो नर पांच दिन स्नान करिके तिलपात्रको दान करै है वह संपूर्ण भोगनको भोगिकै सूर्यके लोकमें आनंद करै है ॥ ४८ ॥ जो नर पांच दिन ब्रह्मचर्यसों रहै है वह स्वर्गमें अप्सरानके साथ आनंदसों भोगनको भोगे है ॥ ४९ ॥ हे शुभे ! तू पतिसमेत ऐसे व्रतको कर तो धनधान्यसों युक्त

पूर्णकुम्भं सुतो येन यो ददाति द्विजातये ॥ दत्तं तेनैव सकलं ब्रह्माण्डं सचराचरम् ॥ ४७ ॥ तिलपात्रं तु यो दद्यात्स्नात्वा पञ्चदिनं नरः ॥ स भुक्त्वा विपुलान् भोगान्सूर्यलोकेमहीयते ॥ ४८ ॥ ब्रह्मचर्येण यस्तिष्ठेद्दिनानां पञ्चकं नरः ॥ स स्वर्गे भुञ्जते भोगान् स्ववेश्याभिः समं मुदा ॥ ४९ ॥ एवंविधि व्रतं साध्वि कुरु त्वं पतिना शुभे ॥ धनधान्ययुता भूत्वा स्वर्गं यास्यसि सुव्रते ॥ ५० ॥ इत्युक्ता सा व्रतं चक्रे कौण्डिन्येन यथोदितम् ॥ भर्त्रा समं भावयुता स्नात्वा मासि मलिम्लुचे ॥ ५१ ॥ पञ्चरात्रव्रते पूर्णे परायाः प्रियसंयुता ॥ सापश्यद्राजभवनादायान्तं नृपनन्दनम् ॥ ५२ ॥ दत्त्वानवीनं भवनं भव्यं वस्तुसमन्वितम् ॥ वासयामास विधिना विधिना प्रेरितः स्वयम् ॥ ५३ ॥

होके हे सुव्रते ! स्वर्गको प्राप्त होयगी ॥ ५० ॥ या प्रकार वह कौंडिन्यके कहनेके अनुसार पतिसमेत स्नान करिके मलमासमें व्रतको करत भई ॥ ५१ ॥ और पांच रात्रिके व्रत पूरे होनेपै पतिसमेत परमाका व्रत करत भई तब वह राजभवनते आते भये राजाके पुत्रको देखत भई ॥५२॥ सुन्दर सब वस्तुनकरिके सहित नवीन घर देकै विधाता करिके प्रेरित वह आप विधिपूर्वक बसावत भयो ॥ ५३ ॥

और जीविकाके निमित्त सुमेधाके अर्थ गांव देके उनके तपसों प्रसन्न वह राजा स्तुति करिके अपने घरको जात भयो॥ ५४॥ मलमासके कृष्णपक्षको परमा नाम एकादशीको परम आदरसों जो व्रतको करनो ताते पंचरात्रिके व्रतसों शीघ्र ही ॥ ५५ ॥ सब पापनते छूटिके सब सुखनकारि युक्त वह सुमेधा ब्राह्मण या लोकमें प्रियासहित भोगनको भोगि अंतमें विष्णुलोकको जात भयो ॥ ५६ । जो मनुष्य उत्तम पराके व्रतको करैंगे ताको

दत्त्वा ग्रामं वृत्तिकरं ब्राह्मणाय सुमेधसे ॥ प्रसन्नस्तपसा राजा तं स्तुत्वा स्वगृहं ययौ ॥ ५४ ॥ मलिम्लुचस्य मासस्य परायाः परमादरात् ॥ उपोषणात्तत्कृष्णायाः पञ्चरात्रव्रतेन च ॥ ५५ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वसौख्यसमन्वितः ॥ भुक्त्वा भोगान् प्रियासार्द्धमन्ते विष्णुपुरं ययौ ॥ ५६ ॥ ये करिष्यन्ति मनुजाः परायाः व्रतमुत्तमम् ॥ पञ्चरात्रभवं पुण्यं मया वक्तुं न शक्यते ॥ ५७ ॥ पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा ॥ धेनुमुख्यानि दानानि तेन चीर्णानि सर्वथा ॥ ५८ ॥ गयाश्राद्धं कृतं तेनपितरः परितोषिताः व्रतानि तेन चीर्णानि व्रतखंडोदितानि वै ॥ ५९ ॥ द्विपदां ब्राह्मणः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठा चतुष्पदाम् ॥ देवानां वासवः श्रेष्ठस्तथा मासो मलिम्लुचः ॥ ६० ॥

पुण्य और पंचरात्रको पुण्य जो है ताहि मैं कहनेको समर्थ नहीं हौं ॥ ५७ । पुष्कर आदि तीर्थ और गंगा आदि नदी और गोदान आदि दान ये सब वा मनुष्यने किये जाने पराके। व्रत कियो ॥ ५८ ॥ ता करिके गयाश्राद्ध कियो गयो और पितर संतुष्ट किये गये और वाने व्रतखण्डमें कहे भये सब व्रत किये ॥ ५९ ॥ द्विपदनमें ब्राह्मण और चतुष्पदनमें गौ श्रेष्ठ है तथा देवतानमें इंद्र श्रेष्ठ है तैसे ही महीननमें मलमास है ॥ ६० ॥

और मलमासमें पापनके रहनेवाले पिछले पांच दिन और पंचरात्रिहूमें परमा और पापनकी सुखावनहारी पद्मिनी उत्तम है ॥६१॥ वह एकादशी पंडितन करि अशक्तिमेंहू यथाशक्ति करनी चाहिये और मनुष्यजन्मको पायके जिन करिके मलमासको व्रत नहीं कियो ॥ ६२ ॥ और जिन मनुष्यनने हरिवासरको व्रत नहीं कियो वे चौरासी लाख योनिनके संकटमें भ्रमे हैं ॥६३॥ दुर्लभ यह मनुष्यदेह पुण्यनके समूहसों मिले है ताते

मलिम्लुचे पञ्चरात्रं महापापहरं स्मृतम् ॥ पञ्चरात्रे च परमा पद्मिनी पापशोषणी ॥ ६१ ॥ साप्यशक्तैः प्रकर्तव्या यथाशक्त्या विचक्षणैः ॥ मानुषं जनुरासाद्य न स्नातो यर्मलिम्लुचः ॥ ६२ ॥ ते जन्मघातिनो नूनं नोपोष्य हरिवासरे ॥ चतुरशीति लक्षाणि लभन्ते योनिसंकटे ॥ ६३ ॥ प्राप्यते मानुषं जन्म दुर्लभं पुण्यसञ्चयैः ॥ तस्मात्कार्यं प्रयत्नेन परमाया व्रतं शुभम् ॥ ६४ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वयाऽनघ ॥ मलिम्लुचस्य मासस्य परमायाः समुद्भवम् ॥ ६५ ॥ तत्सर्वं ते समाख्यातं कुरुष्वावहितो नृप ॥ ६६ ॥ माहात्म्यं यदुपतिनोदितं निशम्य नचक्रे व्रतमथ प्रियासमेतः ॥ भुक्त्वाऽसौ दिवि भुवि दुर्लभांश्च भोगान्नीतोऽसौ सुरवरमंदिरं सुहृष्टः ॥ ६७ ॥

यत्नकरिके परमाको शुभ व्रत करनो योग्य है॥ ६४ ॥श्रीकृष्ण बोले—कि,हे पापरहित ! मलमासको और परमाको उत्पन्न जो यह सब फल मैंने आपके पूंछनेसों कह्यो॥६५॥ वह सब मैंने तुमसों कह्यो ताते हे नृप ! तुम सावधान होके करो ॥६६॥ यदुपति जे श्रीकृष्ण महाराज हैं तिन करिके कहे भये माहात्म्यको सुनिके राजा युधिष्ठिर छोटे भाई भीमादिक और स्त्री जो द्रौपदी हैं तासमेत व्रतको करत भये और स्वर्गलोकमें दुर्लभ भोग

नको भोगि अंतमें प्रसन्न सुरवर जे विष्णु हैं तिनके मंदिरमें पहुँचाये गये ॥६७॥ औरहू जे मनुष्य पृथ्वीमें मलमासस्नान सुन्दर विधिपूर्वक दोनों

येऽप्येवं भुवि मनुजा मलिम्लुचस्य सुस्नाताः शुभ विधिना समाचरंति ॥ ते भुक्त्वा दिवि विभव सुरेन्द्रतुल्यं गच्छेयुस्त्रिभवन वंदितस्य गेहम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमदधिककृष्णैकादशीपरमामाहात्म्यं समाप्तम् ॥ २६ ॥

एकादशीनको और पंचरात्रिको व्रतकरैं हैं वे स्वर्गमें इन्द्रके समान ऐश्वर्यको भोगि त्रिभुवनवंदित जे भगवान् विष्णु हैं तिनके घरको जायँ है ॥६८॥

दोहा–अब्धिवेदनवचन्द्रमित, विक्रम संवत जान । चैत्रशुक्ल शुभपंचमी, भौमवार शुभ मान ॥१॥ टीका भाषामें करी, केशवपूर्वप्रसाद । जाके सुनतहिं नरनके, नाशत सकल विषाद ॥ २ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादशर्माद्विवेदिकृतायामेकादशीमाहात्म्यभाषाटीकायां दीपिकासमाख्यायामधिकमासकृष्णैकादशीपरमाकथा समाप्ता ॥ २६ ॥

इदं पुस्तकं मुम्बईनगर्यां श्रीकृष्णदासात्मज–खेमराजेन स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वरमुद्रणालये" मुद्रयित्वा प्रकाशितम् । संवत् २०१० शके १८७५

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
बम्बई.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम्–प्रेस,
कल्याण–बम्बई.

विदुषामभ्यर्थना।

अत्रास्माकं मुद्रणालये ऋगादयो वेदा उपनिषदो वेदान्तग्रन्था महाभारतादीतिहासाः श्रीमद्भागवतादिमहापुराणोपपुराणानि धर्मशास्त्र–कर्मकाण्ड–व्याकरण–न्याय–योग–सांख्य–मीमांसादिशास्त्रीयग्रन्थाः काव्य–नाटक–चम्पू–प्रभृतयो ग्रन्थाः सहस्रनामाद्यनेकस्तोत्रग्रन्था विविधभाषाग्रन्थाश्च सीसकोत्तममहच्छ्लक्ष्णाक्षरैर्मनोहरं मुद्रिता योग्यमूल्येन क्रय्याः सन्ति, तांश्च ग्राहका यथापुस्तकसूचीपत्रं मूल्यप्रेषणेन प्राप्नुयुः।

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासः "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्–मुद्रणालयाध्यक्षः, मुंबईस्थः।

मुद्रक और प्रकाशक-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,-बम्बई.

इति एकादशीमाहात्म्यं भाषाटीकासमेतं समाप्तम् ।

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीगुरुभ्योनमः ॥ ॥ श्रीगोपीजनवल्लभायनमः ॥ ॥ अथपुरुषोत्तममासमाहात्म्यप्रारंभः ॥ ॥ वंदेवृंदा
रुमंदारंवृंदावनविनोदिनम् ॥ वृंदावनकलानाथंपुरुषोत्तममद्भुतम् ॥ १ ॥ नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् ॥ देवींसरस्वतीं
व्यासंततोजयमुदीरयेत् ॥ २ ॥ नैमिषारण्यमाजग्मुर्मुनयःसत्रकाम्यया ॥ असितोदेवलःपैलःसुमंतुःपिप्पलायनः ॥ ३ ॥ सुमतिः
काश्यपश्चैवजाबालिर्भृगुरंगिराः ॥ वामदेवःसुतीक्ष्णश्चशरभंगश्चपर्वतः ॥ ४ ॥ आपस्तंबोऽथमांडव्योऽगस्त्यःकात्यायनस्तथा ॥
रथीतरोऋभुश्चैवकपिलोरैभ्यएवच ॥ ५ ॥ गौतमोमुद्गलश्चैवकौशिकोगालवःक्रतुः ॥ अत्रिर्बभ्रुस्त्रितःशक्तिर्बुधोबौधायनोवसुः ॥ ६ ॥
कौंडिन्यःपृथुहारीतौधूमःशंकुश्चसंकृतिः ॥ शनिर्विभांडकःपंकोगर्गःकाणादएवच ॥ ७ ॥ जमदग्निर्भरद्वाजोधूम्रपोमौनभार्गवः ॥
कर्कशःशौनकश्चैवशतानंदोमहातपाः ॥ ८ ॥ विशालाख्योविष्णुवृद्धोजर्जरोजयजंगमौ ॥ पारःपाशधरःपूरोमहाकायोऽथजैमिनिः
॥ ९ ॥ महाग्रीवोमहाबाहुर्महोदरमहाबलौ ॥ उद्दालकोमहासेनआर्तआमलकप्रियः ॥ १० ॥ ऊर्ध्वबाहुरूर्ध्वपादएकपादश्चदुर्धरः ॥
उग्रशीलोजलाशीचपिंगलोऽत्रिर्ऋभुस्तथा ॥ ११ ॥ शांडीरःकरुणःकालःकैवल्यश्चकलाधरः ॥ श्वेतबाहूरोमपादःकद्रुःकालाग्नि
रुद्रगः ॥ १२ ॥ श्वेताश्वतरएवाद्यःशरभंगःपृथुश्रवाः ॥ एतेसशिष्याब्रह्मिष्ठावेदवेदांगपारगाः ॥ १३ ॥ लोकानुग्रहकर्तारःपरोपकृतिशी
लिनः ॥ परप्रियरतानित्यंश्रौतस्मार्तपरायणाः ॥ १४ ॥ नैमिषारण्यमासाद्यसत्रंकर्तुंसमुद्यताः ॥ तीर्थयात्रामथोद्दिश्यगेहात्सूतो
पिनिर्गतः ॥ १५ ॥ पृथिवींपर्यटन्नेवनैमिषेदृष्टवान्मुनीन् ॥ तान्सशिष्यान्नमस्कर्तुंसंसारार्णवतारकान् ॥ १६ ॥ सूतःप्रहर्षितःप्रागा

यत्रासंस्तेमुनीश्वराः ॥ ततःसूतंसमायांतंरक्तवल्कलधारिणम् ॥ १७ ॥ प्रसन्नवदनं शांतंपरमार्थविशारदम् ॥ अशेषगुणसंपन्नमशेषा
नंदसंप्लुतम् ॥ १८ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रधरंश्रीमन्नाममुद्राविराजितम् ॥ शंखचक्रधरंदिव्यगोपीचंदनमृत्स्नया ॥ १९ ॥ लसच्छ्रीतुलसीमालंजटा
मुकुटमंडितम् ॥ जपंतंपरमंमंत्रंहरेःशरणमद्भुतम् ॥ २० ॥ सर्वशास्त्रार्थसारज्ञंसर्वलोकहितेरतम् ॥ जितेंद्रियंजितक्रोधंजीवन्मुक्तंजगद्गुरुम्
॥ २१ ॥ व्यासप्रसादसंपन्नंव्यासवद्विगतस्पृहम् ॥ तंदृष्ट्वासहसोत्थायनैमिषेयामहर्षयः ॥ २२ ॥ श्रोतुकामाःसमावव्रुर्विचित्राविविधाः
कथाः ॥ ततःसूतोविनीतात्मासर्वानृषिवरान्मुदा ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वाननामदंडवन्मुहुः ॥ २३ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतचिरंजीव
महाभागवतोभवान् ॥ अस्माभिस्त्वासनंतेऽत्रकलिपतंसुमनोहरम् ॥ २४ ॥ अत्रास्यतांमहाभागश्रांतोसीत्यवदन्द्विजाः ॥ इत्युक्त्वा
सूपविष्टेषुसर्वेषुचतपस्विषु ॥ २५ ॥ तपोवृद्धिततःपृष्ट्वासर्वान्मुनिगणान्मुदा ॥ निर्दिष्टमासनंभेजेविनयाद्रौमहर्षणिः ॥ २६ ॥ सुखा
सीनंततस्तंतुविश्रांतमुपलक्ष्यच ॥ श्रोतुकामाःकथाःपुण्याइदंवचनमब्रुवन् ॥२७॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतमहाभागभाग्यवानसिसांप्रतम् ॥
पराशर्यवचोहार्दंत्वंवेदकृपयागुरोः ॥ २८ ॥ सुखीकच्चिद्भवानद्यचिराद्दृष्टःकथंवने ॥ श्लाघनीयोसिपूज्योऽसिव्यासशिष्यशिरोमणे ॥
॥ २९ ॥ संसारेऽस्मिन्नसारेतुश्रोतव्यानिसहस्रशः ॥ तत्रश्रेयस्करंस्वल्पंसारभूतंचयद्भवेत् ॥ ३० ॥ तन्नोवदमहाभागयत्तेमनसिनिश्चि
तम् ॥ संसारार्णवमग्नानांपारदंशुभदंचयत् ॥ ३१ ॥ अज्ञानतिमिरांधानांनेत्रदानपरायण ॥ वदशीघ्रंकथासारंभवरोगरसायनम् ॥३२॥
हरिलीलारसोपेतंपरमानंदकारणम् ॥ एवंपृष्टःशौनकाद्यैःसूतःप्रोवाचप्रांजलिः ॥ ३३ ॥ सूतउवाच ॥ शृण्वंतुमुनयःसर्वेमदुक्तंसुमनोहरम् ॥

आदावहंगतोविप्रास्तीर्थंपुष्करसंज्ञितम् ॥ ३४ ॥ स्नात्वातृप्त्वाऋषीन्पुण्यान्सुरान्पितृगणानथ ॥ ततःप्रयातोयमुनांप्रतिबंधविनाशिनीम्
॥ ३५ ॥ क्रमादन्यानितीर्थानिगत्वागंगामुपागतः ॥ ततःकाशीमुपागम्यगयांगत्वाततःपरम् ॥ ३६ ॥ ततःस्नात्वाचगंडक्यांपुलहाश्रममा
व्रजम् ॥ धेनुमत्यामहं स्नात्वाततःसारस्वतेतटे ॥ ३७ ॥ तापींवैहायसींनंदांनर्मदांशर्मदांगतः ॥ त्रिरात्रमुषितोविप्रास्ततोगोदावरींगतः ॥
॥३८॥ पितॄनिष्ट्वाततोवेणींकृष्णांचतदनंतरम् ॥ कृतमालांचकावेरींनिर्विंध्यांताम्रपर्णिकाम् ॥ ३९ ॥ गत्वाचर्मण्वतींपश्चात्सेतुबंधमथाग
मम् ॥ ततोनारायणंद्रष्टुंगतोहंबदरीवनम् ॥ ४० ॥ ततोनारायणंदृष्ट्वातापसानभिवाद्यच ॥ नत्वास्तुत्वाचतंदेवंसिद्धक्षेत्रमुपागतः ॥ ४१ ॥
एवमादिषुतीर्थेषुभ्रमन्नागतवान्कुरून् ॥ जांगलंदेशमासाद्यहस्तिनस्पुरगोऽभवम् ॥४२॥ तत्रश्रुतंविष्णुरातोराज्यमुत्सृज्यजग्मिवान् ॥ गंगा
तीरंमहापुण्यमृषिभिर्बहुभिर्द्विजाः ॥ ४३ ॥ तत्रसिद्धाःसमाजग्मुर्योगिनःसिद्धिभूषणाः ॥ देवर्षयश्चतत्रैवनिराहाराश्चकेचन ॥ ४४ ॥
वातांबुपर्णाहाराश्चश्वासाहाराश्चकेचन ॥ फलाहराःपरेकेचित्फेनाहाराश्चकेचनं ॥ ४५ ॥ तंसमाजंप्रष्टुकामस्तत्राहमगमंद्विजाः ॥ तत्राजगा
मभगवान्ब्रह्मभूतोमहामुनिः ॥४६॥ व्यासपुत्रोमहातेजाःशुकदेवःप्रतापवान् ॥ श्रीकृष्णचरणांभोजेमनसोधारणांदधत् ॥ ४७ ॥ तंद्वचष्टव
र्षंयोगीशंकंबुकंठंमहोन्नतम् ॥ स्निग्धालकावृतमुखंगूढजत्रुंज्वलंत्प्रभम् ॥४८॥ अवधूतंब्रह्मभूतंष्ठीवद्भिर्बालकैर्वृतम् ॥ स्त्रीगणैर्धूलिहस्तैश्चम
क्षिकाभिर्गजोयथा ॥ ४९ ॥ धूलिधूसरसर्वांगंशुकंदृष्ट्वामहामुनिम् ॥ मुनयःसहसोत्तस्थुर्बद्धांजलिपुटामुदा ॥५०॥ स्त्रियोमूढाश्चबालास्ते
तंदृष्ट्वादूरतःस्थिताः ॥ पश्चात्तापसमायुक्ताःशुकंनत्वागृहान्ययुः ॥५१॥ आसनंकल्पयांचक्रुःशुकायोन्नतमुत्तमम् ॥ आसेदुर्मुनयोऽभोजक

र्णिकायाश्छदाइव ॥८२ ॥ तत्रोपविष्टोभगवान्महामुनिर्व्यासात्मजोज्ञानमहाब्धिचंद्रमाः ॥ पूजांदधद्ब्राह्मणकल्पितांतदाऽरराजताराधृतचंद्र
माइव ॥८३॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येशुकागमनेप्रथमोऽध्यायः॥ १॥ सूतउवाच॥ राज्ञापृष्टंशुकेनोक्तंश्रीमद्भागवतंपरम्॥
शुकप्रसादात्तच्छ्रुत्वादृष्ट्वाराज्ञोविमोक्षणम् ॥ १॥ अत्राहमागतोविप्रान्सत्रोद्यमपरायणान् ॥ द्रष्टुकामःकृतार्थोऽहंजातोदीक्षितदर्शनात् ॥२॥
ऋषयऊचुः ॥ साधोवार्त्तांतरंत्यक्तासूतपूर्वंवदस्वनः ॥ कृष्णद्वैपायनमुखाद्यच्छ्रुतंतत्प्रसादतः ॥३॥ सारात्सारतरांपुण्यांकथामात्मप्रसाद
नीम् ॥ पाययस्वमहाभागसुधाधिकतरांपराम् ॥ ४ ॥ सूतउवाच ॥ विलोमजोपिधन्योस्मियन्मांपृच्छतसत्तमाः ॥ यथाज्ञानंप्रवक्ष्यामिय
च्छ्रुतंव्यासवक्रतः ॥ ५ ॥ एकदानारदोगच्छन्नरनारायणालयम् ॥ तापसैर्बहुभिःसिद्धैर्देवैरपिनिषेवितम् ॥ ६ ॥ बदर्यक्षामलैर्बिल्वैराम्रैरा
म्रातकैरपि ॥ कपित्थैर्जंबुनीपाद्यैर्वृक्षैरन्यैर्विराजितम् ॥ ७ ॥ विष्णुपादोदकीपुण्याऽलकनंदास्तितत्रच ॥ तत्रगत्वाऽनमद्देवंनारायणंमहा
मुनिम् ॥ ८ ॥ परब्रह्मणिसंलग्नमानसंचजितेंद्रियम् ॥ जितारिषट्कममलंप्रस्फुरद्बहुलप्रभम् ॥ ९ ॥ नमस्कृत्वाचसाष्टांगंदेवदेवंतपस्वि
नम् ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वातुष्टावनारदोविभुम् ॥ १० ॥ नारदउवाच ॥ देवदेवजगन्नाथकृपाकूपारसत्पते ॥ सत्यव्रतस्त्रिसत्योसिसत्यात्मा
सत्यसंभवः ॥ ११ ॥ सत्ययोनेनमस्तेस्तुत्वामहंशरणंगतः ॥ तपस्तेखिलशिक्षार्थंमर्यादास्थापनायच ॥ १२ ॥ अन्यथैवकृतात्पापात्क
लौमज्जतिमेदिनी ॥ तथैवपुण्यैस्तरतिपुण्यापापिजनावृता ॥ १३ ॥ कृतादिषुयथापूर्वमेकगंतत्समस्तगम् ॥ तादृक्स्थितिंनिराकृत्यकलौ
कर्त्तैवकेवलम् ॥ १४ ॥ लिप्यतेपुण्यपापाभ्यामितितेतपसिस्थितिः ॥ भगवन्प्राणिनःसर्वेविषयासक्तमानसाः ॥ १५ ॥ दारापत्यगृहा

सक्तास्तेषांहितकरंचयत् ॥ ममापिहितकृत्किंचिद्विचार्यक्षंतुमर्हसि ॥ १६ ॥ त्वन्मुखाच्छ्रोतुकामोहंब्रह्मलोकादिहागतः ॥ उपकारप्रियो विष्णुरितिवेदेविनिश्चितम् ॥ १७ ॥ तस्माल्लोकोपकारायकथांसारंवदाधुना ॥ तस्यश्रवणमात्रेणनिर्भयंविंदतेपदम् ॥ १८ ॥ नारदस्य वचःश्रुत्वाप्रहस्यभगवानृषिः ॥ कथांकथितुमारेभेपुण्यांभुवनपावनीम् ॥ १९ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ गोपांगनावदनपंकज षट्पदस्यरासेश्वरस्यरसिकाभरणस्यपुंसः ॥ वृन्दावनेविहरतोव्रजभर्तुरादेःपुण्यांकथांभगवतःशृणुनारदत्वम् ॥ २० ॥ चक्षुर्निमेषपतितोज गतांविधातातत्कर्मवत्सकथितुंभुविकःसमर्थः ॥ त्वंचापिनारदमुनेभगवच्चरित्रंजानासिसारसरसंवचसामगम्यम् ॥ २१ ॥ तथापिवक्ष्येपुरु षोत्तमस्यमाहात्म्यमत्यद्भुतमादरेण ॥ दारिद्र्यवैधव्यहरंयशस्यंसत्पुत्रदंमोक्षदमाशुसेव्यम् ॥ २२ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तम स्तुकोदेवोमाहात्यंतस्यकिंमुने ॥ अत्यद्भुतमिवाभातिविस्तरेणवदस्वमे ॥ २३ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ नारदोक्तंवचःश्रुत्वामुनिर्ना रायणोब्रवीत् ॥ समाधायमनःसम्यङ्मुहूर्तंपुरुषोत्तमे ॥ २४ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तमेतिमासस्यनामाप्यस्तिसहेतुकम् ॥ तस्यस्वामीकृपासिंधुः पुरुषोत्तमउच्यते ॥ २५ ॥ ऋषिभिःप्रोच्यतेतस्मान्मासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ तस्यव्रतविधानेनप्रीतःस्यात्पुरु षोत्तमः ॥ २६ ॥ नारदउवाच ॥ संतिमध्वादयोमासाःसेश्वरास्तेश्रुतामया ॥ तन्मध्येनश्रुतोमासःपुरुषोत्तमसंज्ञकः ॥ २७ ॥ पुरुषो त्तमस्तुकोमासस्तस्यस्वामीकृपानिधिः ॥ पुरुषोत्तमःकथंजातस्तन्मेब्रूहिकृपानिधे ॥ २८ ॥ स्वरूपंतस्यमासस्यसविधानंवदप्रभो ॥ किंकर्तव्यंकथंस्नानंकिंदानंतत्रसत्पते ॥ २९ ॥ जपपूजोपवासादिसाधनंकिंचभण्यताम् ॥ तुष्येत्कृतेनकोदेवःकिंफलंवाप्रयच्छति ॥ ३० ॥

एतदन्यच्चयत्किंचित्तत्त्वंब्रूहितपोधन ॥ अनापृष्टमपिब्रूयुः साधवोदीनवत्सलाः ॥ ३१ ॥ नरायेभुविजायंतेपरभाग्यानुवर्तिनः ॥
दारिद्र्यपीडितानित्यंरोगिणः पुत्रकांक्षिणः ॥ ३२ ॥ जडामूकादांभिकाश्चहीनविद्याःकुचैलिनः ॥ नास्तिकालंपटानीचाजर्जराःपरसे
विनः ॥ ३३ ॥ नष्टाशाभग्नसंकल्पाःक्षीणसत्त्वाःकुरूपिणः ॥ रोगिणःकुष्ठिनोव्यंगानेत्रहीनाश्चकेचन ॥ ३४ ॥ इष्टमित्रकलत्राप्तपितृमा
तृवियोगिनः ॥ शोकदुःखादिशुष्कांगाःस्वेष्टवस्तुविवर्जिताः ॥ ३५ ॥ पुनर्नैवंविधास्तेस्युर्यत्कृतेनश्रुतेनच ॥ पठितेनानुचीर्णेनतद्वदस्व
ममप्रभो ॥ ३६ ॥ वैधव्यवंध्यतादोषहीनांगत्वदुराधयः ॥ रक्तपित्ताद्यपस्माारराजयक्ष्मादयश्चये ॥३७॥ एतैर्दोषसमूहैश्चदुःखितान्वीक्ष्यमा
नवान् ॥ दुःखितोऽस्मिजगन्नाथकृपांकृत्वाममोपरि ॥ ३८ ॥ विस्तरेणवदब्रह्मन्मन्मनोमोदहेतुकम् ॥ सर्वज्ञःसर्वतत्त्वानांनिधानंत्वमसिप्र
भो ॥ ३९ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतिविधितनयोदितंरसालंजनहितहेतुनिशम्यदेवदेवः ॥ अभिनवघनरावरम्यवाचाऽवददभिपूज्य
मुनिंसुधांशुशांतम् ॥ ४० ॥ इति श्रीबृहन्नारदीयेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेप्रश्नविधिर्नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ नारायणोनरसखोयदुवाचशुभंवचः ॥ नारदायमहाभागतन्नोवदसविस्तरम् ॥ १ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥
नारायणवचोरम्यंश्रूयतांद्विजसत्तमाः ॥ यदुक्तंनारदायैतत्प्रवक्ष्यामियथाश्रुतम् ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्या
मियदुक्तंहरिणापुरा ॥ राज्ञेयुधिष्ठिरायैवश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥ ३ ॥ एकदाधार्मिकोराजाऽजातशत्रुर्युधिष्ठिरः ॥ द्यूतेपराजितोदुष्टैर्धार्त
राष्ट्रैश्छलप्रियैः ॥ ४ ॥ समक्षमग्निसंभूताकृष्णाधर्मपरायणा ॥ दुःशासनेनदुष्टेनकचेष्वादायकर्षिता ॥ ५ ॥ आकृष्टानिचवासांसिश्री

कृष्णेनसुरक्षिता ॥ पश्चाद्राज्यंपरित्यज्यप्रयाताःकाम्यकंवनम्. ॥ ६ ॥ अत्यंतंक्लेशमापन्नाःपार्थावन्यफलाशिनः ॥ विष्वक्कचाचिताः
सर्वेगजाइववनौकसः ॥ ७ ॥ अथतान्दुःखितान्द्रष्टुंभगवान्देवकीसुतः ॥ जगामकाम्यकवनंमुनिभिःपरिवारितः ॥ ८ ॥ तंदृष्ट्वासहसोत्त
स्थुर्देहाःप्राणानिवागतान् ॥ पार्थाःसस्वजिरेप्रीत्याश्रीकृष्णंप्रेमविह्वलाः ॥ ९ ॥ तेचानीनमतांभक्त्यायमौहरिपदांबुजम् ॥ द्रौपदीतंननना
माशुशनैःशनैरतंद्रिता ॥ १० ॥ तान्दृष्ट्वादुःखितान्पार्थान्नौरवाजिनवाससः ॥ धूलिभिर्धूसरान्रूक्षान्सर्वतःकचसंवृतान् ॥ ११ ॥ पांचा
लीमपितन्वंगींतादृशींदुःखसंवृताम् ॥ तेषांदुःखमतीवोग्रंदृष्ट्वैवातीवदुःखितः ॥ १२ ॥ धार्तराष्ट्रान्दग्धुकामोभगवान्भक्तवत्सलः ॥ चक्रेको
पंसविश्वात्माभ्रूभंगकुटिलेक्षणः ॥ १३ ॥ कोटिकालकरालास्यःप्रलयाग्निरिवोत्थितः ॥ संदष्टौष्ठपुटःप्रोच्चैस्त्रिलोकींज्वलयन्निव ॥ १४ ॥
सीतावियोगसंतप्तःसाक्षाद्दाशरथिर्यथा ॥ तमालक्ष्यतदावीरोबीभत्सुर्जातवेपथुः ॥ १५ ॥ उत्थायकृष्णंतुष्टावबद्धांजलिपुटोभिया ॥ धर्मा
नुमोदितःशीघ्रंद्रौपद्याचतथापरैः ॥ १६ ॥ ॥ अर्जुनउवाच ॥ ॥ हेकृष्णजगतांनाथनाथनाहंजगद्बहिः ॥ त्वमेवजगतांपातामांनपा
सिकथंप्रभो ॥ १७ ॥ यच्चक्षुःपतनेनैवब्रह्मणःपतनंभवेत् ॥ तत्कोपेनभवेत्किंवाकोवेदाकिंभविष्यति ॥ १८ ॥ क्रोधंसंहरसंहर्तस्तात
तातजगत्पते ॥ त्वद्विधानांचकोपेनजगतःप्रलयोभवेत् ॥ १९ ॥ वंदेत्वांसर्वतत्त्वज्ञंसर्वकारणकारणम् ॥ वेदवेदांगबीजस्यबीजंश्रीकृष्ण
मीश्वरम् ॥ २० ॥ त्वमीश्वरोऽसृजःसर्वंजगदेतच्चराचरम् ॥ सर्वमंगलमांगल्यबीजरूपःसनातनः ॥ २१ ॥ सकथंस्वकृतंहन्याद्विश्वमेकापरा
धतः ॥ मशकान्भस्मसात्कर्तुंकोवादहतिमंदिरम् ॥ २२ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिविज्ञाप्यश्रीकृष्णंफाल्गुनःपरवीरहा ॥ बद्धांज

लिपुटोभूत्वाप्रणनामजनार्दनम् ॥ २३ ॥ सूतउवाच ॥ हरिःक्रोधंनिरस्याशुसौम्योभूच्चंद्रमाइव ॥ तमालक्ष्यतदासर्वेपांडवाःस्वास्थ्यमा
गताः ॥ २४ ॥ प्रीत्युत्फुल्लमुखाःसर्वेप्रणेमुःप्रेमविह्वलाः ॥ श्रीकृष्णंपूजयांचक्रुर्वन्यैर्मूलफलादिभिः ॥ २५ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥
ततःप्रसन्नंश्रीकृष्णंशरण्यंभक्तवत्सलम् ॥ विज्ञायावनतोभूत्वाबृहत्प्रेमपरिप्लुतः ॥ २६ ॥ बद्धांजलिर्गुडाकेशोनामंनामंपुनःपुनः ॥ तंतथाकृ
तवान्प्रश्नंयथापृच्छतियंभवान् ॥ २७ ॥ श्रुत्वैवंभगवान्दध्यौमुहूर्त्तंमनसाहरिः ॥ ध्यात्वाश्वास्यसुहृद्वर्गंपांचालींचधृतव्रताम् ॥ उवाचवदतां
श्रेष्ठःपांडवनांहितंवचः ॥ २८ ॥ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ ॥ शृणुराजन्महाभागबीभत्सोह्यथमद्वचः ॥ अपूर्वोयंकृतःप्रश्नोनोत्तरंवक्तुमुत्सहे
॥ २९ ॥ एषगुह्यतरोलोकेऋषीणामपिदुर्घटः ॥ तथापिवक्ष्येमित्रत्वाद्भक्तत्वाच्चतवार्जुन ॥ ३० ॥ तदुत्तरमतीवोग्रंक्रमतःशृणुसुव्रत ॥ म
ध्वादयश्चयेमासालवपक्षाश्चनाडिकाः ॥ ३१ ॥ यामाश्चियामाऋतवोमुहूर्तान्ययनेउभे ॥ हायनंचयुगान्येवपरार्धांताःपरेचये ॥३२॥ नद्यो
र्णवह्रदाःकूपावापीपल्वलनिर्झराः ॥ लतौषधिद्रुमाश्चैवत्वक्साराःपादपाश्चये ॥ ३३ ॥ वनस्पतिपुरग्रामगिरयःपत्तनानिच ॥ एते
सर्वेमूर्तिमंतःपूज्यंतेस्वात्मनोगुणैः ॥ ३४ ॥ नतेषांकश्चिदप्यस्तिह्यपूर्वःस्वामिवर्जितः ॥ स्वेस्वेधिकारेसततंपूज्यंतेफलदायिनः ॥ ३५ ॥
स्वस्वामियोगमाहात्म्यात्सर्वेसौभाग्यशालिनः ॥ अधिमासःसमुत्पन्नःकदाचित्पांडुनंदन ॥ ३६ ॥ तमूचुःसकलालोकाअसहायंजुगु
प्सितम् ॥ अनर्होमलमासोयंरविसंक्रमवर्जितः ॥ ३७ ॥ अस्पृश्योमलरूपत्वाच्छुभेकर्मणिगर्हितः ॥ श्रुत्वैतद्वचनंलोका
न्निरुद्योगोहतप्रभः ॥ ३८ ॥ दुःखान्वितोतिखिन्नात्माचिंताग्रस्तैकमानसः ॥ मुमूर्षुरभवत्तेनहृदयेनविदूयता ॥ पश्चाद्वै

यंसमालंब्यमामसौशरणंगतः ॥ ३९ ॥ प्राप्तोवैकुंठभवनंयत्राहमवसंनर ॥ अंतर्गृहंसमागत्यमामसौदृष्टवान्परम् ॥ ४० ॥ अमू
ल्यरत्नरचितेहेमसिंहासनेस्थितम् ॥ तदानींमामसौदृष्ट्वादंडवत्पतितोभुवि ॥ ४१ ॥ प्रांजलिःप्रयतोभूत्वामुंचन्नश्रूणिनेत्रतः ॥ वाचाग
द्गदयासौम्यंबभाषेधैर्यमुद्वहन् ॥ ४२ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वाबदरीनाथो विरराममहामुनिः ॥ तच्छ्रुत्वापुनरेवाहनारदो
भक्तवत्सलः ॥ ४३ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ इत्थंगत्वाभवनममलंपूर्णरूपस्यविष्णोर्भक्तिप्राप्यंजगदघहरंयोगिनामप्यगम्यम् ॥ यत्रै
वास्तेजगदभयदोब्रह्मरूपोमुकुंदस्तत्पादाब्जंशरणमधितःकिंबभाषेऽधिमासः ॥ ४४ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्ये
ऽधिमासस्यवैकुंठप्रापणंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्येऽहंलोकानांहितका
म्यया ॥ अधिमासेनयत्प्रोक्तंहरेरग्रेशुभंवचः ॥ १ ॥ ॥ अधिमासउवाच ॥ ॥ अयिनाथकृपानिधेहरेनकथंरक्षसिमामिहागतम् ॥
कृपणंप्रबलैर्निराकृतंमलमासेत्यभिधांविधायमे ॥ २ ॥ शुभकर्मणिवर्जितंहिमांनिरधीशंमलिनंसदैवतैः ॥ अवलोकयतोदयालुताकगता
तेद्यकठोरताकथम् ॥ ३ ॥ वसुदेववरांगनायथाखलकंसानलतःसुरक्षिता ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ४ ॥ द्रुपदस्य
सुतायथापुराखलदुःशासनदुःखतोऽविता ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ५ ॥ यमुनाविषतोयतोऽविताःपशुपालाःप
शवोयथात्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ६ ॥ पशवःपशुपास्तदंगनाअवितादावधनंजयाद्यथा ॥ वदमांशरणाग
तंकथंनतथाद्यावसिदीवत्सल ॥७॥ पृथिवीपतयोयथाविताभगधेशालयबंधनात्त्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथाद्यावसिदीनवत्सल ॥८॥

गजनायकएत्यरक्षितोझटितिग्राहमुखाद्यथात्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ९ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिविज्ञाप्यभूमानंविररामनिरीश्वरः ॥ मलमासोऽश्रुवदनस्तिष्ठन्नग्रेजगत्पतेः ॥ १० ॥ तदानींश्रीहरिस्तूर्णंकृपयाप्लावितोभृशम् ॥ उवाचदीनवदनंमलमासंपुरःस्थितम् ॥ ११ ॥ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ ॥ वत्सवत्सकिमत्यंतंदुःखमग्नोसिसांप्रतम् ॥ एतादृशंमहद्दुःखंकिंतेमनसिवर्तते ॥ १२ ॥ त्वामहंदुःखसंमग्नमुद्धरिष्यामिमाशुचः ॥ नमेशरणमापन्नःपुनःशोचितुमर्हति ॥ १३ ॥ इहागत्यमहादुःखीपतितोपिनशोचति ॥ किमर्थंत्वमिहागत्यशोकसंमग्नमानसः ॥ १४ ॥ अशोकमजरंनित्यंसानंदंमृत्युवर्जितम् ॥ वैकुंठमीदृशंप्राप्यकथंदुःखान्वितोभवान् ॥ १५ ॥ त्वामत्रदुःखितंदृष्ट्वावैकुंठस्थाःसुविस्मिताः ॥ किमर्थंमर्तुकामोसितन्मेवत्सवदाधुना ॥ १६ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ श्रुत्वेदंभगवद्वाक्यंविभारइवभारभृत् ॥ श्वासोच्छ्वाससमायुक्तउवाचमधुसूदनम् ॥ १७ ॥ ॥ अधिमासउवाच ॥ ॥ अज्ञातंकिंचिन्नैवास्तिसर्वत्रभगवंस्तव॥ आकाशइवसर्वत्रविश्वंव्याप्यव्यवस्थितः ॥ १८ ॥ चराचरगतोविष्णुःसाक्षीसर्वस्यविश्वदृक् ॥ कूटस्थेत्वयिसर्वाणिभूतानिचव्यवस्थया ॥ १९ ॥ संस्थितानिजगन्नाथनकिंचिद्भवताविना ॥ किन्नजानासिभगवन्निर्भाग्यस्यममव्यथाम् ॥ ॥ २० ॥ तथापिवच्मिहेनाथदुःखजालमपावृतम् ॥ तादृशनंचकस्यापिनश्रुतंनावलोकितम् ॥ २१ ॥ क्षणालवामुहूर्ताश्चपक्षामासादिवानिशम् ॥ स्वामिनामधिकारैस्तेमोदंतेनिर्भयाःसदा ॥ २२ ॥ नमेनामनमेस्वामीनहिकश्चिन्ममाश्रयः ॥ तस्मान्निराकृतःसर्वैःसाधिदेवैःसुकर्मणः ॥ २३ ॥ निषिद्धोमलमासोयमित्यंधोऽवटगःसदा ॥ तस्मद्विनष्टुमिच्छामिनाहंजीवितुमुत्सहे ॥ २४ ॥ कुजीविताद्वरंमृत्युर्नित्य

दग्धः कथंस्वपेत् ॥ अतः परंमहाराजवक्तव्यंनावशिष्यते ॥ २५ ॥ परदुःखासहिष्णुस्त्वमुपकारप्रियोमतः ॥ वेदेषुचपुराणेषुप्रसिद्धः पुरुषो
त्तमः ॥ २६ ॥ निजधर्मंसमालोच्ययथारुचितथाकुरु ॥ पुनः पुनः पामरेणनवक्तव्यः प्रभुर्महान् ॥ २७ ॥ मरिष्येऽहंमरिष्येऽहंमरिष्येऽहं
पुनः पुनः ॥ इत्युक्त्वामलमासोऽयंविरराम विधेः सुत ॥ २८ ॥ ततः पपातसहसासंनिधौश्रीरमापतेः ॥ तत्रतंपतितंदृष्ट्वासंसज्जातासुविस्मिता॥
॥ २९ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वा विरतिमुपागतेऽधिमासेश्रीकृष्णोबहुलकृपाभरावसन्नः ॥ प्रावोचज्जलदगभीररावरम्यंनि
र्वाणंशिशिरमयूखवन्नयंस्तम् ॥ ३० ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ नारायणस्यनिगमर्द्धिपरायणस्यपापौघवार्धिवडवाग्निवचोवदातम् ॥
श्रुत्वाप्रहर्षितमनामुनिराबभाषेशुश्रूषुरादिपुरुषस्यवचांसिविप्राः ॥ ३१ ॥ इतिश्रीबृहन्ना० पुराणेपुरुषोत्तममास० मलमासविज्ञप्तिर्नामचतु
र्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ किमुवाचमहाभागश्रुत्वातद्वचनंहरिः ॥ चरणाग्रेनिपतितमधिमासंतपोनिधे ॥ १ ॥ ॥
श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्यामियदुक्तंहरिणानघ ॥ धन्योऽसित्वंमुनिश्रेष्ठयन्मांपृच्छसिसत्कथाम् ॥ २ ॥ ॥ श्रीकृष्ण
उवाच ॥ ॥ शृणुतत्रत्यवृत्तांतंप्रवक्ष्यामितवाग्रतः ॥ नेत्रकोणसमादिष्टस्तदानींहरिणार्जुनः ॥ ३ ॥ वीजयामासपक्षेणतंमासंमूर्च्छितं
खगः ॥ उत्थितः पुनरेवाहनैतन्मेरोचतेविभो ॥ ४ ॥ ॥ अधिमासउवाच ॥ ॥ पाहिपाहिजगद्धातः पाहिविष्णोजगत्पते ॥ उपेक्षसेक
थंनाथशरणंमामुपागतम् ॥ ५ ॥ इत्युक्त्वावेपमानंतंविलपंतंमुहुर्मुहुः ॥ तमुवाचहृषीकेशोवैकुंठनिलयोहरिः ॥ ६ ॥ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठभद्रंतेविषादंवत्समाकुरु ॥ त्वद्दुःखंदुर्निवार्यंमेप्रतिभातिनिरीश्वर ॥ ७ ॥ इत्युक्त्वामनसिध्यात्वातदुपायंक्षणंप्रभुः ॥ विनि

श्चिन्त्यपुनर्वाक्यमुवाचमधुसूदनः ॥ ८ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ ॥ वत्सागच्छमयासार्धंगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥ यत्रास्तेभगवान्कृष्णःपुरु
षोत्तमईश्वरः ॥ ९ ॥ गोपिकावृंदमध्यस्थोद्विभुजोमुरलीधरः ॥ नवीननीरदश्यामोरक्तपंकजलोचनः ॥ १० ॥ शारदीयपार्वणेंदुशोभा
तिरोचनाननः ॥ कोटिकंदर्पलावण्यलीलाधाममनोहरः ॥ ११ ॥ पीतांबरधरःस्रग्वीवनमालाविभूषितः ॥ सद्रत्नभूषणःप्रेमभूषणोभ
क्तवत्सलः ॥ १२ ॥ चंदनोक्षितसर्वांगःकस्तूरीकुंकुमान्वितः ॥ श्रीवत्सवक्षाःसंभ्राजत्कौस्तुभेनविराजितः ॥ १३ ॥ सद्रत्नसाररचितकि
रीटीकुंडलोज्ज्वलः ॥ रत्नसिंहासनारूढःपार्षदैःपरिवेष्टितः ॥ १४ ॥ सएवपरमंब्रह्मपुराणपुरुषोत्तमः ॥ स्वेच्छामयःसर्वबीजंसर्वाधारःपरा
त्परः ॥ १५ ॥ निरीहोनिर्विकारश्चपरिपूर्णतमःप्रभुः ॥ प्रकृतेःपरईशानोनिर्गुणोनित्यविग्रहः ॥ १६ ॥ गच्छावस्तत्रत्वद्दुःखंश्रीकृष्णोव्य
पनेष्यति ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वातंकरेकृत्वागतेलोकंगतवान्हरिः ॥ १७ ॥ अज्ञानांधतमोध्वंसंज्ञानवर्त्मप्रदीपकम् ॥
ज्योतिःस्वरूपंप्रलयेपुरासीत्केवलंमुने ॥१८॥ सूर्यकोटिनिभंनित्यमसंख्यंविश्वकारणम् ॥ विभोःस्वेच्छामयस्यैवतज्ज्योतिरुल्बणंमहत् ॥
॥ १९ ॥ ज्योतिरभ्यंतरेलोकत्रयमेवमनोहरम् ॥ तस्यैवोपरिगोलोकःशाश्वतोब्रह्मवन्मुने ॥ २० ॥ त्रिकोटियोजनायामोविस्तीर्णोमंड
लाकृतिः ॥ तेजःस्वरूपःसुमहद्रत्नभूमिमयःपरः ॥ २१ ॥ अदृश्योयोगिभिःस्वप्नेदृश्योगम्यश्चवैष्णवैः ॥ ईशेनविधृतोयोहिचांतरिक्षस्थि
तोवरः ॥ २२ ॥ आधिव्याधिजरामृत्युशोकभीतिविवर्जितः ॥ सद्रत्नभूषितासंख्यमंदिरैःपरिशोभितः ॥ २३ ॥ तदधोदक्षिणेसव्येपंचाश
त्कोटिविस्तरात् ॥ वैकुंठःशिवलोकश्चतत्समःसुमनोहरः ॥ २४ ॥ कोटियोजनविस्तीर्णोवैकुंठोमंडलाकृतिः ॥ लसत्पीतपटारम्यायत्र

तिष्ठंतिवैष्णवाः ॥ २५ ॥ शंखचक्रगदापद्मश्रियाजुष्टचतुर्भुजाः ॥ स्त्रियोलक्ष्मीसमाःसर्वाःकूजन्नूपुरमेखलाः ॥ २६ ॥ सव्येनशिवलोकश्च
कोटियोजनविस्तृतः ॥ लयशून्यश्चसृष्टौचपार्षदैःपरिवारितः ॥ २७ ॥ निवसंतिमहाभागागणायत्रकपर्दिनः ॥ भस्मोद्धूलितसर्वांगा
नागयज्ञोपवीतिनः ॥ २८ ॥ अर्धचंद्रलसद्भालाःशूलपट्टिशपाणयः ॥ सर्वेगंगाधराःशूरारुर्यंबकाजयशालिनः ॥ २९ ॥ गोलोका
भ्यंतरेज्योतिरतीवसुमनोहरम् ॥ परमाल्हादकंशश्वत्परमानंदकारणम् ॥ ३० ॥ ध्यायंतेयोगिनःशश्वद्योगेनज्ञानचक्षुषा ॥ तदेवानंदज
नकंनिराकारंपरात्परम् ॥ ३१ ॥ तज्ज्योतिरंतरंरूपमतीवसुमनोहरम् ॥ इंदीवरदलश्यामंपंकजारुणलोचनम् ॥ ३२ ॥ कोटिशारदपू
र्णेंदुशोभातिरोचनाननम् ॥ कोटिमन्मथसौंदर्यलीलाधाममनोहरम् ॥ ३३ ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंसस्मितंपीतवाससम् ॥ श्रीवत्सवक्षसं
भ्राजत्कौस्तुभेनविराजितम् ॥ ३४ ॥ सद्रत्नकोटिखचितकिरीटकटकोज्ज्वलम् ॥ रत्नसिंहासनस्थंचवनमालाविभूषितम् ॥ ३५ ॥
तदेवपरमंब्रह्मपूर्णंश्रीकृष्णसंज्ञकम् ॥ स्वेच्छामयंसर्वबीजंसर्वाधारंपरात्परम् ॥ ३६ ॥ किशोरवयसंशश्वद्गोपवेषविधायकम् ॥ कोटिपू
र्णेंदुशोभाढ्यंभक्तानुग्रहकारकम् ॥ ३७ ॥ निरीहंनिर्विकारंचपरिपूर्णतमंप्रभुम् ॥ रासमंडपमध्यस्थंशांतंरासेश्वरंहरिम् ॥ ३८ ॥
मंगलंमंगलार्हंचसर्वमंगलमंगलम् ॥ परमानंदराजंचसत्यमक्षरमव्ययम् ॥ ३९ ॥ सर्वसिद्धेश्वरंसर्वसिद्धिरूपंचसिद्धिदम् ॥
प्रकृतेःपरमीशानंनिर्गुणंनित्यविग्रहम् ॥ ४० ॥ आद्यंपुरुषमव्यक्तंपुरुहूतंपुरुष्टुतम् ॥ नित्यंस्वतंत्रमेकंचपरमात्मस्वरूपकम् ॥ ४१ ॥
ध्यायंतेवैष्णवाःशांताःशांतंशांतिपरायणम् ॥ एवंरूपंपरंबिभ्रद्भगवानेकएवसः ॥ ४२ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ एवमु

त्वाततोविष्णुरधिमाससमन्वितः ॥ गोलोकमगमच्छीघ्रंविरजोवेष्टितंपरम् ॥ ४३ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतीरयित्वागिरमात्तसत्क्रिये
मुनीश्वरेतूष्णिमवस्थितेमुनिः ॥ जगादवाक्यंविधिजोमहोत्सवाच्छुश्रूषुरानंदनिधेर्नवाःकथाः ॥ ४४ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेश्रीना
रायणनारदसंवादेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येविष्णोर्गोलोकगमनेपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥
॥ नारदउवाच ॥ वैकुंठाधिपतिर्गत्वागोलोकेकिंचकारह ॥ तद्वदस्वकृपांकृत्वामह्यंशुश्रूषवेऽनघ ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणु
नारदवक्ष्येऽहंयज्जातंतत्रतेनघ ॥ विष्णुर्गोलोकमगमदधिमासेनसंयुतः ॥२॥ तन्मंध्येभगवद्धाममणिस्तंभैःसुशोभितम् ॥ ददर्शदूरतोविष्णु
र्ज्योतिर्धाममनोहरम् ॥ ३ ॥ तत्तेजःपिहिताक्षोसौशनैरुन्मीलयलोचने ॥ मंदंमंदंजगामाधिमासंकृत्वास्वपृष्ठतः ॥ ४ ॥ उपमंदिरमासाद्य
सोधिमासोमुदान्वितः ॥ उत्थितैर्द्वारपालैश्चवंदितांघ्रिर्हरिःशनैः ॥ ५ ॥ प्रविष्टोभगवद्धामशोभासंमुग्धलोचनः ॥ तत्रगत्वाननामाशुश्री
कृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥ ६ ॥ गोपिकावृन्दमध्यस्थंरत्नसिंहासनासनम् ॥ नत्वोवाचरमानाथोबद्धांजलिपुटःपुरः ॥ ७ ॥ ॥ श्रीविष्णुरु
वाच ॥ ॥ वदेविष्णुंगुणातीतंगोविंदमेकमक्षरम् ॥ अव्यक्तमव्ययंव्यक्तंगोपवेषविधायिनम् ॥८॥ किशोरवयसंशांतंगोपीकांतमनोहरम् ॥
नवीननीरदश्यामंकोटिकंदर्पसुन्दरम् ॥९॥ वृंदावनवनाभ्यंतेरासमंडलसंस्थितम् ॥ लसत्पीतपटंसौम्यंत्रिभंगललिताकृतिम् ॥१०॥ रासे
श्वरंरासवासंरासोल्लाससमुत्सुकम् ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंपीतवाससमच्युतम् ॥ ११ ॥ इत्येवमुक्त्वातंनत्वारत्नसिंहासनेवरे ॥ पार्षदैःसत्कृतो
विष्णुःसउवासतदाज्ञया ॥ १२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिविष्णुकृतंस्तोत्रंप्रातरुत्थाययःपठेत् ॥ पापानितस्यनश्यंतिदुःस्वप्नःसत्फ

लप्रदः ॥ १३ ॥ भक्तिर्भवतिगोविंदेपुत्रपौत्रविवर्द्धिनी ॥ अकीर्तिःक्षयमाप्नोतिसत्कीर्तिर्वर्द्धतेचिरम् ॥ १४ ॥ उपविष्टस्ततोविष्णुःश्रीकृ
ष्णचरणांबुजे ॥ नामयामासतंमासंवेपमानंतदग्रतः ॥ १५ ॥ तदापप्रच्छश्रीकृष्णःकोयंकस्मादिहागतः ॥ कस्माद्रुदतिगोलोकेनकश्चि
दुःखमश्नुते ॥ १६ ॥ गोलोकवासिनःसर्वेसदानंदपरिप्लुताः ॥ स्वप्नेपिनैवशृण्वंतिदुर्वार्तांचदुरन्वयाम् ॥ १७ ॥ तस्मादयंकथंविष्णोमद
ग्रेदुःखितःस्थितः ॥ मुंचन्नश्रूणिनेत्राभ्यांवेपतेचमुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ नवांबुदानीकमनोहरस्यगोलोकनाथस्यव
चोनिशम्य ॥ उवाचविष्णुर्मलमादुःखंप्रोत्थायसिंहासनतःसमग्रम् ॥ १९ ॥ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ वृंदावनकलानाथश्रीकृष्णमुरलीधर ॥
श्रूयतामधिमासीयंदुःखंवच्मितवाग्रतः ॥ २० ॥ तस्मादहमिहायातोगृहीत्वामुंनिरीश्वरम् ॥ दुःखदावानलंतीव्रमेतदीयंनिराकुरु ॥
॥ २१ ॥ अयंत्वधिकमासोस्तिव्यपेतरविसंक्रमः ॥ मलिनोयमनर्होस्तिशुभकर्मणिसर्वदा ॥ २२ ॥ नस्नानंनैवदानंचकर्तव्यंप्रभुवर्जिते ॥
एवंतिरस्कृतःसर्वैर्वनस्पतिलतादिभिः ॥ २३ ॥ मासैर्द्वादशभिश्चैवकलाकाष्ठालवादिभिः ॥ अयनैर्हायनैश्चैवस्वामिवर्गसमन्वितैः
॥ २४ ॥ इतिदुःखानलेनैवदग्धोयंमर्तुमुन्मुखः ॥ अन्यैर्दयालुभिःपश्चात्प्रेरितोमामुपागतः ॥२५॥ शरणार्थीहृषीकेशवेपमानोरुदन्मुहुः॥
सर्वंनिवेदयामासदुःखजालमसंवृतम् ॥ २६ ॥ एतदीयंमहद्दुःखमनिवार्यंभवद्दते ॥ अतस्त्वामाश्रितोनूनंकरेकृत्वानिराश्रयम् ॥ २७ ॥ पर
दुःखासहिष्णुस्त्वमितिवेदविदोजगुः ॥ अतएनंनिरातंकंसानंदंकृपयाकुरु ॥ २८ ॥ त्वदीयचरणांभोजंगतोनैवावशोचते ॥ इतिवेदवि
दोमिथ्याकथंभाविजगत्पते ॥ २९ ॥ मदर्थमपिकर्तव्यमेतद्दुःखनिवारणम् ॥ सर्वंत्यक्त्वाहमायातोयातंमेसफलंकुरु ॥३०॥ मुहुर्मुहुर्नवक्त

व्यंकदापिप्रभुसन्निधौ ॥ वदंत्येवंमहाप्राज्ञानित्यंनीतिविशारदाः ॥ ३१ ॥ इतिविज्ञाप्यभूमानंबद्धांजलिपुटोहरिः ॥ पुरस्तस्थौभगवतोनि रीक्षंस्तन्मुखांबुजम् ॥ ३२ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ सूतसूतवदान्योसिजीवत्वंशाश्वतीःसमाः ॥ पिबामोयन्मुखात्सेव्यंहरिर्लीलाकथामृ तम् ॥ ३३ ॥ गोलोकवासिनासूतकिमुक्तंकिंकृतंवद ॥ विष्णुश्रीकृष्णसंवादःसर्वलोकोपकारकः ॥ ३४ ॥ विधिसुतःकिमपृच्छद्दषीश्वरं तदधुनावदसूततपस्विनः ॥ परमभागवतःसहरेस्तनुस्तदुदितंवचनंपरमौषधम् ॥३५॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्री नारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तमविज्ञप्तिर्नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ सूतउवाच ॥ भवद्भिर्यःकृतःप्रश्नस्तमचीकरदाशुगाः ॥ यदुत्तरमुवाचेश स्तद्वदामितपोधनाः ॥ १ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ विष्टरश्रवसिमौनमास्थितेसंनिवेद्यपरदुःखमपारम् ॥ किंचकारपुरुषोत्तमःपरस्तद्वदस्व बदरीपतेऽधुना ॥ २ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ गोलोकनाथोयदुवाचविष्णुंतदेवगुह्यंकथयामिवत्स ॥ वाच्यंसुभक्तायसदास्तिकायशु श्रूषवेदंभविवर्जिताय ॥ ३ ॥ सुकीर्तिकृत्पुण्यकरंयशस्यंसत्पुत्रदंवश्यकरंचराज्ञाम् ॥ दारिद्र्यदावाग्निरनल्पपुण्यैःश्राव्यंतथाकार्यमनन्यभ क्त्या ॥ ४ ॥ श्रीपुरुषोत्तमउवाच ॥ समीचीनंकृतंविष्णोयदत्रागतवान्भवान् ॥ मलमासंकरेकृत्वालोकेकीर्तिमवाप्स्यसि ॥ ५ ॥ यस्त्व योरीकृतोजीवःसमयैवोररीकृतः ॥ अतएनंकरिष्यामिसर्वोपरिमयासमम् ॥ ६ ॥ गुणैःकीर्त्यानुभावेनषट्भगैश्वपराक्रमैः ॥ भक्तानांवर दानेनगुणैरन्यैश्चमामकैः ॥ ७ ॥ अहमेतैर्यथालोकेप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥ तथायमपिलोकेषुप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥ ८ ॥ अस्मैसमर्पिताःसर्वे येगुणामयिसंस्थिताः ॥ पुरुषोत्तमेतिमन्नामप्रथितंलोकवेदयोः ॥ ९ ॥ तदप्यस्मैमयादत्तंतवतुष्टयैजनार्दन ॥ अहमेवास्यसंजातःस्वामी

चमधुसूदन ॥ १० ॥ एतन्नाम्नाजगत्सर्वंपवित्रंचभविष्यति ॥ मत्साद्दश्यमुपागम्यमासानामधिपोभवेत् ॥ ११ ॥ जगत्पूज्यो
जगद्वंद्योमासोयंतुभविष्यति ॥ पूजकानांचसर्वेषांदुःखदारिद्र्यखंडनः ॥ १२ ॥ सर्वेमासाःसकामाश्चनिष्कामोयंमयाकृतः ॥ मोक्षदः
सर्वलोकानांमत्तुल्योयंमयाकृतः ॥ १३ ॥ अकामःसर्वकामोवायोधिमासंप्रपूजयेत् ॥ कर्माणिभस्मसात्कृत्वामामेवैष्यत्यसंशयम् ॥
॥ १४ ॥ यदर्थं चमहाभागायतिनोब्रह्मचारिणः ॥ तपस्यंतिमहात्मानोनिराहाराद्दढव्रताः ॥ १५ ॥ फलपत्रानिलाहाराः कामक्रोधवि
वर्जिताः ॥ जितेंद्रियचयाःसर्वेप्रावृट्कालेनिराश्रयाः ॥ १६ ॥ शीतातपसहाश्चैवयतंतेगरुडध्वज ॥ तथापिनैवमेयांति परमंपदमव्ययम्
॥ १७ ॥ पुरुषोत्तमस्यभक्तास्तुमासमात्रेणतत्पदम् ॥ अनायासेनगच्छंतिजरामृत्युविवर्जितम् ॥ १८ ॥ सर्वसाधनतःश्रेष्ठःसर्वकामा
र्थसिद्धिदः ॥ तस्मात्संसेव्यतामेवमासोयंपुरुषोत्तमः ॥ १९ ॥ सीतानिक्षिप्तबीजानिवर्धंतेकोटिशोयथा ॥ तथाकोटिगुणंपुण्यंकृतंमेपुरु
षोत्तमे ॥ २० ॥ चातुर्मास्यादिभिर्यज्ञैःस्वर्गंगच्छंतिकेचन ॥ तत्रत्यंभोगमासाद्यपुनर्गच्छंतिभूतलम् ॥ २१ ॥ विधिवत्सेवतेयस्तुपुरु
षोत्तममादरात् ॥ कुलंस्वकीयमुद्धृत्यमामेवैष्यत्यसंशयम् ॥ २२ ॥ मामुपेतोत्रसंसारंजन्ममृत्युभयाकुलम् ॥ आधिव्याधिजराग्रस्तंन
पुनर्यातिमानवः ॥ २३ ॥ यद्गत्वाननिवर्ततेतद्धामपरमंमम ॥ इतिच्छंदोवचःसत्यमसत्यंजायतेकथम् ॥ २४ ॥ एतन्मासाधिपश्चाहंमयै
वायंप्रतिष्ठितः ॥ पुरुषोत्तमेतिमन्नामतदप्यस्मैसमर्पितम् ॥ २५ ॥ तस्मादेतस्यभक्तानांममाचिंतादिवानिशम् ॥ तद्भक्तकामनाः सर्वाःपूर
णीयामयैवहि ॥ २६ ॥ कदाचिन्ममभक्तानामपराधोधिगण्यते ॥ पुरुषोत्तमभक्तानांनापराधःकदाचन ॥ २७ ॥ मदाराधनतोविष्णो
२

मदीयाराधनंप्रियम् ॥ मद्भक्तकामनादानेविलंबेहंकदाचन ॥ २८ ॥ मदीयमासभक्तानांनविलंबःकदाचन ॥ मदीयमासभक्तायेममैवा तीववल्लभाः ॥ २९ ॥ यएतस्मिन्महामूढाजपदानादिवार्जिताः ॥ सत्कर्मस्नानरहितादेवतीर्थद्विजद्विषः ॥ ३० ॥ जायंतेदुर्भगादुष्टाःपर भाग्योपजीविनः ॥ नकदाचित्सुखंतेषांस्वप्नेपिशशशृङ्गवत् ॥ ३१ ॥ तिरस्कुर्वंतियेमूढामलमासंममप्रियम् ॥ नाचरिष्यंतियेधर्मंतेसदा निरयालयाः ॥ ३२ ॥ पुरुषोत्तममासाद्यवर्षेवर्षेतृतीयके ॥ नाचरिष्यंतिधर्मंयेकुंभीपाकेपतंतिते ॥ ३३ ॥ इहलोकेमहद्दुःखंपुत्रपौत्रकल त्रजम् ॥ प्राप्नुवंतिमहामूढादुःखदावानलस्थिताः ॥ ३४ ॥ तेकथंसुखमेधंतेयेषामज्ञानतोगतः ॥ श्रीमान्पुण्यतमोमासोमदीयः पुरुषो त्तमः ॥ ३५ ॥ याः स्त्रियः सुभगाः पुत्रसुखसौभाग्यहेतवे ॥ पुरुषोत्तमेकरिष्यंतिस्नानदानार्चनादिकम् ॥ ३६ ॥ तासांसौभाग्यसंपत्ति सुखपुत्रप्रदोह्यहम् ॥ यासांमासोगतः शून्योमन्नामापुरुषोत्तमः ॥ ३७ ॥ नतासामनुकूलोऽहंनसुखंस्वामिजंभवेत् ॥ भ्रातृपुत्रधनानांच सुखंस्वप्नेपिदुर्लभम् ॥ ३८ ॥ तस्मात्सर्वात्मनासर्वैः स्नानपूजाजपादिकम् ॥ विशेषेणप्रकर्तव्यंदानंशक्त्यनुसारतः ॥ ३९ ॥ येनाहम र्चितोभक्त्यामासेस्मिन्पुरुषोत्तमे ॥ धनपुत्रसुखंभुक्त्वापश्चाद्गोलोकवासभाक् ॥ ४० ॥ ममाज्ञयाजनाः सर्वेपूजयिष्यन्तिमामकम् ॥ सर्वेषामपिमासानामुत्तमोयंमयाकृतः ॥ ४१ ॥ अतस्त्वमधिमासस्यचिंतांत्यक्त्वारमापते ॥ गच्छवैकुंठमतुलंगृहीत्वापुरुषोत्तमम् ॥ ४२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिरसिकवचोनिशम्यविष्णुःप्रबलमुदापरिगृह्यमासमेनम् ॥ नवजलदरुचंप्रणम्यदेवंझटितिजगामनिजालयंखगेन ॥ ४३ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेऽधिमासस्यैश्वर्यप्राप्तिर्नामसप्तमोऽध्यायः॥७॥ ॥ ७ ॥

सूतउवाच ॥ नारदःकृतवान्प्रश्नंपुनरेवतपोधनाः ॥ विष्णुश्रीकृष्णसंवादंश्रुत्वासंतुष्टमानसः ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ वैकुंठंगतवतिरुक्मिणी
शाकजातंतदनुवदप्रभोमे ॥ वृत्तांतंहरिसुतकृष्णयोश्वसर्वेषांहितकरभाविपुंसोः ॥२॥ इतिसंप्रश्नसंहृष्टोभगवान्बदरीपतिः ॥ उवाचपुनरेवा
मुंजगदानंददंबृहत् ॥ ३ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ अथश्रीरुक्मिणीनाथोवैकुंठंगतवान्मुदा ॥ तत्रगत्वाधिमासंतंवासयामासनारद ॥४॥
तत्रत्यवसतिंप्राप्यमोदमानोभवत्तदा ॥ मासानामधिपोभूत्वारमतेविष्णुनासह ॥ ५ ॥ द्वादशस्वपिमासेषुमलमासंवरंप्रभुः ॥ विधायमन
सातुष्टोबभूवप्रकृतिप्रियः ॥ ६ ॥ अथार्जुनमुवाचेदंभगवान्भक्तवत्सलः ॥ युधिष्ठिरंचपांचालींनिरीक्षन्कृपयामुने ॥ ७ ॥ ॥ श्रीकृष्ण
उवाच ॥ जानेऽहंराजशार्दूलतपोवनमुपागतैः ॥ भवद्भिर्दुःखसंमग्नैर्नादृतःपुरुषोत्तमः ॥८॥ वृंदावनकलानाथवल्लभःपुरुषोत्तमः ॥ प्रमादा
द्दतवान्मासोभवतांकाननौकसाम् ॥ ९ ॥ युष्माभिर्नैवविज्ञातोभयद्वेषसमन्वितैः ॥ गांगेयद्रोणकर्णेभ्योभयसंत्रस्तमानसैः ॥ १० ॥
कृष्णद्वैपायनादात्तविद्याराधनतत्परैः ॥ इंद्रकीलंगतवतिबीभत्सौरणशालिनि ॥ ११ ॥ तद्वियोगपरिक्लिष्टैर्नज्ञातःपुरुषोत्तमः ॥ युष्माभिः
किंप्रकर्तव्यमदृष्टमवलंब्यताम् ॥ १२ ॥ अदृष्टंयादृशंपुंसांतादृशंभासतेसदा ॥ अवश्यमेवभोक्तव्यमदृष्टजनितंफलम् ॥ १३ ॥ सुखंदुःखं
भयंक्षेममदृष्टात्प्राप्यतेजनैः ॥ तस्माददृष्टनिष्ठैश्चभवद्भिःस्थीयतांसदा ॥१४॥ अथापरंप्रवक्ष्यामिभवतांदुःखकारणम् ॥ सेतिहासंमहाराज
श्रूयतांमन्मुखादहो ॥१५॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ पांचालीयंमहाभागापूर्वजन्मनिसुन्दरी ॥ मेधाविद्विजमुख्यस्यपुत्रीजातासुमध्यमा ॥१६॥
कालेनगच्छताराजन्संजातादशवार्षिकी ॥ रूपलावण्यललितानयनापांगशालिनी ॥ १७ ॥ चातुर्यगुणसंपन्नापितुरेकैवपुत्रिका ॥ वल्लभा

तीवतेनेयंचतुरागुणसुन्दरी ॥ १८ ॥ लालितापुत्रवन्नित्यंनैकदाचित्प्रलंभिता ॥ साहित्यशास्त्रकुशलानीतावपिविशारदा ॥ १९ ॥ तन्मा
तास्वर्गतापूर्वंपित्रासापोषितामुदा ॥ पार्श्वस्थालिसुखंदृष्ट्वापुत्रपौत्रसुखस्पृहा ॥ २० ॥ तर्कयंतीतदाबालामामेवंचकथंभवेत् ॥ गुणभाग्यनि
धिर्भर्तासुखदः सत्सुताः कथम् ॥ २१ ॥ एवंमनोरथंचक्रेदैवेनध्वंसितंपुरा ॥ किंकृत्वाकिंविदित्वाहंकमुपास्येसुरेश्वरम् ॥ २२ ॥ कंवामु
निमुपातिष्ठेकिंवातीर्थमुपाश्रये॥ ममभाग्यंकथंसुतंभर्ताकोपिनवाञ्छति ॥२३॥ पंडितोपिपितामूढोममभाग्यवशादहो ॥ विवाहकालेसंप्रा
प्तेनदत्तासदृशेवरे ॥ २४ ॥ अध्यक्षाहंसखीमध्येकुमारीदुःखपीडिता ॥ नाहंस्वामिसुखाभिज्ञायथाचालिगणोमम ॥ २५ ॥ ममभाग्यव
तीमाताकथंस्वर्गगतापुरा ॥ एवंचिंताकुलाबालामनोरथमहोदधौ ॥२६॥ निमग्नामोहसलिलेशोकमोहोर्मिपीडिता ॥ मेधावीऋषिराजो
सौविचचारमहीतले ॥२७॥ कन्यादाननिमित्तंचविचिन्वन्सदृशंवरम् ॥ तादृशंवरमप्राप्यनिराशःस्वमनोरथे ॥२८॥ सुतास्वकीयभाग्या
भ्यांभग्नसंकल्पपंजरः ॥ अवापदैवयोगेनज्वरंतीव्रंसुदारुणम् ॥२९॥ स्फुटत्सर्वांगसंभिन्नतापज्वालासमाकुलः ॥ श्वासोच्छ्वाससमायुक्तोम
हादारुणमूर्च्छया ॥ ३० ॥ प्रस्खलन्निपतन्भूमौमदिरामत्तवद्भृशम् ॥ आगच्छन्नेवभवनंसपपातधरातले ॥३१॥ यावत्सुतासमायातापितरं
भयविह्वला ॥ तावन्मुमूर्षुःसंजातोभूसुरस्तामनुस्मरन् ॥ ३२ ॥ भाविनार्थबलेनैवसहसाजातवेपथुः ॥ कन्यादानप्रसंगोत्थमहोत्सवविव
र्जितः ॥३३॥ अथप्राचीनगार्हस्थ्यकृतधर्मपरिश्रमात् ॥ संसारवासनांत्यक्त्वाहरौचित्तमधारयत् ॥३४॥ सस्मारश्रीहरिंतूर्णंमेधावीपुरुषोत्त
मम् ॥ इंदीवरदलश्यामंत्रिभंगललिताकृतिम् ॥३५॥ रासेशराधारमणप्रचंडदोर्दंडदूराहतनिर्जरारे ॥ अत्युग्रदावानलपानकर्तःकुमारिको

त्तारितवस्त्रहर्तः ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्णगोविंदहरेमुरारेराधेशदामोदरदीननाथ ॥ मांपाहिसंसारसमुद्रमग्नंनमोनमस्तेहृषिकेश्वराय ॥ ३७ ॥
इतिमुनिवचनंनिशम्यदूराज्झटितिययुश्चचरामुकुंदलोकात् ॥ तदनुमृतमुनिंकरेगृहीत्वाचरणसरोरुहमीयुरीश्वरस्य ॥ ३८ ॥ प्राणोत्क्रमण
मालोक्यहाहेतिसासुतारुदत् ॥ अंकेकृत्वापितुर्देहंविललापसुदुःखिता ॥ ३९ ॥ कुररीवचिरंसातुविलप्यभृशदुःखिता ॥ उवाचपितरंबा
लाजीवंतमिवविह्वला ॥ ४० ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ हाहापितःकृपासिंधोआत्मजानंददायक ॥ कस्यांकेमांनिधायाद्यगतोसिवै
ष्णवंपुरम् ॥ ४१ ॥ पितृहीनांचमांतातकोवासंभावयिष्यति ॥ नभ्रातानैवबंधुश्चनमेमातातपस्विनी ॥ ४२ ॥ भोजनाच्छादनेचिंतां
कोमेतातकरिष्यति ॥ कथंतिष्ठाम्यहंशून्येवेदध्वनिविवर्जिते ॥ ४३ ॥ आश्रमेतेमुनिश्रेष्ठअरण्यइवनिर्जने ॥ अतःपरंमरिष्यामिजीवने
किंप्रयोजनम् ॥ ४४ ॥ असंपाद्यैववैवाहंविधिंदुहितृवत्सल ॥ क्वगतोसिपितस्तातइहागच्छतपोनिधे ॥ ४५ ॥ वाणींवदसुधाकल्पांकथंतू
ष्णीमवस्थितः ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठहेतातचिरंसुप्तोसिसांप्रतम् ॥ ४६ ॥ इत्युक्त्वाश्रुमुखीबालाविललापमुहुर्मुहुः ॥ मुक्तकंठरुरोदार्ताकुररीवसुदुः
खिता ॥ ४७ ॥ तत्सुतारोदनंश्रुत्वाविप्रास्तद्वनवासिनः ॥ अतीवकरुणं कोवा रोदित्यस्मिंस्तपोवने ॥ ४८ ॥ मेधाऋषेःसुताशब्दंशनैर्नि
श्चित्यतापसाः ॥ ससंभ्रमाःसमाजग्मुर्हाहाकारसमन्विताः ॥४९॥ आगत्यददृशुःसर्वेसुतांकस्थंमृतंमुनिम् ॥ ततःसंरुरुदुःसर्वेमुनयःकान
नौकसः ॥ ५० ॥ सुतोत्संगाच्छवंनीत्वाश्मशानेशिवसंनिधौ ॥ अंत्येष्टिंविधिनाकृत्वातेऽदहन्काष्ठवेष्टितम् ॥ ५१ ॥ ततःकन्यांसमाश्वा
स्यसर्वेतेस्वगृहान्ययुः ॥ कन्याधैर्यंसमालंब्ययथाशक्त्यकरोद्व्ययम् ॥ ५२ ॥ इत्यौर्ध्वदैहिकविधिंप्रणिधायपित्र्यंपुत्रीनिवासमकरोच्चत

पोवनेस्मिन् ॥ सावित्र्यथेपितृजदुःखदवाग्निदग्धारंभेववत्संसमरणात्सुरभीवबाला ॥ ९३ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकुमारीविलापोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ छ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ ततस्तंविस्मयाविष्टःपप्रच्छनारदोमुनिः ॥ मेधाविद्विजवर्यस्यसुतावृत्तांतमद्भुतम् ॥ १ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ मुनेमुनिसुतातत्रकिंचकारतपोवने ॥ कोवामुनिवरस्तस्याःपाणिग्रहमचीकरत् ॥ २ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ निवसंत्यास्ततस्तस्याःकियान्कालोविनिर्गतः ॥ स्मारंस्मारंस्वपितरंशोचंत्याश्चमुहुर्मुहुः ॥ ३ ॥ शून्यसद्मनिसंविष्टांयूथभ्रष्टांमृगीमिव ॥ गलद्बाष्पौघनयनांज्वलद्धृदयपंकजाम् ॥ ४ ॥ विनिःश्वासपरांदीनांसंरुद्धामुरगीमिव ॥ चिंतयंतीमपश्यंतींदुःखपारंकृशोदरीम् ॥ ५ ॥ तामाससादभगवान्भविष्यद्बलनोदितः ॥ यदृच्छयावनेतस्मिन्परमः कोपनोमुनिः ॥ ६ ॥ यद्विलोकनमात्रेणत्रस्येदपिशतक्रतुः ॥ जटाकलापसंछन्नःसाक्षादिवसदाशिवः ॥ ७ ॥ यस्त्वञ्जनन्याराजेंद्रशैशवेतिप्रसादितः ॥ त्रिदशाकर्षिणींविद्यांददावस्यैसुपूजितः ॥ ८ ॥ येनाहमपिभूपालसर्वदेवनमस्कृतः ॥ रथेसंयोजितःसाक्षाद्रुक्मिण्यासहनारद ॥ ९ ॥ उभाभ्यांचालितेमार्गेरथेदुर्वाससान्विते ॥ अत्युग्रयातृषाशुष्यत्ताल्वोष्ठपुटयानया ॥ १० ॥ सूचितोहंजलार्थिन्यास्कंधस्थयुगयापुरा ॥ गच्छन्नेवपदाग्रेणसंपीड्यवसुधातलम् ॥ ११ ॥ आनीतवान्भोगवतींप्रियाप्रेमपरिप्लुतः ॥ सैवोर्ध्वगामिनीभूत्वातावन्मात्रेणवारिणा ॥ १२ ॥ न्यवारयन्महाराजरुक्मिणीतृषमुल्बणाम् ॥ तद्दृष्ट्वातत्क्षणोद्भूतक्रोधेनप्रज्वलन्निव ॥ १३ ॥ प्रलयाग्निरिवोत्तिष्ठञ्शशापकोपनोमुनिः ॥ अहोश्रीकृष्णतेत्यंतवल्लभारुक्मिणीसदा ॥ १४ ॥ यद्भवान्मामवज्ञायप्रियाप्रेमपरिप्लुतः ॥ पाययामासपानीयंमाहात्म्य

दर्शयन्स्वकम् ॥ १५ ॥ दंपत्योरुभयोरेववियोगोस्तुयुधिष्ठिर ॥ इतियोदत्तवान्शापंसएवमुनिसत्तमः ॥ १६ ॥ साक्षाद्रुद्रांशसंभूतःकाल
रुद्रइवापरः॥ अत्रेरुग्रतपःकल्पवृक्षदिव्यफलंमहत् ॥ १७ ॥ पतिव्रताशिरोरत्नाऽनुसूयागर्भसंभवः ॥ दुर्वासानाममेधावीयथावैमूर्तिमत्त
पः ॥ १८ ॥ नैकतीर्थजलक्लिन्नजटाभूषितसच्छिराः ॥ तमालोक्यसमायांतंकुमारीशोकसागरात् ॥ १९ ॥ उन्मज्ज्योत्थायधैर्येणववंदे
चरणौमुनेः ॥ नत्वास्वाश्रममानीयजानकीवाल्मिकिंयथा ॥ २० ॥ अर्घ्यपाद्यैर्वन्यफलैःपुष्पैश्चविविधैर्मुनिम् ॥ स्वागतंपृच्छ्य
साबालापूजयामाससादरम् ॥ ततःसविनयाराजन्नुवाचमुनिकन्यका ॥ २१ ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ नमस्तेस्तुमहाभाग
अत्रिगोत्रदिवाकर ॥ कुतोधिगमनंसाधोदुर्भगायाममाश्रमे ॥ ममभाग्योदयोजातस्तवागमनतोमुने ॥ २२ ॥ अथवामत्पितुः
पुण्यप्रवाहप्रेरितोभवान् ॥ संभावयितुंमामेवह्यागतोमुनिसत्तमः ॥ २३ ॥ भवादृशांपादरजस्तीर्थरूपंमहात्मनाम् ॥ स्पृशंत्याःसफलं
जन्मसफलंचाद्यमेव्रतम् ॥ २४ ॥ अद्यमेसफलंपुण्यमद्यमेसफलोभवः ॥ भवादृशामहापुण्यायन्मेदृष्टिपथंगताः ॥ २५ ॥ एवमुक्त्वा
चसाबालातस्थौतूष्णींतदग्रतः ॥ सस्मितंमुनिराहेदंदुर्वासाःशंकरांशजः ॥ २६ ॥ ॥ दुर्वासाउवाच ॥ ॥ साधुसाधुद्विजसुतेकुलम
भ्युद्धृतंपितुः ॥ मेधाऋषेःसुतपसःफलमेतादृशीसुता ॥ २७ ॥ कैलासादहमागच्छंज्ञात्वातेधर्मशीलताम् ॥ त्वदाश्रममनुप्राप्तस्त्वयासंपू
जितोस्म्यहम् ॥ २८ ॥ गमिष्यामिवरारोहेशीघ्रंबदरिकाश्रमम् ॥ द्रष्टुंनारायणंदेवंसनातनमुनीश्वरम् ॥ २९ ॥ तपश्चरंतमेकाग्रमत्युग्रंलो
कहेतवे ॥ ॥ बालोवाच ॥ ऋषेत्वद्दर्शनादेवशुष्कोमेशोकसागरः ॥ ३० ॥ अतःपरंशुभंभावियस्मात्संभावितात्वया ॥ समुद्धृत

बृहज्ज्वालदावहव्यभुजंमुने ॥ ३१ ॥ किंनवेत्सिदयासिंधोतंनिर्वापयशंकर ॥ हर्षहेतुर्नमेकश्चिद्दृश्यतेसुविचारतः ॥ ३२ ॥ नमातान
पिताभ्रातायोमेधैर्यंप्रयच्छति ॥ कथंकारमहंजीवेदुःखसागरपीडिता ॥ ३३ ॥ यांयांदिशंप्रपश्यामिसासाशून्याविभातिमे ॥ ममदुःख
प्रतीकारंकुरुशीघ्रंतपोनिधे ॥ ३४ ॥ नमांकामयतेकश्चित्पाणिग्रहणहेतवे ॥ अतःपरंभविष्यामिवृषलीतिमहद्भयम् ॥ ३५ ॥ तस्मान्न
जायतेनिद्रानरुचिर्भोजनेमम ॥ अह्नन्मुमूर्षुरस्म्येवइतिमेनिश्चयोऽधुना ॥ ३६ ॥ इत्युक्त्वाश्रुमुखीबालाविररामतदग्रतः ॥ दुर्वासास्तदु
पायार्थंविचारमकरोत्तदा ॥ ३७ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिमुनितनयावचोनिशम्यबहुलतपामुनिराड्विचार्यछंदः ॥ अति
शयकृपयाविलोक्यबालांकिमपिहितंनिजगादसारभूतम् ॥ ३८ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येदुर्वासस्तपोवनागमनं
नामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ छ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ किंविचार्यबृहद्धामापरमःकोपनोमुनिः ॥ अब्रवीदृषिकन्यांतांतन्मेब्रूहितपो
निधे ॥ १ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ नारदस्यवचःश्रुत्वाप्रोवाचबदरीपतिः ॥ दुर्वासोवचनंगुह्यंसर्वेषांहितकृद्द्विजाः ॥२॥ श्रीनारायणउवाच ॥
शृणुनारदवक्ष्येऽहंयदुक्तंमुनिनातदा ॥ मेधावितनयादुःखमपनेतुंकृपालुना ॥३॥ ॥ दुर्वासाउवाच ॥ ॥शृणुसुंदरिवक्ष्यामिगुह्याद्गुह्यतरं
महत् ॥ आख्येयंनैवकस्यापित्वदर्थंतुविचारितम् ॥ ४ ॥ नविस्तरंकरिष्यामिसमासेनब्रवीमिते॥ इतस्तृतीयःसुभगेमासस्तुपुरुषोत्तमः॥५॥
तस्मिन्स्नातोनरस्तीर्थेमुच्यतेभ्रूणहत्यया॥एतत्तुल्योनकोप्यन्यःकार्तिकादिषुसुंदरि॥६॥ सर्वेमासास्तथापक्षाःपर्वाण्यन्यानियानिच॥पुरुषो
त्तममासस्यकलांनार्हंतिषोडशीम्॥७॥ साधनानिसमस्तानिनिगमोक्तानियानिच॥मासस्यैतस्यनार्हंतिकलामपिचषोडशीम्॥८॥ द्वादश

न्दसहस्राणिगंगास्नानेनयत्फलम् ॥गोदावरीसकृत्स्नानाद्यत्फलंसिंहगेगुरौ ॥९॥ तदेवफलमाप्नोतिमासेवैपुरुषोत्तमे॥सकृत्सुस्नानमात्रेणयत्र कुत्रापिसुन्दरि ॥१०॥ श्रीकृष्णवल्लभोमासोनाम्नाचपुरुषोत्तमः ॥ तस्मिन्संसेवितेबालेसर्वंभवतिवांछितम् ॥११॥ तस्मान्निषेवयाशुत्वंमासंतं पुरुषोत्तमम् ॥ मयापिसेव्यतेसोऽयंपुरुषोत्तमवन्मुदा ॥ १२ ॥ एकदाभस्मसात्कर्तुमंबरीषंक्रुधामया ॥ मुक्ताकृत्यातदाबालेसुनाभंहरिणा ज्वलत् ॥१३॥ मामेवभस्मसात्कर्तुंतदानींप्रेरितंमयि ॥ पुरुषोत्तमव्रता देवतच्चक्रंसंन्यवर्तत ॥१४॥ त्रैलोक्यंभस्मसात्कर्तुंसमर्थंतच्चसुन्दरि ॥ मय्यर्किंचित्करंजातंतदामेविस्मयोऽभवत् ॥१५॥ तस्माद्व्रजस्वसुभगेश्रीमंतंपुरुषोत्तमम् ॥ इत्युक्त्वामुनिशार्दूलोविररामसुनेःसुता ॥ १६ ॥ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ दुर्वासोवचनंश्रुत्वाबालामूढधियावदत् ॥ भाविनाप्रेरिताराजन्नसूयाप्रेरितासती ॥ दुर्वाससंमुनिश्रेष्ठंमनसिक्रोधसंयुता ॥ १७ ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ नमह्यंरोचतेब्रह्मन्यदुक्तंभवतामुने ॥१८॥ कथंमाघादयोमासाअर्किंचित्करतांगताः ॥ कथंकार्तिकमासंत्व मूनंवदसितद्वद ॥ १९ ॥ वैशाखःसेवितःकिंवानदास्यतिसुकामितम् ॥ सदाशिवादयोदेवाःफलदाःकिंनसेविताः ॥ २० ॥ अथवाशु विमार्तंडोदेवःप्रत्यक्षदर्शनः ॥ सकिंनदाताकामानांदेवीचजगदंबिका ॥ २१ ॥ गणेशःसेवितःकिंवानसंयच्छतिकामितम् ॥ व्यतीपाता दिकान्योगान्देवाञ्शर्वादिकानपि ॥ २२ ॥ सर्वानुल्लंघ्यवदंतस्त्रपाकिंतेनजायते ॥ अयंतुमलिनोमासःसर्वकर्मविगर्हितः ॥ २३ ॥ असू र्यसंक्रमः श्रेष्ठःक्रियतेचकथंमुने ॥ वेदाहंसर्वदुःखानांपारदंश्रीहरिंपरम् ॥ २४ ॥ नान्यंपश्यामिभूदेवचिंतयंतीदिवानिशम् ॥ रामाद्वाजान कीजानेः शंकरात्पार्वतीपतेः ॥ २५ ॥ नान्यःकोपिमहान्देवोयोमेदुःखंव्यपोहति ॥ एतान्विहायविप्रेंद्रकथंस्तौषिमलंमुने ॥ २६ ॥ एव

मुक्तस्तयाविप्रःपुत्र्यासक्रोधनोमुनिः ॥ जाज्वल्यमानोवपुषाक्रोधसंरक्तलोचनः ॥२७॥ तथापिनशशापैनांमित्रजांकृपयान्वितः॥मूढेयंनैव जानातिहिताहितमपूर्णधीः ॥ २८ ॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यंदुर्ज्ञेयंविदुषामपि ॥ किमुताल्पधियांपुंसांकुमारीणांविशेषतः ॥ २९ ॥ पितृहीनाकुमारीयंबालादुःखाग्निभर्जिता ॥ अतीवोग्रतरंशापंमदीयंसहतेकथम् ॥ ३० ॥ इत्येवंकृपयाक्रोधंसंजहारमनःस्थितम् ॥ स्वस्थोभूत्वा मुनिःप्राहतांबालामतिविह्वलाम् ॥ ३१ ॥ ॥ दुर्वासाउवाच ॥ अहोबालेनमेकोपोमित्रजेत्वयिकश्चन ॥ यत्तेमनसिनिर्भाग्येयथारुचितथाकुरु ॥ ३२ ॥ अपरंश्रूयतांबालेभविष्यंकिंचिदुच्यते ॥ पुरुषोत्तममासस्ययत्त्वयाऽनादरःकृतः ॥ ३३ ॥ सर्वथातत्फलंभाविइहवापरजन्मनि ॥ अतःपरंगमिष्यामिनरनारायणालयम् ॥ ३४ ॥ नचशप्तामयाभीरुमन्मित्रंतेपितायतः ॥ हिताहितंनजानासिबालभावाच्छुभाशुभम् ॥ ३५ ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिमास्तुकालात्ययोमम ॥ शुभंशुभेतरंभाविनकेनाप्यनुलंघ्यते ॥ ३६ ॥ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ इत्युदीर्यजगामाशुतामसस्तापसोमुनिः ॥ तत्क्षणंनिष्प्रभासाभूत्पुरुषोत्तमहेलया ॥ ३७ ॥ विमृश्यसुचिरंकालंतत्कालफलदंशिवम् ॥ आराधयामिदेवेशंतपसापार्वतीपतिम् ॥ ३८ ॥ इतिनिश्चित्यमनसामेधावितनयानृप ॥ दुष्करंतत्तपःकर्तुमियेषस्वाश्रमेस्थिता ॥ ३९ ॥ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ आर्षेयीप्रबलमुनेर्वचोविनिंद्यप्रोद्युक्तांधकरिपुसेवनेवनेस्वे ॥ लक्ष्मीशंबहुलफलप्रदंविहायसावित्रीपतिमपितादृशंनिरस्य ॥ ४० ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकुमारीशिवाराधनोद्योगोनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ अचीकरत्कुमारीयंमहत्कर्मसुदुष्करम् ॥ मुनीनामपिसर्वेषां तन्मेवदमहामुने ॥१॥

॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ अथारभतकल्याणीतपःपरमदारुणम् ॥ चिंतयंतीशिवंशांतंपंचवक्रंसनातनम् ॥ २ ॥ भुजंगभूषणंदेवंनंदिभृंगिनिषेवितम् ॥ चतुर्विंशतितत्त्वैश्चगुणैस्त्रिभिरभिष्टुतम् ॥ ३ ॥ महासिद्धिभिरष्टाभिः प्रकृत्यापुरुषेणच ॥ चंद्रखंडलसद्भालंजटाजूटविराजितम् ॥ ४ ॥ चचारदुश्चरंबालातमुद्दिश्यपरंतपः ॥ पंचाग्नीनांचमध्येसास्थायिनीग्रीष्मगेरवौ ॥ ५ ॥ हेमंतेशिशिरेचैवशीतवार्यंतरस्थिता ॥ व्यक्तवक्रातथारेजेजलस्थंकमलंयथा ॥ ६ ॥ शिरोधःप्रसृतश्यामनीलालकविगुंठिता ॥ जंबालवल्लरीपुंजैर्वेष्टितेवाबभौजले ॥ ७ ॥ ब्रह्मरंध्रोद्गतश्रीमद्धूम्रराजिर्व्यदृश्यत ॥ नलिनंसेव्यमानेवमिलिंदालिःप्रसर्पिणी ॥ ८ ॥ वर्षास्वनावृताशेतेस्थंडिलेबृसिकान्विते ॥ संध्ययोरुभयोस्तन्वीधूमपानमचीकरत् ॥ ९ ॥ पुरंदरःपरांचिंतामवापाश्रुत्यतत्तपः ॥ दुर्धर्षादिविजैःसर्वैःस्पृहणीयामहर्षिभिः ॥ १० ॥ एवंतपसिवृत्तायामार्षेय्यांनृपनंदन ॥ गतान्यब्दसहस्राणिनवराजन्यभूषण ॥ ११ ॥ संतुष्टस्तपसातस्याभगवान्पार्वतीपतिः ॥ दर्शयामासबालायैनिजंरूपमगोचरम् ॥ १२ ॥ तद्दृष्ट्वासहसोत्तस्थौदेहःप्राणमिवागतम् ॥ तपःकृशापिसाबालाहृष्टपुष्टातदाभवत् ॥ १३ ॥ भूरिवातातपक्लिष्टादेवमीढागरीयसी ॥ साबालाऽवनताभूत्वाववंदेगिरिजापतिम् ॥ १४ ॥ मानसैरुपचारैस्तंसंपूज्यविश्ववंदितम् ॥ तुष्टावजगतांनाथंभक्तियुक्तेनचेतसा ॥ १५ ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ अयेशैलजावल्लभप्राणनाथप्रभोभर्गभूतेशगौरीशशंभो ॥ तमःसोमसूर्याग्निदिव्यत्रिनेत्रमदाधारमुंडास्थिमालिन्नमस्ते ॥ १६ ॥ नरोनेकतापाभिभूतांगपीडःपरंघोरसंसारवार्धौनिमग्नः ॥ खलव्यालकालोग्रदंष्ट्राभिदष्टोविमुच्येद्भवंतंशरण्यंप्रपन्नः ॥ १७ ॥ विभोयेनबाणःस्वकीयीकृतश्चमृताजीवितालर्कभूपालपत्नी ॥ दयानाथभूतेशचंडीशभव्यभवत्राणमृत्यु

जयप्राणनाथ ॥ १८ ॥ मखध्वंसकर्तःसमस्तारिहर्तःसदासेवकानांभवध्वंसकर्तः ॥ नमोजन्महर्तःपुरासृष्टिकर्तस्त्वदीयानवप्राणनाथाव
हर्तः ॥ १९ ॥ इत्येवंमनसावाचाशिवंस्तुत्वातपस्विनी ॥ विररामहाभागामेधावितनयानृप ॥ २० ॥ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ ॥
तत्कृतंस्तोत्रमाकर्ण्यतपसोग्रतरेणच ॥ प्रसन्नवदनांभोजस्तामुवाचसदाशिवः ॥ २१ ॥ ॥ शिवउवाच ॥ ॥ वरंवरयभद्रंतेयस्तेमनसि
वांछितः ॥ प्रसन्नोस्मिमहाभागेमामाखिदतपस्विनि ॥ २२ ॥ तदाकर्ण्यकुमारीयंमहानंदपरिप्लुता ॥ उवाचवचनंराजन्सुप्रसन्नंसदाशिव
म् ॥ २३ ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ दीननाथदयासिंधोप्रसन्नश्चेन्ममोपरि ॥ तदामत्कामितंदेहिमाविलंबंकुरुप्रभो ॥ २४ ॥ पतिंदेहि
पतिंमह्यंपतिंपतिमहंवृणे ॥ पतिंदेहिमहादेवनान्यन्मेचिंतितंहृदि ॥ २५ ॥ एवमुक्तातदार्षेयीविररामकपर्दिनम् ॥ तदाकर्ण्यमहादेवोज
गादमुनिकन्यकाम् ॥ २६ ॥ शिवउवाच ॥ ॥ त्वयायत्स्वमुखेनोक्तंतदस्तुमुनिकन्यके ॥ पंचकृत्वस्त्वयायस्मात्पतिःसंप्रार्थितोऽधु
ना ॥ २७ ॥ तस्मात्पंचभविष्यंतिपतयस्तवसुंदरि ॥ शूराःसकलधर्मज्ञाःसाधवःसत्यविक्रमाः ॥ २८ ॥ यज्वानःस्वगुणख्याताःसत्यसं
धाजितेंद्रियाः ॥ त्वन्मुखप्रेक्षकाःसर्वेराजन्यागुणशालिनः ॥ २९ ॥ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यधूर्जटेरनतिप्रियम् ॥
उवाचावनताभूत्वाबालावाक्यविशारदा ॥ ३० ॥ ॥ बालोवाच ॥ ॥ एवंमेगिरिजाकांतमास्तुलोकेऽतिकौतुकम् ॥ एकस्याएकएवा
स्तिभर्तानार्याःसदाशिव ॥ ३१ ॥ नदृष्टानश्रुताक्कापिनार्येकापंचभर्तृका ॥ एकस्यपंचपत्न्यस्तुपुरुषस्यभवंतिहि ॥ ३२ ॥ त्वदीयाहं
कथंशंभोभवेयंपंचभर्तृका ॥ नैवाहंसिवचस्त्वेवंमयिवक्तुंकृपानिधे ॥ ३३ ॥ तवैवजायतेलज्जात्वदीयाहंयतःप्रभो ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्याः

शंकरःप्राहतांपुनः ॥ ३४ ॥ ॥ शिवउवाच ॥ ॥ मास्तुतेस्मिन्भवेभीरुभव्यंतत्परजन्मनि ॥ अयोनिसंभवातत्रभविष्यसितपोबा
लात् ॥ ३५ ॥ भर्तृजंसुखमासाद्यततोगंत्रीपरंपदम् ॥ दुर्वासामेप्रियामूर्तिःसत्वयाऽवमतःपुरा ॥ ३६ ॥ सचेत्कोपावृतःसुभ्रुनिर्दहेद्भुवनत्र
यम् ॥ त्वयागर्वातिरेकेणब्रह्मतेजःप्रमर्दितम् ॥ ३७ ॥ पुरुषोत्तमस्त्वयामासोनकृतोभगवत्प्रियः ॥ यस्मिन्नर्पितमैश्वर्यंश्रीकृष्णेनात्मनः
स्वकम् ॥ ३८ ॥ अहंब्रह्मादयोदेवानारदाद्यास्तपस्विनः ॥ यदादेशकराबालेतदाज्ञांकोविलंघयेत् ॥ ३९ ॥ समासोनत्वयामूढेपूजितो
लोकपूजितः ॥ अतस्तेपंचभर्तारोभविष्यंतिद्विजात्मजे ॥ ४० ॥ नान्यथाभावितद्बालेपुरुषोत्तमखंडनात् ॥ योवैनिंदतितंमासंसयाति
घोररौरवम् ॥ ४१ ॥ विपरीतंभवेत्तस्यनकदाप्यन्यथाभवेत् ॥ पुरुषोत्तमस्ययेभक्ताःपुत्रपौत्रधनान्विताः ॥ ४२ ॥ ऐहिकामुष्मिकींसि
द्धिंयातायास्यंतियांतिच ॥ वयंसर्वेपिगीर्वाणाःपुरुषोत्तमसेविनः ॥ ४३ ॥ यस्मिन्संसेवितेशीघ्रंप्रीयतेपुरुषोत्तमः ॥ सेवनीयंकथंमासंन
भजामसुमध्यमे ॥ ४४ ॥ अत्युत्कटानांमहतांवचोमिथ्याकथंवद ॥ अनुनेयाहिमुनयःसदसद्वादवादिनः ॥ ४५ ॥ वदन्नेवंनीलकंठः
क्षिप्रमंतर्दधेहरः ॥ चकितासावदद्बालायूथभ्रष्टामृगीयथा ॥ ४६ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ शशांकलेखांकितभालदेशेसदाशिवेशैव
दिशंप्रयाते ॥ चिंताबबाधेमुनिराजकन्यांहत्यायथावृत्रहणंमुनीशाः ॥ ४७ ॥ ॥ इति श्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममास
माहात्म्येशिववाक्यंनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ॥ छ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ शितिकंठेगतेनाथबालाकिमकरोच्छुचा ॥ तन्मे
वदविनीतायशुश्रूषाधर्मसिद्धये ॥ १ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एवमेवपुरापृष्टःश्रीकृष्णःपांडुसूनुना ॥ यदुवाचवचोराज्ञेतन्मेनिगदतः

शृणु ॥ २ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ एवंगतेशिवेराजन्साबालाविगतप्रभा ॥ निःश्वासपरमाभीतासाश्रुनेत्राकृशोदरी ॥ ३ ॥ हृदयाग्निलस
ज्ज्वालाज्वलितांगीकुमारिका ॥ दावाग्निदग्धपत्रासालतेवासीत्तपस्विनी ॥ ४ ॥ दुःखमीर्ष्यामाप्तवत्यामेवंकालोमहान्गतः ॥ असौताम
वचस्कंदताहृशींतापसींप्रभुः ॥ ५ ॥ सहसातांसमापन्नांफणीत्राखुनिवेशनम् ॥ इति कालेनबलिनावशंनीतातपस्विनी ॥ ६ ॥ प्रावृण्मे
घावृतेव्योम्निविद्युत्सौदामिनीयथा ॥ तथाऽऽश्रमेस्वकेनष्टातपसादग्धकल्मषा ॥ ७ ॥ तदानीमेवधर्मिष्ठोयज्ञसेनोनराधिपः ॥ बृहत्संभार
संपन्नमकरोद्यज्ञमुत्तमम् ॥ ८ ॥ तद्यज्ञकुंडादुद्भूताकुमारीकनकप्रभा ॥ सेयंद्रुपदशार्दूलतनयाप्रथिताभुवि ॥९॥ द्रौपदीसर्वलोकेषुद्यार्षेयी
यापुराऽभवत् ॥ सेयंस्वयंवरेराजन्मत्स्यवेधेकृतेसति ॥ १० ॥ लब्धार्जुनेनपांचालीक्षुभितेराजमंडले ॥ तृणीकृत्यनृपान्सर्वान्भीष्मक
र्णादिकान्बहून् ॥ ११ ॥ सेयंकचग्रहंप्राप्तादुष्टदुःशासनान्मुने ॥ वचांसिकर्णशूलानिश्राविताववर्णिनी ॥ १२ ॥ मयाचोपेक्षिताराज
न्पुरुषोत्तमहेलनात् ॥ यदामयिकृतस्नेहामन्नामान्यवदन्मुहुः ॥१३॥ दामोदरदयासिंधोकृष्णकृष्णजगत्पते ॥ हेनाथहेरमानाथकेशवक्ले
शनाशन ॥ १४ ॥ नमातानतातोनचभ्रातृवर्गोनसख्योनजामिर्नवैभागिनेयः ॥ नबंधुर्नचेष्टोनवैप्राणनाथोहृषीकेशसर्वंभवानेवमेऽस्ति ॥
॥ १५ ॥ गोविंदगोपिकानाथदीनबंधोदयानिधे ॥ दुःशासनपराभूतांकिंनजानासिमांप्रभो ॥१६॥ दुःशासनपराभूतातदाद्रुपदनंदिनी ॥
मदीयस्मरणंप्राप्ताविस्मृतापिमयापुरा ॥ १७ ॥ शीघ्रंगरुडमारुह्यतत्रागत्यस्थितेनवै ॥ पूरितानिमयाराजन्नस्यैवासांस्यनेकशः ॥ १८॥
सदामयिकृतस्नेहामत्प्राणामत्परायणा ॥ ममातिवल्लभासाध्वीसखीमेप्राणसन्निभा ॥ १९ ॥ तथाप्युपेक्षितेयंसापुरुषोत्तमहेलनात् ॥

पुरुषोत्तमतिरस्कारकर्तारंपातयाम्यहम् ॥ २० ॥ सर्वथामुनिदेवानांसेव्योयंपुरुषोत्तमः ॥ किंपुनर्मानुषाणांतुसर्वार्थफलदायकः ॥ २१ ॥
तस्मादाराधयस्वैनमागामिपुरुषोत्तमम् ॥ वर्षेचतुर्दशेपूर्णेसर्वंतेभविताशुभम् ॥ २२ ॥ व्यलोकिचिकुरव्रातोयैरस्याःपांडुनंदन ॥ तन्ना
रीणामहंराजन्निर्वपिष्येऽलकान्रुषा ॥ २३ ॥ सुयोधनादिभूपालान्सर्वान्नेष्येयमक्षयम् ॥ सर्वशत्रुक्षयंकृत्वात्वंचराजाभविष्यसि
॥ २४ ॥ नमेक्षीरोदतनयाप्रियानापिहलायुधः ॥ नतथादेवकीदेवीप्रद्युम्नोनापिसात्यकिः ॥ २५ ॥ यादृशामेप्रियाभक्तास्तादृशोना
स्तिकश्चन ॥ येनमेपीडिताभक्तास्तेनाहंपीडितःसदा ॥ २६ ॥ द्वेष्योमेनास्तितत्तुल्योयमस्तस्यफलप्रदः॥नावलोक्योमयादुष्टोदंडार्थमपि
पांडव ॥२७॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ श्रीकृष्णस्तान्समाश्वास्यपांडवान्द्रौपदींतथा ॥ कुशस्थलींजिगमिषुरुवाचमधुसूदनः ॥२८॥
राजन्नद्यगमिष्यामिद्वारकांविरहाकुलाम् ॥ वसुदेवोमहाभागोबलदेवोममाग्रजः ॥२९॥ मन्मातादेवकीदेवीगदसांबादयोऽपरे ॥ आहुकाद्या
श्चयदवोरुक्मिण्याद्याश्चयाःस्त्रियः ॥ ३० ॥ सर्वेतेऽनिमिषैर्नेत्रैर्मदागमनकांक्षिणः ॥ मामेवचिंतयंत्येवंमद्दर्शनसमुत्सुकाः ॥ ३१ ॥ ॥
श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्युक्तवंतंदेवेशंकथंचित्पांडुनंदनाः ॥ हरिप्रयाणमालक्ष्यतमूचुर्गद्गदाक्षरम् ॥ ३२ ॥ जीवनंनोभवानेवयथा
वारिजलौकसाम् ॥ पुनर्दर्शनमल्पेनकालेनास्तुजनार्दन ॥ ३३ ॥ पांडवानांहरिर्नाथोनान्यःकश्चिज्जगत्त्रये ॥ इत्थंसर्वेवदंत्यद्धातस्मान्नः
पाहिसर्वदा ॥३४॥ नविस्मार्यावयंसर्वेत्वदीयाजगदीश्वर ॥ अस्मच्चेतोमिलिंदानांजीवनंत्वत्पदांबुजम् ॥३५॥ अवलंबनमेवास्तुप्रार्थयामो
मुहुर्मुहुः ॥ असकृत्पाण्डुपुत्रेषुगृणत्स्वेवंयदूद्वहः ॥३६॥ मंदमंदंसमारुह्यरथंप्रेमपरिप्लुतः ॥ ययौद्वारवतींमेनान्पराकृत्यानुगच्छतः ॥३७॥

॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ अथश्रीद्वारकानाथेगतेद्वारवतींतदा ॥ राजापिसानुजस्तप्यंस्तीर्थानिविचचारह ॥ ३८ ॥ पुरुषो त्तमेमनःकृत्वाब्रह्मञ्छ्रीभगवत्प्रिये ॥ अनुजानाहकृष्णांचविष्कूसेनवचःस्मरन् ॥ ३९ ॥ अहोश्रुतमतीवोग्रंमाहात्म्यंपौरुषोत्तमम् ॥ कथंसुखानिलभ्यंतेनाभ्यर्च्यपुरुषोत्तमम् ॥ ४० ॥ सधन्योभारतेवर्षेसपूज्यःश्रेष्ठएवसः ॥ विविधैर्नियमैर्यस्तुपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ४१ ॥ एवंसर्वेषुतीर्थेषुभ्रमंतःपांडुनंदनाः ॥ पुरुषोत्तमासाद्यव्रतंचेरुर्विधानतः ॥ ४२ ॥ तदंतेराज्यमतुलमवापुर्गतकंटकम् ॥ पूर्णेचतुर्दशेवर्षे श्रीकृष्णकृपयामुने ॥ ४३ ॥ दृढधन्वानृपःपूर्वंसूर्यवंशसमुद्भवः ॥ पुरुषोत्तममासस्यसेवनान्महतींश्रियम् ॥ ४४ ॥ पुत्रपौत्रसुखंचैवत्यक्त भोगाननेकशः ॥ जगामभगवल्लोकमगम्यंयोगिनामपि ॥ ४५ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तममासस्यकृष्णद्वैपायनादहम् ॥ माहा त्म्यंश्रुतवान्विप्राः सोपिवकुंशशाकनो ॥ ४६ ॥ अस्यमाहात्म्यमखिलंवेत्तिनारायणःस्वयम् ॥ अथवाभगवान्साक्षाद्वैकुंठनिलयो हरिः ॥ ४७ ॥ ब्रह्मादिदेवानतपादपीठगोलोकनाथेनस्वकीकृतस्य ॥ सर्वंमाहात्म्यंपुरुषोत्तमस्यदेवोनजानातिकुतोमनुष्यः ॥ ४८ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तमव्रतोपदेशोनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ ॥ छ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ सूतसूतमहाभागवदनोवदतांवर ॥ दृढधन्वाकथंप्रापपुरुषोत्तमसेवनात ॥ १ ॥ सौराज्यंपुत्रपौत्रादीन्ललनांचपतिव्रताम् ॥ कथंचभगवल्लोकमवापयोगिदुर्लभम् ॥ २ ॥ शृण्वतांतेमुखांभोजात्कथासारंमुहुर्मुहुः ॥ अलंबुद्धिर्ननस्तातयथापीयूषपानतः ॥ ३ ॥ अतोविस्तरतोब्रूहिइतिहासंपुरातनम् ॥ अस्मद्भाग्यबलेनैवधात्रासंदर्शितोभवान् ॥ ४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ सनातनमुनिर्विप्रानारदायपुरा

तनम् ॥ इतिहाससमुवाचेमंसएवप्रोच्यतेऽधुना ॥ ५ ॥ शृण्वंतुमुनयःसर्वेचरित्रंपापनाशनम् ॥ यथाधीतंगुरुमुखाद्राज्ञोवैदृढधन्वनः ॥ ६ ॥
॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुराजन्प्रवक्ष्येहंभूपस्यदृढधन्वनः॥ कथांपुरातनींरम्यांस्वर्धुनीमिवपावनीम् ॥ ७ ॥ आसीद्धैहयदेशस्यगो
प्ताश्रीमान्महीपतिः ॥ चित्रधर्मेतिविख्यातोधीमान्सत्यपराक्रमः ॥ ८ ॥ तस्यपुत्रोऽतितेजस्वीदृढधन्वेतिविश्रुतः ॥ ससर्वगुणसंपन्नःसत्य
वाग्धार्मिकःशुचिः ॥ ९ ॥ आकर्णांतविशालाक्षः पृथुवक्षामहाभुजः ॥ अवर्धतमहातेजाःसार्धंगुणगणैरसौ ॥ १० ॥ अधीत्यसांगान्निगमां
श्चतुरश्चतुरोमुदा ॥ सकृन्निगदमात्रेणप्रागधीतानिवस्फुटम् ॥ ११ ॥ दक्षिणांगुरवेदत्त्वासंपूज्यविधिवच्चतम् ॥ गुरोरनुज्ञयाधीमान्पितुःपुर
मजीगमत् ॥ १२ ॥ जनयन्नयनानंदंनिजपत्तनवासिनाम् ॥ चित्रधर्मापितंपुत्रंदृष्ट्वालेभेपरांमुदम् ॥ १३ ॥ युवानंसर्वधर्मज्ञंप्रजानांपालने
क्षमम् ॥ अतःपरंकिमत्रास्तिसंसारेसारवर्जिते ॥ १४ ॥ आराधयामिश्रीकृष्णंद्विभुजंमुरलीधरम् ॥ प्रसन्नवदनंशांतंभक्तानामभयप्रदम् ॥
॥ १५ ॥ ध्रुवांबरीषशर्यातिययातिप्रमुखानृपाः ॥ शिबिश्चरंतिदेवश्चशशबिंदुर्भगीरथः ॥ १६ ॥ भीष्मश्चविदुरश्चैवदुष्यंतोभरतोपिवा ॥
पृथुरुत्तानपादश्चप्रह्लादोऽथविभीषणः ॥ १७॥ एतेचान्येचराजानस्त्यक्त्वाभोगाननेकशः ॥ अध्रुवेणध्रुवंप्राप्ताआराध्यपुरुषोत्तमम्॥१८॥
अतोमयापिकर्तव्यमरण्येहरिसेवनम् ॥ छित्त्वास्नेहमयंपाशंदारागारसुतादिषु ॥ १९ ॥ इतिनिश्चित्यमनसासमर्थेदृढधन्वनि ॥ धुरंन्य
स्यजगामाशुविरक्तःपुलहाश्रमम् ॥ २० ॥ तत्रगत्वातपस्तेपेश्रीकृष्णंमनसास्मरन् ॥ निस्पृहःसर्वकामेभ्यो निराहारोनिरंतरम् ॥ २१ ॥
कियत्कालंतपस्तप्त्वाहरेर्धामजगामसः ॥ दृढधन्वापिशुश्रावस्वपितुर्वैष्णवींगतिम् ॥ २२ ॥ हर्षशोकसमाविष्टोह्यकरोदौर्ध्वदेहिकम् ॥

पितृभक्त्यामहीपालोविद्वज्जनवचःस्थितः ॥२३॥ पुष्करावर्तकेपुण्येनगरेऽत्यंतशोभिते ॥ राज्यंचकारभूपालोनीतिशास्त्रविशारदः ॥२४॥ तस्यशीलवतीभार्यानाम्नायागुणसुन्दरी ॥ विदर्भराजतनयारूपेणाप्रतिमाभुवि ॥ २५ ॥ पुत्रान्सासुषुवेदिव्यांश्चतुरश्चतुरान्शुभान् ॥ पुत्रींचारुमतींनामसर्वलक्षणसंयुताम् ॥ २६ ॥ चित्रवाक्चित्रवाहश्चमणिमांश्चित्रकुंडलः ॥ सर्वेतेमानिनांशूराविख्यातानामभिःपृथक् ॥ २७ ॥ दृढधन्वागुणैःख्यातःशांतोदांतोदृढव्रतः ॥ रूपवान्गुणवाञ्शूरःश्रीमान्प्रकृतिसुन्दरः ॥ २८ ॥ वेदवेदांगविद्वाग्मीधनुर्विद्याविशारदः ॥ सुनिर्जितारिषड्वर्गःशत्रुसंघविदारणः ॥ २९ ॥ क्षमयापृथिवीतुल्योगांभीर्येसागरोपमः ॥ पितामहसमः साम्येप्रसादेगिरिशोपमः ॥ ३० ॥ एकपत्नीव्रतधरोरघुनाथइवापरः ॥ अत्युग्रवीर्यःसद्धर्मीकार्तवीर्यइवापरः ॥ ३१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ एकदानिशिसुप्तस्याचिंतासीत्तस्यभूपतेः ॥ अहोऽयंवैभवःकेनपुण्येनमहतांभवत् ॥ ३२ ॥ नमयाचतपस्तप्तंनदत्तंनहुतंक्वचित् ॥ कमिदंपरिपृच्छामिममभाग्यस्यकारणम् ॥ ३३ ॥ एवंचिंतयतस्तस्यरजनीविरतिंगता ॥ ब्राह्मेमुहूर्तउत्थायस्नानंकृत्वायथाविधि ॥ ३४ ॥ उपस्थायार्कमुद्यंतंसंतर्प्यभगवत्कलाः ॥ दत्त्वादानानिविप्रेभ्योनमस्कृत्वाऽश्वमारुहत् ॥३५॥ ततोरण्यंजगामाशुमृगयासक्तमानसः ॥ मृगान्वराहाञ्शार्दूलाञ्जघानगवयान्बहून् ॥ ३६ ॥ कश्चिन्मृगःक्षतोऽरण्येबाणेनदृढधन्वना ॥ वनाद्वनांतरंयातोबाणमादायसत्वरम् ॥ ३७ ॥ शोणितस्रुतिमार्गेणराजाप्यनुययौमृगम् ॥ मृगःकुत्रापिसंलीनोराजाबभ्रामतद्वनम् ॥ ३८ ॥ तृषाक्रांतःसकासारंददर्शसागरोपमम् ॥ तत्रगत्वाशुपीत्वासौपानीयंतीरमागतः ॥ ३९ ॥ ततोददर्शन्यग्रोधंघनच्छायंमहातरुम् ॥ तज्छायायांनिबद्ध्याश्वंनिषसादमहीपतिः ॥ ४० ॥ तत्रागमत्खगः

कश्चित्कीरः परमशोभनः ॥ मानुषीमीरयन्वाणीमतुलांनृपमोहिनीम् ॥ ४१ ॥ शुकः पपाठसुश्लोकमेकमेवपुनः पुनः ॥ संबोध्यदृढधन्वान
मेकाकिनमुपस्थितम् ॥ ४२ ॥ विद्यमानातुलसुखमालोक्यातीवभूतले ॥ नचिंतयसितत्त्वंत्वंतत्कथंपारमेष्यसि ॥ ४३ ॥ वारंवारमिदंप
द्यंपपाठनृपतेःपुरः ॥ श्रुत्वातस्यवचोराजामुमुदेमुमुहेपिच ॥ ४४ ॥ किमेतदुक्तवान्कीरएकंपद्यंपुनः पुनः ॥ नारिकेलमिवागम्यंदु
र्बोधंसारसंभृतम् ॥ ४५ ॥ किंवानायंभवेत्कृष्णद्वैपायनसुतः परः ॥ श्रीकृष्णसेवकंमूढंमग्नंसंसारसागरे ॥ ४६ ॥ विष्णुरातमिवोद्धर्तुंकृप
यामांसमागतः ॥ इतिचिंतयतस्तस्यतत्सेनासमुपागता ॥४७॥ कीरस्त्वदर्शनंप्राप्तोबोधयित्वानराधिपम् ॥ राजास्वपुरमागत्यकीरवाक्य
मनुस्मरन् ॥ ४८ ॥ वाच्यमानोपिनांवोचद्विनिद्रस्त्यक्तभोजनः ॥ राज्ञीरहःसमागत्यराजानंपर्यपृच्छत ॥ ४९ ॥ ॥ गुणसुन्दर्युवाच ॥ ॥
भोभोपुरुषशार्दूलदौर्मनस्यमिदंकुतः ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठभूपालभुंक्ष्वभोगान्वचोवद ॥ ५० ॥ एवंस्त्रियानुनीतोपिनकिंचिदवदन्नृपः ॥ स्मर
ञ्शुकवचस्तथ्यंदुर्ज्ञेयममरैरपि ॥ ५१ ॥ सापिबालाविनिःश्वस्यभर्तृदुःखातिपीडिता ॥ नबुबोधनिजस्वामिचिंताकारणमुत्कटम् ॥५२ ॥
एवंचिंतानिमग्नस्यराज्ञःकालःकियान्गतः ॥ संदेहसागरोत्तारेहेतुंनैवाभ्यपश्यत ॥ ५३ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ इतिचिंतयतोधरापतेर्वन
जातंदृढधन्वनश्चकिम् ॥ विमलंचरितंहिवैष्णवंकलुषंहंतिमन।कृश्रुतम्मुने ॥५४॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपु० पुरुषोत्तममासमा० श्रीनारायण०
दृढधन्वोपाख्यानेदृढधन्वनोमनःखेदोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ श्रीनारायणउवाच ॥ अथचिंतातुरस्यास्यगृहंवाल्मीकिराययौ ॥ योरा
मचरितंदिव्यंचकारपरमाद्भुतम् ॥१॥ दूरादालोक्यभूपालःसमुत्थायससंभ्रमम् ॥ अनीनमत्तच्चरणौदंडवद्भक्तिसंयुतः ॥ २ ॥ संपूज्यस्थाप

यामासतमृषिंपरमासने ॥ पादावंकगतौकृत्वाकराभ्यांसमलालयत् ॥ ३ ॥ पादावनेजनीरापःशिरसाधारयन्मुदा ॥ उवाचस्निग्धयावाचा स्मरन्कीरवचोनृपः ॥ ४ ॥ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ भगवन्कृतकृत्योहंभाग्यवानस्मिसांप्रतम् ॥ अद्यमेसफलंजन्मद्यद्यार्थोधिगतःप्रभो ॥५॥ श्रुतंमेसफलंजातंयद्भवानक्षिगोचरः ॥ किंवर्ण्यमेमहद्भाग्यंजगत्पावनपावन ॥ ६ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वामुनिशार्दूलंविर रामसभूपतिः ॥ वाल्मीकिरपितंदृष्ट्वाराजानंविनयान्वितम् ॥ ७ ॥ उवाचपरमप्रीतोहर्षयञ्जनतांमुनिः ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ साधुसाधु नृपश्रेष्ठत्वय्येतदुपपद्यते ॥ ८ ॥ चिंतातुरःकथंराजन्वदसर्वंमनोगतम् ॥ किंचिद्वक्तुंस्पृहातेस्तितद्वदस्वमहामते ॥ ९ ॥ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ भवदीयपदांभोजकृपयामेसुखंसदा ॥ परंत्वेकोमहान्विद्वन्संदेहोहृदयेमम ॥ १० ॥ तमपाकुरुशल्यंत्वंवन्यकीरमुखोद्गतम् ॥ कदाचिन्मृ गयाकामोगतोहंगहनेवने ॥ ११ ॥ भ्रमन्नपश्यंकासारंतत्रपीतंजलंभया ॥ श्रमापनोदनाकांक्षीमहान्यग्रोधमाश्रितः ॥ १२ ॥ स्निग्धच्छायं सुनिबिडंमनोनयननंदनम् ॥ तत्रापश्यंस्थितंकीरंमनोमोदविधायकम् ॥ १३ ॥ दत्तदृष्टिरहंयावज्जातस्तस्मिन्पतत्रिणि ॥ तावन्मांसंमु खीभूयश्लोकमेकंपपाठह ॥ १४ ॥ विद्यमानातुलसुखमालोक्यातीवभूतले ॥ नचिंतयसितत्त्वंत्वंतत्कथंपारमेष्यसि ॥ १५ ॥ इति वाचःशुकेनोक्ताआकर्ण्याहंसुविस्मितः ॥ नतज्जानाम्यहंब्रह्मन्किमुवाचहरिच्छदः ॥ १६ ॥ इमंमेहार्दसंदेहंभवानुच्छेत्तुमर्हति ॥ ममराज्य सुखंपुत्राश्चत्वारश्चारुदर्शनाः ॥ १७ ॥ पत्नीपतिव्रतारम्यागजाश्वरथपत्तयः ॥ समृद्धिरतुलाब्रह्मन्केनपुण्येनमेऽधुना ॥ १८ ॥ एतत्सर्वंस मासेनविचार्यवक्तुमर्हसि ॥ श्रुत्वावाक्यानिभूपस्यवाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥ १९ ॥ प्राणायामपरोभूत्वामुहूर्त्तंध्यानमास्थितः ॥ करामल

कवद्विश्वंभूतंभव्यंभवच्चयत् ॥ विलोक्यहृदिनिश्चित्यराजानंप्रत्युवाचसः ॥ २० ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ शृणुभूपतिशार्दूलप्राग्जन्म
चरितंतव ॥ २१ ॥ पुराजन्मनिराजेंद्रभवान्द्रविडदेशजः ॥ द्विजःकश्चित्सुदेवाख्यस्ताम्रपर्णीतटेवसन् ॥२२॥ धार्मिकःसत्यवादीचयथा
लाभेनतोषवान् ॥ वेदाध्ययनसंपन्नोविष्णुभक्तिपरायणः ॥ २३ ॥ अग्निहोत्रादियागैश्चतोषयामासतंहरिम् ॥ सदैवंवर्तमानस्यभार्यासी
द्वरवर्णिनी ॥ २४ ॥ गौतमीतिसुविख्यातागौतमस्यसुताशुभा ॥ पतिंपर्यचरत्प्रेम्णाभवानीवभवंप्रभुम् ॥ २५ ॥ गृहमेधविधौतस्यवर्तमान
स्यधर्मतः ॥ व्यतीतःसुमहान्कालःप्रापासौ संततिंनहि ॥ २६ ॥ एकदासनसंविष्टःसेव्यमानःस्वकांतया ॥ उवाचवचनंविप्रोविषण्णोग
द्गदाक्षरम् ॥ २७ ॥ अयिसुन्दरिसंसारेसुखंनास्तिसुतात्परम् ॥ लोकांतरसुखंपुण्यंतपोदानसमुद्भवम् ॥ २८ ॥ संततिःशुद्धवंश्याहिपरत्रेह
चशर्मणे ॥ तमप्राप्यवरंपुत्रंजीवितंममनिष्फलम् ॥ २९ ॥ नलालितोमयापुत्रोवेदार्थोनप्रबोधितः ॥ नोद्वाहश्चकृतस्तस्यवृथाजन्मगतं
मम ॥ ३० ॥ सद्योमेमृतिरेवास्तुनह्यायुश्चप्रियंमम ॥ इत्थंप्रियवचःश्रुत्वासुन्दरीखिन्नमानसा ॥ ३१ ॥ समाश्वासयितुंधीराप्रियवाक्यवि
शारदा ॥ अवीवदद्वचःसौम्यंप्रियप्रेमपरिप्लुता ॥ ३२ ॥ ॥ गौतम्युवाच ॥ ॥ मामाप्राणेश्वरब्रूहितुच्छवाक्यानिसांप्रतम् ॥ भवद्विधा
भागवतानैवमुह्यंतिसूरयः ॥ ३३ ॥ सत्यधर्मपरोसित्वंजितःस्वर्गस्त्वयाविभो ॥ कथंपुत्रैःसुखावाप्तिर्ज्ञानिनस्तवसुव्रत ॥ ३४ ॥ चित्र
केतुःपुराब्रह्मन्पुत्रशोकेनतापितः ॥ सनारदेनांगिरसाभ्येत्यसंतारितोभवत् ॥ ३५ ॥ तथांगराजादुष्पुत्राद्वेनाद्वनमगान्निशि ॥ तथातेसं
ततिःस्वामिन्दुःखदाचभविष्यति ॥ ३६ ॥ तथापितवसत्पुत्रलालसाचेत्तपोधन ॥ आराधयजगन्नाथंहरिंसर्वार्थदंमुदा ॥ ३७ ॥ यमारा

ध्यपुराब्रह्मन्कर्दमःपुत्रमाप्तवान् ॥ सांख्याचार्यन्तुतंदेवंकपिलंयोगिनांवरम् ॥ ३८ ॥ धर्मपत्न्यावचश्चेत्थंश्रुत्वाविप्रशिरोमणिः ॥ निश्चि
त्यैवंतयासार्धंताम्रपर्णीतटंगतः ॥ ३९ ॥ स्नात्वाथविरजेपुण्येचचारपरमंतपः ॥ शुष्कपर्णजलाहारःपंचमेपंचमेदिने ॥ ४० ॥ चत्वार्यब्द
सहस्राणिगतान्येवंतपोनिधेः ॥ तस्यैतत्तपसाब्रह्मंस्त्रयोलोकाश्चकंपिरे ॥ ४१ ॥ अत्युग्रंतत्तपोदृष्ट्वाभगवान्भक्तवत्सलः ॥ प्रादुर्बभूवतरसाग
रुडोपरिसंस्थितः ॥ ४२ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ तंदृष्ट्वानवजलदोपमंमुरारिंदोर्दंडैर्जगदवनक्षमैश्चतुर्भिः ॥ संलक्ष्यंमुदितमुखं
सुदेवशर्मासाष्टांगंनतिमकरोन्मुदामुकुंदम् ॥ ४३ ॥ ॥ इति श्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममास०श्रीनारायणनारदसंवादेचतुर्दशोऽध्यायः
॥ १४ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ ततस्तुष्टावतंदेवंश्रीकृष्णंभक्तवत्सलम् ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वासुदेवोगद्गदाक्षरम् ॥ १ ॥ नमस्तेदे
वदेवेशत्रैलोक्याभयदप्रभो ॥ सर्वेश्वरनमस्तेस्तुत्वामहंशरणंगतः ॥ २ ॥ पाहिमांपरमेशानशरणागतवत्सल ॥ जगद्बंधनमस्तेस्तुप्रपन्नभ
यभंजन ॥ ३ ॥ जयस्वरूपंजयदंजयेशंजयकारणम् ॥ विश्वाधारंविश्वसंस्थंविश्वकारणकारणम् ॥ ४ ॥ विश्वैकरक्षकंदिव्यंविश्वघ्नंवि
श्वपंजरम् ॥ फलबीजंफलाधारंफलमूलंफलप्रदम् ॥ ५ ॥ तेजःस्वरूपंतेजोदंसर्वतेजस्विनांवरम् ॥ कृष्णंविष्णुंवासुदेवंवंदेहंदीनवत्सलम्
॥ ६ ॥ नत्वांब्रह्मादयोदेवाःस्तोतुंशक्ताजगत्प्रभो ॥ कथंमंदोमनुष्योहमल्पबुद्धिर्जनार्दन ॥ ७ ॥ अतिदुःखतरंदीनंत्वद्भक्तंमामुपेक्षसे ॥
तत्कथंलोकबंधुत्वंप्रभोलोकेवृथागतम् ॥ ८ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ इत्यभिष्टूयभूमानंद्विजस्तस्थौहरेःपुरः ॥ तदाकर्ण्यहरिर्वाक्यमुवा
चजलदस्वनः ॥ ९ ॥ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ ॥ सम्यक्संपादितंवत्सयत्त्वयाचरितंतपः ॥ किमिच्छसिमहाप्राज्ञतपोधनवदस्वमे ॥ १० ॥

तत्तेहंवितरिष्यामिसंतुष्टस्तपसातव ॥ एताद्दशंमहत्कर्मनकेनापिकृतंपुरा ॥११॥ सुदेवउवाच ॥ यदिप्रीतोसिहेनाथदीनबंधोदयानिधे ॥ सत्पुत्रंदेहिमेविष्णोपुराणपुरुषोत्तम॥१२॥हरेपुत्रंविनाशून्यंगार्हस्थ्यंमेनरोचते ॥ इतिविप्रवचःश्रुत्वाजगादहारिरीश्वरः ॥ १३ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ अदेयमपितेसर्वंदास्येपुत्रंविनाद्विज ॥ तवपुत्रसुखंवत्सविधात्रानैवनिर्मितम् ॥ १४ ॥ त्वदीयभालफलकेवर्णाःसर्वेमयेक्षिताः ॥ तत्रनैवास्तितेपुत्रसुखंसत्तमुजन्मसु ॥ १५ ॥ इत्याकर्ण्यहरेर्वाक्यंवज्रनिर्घातनिष्ठुरम् ॥ सपपातमहीपृष्ठेछिन्नमूलइवद्रुमः ॥ १६ ॥ पतिंपतितमालोक्यप्रमदात्यंतदुःखिता ॥ पश्यंतीस्वामिनपुत्रस्पृहाशून्यमरूरुदत् ॥ १७ ॥ पश्चाद्धैर्यंसमालंब्यसावोचत्पतितंपतिम् ॥ ॥ गौतम्युवाच ॥ ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठहेनाथंकिंनस्मरसिमेवचः ॥ १८ ॥ विधात्रालिखितंभालेतल्लभेतसुखासुखम् ॥ किंकरोतिरमानाथः स्वकृतं भुंजतेनरः ॥ १९ ॥ अभाग्यस्यकृतोद्योगोमुमूर्षोरिवभेषजम् ॥ तस्यसर्वंभवेद्व्यर्थंयस्यदैवमदक्षिणम् ॥ २० ॥ क्रतुदानतपःसत्यव्रतेभ्योहरिसेवनम् ॥ श्रेष्ठंसर्वेषुवेदेषुततोदैवबलंवरम् ॥ २१ ॥ तस्मात्सर्वत्रविश्वासंविहायोत्तिष्ठभूसुर ॥ दैवमेवावलंब्याशुहरिणाकिंप्रयोजनम् ॥ २२ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यास्तीव्रशोकसमन्वितम् ॥ वैनतेयोवदद्विष्णुंक्षोभसंजातवेपथुः ॥ २३ ॥ ॥ गरुडउवाच ॥ ॥ शोकसागरसंमग्नांब्राह्मणींवीक्ष्यहेहरे ॥ तथैवब्राह्मणंनेत्रगलद्बाष्पकुलाकुलम् ॥ २४ ॥ दीनबंधोदयासिंधोभक्तानामभयंकर ॥ भक्तदुःखासहिष्णोस्तेदयाव्यक्तगताप्रभो ॥२५॥ अहोब्रह्मण्यदेवस्त्वंत्वद्धर्मःक्कगतोऽधुना ॥ त्वद्भक्तस्यचतुर्धापिमुक्तिःकरतलेस्थिता ॥ २६ ॥ अहोतथापिनेच्छंतिविहायभक्तिमुत्तमाम् ॥ तदग्रेसिद्धयश्चाष्टौकिंकरीभूयसंस्थिताः ॥२७॥ त्वदाराधनमाहात्म्यमेवंसर्वत्रविश्रुतम् ॥ तर्हिविप्रस्यपुत्रेच्छा

पूरणेकःपरिश्रमः ॥२८॥ गजमर्पयतःपुंसोह्यंकुशेकःपरिश्रमः ॥ अतः परंनकेनापिसेव्यतेतेपदांबुजम् ॥२९॥ यदृष्टगतंपुंसस्तदेवभविता ध्रुवम् ॥ इतिलोकेप्रथाजातात्वद्भक्तिर्विलयंगता ॥३०॥ कर्तुमकर्तुंसामर्थ्यंतवसर्वत्रविश्रुतम् ॥ तदेवाद्यगतंनाथनचेदस्मैसुतप्रदः ॥ ३१ ॥ अतस्त्वंसर्वथादेहिपुत्रमेकंद्विजन्मने ॥ सुदामात्वांसमाराध्यलेभेवैभवमुत्तमम् ॥ ३२ ॥ सांदीपिनिर्मृतंपुत्रमवापकृपयातव ॥ इतितेशरणं प्राप्तौदंपतीपुत्रलालसौ ॥ ३३ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिगरुडवचोनिशम्यविष्णुर्वचनमुवाचखगंसुधोपमानम् ॥ अयिखगवरपुत्रमेक मस्मैवितरमनोगतमाशुवैनतेय ॥ ३४ ॥ इतिहरिवचनंनिजानुकूलंझटितिनिशम्यखगोतिहृष्टचेताः ॥ अददद्तिविषण्णमानसायसुतम नुरूपमिलासुरायरम्यम् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येदृढधन्वोपाख्यानेश्रीनारायणनारदसंवादेसुदेववरप्रदानं नामपंचदशोध्यायः ॥ १५ ॥ ॥छ॥ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्येहंयदुक्तंदृढधन्वने ॥ वाल्मीकिनामहाप्राज्ञचरितं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ दृढधन्वन्महाराजशृणुष्ववचनंमम ॥ सुपर्णःकेशवादेशादिदमाहद्विजेश्वरम् ॥ २ ॥ ॥ गरुडउवाच ॥ ॥ सप्तजन्मसुतेपुत्रसुखंनास्तीतियद्वचः ॥ हारिणोक्तंद्विजश्रेष्ठतत्तथैवतवाधुना ॥ ३ ॥ तथापिस्वामिनाज्ञप्तःकृप याददामितेसुतम् ॥ मदंशसंभवःपुत्रोभवितातेतपोधन ॥ ४ ॥ येनत्वमाशिषःसत्यालप्स्यसेगौतमीयुतः ॥ परंतज्जनितंदुःखंयुवयोर्भविता ध्रुवम् ॥ ५ ॥ धन्योसिद्विजशार्दूलयत्तेजाताहरौमतिः ॥ सकामाप्यथनिष्कामाहरौभक्तिर्हरेःप्रिया ॥ ६ ॥ जलबुद्बुदवत्पुंसांशरीरंक्षणभं गुरम् ॥ तदासाद्यहरेःपादंधन्यश्चिंतयतेहृदि ॥ ७ ॥ हरेरन्योनसंसारात्तारयेद्बहुदुस्तरात् ॥ हरेरेवकृपालेशान्मयादत्तःसुतस्तव ॥ ८ ॥

मनसिश्रीहरिंधृत्वाविचरस्त्वयथासुखम् ॥ उदासीनतयास्थित्वाभुंक्ष्वसंसारजंसुखम् ॥ ९ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ दंपत्योःपश्यतोःसद्योदत्त्वावरमनुत्तमम् ॥ खगद्वाराहरिःशीघ्रंययौनिजनिकेतनम् ॥ १० ॥ सुदेवोपिसपत्नीकोवरंलब्ध्वामनोगतम् ॥ आसाद्यस्वगृहंभेजेगार्हस्थ्यसुखमुत्तमम् ॥ ११ ॥ कियत्कालक्रमेणास्यादोहदःसमपद्यत ॥ दशमेमासिसंप्राप्तेपूर्णोगर्भोबभूवह ॥ १२ ॥ प्रसूतिकालेसंप्राप्तेसासूतसुतमुत्तमम् ॥ सुदेवस्त्वात्मजेजातेजाताह्लादोबभूवह ॥ १३ ॥ आहूयजातकंकर्मचकारद्विजसत्तमान् ॥ बृहद्दानंददौतेभ्यःसुस्नातोद्विजसत्तमः ॥ १४ ॥ नामचास्याकरोद्धीमान्ब्राह्मणैःस्वजनैर्वृतः ॥ अयंसुतःसुपर्णेनदत्तःप्रेम्णाकृपालुना ॥ १५ ॥ शारदेंदुरिवप्रोद्यत्तेजस्वीशुकसन्निभः ॥ शुकदेवेतिनामायंपुत्रोस्तुममवल्लभः ॥ १६ ॥ अवर्धतसुतःशीघ्रंशुक्लपक्षइवोडुपः ॥ पितुर्मनोरथैःसाकंमातृमानसनंदनः ॥ १७ ॥ उपनीयसुतंतातःसावित्रींदत्तवान्मुदा ॥ संस्कारंवैदिकंप्राप्यब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः ॥ १८ ॥ तत्तेजसान्वितोरेजेसाक्षात्सूर्यइवापरः ॥ वेदाध्ययनमारेभेकुमारोबुद्धिसागरः ॥ १९ ॥ सद्बुद्ध्यानंदयामासस्वगुरुंगुरुवत्सलः ॥ सकृन्निगदमात्रेणविद्यांसर्वामुपेयिवान् ॥ २० ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ एकदादेवलोऽभ्यागात्कोटिसूर्यसमप्रभः ॥ तमालोक्यसुदेवोसौननामदंडवन्मुदा ॥ २१ ॥ पूजयामासविधिवदर्घ्यपाद्यादिभिर्मुनिम् ॥ आसनंकल्पयामासदेवलायमहात्मने ॥ २२ ॥ तत्रोपविष्टोभगवान्देवलोदेवदर्शनः ॥ चरणेपतितंदृष्ट्वाकुमारंदेवलोब्रवीत् ॥ २३ ॥ ॥ देवलउवाच ॥ ॥ भोभोसुदेवधन्योसितुष्टस्तेभगवान्हरिः ॥ यतस्त्वंप्रातवान्पुत्रंदुर्लभंसुंदरंवरम् ॥ २४ ॥ एतादृशःसुतःक्कापिकस्याप्यनवलोकितः ॥ विनीतोबुद्धिमान्वाग्मीवेदाध्यनशीलवान् ॥ २५ ॥ एहि

पुत्रकिमेतत्तेकरेपश्यामिकौतुकम् ॥ सच्छत्रंचामरयुगंकमलंयवसंयुतम् ॥ २६ ॥ आजानुलंबिनौहस्तौहस्तिहस्तसमौतव ॥ आकर्णां
तविशालेचचक्षुषीमधुपिंजरे ॥ २७ ॥ वपुर्वर्तुलकंमध्यंवलित्रयविभूषितम् ॥ एवमुक्त्वासुतंदृष्ट्वापुनराहोत्सुकंद्विजम् ॥ २८ ॥ अहोसुदेव
तनयस्तवायंगुणसागरः ॥ गूढजत्रुःकंबुकंठःस्निग्धकुंचितमूर्धजः ॥ २९ ॥ तुंगवक्षाःपृथुग्रीवःसमकर्णोवृषांसकः ॥ सर्वलक्षणसंपूर्णःपुत्रोभा
ग्यनिधिर्महान् ॥३०॥ एकएवमहान्दोषोयेनसर्वंवृथाकृतम् ॥ इत्युक्त्वामौलिमाधुन्वन्विनिःश्वस्याब्रवीन्मुनिः ॥३१॥ पूर्वमायुःपरीक्षेतपश्चा
ल्लक्षणमादिशेत् ॥ निरायुषःकुमारस्यलक्षणैःकिंप्रयोजनम् ॥३२॥ सुदेवतनयोऽयंतेद्वादशेहायनेजले ॥ मृत्युमेष्यतितस्मात्त्वंशोकंमाकुरु
मानसे ॥ ३३ ॥ अवश्यंभाविनोभावाभवंत्येवनसंशयः ॥ तत्रप्रतिविधिर्नास्तिमुमूर्षोरिवभेषजम् ॥३४॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ इत्युदीर्यगतो
देवलोकंदेवलकोमुनिः ॥ सुदेवःसहगौतम्यापपातधरणीतले ॥३५॥ विललापचिरंभूमौदेवलोक्तंवचःस्मरन् ॥ अथसागौतमीपुत्रंस्वांकमारो
प्यधैर्यतः ॥ चुचुंबवदनंप्रेम्णापश्चात्पतिमुवाचसा ॥३६॥ ॥ गौतम्युवाच ॥ ॥ द्विजराजनकर्तव्याभीतिर्भाव्येषुवस्तुषु ॥३७॥ नाभाव्यंभ
विताकुत्रभाव्यमेवभविष्यति ॥ किंतुनोदुःखमापन्नानलरामयुधिष्ठिराः ॥ ३८ ॥ बंधनंबलिराजोपिप्राप्तवान्यदवःक्षयम् ॥ हिरण्याक्षोवधं
घोरोवृत्रोपिनिधनंगतः ॥ ३९ ॥ कार्त्तवीर्यःशिरश्छेदंरावणोपितथाप्तवान् ॥ विरहंरघुनाथोपिजानक्याःप्राप्तवान्मुने ॥ ४० ॥ परीक्षिद
पिराजर्षिर्ब्राह्मणान्मृत्युमाप्तवान् ॥ एवंयेभाविनोभावाभवंत्येवमुनीश्वर ॥ ४१ ॥ अतउत्तिष्ठहेनाथहरिंभजसनातनम् ॥ शरण्यंसर्वजीवा
नांनिर्वाणपददायकम् ॥ ४२ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ इतिनिजवनितावचोनिशम्यप्रकृतिमुपागतवान्सुदेवशर्मा ॥ हृदिहरिचरणांबुजं

निधायझटितिजहौशुचमात्मजाङ्कविन्नीम् ॥४३॥ इतिश्रीबृहन्नारदीपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्याने सुदेवप्रतिबोधोनामषोडशोऽध्यायः ॥१६॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ ततःकिमभवत्तस्यप्रबुद्धस्यमहीपतेः ॥ तन्मेवदकृपासिंधोशृण्वतांपापना शनम् ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ स्वकीयचरितंश्रुत्वाप्राक्तनंचकिताननम् ॥ राजानंपुनरेवाहवाल्मीकिःश्रवणोत्सुकम् ॥ २ ॥ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ इतिताःशीतलावाचःसमाकर्ण्यप्रियामुखात् ॥ सुदेवोधैर्यमालंब्यहरौचित्तमधारयत् ॥ ३ ॥ निःश्वस्यदीनवद नोयद्भाव्यंतद्भविष्यति ॥ इतिनिश्चित्यमनसापुष्पाद्यर्थंवनंययौ ॥ ४ ॥ एवंकृतवतस्तस्यकियान्कालोगतःक्रमात् ॥ समित्कुशफलाद्यर्थं कदाचित्काननंययौ ॥५॥ सुदेवोमनसाध्यायन्हरेःपादसरोरुहम् ॥ तस्मिन्नेवदिनेगच्छद्वापींसूनुःसुहृद्वृतः ॥ ६ ॥ प्रविश्यवापींचिक्रीडे वयस्यैःसहवारिणि ॥ जलयंत्रैःक्षिपन्वारिबालकेषुस्मयन्मुहुः ॥ ७ ॥ जलेक्रीडांमुहुःकुर्वन्ग्रीष्मेमोदमुपाययौ ॥ एवंसर्वेषुबालेषुक्रीडत्सुप्रे मनिर्भरम् ॥ ८ ॥ अगाधसलिलेतिष्ठन्बालकैरुपमर्दितः ॥ सपलायनमन्विच्छन्सुहृद्वर्गभयाद्द्रुतम् ॥ ९ ॥ विधिनानोदितस्तत्रनिय म्यश्वासमात्मनः ॥ ममज्जागाधतोयेसौवंचयन्नात्मनः सखीन् ॥१०॥ तत्रापिव्याकुलीभूयततोनिर्गंतुमुन्मनाः ॥ सहसामृतिमापन्नःकुम रोऽगाधवारिणि॥११॥जलादनिर्गतंवीक्ष्यसर्वेचकितमानसाः ॥ समानवयसःसर्वेहाहाकृत्वाप्रधाविताः ॥१२॥ गौतम्यैकथयामासुर्बृहच्छो कपरायणाः॥वज्रपातसमांवाचंबालानामनतिप्रियाम्॥१३॥श्रुत्वाभूमौपपाताशुगौतमीपुत्रवत्सला॥एतस्मिन्नेवसमयेवनाद्विप्रःसमाययौ ॥ ॥१४॥निशम्यपुत्रमरणंत्वष्टेवावापतद्भुवि ॥ ततउत्थायतौविप्रदंपतीवापिकांगतौ॥१५॥मृतंपुत्रंसमालिंग्यस्वांकेकृत्वाकलेवरम् ॥ सुदेवःपुत्र

वदनंचुचुंबचमुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥ ततःस्वांकेस्थितंपुत्रंमृतंवीक्षन्मुहुर्मुहुः ॥ सरुदन्विलपन्नेवगद्गदाक्षरमूचिवान् ॥ १७ ॥ ॥सुदेवउवाच ॥
वदपुत्रशुभांवाणींममशोकविनाशिनीम् ॥ शीतलांललितांवत्समनसोमोदमावह ॥ १८ ॥ विहायपितरौवृद्धौनत्वंगंतुमिहार्हसि ॥ वत्साह्व
यतिसन्मित्रंवेदाध्ययनहेतवे ॥ १९ ॥ मुदाह्वयत्युपाध्यायस्त्वामध्यापनहेतवे ॥ तूर्णमुत्तिष्ठहेपुत्रकथंसुप्तोसिसांप्रतम् ॥ २० ॥ त्वांविहा
यनगच्छामिगृहेकिंमेप्रयोजनम् ॥ शून्यारण्यमिवाद्यैवत्वद्दतेसदनंमम ॥ २१ ॥ वनेपिनैवगच्छामिगमनेकिंप्रयोजनम् ॥ फलमूलप्रियत्वं
चेन्नोत्तिष्ठसिममाग्रतः ॥ २२ ॥ नमयाचरितंगर्ह्यंब्रह्महत्यापिनोकृता ॥ केनकर्मविपाकेनपुत्रोमेनिधनंगतः ॥ २३ ॥ अहोधातःकिमेताव
त्फलंलब्धंत्वयामहत् ॥ लोचनंममदीनस्यवृद्धस्याकृष्यनिर्दय ॥२४॥ निर्धनस्यधनंबालंदंपत्योरवलंबनम् ॥ हरतस्तेकथंलज्जाजायतेन
हिकुत्रचित् ॥ २५ ॥ सर्वत्रसदयस्त्वंवैमयिनिर्दयतांगतः ॥ कथमित्यन्यथाभावोममभाग्यवशादहो ॥ २६ ॥ कुत्राहंशोधयाम्यद्यपुत्रंप्रकृ
तिसुन्दरम् ॥ द्रक्ष्येतवाननंकुत्रपुत्रचारुसुलोचनम् ॥ २७ ॥ पर्जन्यःस्रवतेवारिसूतेधान्यंवसुंधरा ॥ गिरयोरत्नजातानिमुक्तासारंपयोनिधिः
॥ २८ ॥ नतंदेशंप्रपश्यामियत्रपुत्रंमृतंलभेत् ॥ यद्गात्रंतुसमालिंग्यहृद्गतंतापमुत्सृजेत् ॥ २९ ॥ हेवत्सत्वंसकृद्वाचंश्रावयाशुदयांकुरु ॥
विलपत्यतितेमाताकुररीवगतत्रपा ॥ ३० ॥ तांदृष्ट्वातुकथंपुत्रदयानोत्पद्यतेतव ॥ अननुज्ञाप्यपितरौनकदापिभवान्गतः ॥ ३१ ॥ आ
वामपृष्ट्वाकिंदीर्घमार्गंयातोसिपुत्रक ॥ वेदाध्ययनसद्वाणींकस्यश्रोष्यामिसांप्रतम् ॥ ३२ ॥ त्वामनुस्मरतोवत्सकलवाक्यंमनोहरम् ॥ शत
धादीर्यतेनोद्यह्यायसंहृदयंमम ॥ ३३ ॥ मन्येसुधन्यंकिलकोशलेंद्रंयःकाननंदाशरथौप्रयाते ॥ दधारनोऽसून्सुततापदग्धोधिङ्मांसुतस्य

प्रलयेप्यनष्टम् ॥ ३४ ॥ गोविंदविष्णोयदुनाथनाथश्रीरुक्मिणीप्राणपतेमुरारे ॥ दीनानुकंपिन्भगवन्दयालोमांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥
॥ ३५ ॥ देवाधिदेवाखिललोकनाथगोपालगोपीशरथांगपाणे ॥ कलिंदकन्याविषदोषहारिन्मांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥ ३६ ॥
वैकुंठविष्णोनरकासुरारेचराचराधारभवाब्धिपोत ॥ ब्रह्मादिदेवानतपादपीठमांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥ ३७ ॥ शठोमदन्योभवितानको
पियोदेवकीसूनुवचोविलंघ्य ॥ पुत्रेदुराशांकृतवानभाग्योलभेतकोदृष्टविनष्टवस्तु ॥ ३८ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमा
हात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेसुदेवविलापोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥
॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ दृढधन्वामहीपालंकिमुवाचततःपरम् ॥ वाल्मीकिर्भगवान्साक्षात्तद्वदस्वतपोनिधे ॥ १ ॥ ॥ श्री
नारायणउवाच ॥ ॥ दृढधन्वासराजर्षिः श्रुत्वाप्राक्तनमात्मनः ॥ सविस्मयःसमापृच्छद्वाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ २ ॥ ॥ दृढधन्वो
वाच ॥ ॥ ब्रह्मंस्तववचोरम्यंसुधाकल्पंनवंनवम् ॥ पीत्वापीत्वानतृप्तोस्मिभूयोवदततःपरम् ॥ ३ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ एवंविल
पतस्तस्यविप्रस्यजगतीपते ॥ अकालजलदोभ्यागाद्गर्जयंश्चदिशोदश ॥ ४ ॥ ववौवायुःखरस्पर्शःकंपयन्निवपर्वतान् ॥ बृहच्छसन्म
हाविद्युत्स्वनेनापूरयन्दिशः ॥ ५ ॥ यावन्मासंववर्षैवंमहीपूर्णजलाभवत् ॥ नासौविज्ञातवान्किंचित्पुत्रशोकाग्नितापितः ॥ ६ ॥ नपपौ
बुभुजेचैवपुत्रपुत्रइतिब्रुवन् ॥ एवंविलपतस्तस्यमासोयोविगतस्तदा ॥ ७ ॥ श्रीकृष्णवल्लभोमासःसोभवत्पुरुषोत्तमः ॥ आजनतोपित
स्यासीत्पुरुषोत्तमसेवनम् ॥ ८ ॥ तेनात्यंतप्रसन्नःसन्प्रादुरासीद्धरिःस्वयम् ॥ नवीनजलदश्यामोवनमालाविभूषितः ॥ ९ ॥ प्रादुर्भूते

जगन्नाथेविलीनाथनराजयः ॥ ततोददर्शविप्रोसौश्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥१०॥ सहसांकगतंपुत्रदेहंभुविनिधायच ॥ सपत्नीकोनमश्चक्रेदंड वच्छ्रीहरिंमुदा ॥ ११ ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वासंस्थितःश्रीहरेःपुरः ॥ श्रीकृष्णएवशरणंममास्त्वितिविचिंतयन् ॥ १२ ॥ भगवानपितुष्टःस न्पुरुषोत्तमसेवनात् ॥ अवोचन्मधुरांवाणींबृहत्पीयूषवर्षिणीम् ॥ १३ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ भोभोसुदेवधन्योसिभाग्यवान्सांप्रतंभवान् ॥ त्वद्भाग्यंवर्णितुंकोवासमर्थोभुवनत्रये ॥ १४ ॥ शृणुवत्सप्रवक्ष्येहंयत्तेभावितपोधन ॥ द्वादशाब्दसहस्रायुःपुत्रस्तेभविताद्विज ॥ १५ ॥ अतःपरंनसंदेहस्तवपुत्रोद्भवेसुखे ॥ मयायंतेसुतोदत्तःप्रसन्नेनद्विजोत्तम ॥ १६ ॥ तवपुत्रसुखंदृष्ट्वादेवगंधर्वमानवाः ॥ सस्पृहास्तेभविष्यंति प्रसादान्मेद्विजोत्तम ॥ १७ ॥ अत्रतेकथयिष्यामिइतिहासंपुरातनम् ॥ मार्कंडेयेनमुनिनापुराप्रोक्तंरघुंनृपम् ॥१८॥ पुरामुनीश्वरःकश्चिद्ध नुर्नामामहामनाः ॥ पश्यन्पुत्राधिनिर्दग्धाल्लँलोकान्दीनमनाअभूत् ॥ १९ ॥ अमरंपुत्रमन्विच्छंस्तपस्तेपेसुदारुणम् ॥ सहस्राब्देगते कालेदेवास्तमब्रुवन्मुनिम् ॥२०॥ वरंवरयभद्रंते यस्तेमनसिवांछितः ॥ प्रसन्नाः स्मोवयंसर्वेतीव्रेणतपसातव ॥ २१ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ ॥ इतिदेवचः श्रुत्वासुतृप्तोऽमृतसन्निभम् ॥ वव्रेतपोधनःपुत्रममरंबुद्धिशालिनम् ॥ २२ ॥ तमूचुर्निर्जराःसर्वेनैवंभूतोस्तिभूतले ॥ पुनराहमुनिर्देवान्निमित्तायुर्भवत्विति ॥ २३ ॥ सुराःप्रोचुर्निमित्तंकिंवदसोप्यवदन्मुनिः ॥ असौमहान्गिरिर्यावत्तावदायुर्विधीयताम् ॥२४॥ एवमस्त्वितिसंपाद्यसेंद्रादेवादिवंययुः ॥ धनुःशर्मासुतंलेभेकालेनाल्पेनतादृशम् ॥ २५ ॥ सपुत्रोववृधेतस्यतारापतिरिवांबरे ॥ प्राप्तेतुषो डशेवर्षेपुत्रंप्राहमुनीश्वरः ॥२६॥ हेवत्समुनयः सर्वेनावज्ञेयाः कदाचन ॥ शिक्षितोपियथापुत्रःसोद्वेगानकरोन्मुनीन् ॥२७॥ निमित्तायुर्बलो

न्मत्तोब्राह्मणान्नवमन्यते ॥ कदाचिन्महिषोनाममुनिःपरमकोपनः ॥२८॥पूजयामासविधिनाशालग्रामशिलांशुभाम्॥तदानींससमागत्यता
मादयत्वरान्वितः ॥ २९ ॥चिक्षेपनिजचांचल्यात्कूपेपूर्णजलेहसन् ॥ ततःक्रोधसमाविष्टःकालरुद्रइवापरः ॥ ३० ॥ शशापधनुषःपुत्रमद्यैव
म्रियतामयम् ॥ नमृतंपुत्रमालक्ष्यदध्यौमनसिकारणम् ॥ ३१ ॥ निमित्तायुरयंदेवैःकृतोयंधनुषःसुतः ॥ इतिचिंतापरेणाशु निःश्वासःप्रकटी
कृतः ॥ ३२ ॥ महिषाःकोटिशोजातास्तैर्गिरिःशकलीकृतः ॥ तदानींमृतिमापन्नोमुनिपुत्रोतिदुर्मदः ॥ ३३ ॥ धनुःशर्मातिदुःखेनविल
लापमुहुर्मुहुः ॥ विलप्यबहुधाविप्रोगृह्यपुत्रकलेवरम् ॥ ३४ ॥ प्रविवेशचितावह्निंपुत्रदुःखातिपीडितः ॥ एवंहठात्पुत्रायेनसुखंयांतिकुत्र
चित् ॥३५॥ वैनतेयेनयोदत्तस्तनयोऽयंतपोधन ॥ तेनत्वंपुत्रवाँल्लोकेस्पृहणीयोभविष्यसि ॥३६॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यात्प्रसन्नेनमयानघ ॥
सुचिरंस्थापितोयंहितनयःसुखदोस्तुते ॥ ३७ ॥ गार्हस्थ्यमतुलंभुक्त्वासहपुत्रेणसर्वदा ॥ ततस्त्वंब्रह्मणोलोकंगत्वातत्रमहत्सुखम् ॥ ३८ ॥
दिव्याब्दवर्षसाहस्रंभुक्त्वागंतासिभूतले ॥ ततोराजाचक्रवर्तीभविष्यसिद्विजोत्तम ॥ ३९ ॥ दृढधन्वेतिविख्यातःसमृद्धबलवाहनः ॥ संव
त्सराणामयुतंराज्यंभोक्ष्यसिपार्थिवम् ॥ ४० ॥ अव्याहतबलैश्वर्यमाखंडलपदाधिकम् ॥ गौतमीयंतवांगार्धहारिणीमहिषीतदा ॥ ४१ ॥
पतिसेवारतानित्यंनाम्नाचगुणसुंदरी ॥ चत्वारस्तेसुताभाव्याराजनीतिविशारदाः ॥४२॥ कन्यैकाचमहाभागासुशीलासुवरानना ॥ भुक्त्वा
भोगान्महाभागसुरासुरसुदुर्लभान् ॥ ४३ ॥ कृतार्थोहंधरापीठेइत्यज्ञानविमोहितः ॥ अतिदुस्तरसंसारविषयाकृष्टमानसः ॥ ४४ ॥
यदाविस्मरसेविष्णुंसंसारार्णवतारकम् ॥ अयंतेतनयोविप्रशुकोभूत्वातदावने ॥ ४५ ॥ वटवृक्षंसमाश्रित्यत्वामेवंबोधयिष्यति ॥ वैराग्यो

तपादकंपद्यंपठन्नेवमुहुर्मुहुः ॥ ४६ ॥ श्रुत्वावाक्यंशुकप्रोक्तंदुर्मनागृहमेष्यसि ॥ अथचिंतार्णवेमग्नंत्यक्काविषयजंसुखम् ॥ ४७ ॥ वाल्मीकिस्त्वांसमागत्यबोधयिष्यतिभूसुर ॥ तद्वाक्यैश्छिन्नसंदेहस्त्यक्कालिंगंहरेःपदम् ॥ ४८ ॥ गमिष्यसिसपत्नीकःपुनरावृत्तिवर्जितम् ॥ वदत्येवंमहाविष्णौसमुत्तस्थौद्विजात्मजः ॥ ४९ ॥ दंपतीतौसुतंदृष्ट्वामहानंदौबभूवतुः ॥ सुराःसर्वेपिसंतुष्टाववृषुःकुसुमाकरान् ॥ ५० ॥ ननामशुकदेवोपिश्रीहरिंपितरौचतौ ॥ गरुडोप्यतिसंहृष्टस्तंदृष्ट्वाससुतंद्विजम् ॥ ५१ ॥ ब्राह्मणश्चकितोभूत्वाननामश्रीहरिंतदा ॥ बद्धांजलिपुटोविप्रःप्रोवाचजगदीश्वरम् ॥ ५२ ॥ हृदिस्थंसंशयंछेत्तुंहर्षगद्गदयागिरा ॥ ५३ ॥ चत्वार्यब्दसहस्रमेवमनिशंतप्तंतपोदुष्करंतत्रागत्यवचस्त्वयानिगदितंयन्मांहरेकर्कशम् ॥ हेवत्साद्यविलोकितंतवसुतोनैवास्तिनैवास्तिहितद्वाक्यंव्यतिलंघ्यमेमृतसुतोत्थानेचहेतुंवद ॥ ५४ ॥ ॥ इति श्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेसुदेवपुत्रजीवनंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ इतिब्रुवाणंप्राचीनंमुनिमाहतपस्विनः ॥ प्रीणयन्निवसद्वाचानारदोमुनिसत्तम ॥ १ ॥ किमुवाचोत्तरंब्रह्मन्सुदेवंतपसांनिधिम् ॥ प्रसन्नोभगवान्विष्णुस्तन्मेब्रूहितपोनिधे ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्थमावेदितोविष्णुःसुदेवेनमहात्मना ॥ प्रत्याहप्रीणयन्वाचाभगवान्भक्तवत्सलः ॥ ३ ॥ हरिरुवाच ॥ द्विजराजकृतंयत्तेनैतदन्यःकरिष्यति ॥ नतद्वेत्तिभवान्नूनंयेनाहंतुष्टिमाप्तवान् ॥ ४ ॥ अथममप्रियोमासःप्रयातःपुरुषोत्तमः ॥ तत्सेवातेसमजनिशोकमग्नस्यसस्त्रियः ॥ ५ ॥ एकमप्युपवासंयःकरोत्यस्मिंस्तपोनिधे ॥ असावनंतपापानिभस्मीकृत्यद्विजोत्तम ॥ सुरयानंसमारुह्यवैकुंठंयातिमानवः ॥ ६ ॥ माससमात्रंनिराहारोह्यकालजलदागमात् ॥ त्रिषुकालेषुतेस्नानं

संजातंप्रतिवासरम् ॥ ७ ॥ अभ्रस्नानंत्वयालब्धंमासमात्रंतपोधन ॥ उपवासाश्चतेजातास्तावन्मात्रमखंडिताः ॥८॥ शोकसागरमग्नस्यपु
रुषोत्तमसेवनम् ॥ अजानतोपिसंजातंचेतनारहितस्यते ॥ ९ ॥ त्वदीयसाधनस्यास्यप्रमाणंकःकरिष्यति ॥ एकतःसाधनान्येववेदोक्ता
निचयानिवै ॥ १० ॥ तानिसर्वाणिसंगृह्यह्येकतःपुरुषोत्तमम् ॥ तोलयामासदेवानांसन्निधौचतुराननः ॥ ११ ॥ लघून्यन्यानिजातानि
गुरुश्चपुरुषोत्तमः ॥ तस्माद्भूमिस्थितैर्लोकैःपूज्यतेपुरुषोत्तमः ॥१२॥ पुरुषोत्तममासस्तुसर्वत्रास्तितपोधन ॥ तथापिपृथिवीलोकेपूजितः
सफलोभवेत् ॥ १३ ॥ तस्मात्सर्वात्मनावत्सभवान्धन्योस्तिसांप्रतम् ॥ यदस्मिंस्तत्तवानुग्रंतपःपरमदारुणम् ॥ १४ ॥ मानुषंजन्मसंप्रा
प्यमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ स्नानदानादिरहितादरिद्राजन्मजन्मनि ॥ १५ ॥ तस्मात्सर्वात्मनासेव्योमत्प्रियःपुरुषोत्तमः ॥ समेवल्लभतांया
तिधन्योभाग्ययुतोनरः ॥ १६ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ एवमुक्त्वाहरिःशीघ्रंजगामजगदीश्वरः ॥ वैनतेयंसमारुह्यवैकुंठममलंमुने
॥ १७ ॥ सपत्नीकःसुदेवस्तुमुमुदेहर्निशंभृशम् ॥ मृतोत्थितंशुकंदृष्ट्वापुरुषोत्तमसेवनात् ॥ १८ ॥ अजानतोममैवासीत्पुरुषोत्तमसेवनम् ॥
तदेवसफलंजातंयेनपुत्रोमृतोत्थितः॥ १९ ॥ अहोएतादृशोमासोनैवदृष्टःकदाचन ॥ इत्येवंविस्मयाविष्टस्तंमासंसमपूजयत् ॥ २० ॥ तेन
पुत्रेणमुमुदेसपत्नीकोद्विजोत्तमः ॥ पितरंनंदयामासशुकदेवोपिसत्कृतैः ॥ २१ ॥ स्तुवन्मासंचविष्णुंचपूजयामाससादरम् ॥ कर्ममार्गस्पृ
हांत्यक्त्वाभक्तिमार्गैकसस्पृहः ॥ २२ ॥ सर्वदुःखापहंमासंवरिष्ठंपुरुषोत्तमम् ॥ जपहोमादिभिस्तस्मिन्नभजच्छ्रीहरिंप्रिया ॥ २३ ॥ भुक्त्वा
थविषयान्सर्वान्सहस्राब्दमहर्निशम् ॥ जगामपरमंलोकंसपत्नीकोद्विजोत्तमः ॥२४॥ योगिनामपिदुष्प्रापंयाजकानांतुतत्कुतः ॥ यत्रगत्वा

नशोचंतिवसंतोहरिसन्निधौ ॥ २५ ॥ तत्रत्यंसुखमासाद्यसपत्नीकोसुवंगतः ॥ सएवदृढधन्वात्वंप्रथितःपृथिवीपतिः ॥ २६ ॥
पुरुषोत्तममासस्यसेवनात्सकलर्द्धिभाक् ॥ महिषीयंपुराराजन्गौतमीपतिदेवता ॥ २७ ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंपृष्टवानसियन्मम ॥
शुकस्तुतवभूपालपूर्वजन्मनियःसुतः ॥ २८ ॥ शुकदेवइतिख्यातोहरिणायोनुजीवितः ॥ द्वादशाब्दसहस्राणुर्भुक्त्वावैकुंठमेयिवान् ॥
॥ २९ ॥ सएवारण्यसरसिवटवृक्षंसमाश्रितः ॥ त्वामेवागतमालोक्यपितरंपूर्वजन्मनः ॥ ३० ॥ हितानामुपदेष्टारंप्रत्यक्षंदैवतं
मम ॥ संसारसागरेमग्नंविषयव्यालदूषिते ॥ ३१ ॥ अत्यंतकृपयाविष्टश्चिंतयामासकीरजः ॥ नबोधयामिचेद्भूपंममापिबंधनंभवेत् ॥
॥ ३२ ॥ पुन्नामनरकाद्यस्तुत्रायतेपितरंसुतः ॥ इतिश्रुत्यर्थबोधोपिस्यादेवाद्यान्यथामम ॥ ३३ ॥ तस्मादुपकरिष्यामिपितरंपूर्वजन्म
नः ॥ अवधार्यवचश्चेत्थंकीरजोऽजीगदन्नृप ॥३४॥ इत्येतत्कथितंसर्वंयद्यत्पृष्टंत्वयानघ ॥ अतःपरंगमिष्यामिसरयूंपापनाशिनीम् ॥३५॥
॥ ॥श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्येवंप्रथमजनुश्चरित्रमुक्त्वाभूपस्यप्रथितयशस्विनश्चिराय ॥ गच्छंतंमुनिमनुनीयराजराजःप्रावोच
त्किमपिनमन्नगण्यपुण्यः ॥ ३६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्ये श्रीनारायणनारदसंवादेवाल्मीकिनोक्तदृढधन्वोपा
ख्यानेपुरुषोत्तममाहात्म्यकथनंनामैकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ ॥ छ ॥ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ नारायणमुखाच्छ्रुत्वा
प्राक्तनंदृढधन्वनः ॥ नातितृप्तमनाविप्रानारदःपृष्टवान्मुनिम् ॥ १ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ किमुवाचमहाराजोवाल्मीकिंमुनिसत्त
मम् ॥ तन्मेवदविनीतायतपोधनसुविस्तरम् ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्येहंयदुक्तंदृढधन्वना ॥ अनुनीयम

हाभ्राज्ञंत्वाल्मीकिंश्रुनिसत्तमम् ॥ ३ ॥ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तममासोयंकथंकार्योमुमुक्षुभिः ॥ कीदृशीकस्यपूजा चकिंदानं
कोविधिर्मुने ॥ ४ ॥ एतत्सर्वंसमाचक्ष्वसर्वलोकहितायमे ॥ सर्वलोकहितार्थायचरंतिहिभवादृशाः ॥ ५ ॥ असौमासः स्वयंसाक्षाद्भगवा
न्पुरुषोत्तमः ॥ तस्मिन्कृतेमहत्पुण्यंत्वन्मुखात्संश्रुतंमया ॥ ६ ॥ पूर्वंजन्मन्यहंभूत्वासुदेवोब्राह्मणोत्तमः ॥ विधिनाकृतवान्मासंदृष्टापुत्रं
मृतोत्थितम् ॥ ७ ॥ अजानतोपिमेब्रह्मन्पुत्रशोकादचेतसः ॥ निराहारस्यसततंगतश्चपुरुषोत्तमः ॥ ८ ॥ तस्याप्येतत्फलंजातंशुकदेवोमृ
तोत्थितः ॥ अनुभूतमिमंमासंसेवेतहरिणोदितः ॥ ९ ॥ इहजन्मनितत्सर्वंविस्मृतंमेतपोधन ॥ एतत्पूजाविधानंमेवदविस्तरतःपुनः
॥ १० ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ ब्राह्मेमुहूर्तेचोत्थायपरंब्रह्मविचिंतयेत् ॥ ततोव्रजेन्नैर्ऋतांशांबृहत्सोदकभाजनः ॥ ११ ॥ ग्रामाद्दू
रतरंगच्छेत्पुरुषोत्तमसेवकः ॥ दिवासंध्यासुकर्णस्थब्रह्मसूत्रउदङ्मुखः ॥ १२ ॥ अंतर्धायतृणैर्भूमिंशिरःप्रावृत्यवाससा ॥ वक्त्रंनियम्ययत्ने
ननोष्ठीवेन्नोच्छ्सेदपि ॥ १३ ॥ कुर्यान्मूत्रपुरीषंचरात्रौचेद्दक्षिणामुखः ॥ गृहीतशिश्नश्चोत्थायगृहीतशुचिमृत्तिकः ॥ १४ ॥ गंधलेपक्षयक
रंकुर्याच्छौचमतंद्रितः ॥ एकांलिंगेगुदेपंचत्रिर्वामेदशचोभयोः ॥१५॥ द्विसप्तपादयोश्चैवगार्हस्थ्यंशौचमुच्यते ॥ कृत्वाशौचंतुप्रक्षाल्यपादौ
हस्तौचमृज्जलैः ॥१६॥ तीर्थेशौचंनकुर्वीतकुर्वीतोद्धृतवारिणा ॥ अरत्निद्वयसंचारित्यक्त्वाकुर्यादनुद्धृते ॥१७॥ पश्चात्तच्छोधयेत्तीर्थमशुद्धम
न्यथाहितम् ॥ एवंशौचंप्रकुर्वीतपुरुषोत्तमसद्व्रती॥१८॥ ततःषोडशगंडूषान्प्रकुर्याद्द्वादशैववा ॥ मूत्रोत्सर्गेतुगंडूषानष्टौवाचतुरोगृही॥१९॥
उत्थायनेत्रेप्रक्षाल्यदंतकाष्ठंसमाहरेत् ॥ इमंमंत्रंसमुच्चार्यदंतधावनमाचरेत् ॥ २० ॥ आयुर्बलंयशोवर्चःप्रजाःपशुवसूनिच ॥ ब्रह्मप्रज्ञांचमे

घांचत्वंनोदेहिवनस्पते ॥ २१ ॥ अपमार्गंबादरंवाद्वादशांगुलमव्रणम् ॥ कनिष्ठांगुलिवत्स्थूलंपर्वार्द्धेकृतकूर्चकम् ॥२२॥ शुचिर्द्वादशगंडूषै
र्निषिद्धंभानुवासरे ॥ आचम्यप्रयतः सम्यक्प्रातःस्नानंसमाचरेत् ॥ २३ ॥ स्नानादनंतरंतावत्तर्पयेत्तीर्थदेवताः ॥ समुद्रगानदीस्नानमुत्तमं
परिकीर्तितम् ॥२४॥ वापीकूपतडागेषुमध्यमंकथितंबुधैः ॥ गृहेस्नानंतुसामान्यंगृहस्थस्यप्रकीर्तितम् ॥ २५ ॥ ततश्ववाससीशुद्धेशुक्लेचप
रिधायच ॥ उत्तरीयंसदाधार्यंब्राह्मणेनविजानता ॥ २६ ॥ उपविश्यशुचौदेशेप्राङ्मुखोवाउदङ्मुखः ॥ भूत्वाबद्धशिखःकुर्यादंतर्जानुभुज
द्वयम् ॥ २७ ॥ सपवित्रेणहस्तेनकुर्यादाचमनक्रियाम् ॥ नोच्छिष्टंतत्पवित्रंतुभुक्तोच्छिष्टंतुवर्जयेत् ॥२८॥ आचम्यतिलकंकुर्याद्गोपीचंदन
मृत्स्नया ॥ ऊर्ध्वपुण्ड्रमृजुंसौम्यंदंडाकारंप्रकल्पयेत् ॥ १९ ॥ ऊर्ध्वपुण्ड्रंत्रिपुण्ड्रेवामध्येछिद्रंप्रकल्पयेत् ॥ निवसत्यूर्ध्वपुंड्रेतुश्रियासहहरिः
स्वयम् ॥ ३० ॥ त्रिपुंड्रंधूर्जटिः साक्षादुमयासहसर्वदा ॥ विनाछिद्रंतुतंपुड्रंशुनःपादसमंविदुः ॥ ३१ ॥ श्वेतंज्ञानकरंप्रोक्तंरक्तंवश्यकरंनृ
णाम् ॥ पीतंसर्वर्द्धिदंप्रोक्तमन्यत्तुपरिवर्जयेत् ॥ ३२ ॥ शंखचक्रादिकंधार्यंगोपीचंदनमृत्स्नया ॥ सर्वपापक्षयकरंपूजांगंपरिकीर्तितम्॥३३॥
शंखचक्रादिचिह्नानिदृश्यंतेयस्यविग्रहे ॥ मर्त्योमर्त्योनविज्ञेयःसनित्यंभगवत्तनुः ॥ ३४ ॥ पापंसुकृतरूपंतुजायतेतस्यदेहिनः ॥ शंखच
क्रादिचिह्नानियोधारयतिनित्यशः ॥ ३५ ॥ नारायणायुधैर्नित्यंचिह्नितोयस्यविग्रहः ॥ पापकोटियुतस्यापितस्यकिंकुरुतेयमः ॥ ३६ ॥
प्राणायामंततःकृत्वासंध्यावंदनमाचरेत् ॥ पूर्वसंध्यांसनक्षत्रामुपासीतयथाविधि ॥ ३७ ॥ गायत्रीमभ्यसेत्तावद्यावदादित्यदर्शनम् ॥
सावित्रैरनघैर्मंत्रैरुपस्थायकृतांजलिः ॥ ३८ ॥ आत्मपादौतथभूमौसंध्याकालेऽभिवादयेत् ॥ यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणयदूनंपरिपूरयेत् ॥३९॥

यस्तुसंध्यामुपासीतश्रद्धयाविधिवद्द्विजः ॥ नतस्यकिंचिद्दुष्प्रापंत्रिषुलोकेषुविद्यते ॥ ४० ॥ दिवसस्यादिमेभागेकृत्यमेतदुदीरितम् ॥ एवं कृत्वाक्रियांनित्यांहरिपूजांसमाचरेत् ॥४१॥ उपलिप्तेशुचौदेशेनियतोवाग्यतःशुचिः ॥ वृत्तंवाचतुरस्रंवामंडलंगोमयेनतु ॥ ४२ ॥ विधायाष्टदलंकुर्यात्तंडुलैर्व्रतसिद्धये ॥ सौवर्णंराजतंताम्रंमृन्मयंसुदृढंनवम् ॥ ४३ ॥ अव्रणंकलशंशुद्धंस्थापयेन्मंडलोपरि ॥ तत्रोदकंसमापूर्यशुद्धतीर्थाहृतंशिवम् ॥ ४४ ॥ कलशस्यमुखेविष्णुःकंठेरुद्रःसमाश्रितः ॥ मूलेतत्रस्थितोब्रह्मामध्येमातृगणाः स्मृताः ॥ ४५ ॥ कुक्षौतुसागराः सर्वेसप्तद्वीपावसुंधरा ॥ ऋग्वेदोथयजुर्वेदःसामवेदोह्यथर्वणः ॥ ४६ ॥ अंगैश्चसहिताः सर्वेकलशंतुसमाश्रिताः ॥ एवंसंस्थाप्यकलशंतत्रतीर्थानियोजयेत् ॥ ४७ ॥ गंगागोदावरीचैवकावेरीचसरस्वती ॥ आयांतुममशांत्यर्थंदुरितक्षयकारकाः ॥ ४८ ॥ ततःसंपूज्यकलशमुपचारैःसमंत्रकैः ॥ गंधाक्षतैश्चनैवेद्यैःपुष्पैस्तत्कालसंभवैः ॥ ४९ ॥ तस्योपरिन्यसेत्पात्रंताम्रपीतांबरावृतम् ॥ तस्योपरिन्यसेद्धैमंराधयासहितंहरिम् ॥ ५० ॥ राधयासहितःकार्यःसौवर्णःपुरुषोत्तमः ॥ तस्यपूजाप्रकर्तव्याविधिनाभक्तितत्परैः ॥ ५१ ॥ पुरुषोत्तममासस्यदैवतंपुरुषोत्तमः ॥ तस्यपूजाप्रकर्तव्यासंप्राप्तेपुरुषोत्तमे ॥ ५२ ॥ संसारसागरेमग्नमुद्धारयतियोध्रुवम् ॥ कोनसेवेततंलोकेमर्त्योमरणधर्मवान् ॥ ५३ ॥ पुनर्ग्रामाःपुनर्वित्तंपुनःपुत्राःपुनर्गृहम् ॥ पुनःशुभाशुभंकर्मनशरीरंपुनःपुनः ॥५४॥ तद्रक्षितंतुधर्मार्थेधर्मोज्ञानार्थमेवहि ॥ ज्ञानेनसुलभोमोक्षस्तस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ५५ ॥ देहरूपस्यवृक्षस्यफलंधर्मःसनातनः ॥ धर्महीनस्तुयोदेहोनिष्फलोवंध्यवृक्षवत् ॥ ५६ ॥ नमाताचसहायार्थेनकलत्रसुतादयः ॥ नपितासोदरावित्तंधर्मस्तिष्ठतिकेवलम् ॥ ५७ ॥ जराव्याघ्रीवभयदाव्याध

यःशत्रवोयथा ॥ आयुर्यातिप्रतिदिनंभग्नभांडात्पयोयथा ॥ ५८ ॥ तरंगतरलालक्ष्मीर्यौवनंकुसुमोपमम् ॥ विषयाःस्वप्नविषयाइवसर्वेनि
र्थकाः ॥ ५९ ॥ चलंवित्तंचलंचित्तंचलंसंसारजंसुखम् ॥ एवंज्ञात्वाविरक्तःसन्धर्माभ्यासपरोभवेत् ॥ ६० ॥ अर्धग्रस्तोऽहिनाभेको
मक्षिकामत्तुमिच्छति ॥ कालग्रस्तस्तथाजीवःपरपीडाधनाहृतः ॥ ६१ ॥ मृत्युग्रस्तायुषःपुंसःकिंसुखंहर्षयत्यहो ॥ आघातंनीयमानस्य
वध्यस्येवनिरर्थकम् ॥ ६२ ॥ धर्मार्थंचयदाचित्तंनवित्तंसुलभंतदा ॥ यदावित्तंनचतदाचित्तंधर्मोन्मुखंभवेत् ॥ ६३ ॥ चित्तवित्तेयदा
स्यातांसत्पात्रंनतदालभेत् ॥ एतत्त्रितयसंबंधोयदाकालेतुसंभवेत् ॥ ६४ ॥ अविचार्यतदाधर्मंयःकरोतिसबुद्धिमान् ॥ वित्तप्राचुर्यसंसाध्य
धर्माःसंतिसहस्रशः ॥ ६५ ॥ पुरुषोत्तमेस्वल्पवित्तसाध्योधर्मोमहान्भवेत् ॥ स्नानंदानंकथायांचविष्णोःस्मरणमेवच ॥ ६६ ॥ एतन्मा
त्रोपिसद्धर्मस्त्रायतेमहतोभयात् ॥ ६७ ॥ गंगैवतीर्थंस्मरएवंधन्वीवित्तंतुविद्यैवगुणास्तुरूपम् ॥ मासेषुसर्वेषुतथैवसाक्षान्मासोत्तमोयंपुरुषो
त्तमोहि ॥ ६८ ॥ यद्यप्यसौनिंद्यतमःपुरासीत्सर्वेषुकृत्येषुमखादिकेषु ॥ तथापिसाक्षाद्भगवत्प्रसादात्तन्नामनाम्नाभुविविश्रुतोऽभूत् ॥ ६९ ॥
यथाहस्तिपदेलीनंसर्वप्राणिपदंभवेत् ॥ धर्माःकालास्तथासर्वेविलीनाःपुरुषोत्तमे ॥ ७० ॥ यथामरतरंगिण्यानसमाःसकलापगाः ॥ कल्प
वृक्षेणनसमायथासकलपादपाः ॥ ७१ ॥ चिंतारत्नेनरत्नानिनसमानियथाभुवि ॥ कामधेन्वायथाधेन्वोनराज्ञापुरुषाःसमाः ॥ ७२ ॥
नवेदैःसर्वशास्त्राणिपुण्यकालास्तथाखिलाः ॥ पुरुषोत्तममासेनसमोमासोनकर्हिचित् ॥ ७३ ॥ पुरुषोत्तममासस्यदैवतंपुरुषोत्तमः ॥
तस्मात्संपूजयेद्भक्त्याश्रद्धयापुरुषोत्तमम् ॥ ७४ ॥ शास्त्रज्ञंनिपुणंशुद्धंवैष्णवंसत्यवादिनम् ॥ विप्रांचार्यमथाहूयपूजांतेनप्रकल्पयेत् ॥७५॥

संसारसागरमतीवगभीरवेगमंतस्थमोहमदनादितिमिंगिलौघम् ॥ उल्लंघ्यगंतुमभिवांछतिभारतेस्मिन्संपूजयेत्सपुरुषोत्तममादिदेवम् ॥७६॥
इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानआह्निककथनंनामविंशतितमोऽध्यायः॥ २० ॥
॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ अनलोत्तारणंकृत्वाप्रतिमायास्ततःपरम् ॥ प्राणप्रतिष्ठांकुर्वीतह्यन्यथाधातुरेवसा ॥ १ ॥ प्रतिमायाःकपोलौ
द्वौस्पृष्ट्वादक्षिणपाणिना ॥ प्राणप्रतिष्ठांकुर्वीततस्यांदेवस्यवैहरेः ॥ २ ॥ अकृतायांप्रतिष्ठायांप्राणानांप्रतिमासुच ॥ यथापूर्वंतथाभागःस्व
र्णादीनांनदेवता ॥ ३ ॥ अन्येषामपिदेवानांप्रतिमास्वपिपार्थिव ॥ प्राणप्रतिष्ठाकर्तव्यातस्यांदेवत्वसिद्धये ॥ ४ ॥ पुरुषोत्तमबीजेनतद्वि
ष्णोरित्यनेनच ॥ तथैवहृदयेंगुष्ठंदत्त्वाशश्वच्चमंत्रवित् ॥ ५ ॥ एभिर्मंत्रैःप्रतिष्ठांतुहृदयेपिसमाचरेत् ॥ अस्यैप्राणाःप्रतिष्ठंतुअस्यैप्राणाःक्षरं
तुच ॥ ६ ॥ अस्यैदेवत्वसंख्यायैस्वाहेतियजुरीरयन् ॥ मूलमंत्रैरंगमंत्रैर्वैदिकैरित्यनेनच ॥ ७ ॥ प्राणप्रतिष्ठांसर्वत्रप्रतिमासुसमाचरेत् ॥
अथवानाममंत्रैश्चचतुर्थ्यंतैःप्रयत्नतः ॥ ८ ॥ स्वाहांतैश्चप्रकुर्वीततत्तद्देवाननुस्मरन् ॥ एवंप्राणान्प्रतिष्ठाप्यध्यायेच्छ्रीपुरुषोत्तमम् ॥ ९ ॥
श्रीवत्सवक्षसंशांतंनीलोत्पलदलच्छविम् ॥ त्रिभंगललितंध्यायेत्सराधंपुरुषोत्तमम् ॥ १० ॥ देशकालौसमुल्लिख्यनियतोवाग्यतःशुचिः ॥
षोडशैरुपचारैश्चपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥११॥ आगच्छदेवदेवेशश्रीकृष्णपुरुषोत्तम ॥ राधयासहितश्चात्रगृहाणपूजनंमम ॥ १२ ॥ श्रीराधि
कासहितपुरुषोत्तमायनमःआवाहनंसमर्पयामि ॥ इत्यावाहनम् ॥ नानारत्नसमायुक्तंकार्तस्वरविभूषितम् ॥ आसनंदेवदेवेशगृहाणपुरुषो
त्तम ॥१३॥ श्रीराधिका०आसनं० ॥ गंगादिसर्वतीर्थेभ्योमयाप्रार्थनयाहृतम् ॥ तोयमेतत्सुखस्पर्शपाद्यार्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ १४ ॥ इतिपा

ग्रम् ॥ नंदगोपगृहेजातोगोपिकानंदहेतवे ॥ गृहाणार्घ्यंमयादत्तंराधयासहितोहरे ॥ १५ ॥ इत्यर्घ्यम् ॥ गंगाजलंसमानीतंसुवर्णकलश स्थितम् ॥ आचम्यतांहृषीकेशपुराणपुरुषोत्तम ॥ १६ ॥ इत्याचमनम् ॥ कार्यंमेसिद्धिमायातुपूजितेत्वयिधातरि ॥ पंचामृतैर्मयानीतैरा धिकासहितोहरे ॥ १७ ॥ इतिस्नानम् ॥ पयोदधिघृतंगव्यंमाक्षिकंशर्करातथा ॥ गृहाणेमानिद्रव्याणिराधिकानंददायक ॥ १८ ॥ इतिपं चामृतस्नानम् ॥ योगेश्वरायदेवायगोवर्धनधरायच ॥ यज्ञानांपतयेनाथगोविंदायनमोनमः ॥१९॥ गंगाजलसमंशीतंनदीतीर्थसमुद्भवम् ॥ स्नानंदत्तंमयाकृष्णगृह्यतांनंदनंदन ॥ २० ॥ इतिपुनःस्नानम् ॥ पीतांबरयुगंदेवसर्वकामार्थसिद्धये ॥ मयानिवेदितंभक्त्यागृहाणसुरस त्तम ॥२१॥ इतिवस्त्रम् ॥ आचमनम् ॥ दामोदरनमस्तेस्तुत्राहिमांभवसागरात् ॥ ब्रह्मसूत्रंसोत्तरीयंगृहाणपुरुषोत्तम ॥२२॥ उपवीतम् ॥ आचमनम् ॥ श्रीखंडंचंदनंदिव्यंगंधाढ्यंसुमनोहरम् ॥ विलेपनंसुरश्रेष्ठप्रीत्यर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥२३॥ चंदनम्॥अक्षतास्तुसुरश्रेष्ठकुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ॥ मयानिवेदिताभक्त्यागृहाणपुरुषोत्तम ॥ २४ ॥ इत्यक्षतान् ॥ ॥ माल्यादीनिसुगंधीनिमालत्यादीनिवैप्रभो ॥ मयाहृता निपूजार्थंपुष्पाणिप्रतिगृह्यताम् ॥ २५ ॥ ॥ इतिपुष्पाणि ॥ ॥ ततोंगपूजा ॥ ॥ नंदात्मजोयशोदायास्तनयःकेशिसूदनः ॥ भूभा रोद्धारकश्चैवह्यनंतोविष्णुरूपधृक् ॥ २६ ॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्चश्रीकंठःसकलास्त्रधृक् ॥ वाचस्पतिःकेशवश्चसर्वात्मेतिचनामतः ॥ २७ ॥ पादौगुल्फौतथाजानूजघनेचकटिंतथा ॥ मेढ्रंनाभिंचहृदयंकंठंबाहूमुखंतथा ॥ २८ ॥ नेत्रेशिरश्चसर्वांगंविश्वरूपिणमर्चयेत् ॥ पुष्पाण्यादा यक्रमशश्चतुर्थ्यंतैर्जगत्पतिम् ॥२९॥ प्रत्यंगपूजांकृत्वातुपुनश्चकेशवादिभिः ॥ चतुर्विंशतिमंत्रैश्चचतुर्थ्यंतैश्चनामभिः ॥३०॥ पुष्पमादायप्र

त्येकंपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ३१ ॥ वनस्पतिरसोदिव्योगंधाढ्योगंधउत्तमः ॥ आघ्रेयःसर्वदेवानांधूपोऽयंप्रतिगृह्यताम् ॥ ३२ ॥ इतिधूपम् ॥ त्वंज्योतिःसर्वदेवानांतेजसांतेजउत्तमम् ॥ आत्मज्योतिःपरंधामदीपोयंप्रतिगृह्यताम् ॥ ३३ ॥ इतिदीपम् ॥ नैवेद्यंगृह्यतांदेवभक्तिंमेह्यचलांकुरु ॥ इप्सितंमेवरंदेहिपरत्रचपरांगतिम् ॥ ३४ ॥ इतिनैवेद्यम् ॥ मध्येपानीयम् ॥ उत्तरापोशनम् ॥ गंगाजलंसमानीतंसुवर्णकलशस्थितम् ॥ आचम्यतांहृषीकेशत्रैलोक्यव्याधिनाशन ॥ ३५ ॥ इत्याचमनम् ॥ इदंफलंमयादेवस्थापितंपुरतस्तव ॥ तेनमेसुफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्मनि ॥ ३६ ॥ इतिश्रीफलम् ॥ गंधकर्पूरसंयुक्तंकस्तूर्यादिसुवासितम् ॥ करोद्वर्तनकंदेवगृहाणपरमेश्वर ॥ ३७ ॥ इतिकरोद्वर्तनम् ॥ पूगीफलसमायुक्तंसकर्पूरंमनोहरम् ॥ भक्त्यादत्तंमयादेवतांबूलंप्रतिगृह्यताम् ॥ ३८ ॥ तांबूलम् ॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थंहेमबीजंविभावसोः ॥ अनंतपुण्यफलदमतःशांतिंप्रयच्छमे ॥ ३९ ॥ इतिदक्षिणाम् ॥ शारदेंदीवरश्यामंत्रिभंगललिताकृतिम् ॥ नीराजयामिदेवेशंराधयासहितंहरिम् ॥ ४० ॥ इतिनीराजनम् ॥ रक्षरक्षजगन्नाथरक्षत्रैलोक्यनायक ॥ भक्तानुग्रहकर्तात्वंप्रदक्षिणांगृहाणमे ॥ ४१ ॥ इतिप्रदक्षिणाम् ॥ यज्ञेश्वरायदेवायतथायज्ञोद्भवायच ॥ यज्ञानांपतयेनाथगोविंदायनमोनमः ॥ ४२ ॥ इतिमंत्रपुष्पम् ॥ विश्वेश्वरायविश्वायतथाविश्वोद्भवायच ॥ विश्वस्यपतयेतुभ्यंगोविंदायनमोनमः ॥ ४३ ॥ इतिनमस्कारम् ॥ मंत्रहीनेतिमंत्रेणक्षमाप्यपुरुषोत्तमम् ॥ स्वाहांतैर्नाममंत्रैश्चतिलहोमोदिनेदिने ॥ ४४ ॥ दीपःकार्यस्त्वखंडश्चयावन्मासंचसर्पिषा ॥ पुरुषोत्तमस्यप्रीत्यर्थंसर्वार्थफलसिद्धये ॥ ४५ ॥ यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणनमस्कृत्यजनार्दनम् ॥ यदूनंतत्तुसंपूर्णंविधायविचरेत्सुखम् ॥ ४६ ॥ इत्थंश्रीपुरुषोत्तमंनवघनश्यामंसराधंमुदासंप्राप्तेपुरुषो

त्तमेऽवनितलेलब्ध्वाजनुर्मानवम् ॥ भक्त्यायःपरिपूजयेत्प्रतिदिनंकृत्वागुरुंवैष्णवंभुक्त्वाह्यत्रसुखंसमस्तमतुलंपश्चात्सगच्छेत्परम् ॥ ४७ ॥
इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेपुरुषोत्तमपूजनविधिर्नामैकविंशोऽध्यायः॥२१॥
राजोवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तमस्यनियमान्व्रतिनोवदविस्तरात् ॥ किंभोज्यंकिमभोज्यंवावर्ज्यावर्ज्यंतपोधन ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥
एवंसभगवान्पृष्टोभूभृतावाल्मिकोमुनिः ॥ पुंसांनिःश्रेयसार्थायतमाहबहुमानयन् ॥ २ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तममासेयेनियमाः
परिकीर्तिताः ॥ तान्शृणुष्वमयाराजन्कथ्यमानान्समासतः ॥ ३ ॥ हविष्यान्नंचभुंजीतप्रयतःपुरुषोत्तमे ॥ गोधूमाःशालयःसर्वाः
सितामुद्गायवास्तिलाः ॥ ४ ॥ कलायकंगुनीवारावास्तुकंहिलमोचिका ॥ आर्द्रकंकालशाकंचमूलंकंदंचकर्कटी ॥ ५ ॥ रंभासैंधवसामु
द्रेलवणेदधिसर्पिषी ॥ पयोनुद्धृतसारंचपनसाम्रेहरीतकी ॥ ६ ॥ पिप्पलीजीरकंचैवनागरंचैवतिंतिडी ॥ क्रमुकंलवलीधात्रीफलान्यगुडमै
क्षवम् ॥ ७ ॥ अतैलपक्वंमुनयोहविष्यंप्रवदन्तिच ॥ हविष्यभोजनंनृणामुपवाससमंविदुः ॥८॥ सर्वामिषाणिमांसंचक्षौद्रंसौवीरकंतथा ॥
राजमाषादिकंचैवराजिकामादकंतथा ॥ ९ ॥ द्विदलंतिलतैलंचतथान्नंशल्यदूषितम् ॥ भावदुष्टंक्रियादुष्टंशब्ददुष्टंचवर्जयेत् ॥ १० ॥
परान्नंचपरद्रोहंपरदारागमंतथा ॥ तीर्थंविनाप्रयाणंचपरदेशेपरित्यजेत् ॥ ११ ॥ देववेदद्विजानांचगुरुगोव्रतिनांतथा ॥ स्त्रीराजमहतांनिंदां
वर्जयेत्पुरुषोत्तमे ॥ १२ ॥ प्राण्यंगमामिषंचूर्णंफलेजंबीरमामिषम् ॥ धान्येमसूरिकाप्रोक्ताअन्नंपार्युषितंतथा ॥१३॥ अजागोमहिषीदुग्धा
दन्यदुग्धादिचामिषम् ॥ द्विजक्रीतारसाःसर्वेलवणंभूमिजंतथा ॥१४॥ ताम्रपात्रस्थितंगव्यंजलंचर्मणिसंस्थितम् ॥ आत्मार्थंपाचितंचान्नमा

सिपंतद्बुधैःस्मृतम् ॥ १५ ॥ ब्रह्मचर्यमधःशय्यांपत्रावल्यांचभोजनम् ॥ चतुर्थकालेभुक्तिंचप्रकुर्यात्पुरुषोत्तमे ॥ १६ ॥ रजस्वलांत्यजेन्म्ले
च्छपतितैर्व्रात्यकैःसह ॥ द्विजद्विट्वेदबाह्यैश्चनवदेत्पुरुषोत्तमे ॥ १७ ॥ एभिर्दृष्टंचकाकैश्चसूतकान्नंचयद्भवेत् ॥ द्विःपाचितंचदग्धान्नंनैवा
द्यात्पुरुषोत्तमे ॥ १८ ॥ पलांडुंलशुनंमुस्तांछत्राकंगृंजनंतथा ॥ नालिकंमूलकंशिग्रुंवर्जयेत्पुरुषोत्तमे ॥ १९ ॥ एतानिवर्जयेन्नित्यंव्रती
सर्वव्रतेष्वपि ॥ कृच्छ्राद्यंचापिकुर्वीतस्वशक्त्याविष्णुतुष्टये ॥ २० ॥ कूष्मांडंबृहतीचैवतरुणीमूलकंतथा ॥ श्रीफलंचकलिंगंचफलंधात्री
फलंतथा ॥२१॥ नारिकेलमलाबुंचपटोलंबदरीफलम् ॥ चर्मवृंताजिकंवल्लीशाकंतुजलजंतथा ॥२२॥ शाकान्येतानिवर्ज्यानिक्रमात्प्रति
पदादिषु ॥ धात्रीफलंरवौतद्वद्वर्जयेत्सर्वदागृही ॥२३॥ यद्यद्वर्जयेत्किंचित्पुरुषोत्तमतुष्टये ॥ तत्पुनर्ब्राह्मणेदत्त्वाभक्षयेत्सर्वदैवहि ॥२४॥
कुर्यादेतांश्चनियमान्व्रतीकार्तिकमाघयोः ॥ ःनियमेनविनाराजन्फलंनैवाप्नुयाद्व्रती ॥ २५ ॥ उपोषणेनकर्तव्यःशक्तिश्चेत्पुरुषोत्तमः ॥
अथवाघृतपानंचपयःपानमयाचितम् ॥ २६ ॥ फलाहारादिवाकार्यंयथाशक्त्याव्रतार्थिना ॥ व्रतभंगोयथानस्यात्तथाकार्यंविचक्षणैः
॥ २७ ॥ पुण्येह्निप्रातरुत्थायकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥ गृह्णीयान्नियमंभक्त्याश्रीकृष्णंचहृदिस्मरन् ॥ २८ ॥ उपवासस्यनक्तस्य
चैकभुक्तस्यभूपते ॥ एकंचनिश्चयंकृत्वाव्रतमेतत्समाचरेत् ॥२९॥ श्रीमद्भागवतंभक्त्याश्रोतव्यंपुरुषोत्तमे ॥ तत्पुण्यंवचसावक्तुंविधाताऽपिन
शक्नुयात् ॥ ३० ॥ शालिग्रामार्चनंकार्यंमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ तुलसीदललक्षेणतस्यपुण्यमनंतकम् ॥ ३१ ॥ यथोक्तव्रतिनंदृष्ट्वामासे
श्रीपुरुषोत्तमे ॥ यमदूताःपलायंतेसिंहंदृष्ट्वायथागजाः ॥ ३२ ॥ एतन्मासव्रतंराजञ्श्रेष्ठंक्रतुशतादपि ॥ क्रतुंकृत्वाप्नुयात्स्वर्गंगोलोकंपुरुषो

त्तमे ॥ ३३ ॥ पृथिव्यांयानितीर्थानिक्षेत्राणिसर्वदेवताः ॥ तद्देहेतानितिष्ठंतियःकुर्यात्पुरुषोत्तमम् ॥ ३४ ॥ दुःस्वप्नंचैवदारिद्र्यंदुष्कृतंत्रि
विधंचयत् ॥ तत्सर्वंविलयंयातिकृतेश्रीपुरुषोत्तमे ॥३५॥ पुरुषोत्तमसेवायांनिश्चलंहरिसेवकम् ॥ विघ्नाद्रक्ष्यंतिशक्राद्याःपुरुषोत्तमतुष्टये
॥ ३६ ॥ पुरुषोत्तमस्यव्रतिनोयत्रयत्रवसंतिच ॥ भूतप्रेतपिशाचाद्यानतिष्ठन्तितदग्रतः ॥ ३७ ॥ एवंयोविधिनाराजन्कुर्याच्छ्रीपुरुषोत्त
मम् ॥ सहस्रवदनोनालंतत्फलंवक्तुमंजसा ॥ ३८ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ पुरुषोत्तमंप्रियममुंपरमादरेणकुर्यादनन्यमनसापुरु
षोत्तमोयः ॥ पुरुषोत्तमप्रियतमःपुरुषःसभूत्वापुरुषोत्तमेनरमतेरसिकेश्वरेण ॥३९॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीना
रायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेपुरुषोत्तमव्रतनियमकथनंनामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ किंफलंदीपदानस्य
मासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ तन्मेवदमुनिश्रेष्ठकृपयादीनवत्सल ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इत्थंविज्ञापितःप्राहवाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥
प्रवृद्धहर्षोराजानंविनीतंप्रहसन्निव ॥ २ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ शृणुष्वराजशार्दूलकथांपापप्रणाशिनीम् ॥ यांश्रुत्वायातिविलयंपापं
पंचविधंमहत् ॥ ३ ॥ सौभाग्यनगरेराजाचित्रबाहुरितिश्रुतः ॥ सत्यसंधोमहाप्राज्ञश्चासीच्छूरतरःपरः ॥ ४ ॥ सहिष्णुःसर्वधर्मज्ञःशील
रूपदयान्वितः ॥ ब्रह्मण्योभगवद्भक्तःकथाश्रवणतत्परः ॥ ५ ॥ स्वदारनिरतःशश्वत्पशुपुत्रसमन्वितः ॥ चतुरंगबलोपेतःसमृद्ध्याधनदो
पमः ॥ ६ ॥ तस्यभार्याचंद्रकलाचतुःषष्टिकलान्विता ॥ पतिव्रतामहाभागाभगवद्भक्तिसंयुता ॥ ७ ॥ तयासहमहीपालोबुभुजेमेदिनीं
युवा ॥ विनाश्रीकृष्णदेवंसनैवजानातिदैवतम् ॥८॥ एकस्मिन्दिवसेराजाचित्रबाहुर्महीपतिः ॥ दृष्ट्वासमागतंदूरादगस्त्यंमुनिपुंगवम् ॥९॥

प्रणम्यदंडवद्भूमौविधिनातमपूजयत् ॥ कल्पयित्वासनंभक्त्यातस्थौमुनिवराग्रतः ॥ १० ॥ विनयावनतोभूत्वाजगादमुनिसत्त
मम् ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अद्यमेसफलंजन्मह्यद्यमेसफलंदिनम् ॥ ११ ॥ अद्यमेसफलंराज्यमद्यमेसफलंगृहम् ॥ यस्त्वंसमागतोमेद्यगृहे
श्रीकृष्णसेवकः ॥ १२ ॥ मुक्तोहंपापसंघाताद्यत्त्वयाहंनिरीक्षितः ॥ तुभ्यंसमर्पितंराज्यंगजाश्वरथसंयुतम् ॥ १३ ॥ वैष्णवोसिमुनिश्रेष्ठ
नास्त्यदेयंमयातव ॥ मेरुतुल्यंभवेत्स्वल्पंवैष्णवायसमर्पितम् ॥ १४ ॥ कपर्दिकाप्रमाणंतुव्यंजनंवान्नमुत्तमम् ॥ नयच्छतिदिनेय
स्तुवैष्णवायद्विजन्मने ॥ १५ ॥ तद्दिनंविफलंतस्यकथितंवेदपारगैः ॥ विष्णुभक्ताश्चयेकेचित्सर्वेपूज्याद्विजातयः ॥ १६ ॥
तेषांसंभावनाकार्यावाङ्मनःकायकर्मभिः ॥ कथितंममगर्गेणगौतमेनसुमंतुना ॥ १७ ॥ तावत्प्रभाचताराणांयावन्नोदयतेरविः ॥ तावद
न्येद्विजन्मानोयावन्नायातिवैष्णवः ॥ १८ ॥ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ ॥ चित्रबाहोमहाभागधन्यस्त्वंसांप्रतंनृप ॥ इमाधन्याःप्रजाःस
र्वायस्त्वंरक्षसिवैष्णवः ॥ १९ ॥ तस्मिन्राष्ट्रेनवस्तव्यंयस्यराजानवैष्णवः ॥ वरोवासोवनेशून्येनतुराष्ट्रेह्यवैष्णवे ॥ २० ॥ चक्षुर्हीनोयथा
देहःपतिहीनायथाप्रिया ॥ निरक्षरोयथाविप्रस्तथाराष्ट्रमवैष्णवम् ॥ २१ ॥ दर्भहीनायथासंध्यातिलहीनंचतर्पणम् ॥ वृत्त्यर्थंदेवसेवाचत
थाराष्ट्रमवैष्णवम् ॥ २२ ॥ सकेशाविधवायद्वद्व्रतंस्नानविवर्जितम् ॥ शूद्रश्चब्राह्मणीगामीतथाराष्ट्रमवैष्णवम् ॥ २३ ॥ सराजाप्रोच्यतेसद्भि
र्यःश्रीकृष्णपदाश्रयः ॥ तद्राष्ट्रंवर्धतेनित्यंसुखीभवतितत्प्रजा ॥ २४ ॥ दृष्टिर्मेसफलाराजन्यन्मयात्वंनिरीक्षितः ॥ अद्यमेसफलावाणी
ह्युच्यतेयत्त्वयासह ॥ २५ ॥ इदंराज्यंत्वयाराजन्प्रकर्तव्यंममाज्ञया ॥ प्रतिष्ठितोमयाराज्येगमिष्याम्यस्तुस्वस्तिते ॥२६॥ ॥ श्रीना

रायणउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वागंतुकामंतमगस्त्यंमुनिपुंगवम् ॥ ननामपरयाभक्त्यामहिषीसापतिव्रता ॥ २७ ॥ ॥ अगस्त्यउ
वाच ॥ ॥ अवैधव्यंसदातेस्तुभक्त्याभजपतिंशुभे ॥ दृढातेस्तुसदाभक्तिःश्रीगोपीजनवल्लभे ॥ २८ ॥ इत्थमाशीर्ददानंतंभूयःप्राहमही
पतिः ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वाविनयानतकंधरः ॥ २९ ॥ चित्रबाहुरुवाच ॥ ॥ विपुलामेकथंलक्ष्मीःकथंराज्यमकंटकम् ॥ पतिव्रता
कथंपत्नीकिंकृतंसुकृतंमया ॥ ३० ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेंद्रतवाहंशरणंगतः ॥ करस्थामलवत्सर्वंजानासित्वंमुनीश्वर ॥ ३१ ॥ ॥ श्रीनारायणउ
वाच ॥ ॥ इत्थमावेदितोराज्ञाह्यगस्त्योमुनिपुंगवः ॥ समाहितमनाभूत्वाजगादनृपसत्तमम् ॥ ३२ ॥ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ ॥
मयाविलोकितंसर्वंप्राक्तनंचारितंतव ॥ तत्सर्वंकथयाम्यद्यसेतिहासंपुरातनम् ॥ ३३ ॥ चमत्कारपुरेरम्येमणिग्रीवाभिधानभृत् ॥
त्वमभूःशूद्रजातीयोजीवहिंसापरायणः ॥ ३४ ॥ नास्तिकोदुश्चारित्रःपरदारप्रधर्षकः ॥ कृतघ्नोदुर्विनीतश्चशिष्टाचारविवर्जितः ॥ ३५ ॥
याचेयंभवतोभार्यापूर्वजन्मनिसुंदरी ॥ कर्मणामनसावाचापतिसेवापरायणा ॥ ३६ ॥ पतिव्रतामहाभागाधर्मनिष्ठामनस्विनी ॥
भावंनकुरुतेदुष्टंतवोपरिकदाचन ॥ ३७ ॥ ज्ञातिभिस्त्वंपरित्यक्तोबंधुभिःपापकर्मकृत् ॥ राज्ञाक्रुद्धेनतेसर्वंगृहीतंधनमुत्तमम् ॥ ३८ ॥
ततोऽवशिष्टंयत्किंचिद्गृहीतंज्ञातिभिस्तदा ॥ गतेद्रव्येयनाकांक्षातवासीद्विपुलातदा ॥ ३९ ॥ क्षीयमाणेधनेसाध्वीनत्वामत्यजदुन्मनाः ॥
एवंतिरस्कृतःसर्वैर्गतवान्निर्जनंवनम् ॥ ४० ॥ हत्वाजीवाननेकांश्चत्वंचकर्थात्मपोषणम् ॥ एवंवर्तयतस्तस्यपत्न्यासहमहीपते ॥ ४१ ॥
एकदाधनुरुद्यम्यमणिग्रीवोवनंगतः ॥ बहुव्यालमृगाकीर्णंमृगमांसजिघृक्षया ॥ ४२ ॥ तस्मिन्निर्मानुषेऽरण्येमध्येमार्गंमहामुनिः ॥

उग्रदेवइतिख्यातोदिङ्मूढोविह्वलोऽभवत् ॥ ४३ ॥ तृषासंपीडितोत्यर्थंमध्यंदिनगतेरवौ ॥ तत्रैवपतितोराजन्मुमूर्षुरभवत्तदा ॥ ४४ ॥
तंदृष्ट्वातेदयाजातादिग्भ्रष्टंदुःखितंद्विजम् ॥ उत्थाप्यतंद्विजन्मानंगृहीत्वास्वाश्रमंगतः ॥ ४५ ॥ दंपतिभ्यांकृतासेवादुःखितस्य
द्विजन्मनः ॥ उग्रोदेवोमहायोगीमुहूर्तानंतरंतदा ॥ ४६ ॥ अवाप्यचेतनांतत्रविस्मयंसमजीगमत् ॥ तत्रस्थोहंकुतश्चात्रकेनानीतोवनां
तरम् ॥ ४७ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ मणिग्रीवोवदद्विप्रंरमणीयमिदंसरः ॥ अत्रास्तेशीतलंवारिपद्मिनीपुष्पवा
सितम् ॥ ४८ ॥ तत्रस्नात्वाजलेशीतेकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥ कुरुष्वान्नंफलाहारंपिबवारिसुशीतलम् ॥ ४९ ॥ सुखेनकुरुवि
श्रामंमयासंरक्षितोऽधुना ॥ उत्तिष्ठत्वंमुनिश्रेष्ठप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ ५० ॥ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ ॥ लब्धसंज्ञस्तदाविप्रउग्रदेवोगत
श्रमः ॥ मणिग्रीववचःश्रुत्वासमुत्तस्थौतृषातुरः ॥ ५१ ॥ मणिग्रीवभुजालंबीजगामसरसीतटम् ॥ उपविष्टश्चिरंबाहोतत्तटेवटशोभिते
॥ ५२ ॥ विश्रम्यतत्क्षणंविप्रोवटच्छायामधिश्रितः ॥ स्नात्वानित्यविधिंकृत्वावासुदेवमपूजयत् ॥ ५३ ॥ देवान्पितॄंश्चसंतर्प्यपपौनीरंसु
शीतलम् ॥ उग्रदेवस्ततःशीघ्रंवटमूलमुपाश्रितः ॥ ५४ ॥ मणिग्रीवःसपत्नीकोननाममुनिसत्तमम् ॥ विनयेनावदद्वाचमातिथ्यंकर्तुमुन्मु
नाः ॥ ५५ ॥ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ ॥ अस्मत्संतारणायाद्यमदाश्रममुपागतः ॥ ब्रह्मंस्त्वद्दर्शनादेवपापंमेविलयंगतम् ॥ ५६ ॥ इत्यु
क्त्वातंप्रियामाहमणिग्रीवोमुदान्वितः ॥ अयिसुंदरिपक्वानिस्वादूनियानियानिच ॥ ५७ ॥ तानिचूतफलानित्वंशीघ्रमानयमाचिरम् ॥
अन्यत्कंदादियत्किंचित्तदानयशुभानने ॥५८॥ निजनाथवचःश्रुत्वाफलान्यादायसुंदरी ॥ कंदादिकंचविप्राग्रेस्थापयामासहर्षतः ॥५९॥

मणिग्रीवः पुनर्वाक्यमुवाचमुनिसत्तमम् ॥ फलान्यंगीकुरुब्रह्मन्कृतार्थौकुरुदंपती ॥ ६० ॥ ॥ उग्रदेवउवाच ॥ ॥ त्वामहंनैवजाना
मिकस्त्वंभोःकथस्वमे ॥ आज्ञातस्यनभोक्तव्यंब्राह्मणेनविजानता ॥ ६१ ॥ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ ॥ शूद्रोहंद्विजशार्दूलमणिग्रीवाभि
धानतः ॥ स्वजनैर्जातिवर्गैश्चपरित्यक्तःस्वबांधवैः ॥ ६२ ॥ इत्थंशूद्रवचःश्रुत्वाफलाहारमचीकरत् ॥ उग्रदेवःप्रसन्नात्माततोनीरमपीपिब
त् ॥ ६३ ॥ ततोविप्रंसुखासीनंमणिग्रीवोऽवदद्वचः ॥ लालयंस्तत्पदांभोजयुगंस्वांकगतंमुहुः ॥ ६४ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ ॥ क्वगंतव्यं
मुनिश्रेष्ठकुतस्त्वंचेहकानने ॥ निर्जनेनिर्जलेदुष्टेहिंस्रजंतुसमाकुले ॥ ६५ ॥ ॥ उग्रदेवउवाच ॥ ॥ ब्राह्मणोऽहंमहाभागप्रयागंगंतुमुत्स
हे ॥ अधुनाऽज्ञातमार्गेणसंप्राप्तोदारुणेवने ॥ ६६ ॥ तत्रश्रांतस्तृषाक्रांतोमुमूर्षुरभवंक्षणात् ॥ जीवितंमेत्वयादत्तंब्रूहिकिंतेददाम्यम् ॥ ६७ ॥
अरण्यंकेनदुःखेनदंपतिभ्यांसमाश्रितम् ॥ तद्दुःखमपनेष्यामिमणिग्रीववदस्वमे ॥ ६८ ॥ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ ॥ इत्युग्रदेववचनंल
लितंनिशम्यपत्न्याःसमक्षमनुनीयमुनीश्वरंतम् ॥ दारिद्र्यसागरतितीर्षुरसौस्वकीयंवृत्तांतमाहनिजकर्मविपाकमुग्रम् ॥ ६९ ॥ ॥ इति
श्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ ॥ छ ॥ मणिग्री
वउवाच ॥ ॥ चमत्कारपुरेरम्येविद्वज्जनसमाकुले ॥ ममवासोऽभवत्तत्रधर्मपत्न्यासहद्विज ॥ १ ॥ धनाढ्यस्यपवित्रस्यपरोपकृ
तिशालिनः ॥ कदाचिद्दैवयोगेनदुर्बुद्धिःसमपद्यत ॥ २ ॥ निजधर्मपरित्यागःकृतोमेदुष्टबुद्धिना ॥ परस्त्रीसेवनंनित्यमपेयंपीयतेस्मह ॥ ३ ॥
चौर्यहिंसापरश्चाहंपरित्यक्तःस्वबंधुभिः ॥ बृहद्बलेनभूपेनमद्गृहंलुंठितंतदा ॥ ४ ॥ अविशिष्टंचयत्किंचिद्गृहीतंबंधुभिर्धनम् ॥ एवंतिरस्कृतः

सर्वैर्वनवासमचीकरम् ॥ ५ ॥कृत्वाजीववधंनित्यंजीवेयंभार्ययासह ॥ एतस्मिन्विपिनेघोरेवसतोमेदुरात्मनः ॥ ६ ॥ कुरुष्वानुग्रहंब्रह्म
न्पापयुक्तस्यसांप्रतम् ॥ प्राचीनपुण्यपुंजेनसंप्राप्तोगहनेभवान् ॥ ७ ॥ तवाहंशरणंयातःसपत्नीकोमहामुने ॥ उपदेशप्रसादेनकृतार्थीकर्तु
मर्हसि ॥ ८ ॥ येनमेतीव्रदारिद्र्यंविलयंयातितत्क्षणात् ॥ अतुलंवैभवंलब्ध्वाविचरामियथासुखम् ॥ ९ ॥ ॥ उग्रदेवउवाच ॥ ॥ कृता
र्थोसिमहाभागयदातिथ्यंकृतंमम ॥ अतस्तेभाविकल्याणंसपत्नीकस्यसांप्रतम् ॥ १० ॥ विनाव्रतैर्विनातीर्थैर्विनादानैरयत्नतः ॥ दारिद्र्यं
तेलयंयातितथानिर्धारितंमया ॥ ११ ॥ अतःपरंतृतीयोस्तिमासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ भवद्भ्यांतत्रविधिनादंपतिभ्यांप्रयत्नतः ॥ १२ ॥ कर्त
व्यंदीपदानंचपुरुषोत्तमतुष्टये ॥ तेनतेतीव्रदारिद्र्यंसमूलंनाशमेष्यति ॥ १३ ॥ तिलतैलेनकर्तव्यःसर्पिषावैभवेसति ॥ तयोर्मध्येनकिं
चित्तेकाननेवसतोऽधुना ॥ १४ ॥ इंगुदीजेनतैलेनदीपःकार्यस्त्वयानघ ॥ यावन्मासंसनियमंमणिग्रीवःस्त्रियासह ॥१५॥ अस्मिन्सरोवरे
स्नात्वासहपत्न्यानिरंतरम्॥एवमेवहिकर्तव्यंमासमात्रंत्वयावने॥१६॥ अयमेवोपदेशस्तुसपत्नीकायमेकृतः ॥ त्वदातिथ्यप्रसन्नेनमयानिग
मनिश्चितम् ॥१७॥ अन्यथादीपदानंहिरमावृद्धिकरंनृणाम् ॥ विधिनाक्रियमाणंचेत्किंपुनःपुरुषोत्तमे ॥ १८ ॥ वेदोक्तानिचकर्माणिदाना
निविविधानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ १९ ॥ तीर्थानिसकलान्येवशास्त्राणिसकलानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलां
नार्हंतिषोडशीम् ॥२० ॥ योगोज्ञानंतथासांख्यंतंत्राणिसकलान्यपि ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २१ ॥ कृच्छ्र
चांद्रायणादीनिव्रतानिनिखिलानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २२ ॥ वेदाभ्यासोगयाश्राद्धंगोमतीतटसेवनम् ॥

पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २३ ॥ उपरागसहस्राणिव्यतीपातशतानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ॥ २४ ॥ कुर्वादिक्षेत्रवर्याणिदंडकादिवनानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २५ ॥ एतद्गुह्यतमंवत्सनाख्येयंयस्य कस्यचित् ॥ धनधान्यपशुव्रातपुत्रपौत्रयशस्करम् ॥ २६ ॥ वंध्यावंध्यत्वशमनमवैधव्यकरंस्त्रियाः ॥ राज्यदंराज्यभ्रष्टस्यचिंतितार्थकरंनृणाम् ॥ २७ ॥ कन्याविंदेतभर्तारंगुणिनंचिरजीविनम् ॥ कांतार्थीलभतेकांतांसुशीलांचपतिव्रताम् ॥ २८ ॥ विद्यार्थीलभते विद्यांसुसिद्धिंसिद्धिकामुकः ॥ कोशकामोलभेत्कोशंमोक्षार्थीमोक्षमाप्नुयात् ॥२९॥ विनाविधिंविनाशास्त्रंयःकुर्यात्पुरुषोत्तमे ॥ दीपंतुयत्र कुत्रापिकामितंसर्वमाप्नुयात ॥ ३० ॥ किंपुनर्विधिनावत्सदीपंकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ तस्माद्दीपःप्रकर्तव्योमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ३१ ॥ एतदुक्तं मयातेद्यतीव्रदारिद्र्यनाशनम् ॥ स्वस्तितेऽस्तुगमिष्यामिसंतुष्टःसेवयातव ॥ ३२ ॥ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वाविप्रवर्योसौप्रया गःसंजगामह ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंमनसाश्रीहरिंस्मरन् ॥ ३३ ॥ अनुगत्वोग्रदेवंतंकियन्मार्गंनिजाश्रमात् ॥ पुनराजग्मतुर्नत्वादंपतीहृष्ट मानसौ ॥ ३४ ॥ आसाद्यस्वाश्रमंभक्त्यापुरुषोत्तममानसौ ॥ निन्यतुर्मासयुगलंद्विजभक्तिपरायणौ ॥ ३५ ॥ गतेमासद्वयेश्रीमाना गतःपुरुषोत्तमः ॥ तौतस्मिंश्चक्रतुर्दीपंगुरुभक्तिपरायणौ ॥ ३६ ॥ इंगुदीजेनतैलेनवैभवार्थमतंद्रितौ ॥ एवंतयोःकृतवतोर्जगामपुरुषो त्तमः ॥ ३७ ॥ उग्रदेवप्रसादेनविनिर्धूतमनोमलौ ॥ कालस्यवशमापन्नौपुरंदरपुरींगतौ ॥ ३८ ॥ तत्रत्यंभोगमासाद्यपृथिव्यांभारताजिरे ॥ उग्रदेवप्रसादेनवरंजनुरवापतुः ॥ ३९ ॥ वीरबाहुसुतस्त्वंचचित्रबाहुरितिश्रुतः ॥ पूर्वस्मिन्योमणिग्रीवोमृगहिंसापरायणः ॥ ४० ॥ इयं

चंद्रकलानाम्नीमहिषीयाधुनातव ॥ सुंदरीतिसमाख्यातापुनर्जंतुषितेंऽगना ॥ ४१ ॥ पातिव्रत्येनधर्मेणतवाद्यांगार्धहारिणी ॥ पतिव्र
ताहियानारीपतिपुण्यार्धभागिनी ॥ ४२ ॥ कृतेनदीपदानेनमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ इंगुदीजेनतैलेनतवराज्यमकंटकम् ॥ ४३ ॥ किंपुनः
सर्पिषादीपंतिलतैलेनवापुनः ॥ यःकरोतिह्यखंडंवैमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ४४ ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यफलमेतन्नसंशयः ॥ किंपुनश्चोपवा
साद्यैश्वरतःपुरुषोत्तमम् ॥ ४५ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ चित्रबाहुचरितंपुरातनंसन्निरूप्यकलशोद्भवोमुनिः ॥ सत्कृतिंसमधि
गम्यतत्कृतामक्षयाशिषमुदीर्यनिर्ययौ ॥ ४६ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपा
ख्यानेदीपमाहात्म्यकथनंनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ १७ ॥ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ ॥ अथसम्यग्वदब्रह्मन्नुद्यापनविधिंमुने ॥
पुरुषोत्तममासीयव्रतिनांकृपयानृणाम् ॥ १ ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ समासतःप्रवक्ष्यामिमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ उद्यापनविधिंसम्य
ग्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ २ ॥ कृष्णपक्षेचतुर्दश्यांनवम्यांपुरुषोत्तमे ॥ अष्टम्यांवाथकर्तव्यमुद्यापनमुदीरितम् ॥ ३ ॥ यथालब्धोपहारेणमासेश्री
पुरुषोत्तमे ॥ पुण्येस्मिन्प्रातरुत्थायकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥४॥ समाहितमनाभूत्वात्रिंशद्विप्रान्निमंत्रयेत् ॥ सपत्नीकान्सदाचारान्विष्णु
भक्तिपरायणान् ॥५॥ यथाशक्त्याथवासप्तपंचवित्तानुसारतः ॥ ततोमध्याह्नसमयेद्रोणमानेनभूपते ॥ ६ ॥ तदर्धेनतदर्धेननिजभक्त्यनुसा
रतः ॥ पंचधान्येनकुर्वीतसर्वतोभद्रमुत्तमम् ॥ ७ ॥ चत्वारःकलशाःस्थाप्याहैमावाराजताःशुभाः ॥ ताम्रावामृन्मयाःशुद्धाअव्रणामंडलो
परि ॥ ८ ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्व्यूहप्रीतयेश्रीफलान्विताः ॥ सद्वस्त्रवेष्टितानागवल्लीदलसमन्विताः ॥ ९ ॥ वासुदेवंहलधरंप्रद्युम्नंदेवमुत्तमम् ॥

अनिरुद्धंचतुर्थ्वेवस्थापयेत्कलशेषुच ॥१०॥ पुरुषोत्तमंव्रतारंभेस्थापितंपुरुषोत्तमम् ॥ सराधंदेवदेवेशंकलशेनसमन्वितम् ॥ ११ ॥ ततआ
नीयतन्मध्येमंडलोपरिविन्यसेत् ॥ आचार्यंवैष्णवंकृत्वावेदवेदांगपारगम् ॥१२॥ विप्राश्चत्वारएवात्रवरणीयाजपार्थिना ॥ देद्वस्त्रंचदात
व्येहस्तमुद्रादिसंयुते ॥ १३ ॥ आचार्यंसमलंकृत्यवस्त्रभूषादिभिर्मुदा ॥ ततोदेहविशुद्ध्यर्थंप्रायश्चित्तंसमाचरेत् ॥ १४ ॥ ततःपूर्वोक्तविधि
नापूजाकार्यासहस्त्रिया ॥ चतुर्व्यूहजपःकार्योवृतैर्विप्रैश्चतुर्विधैः ॥१५॥ चतुर्दिक्षुप्रकर्तव्यादीपाश्चत्वारउद्धृताः ॥ अर्घ्यदानंततःकार्यंनारिके
लादिभिःक्रमात् ॥ १६ ॥ पंचरत्नसमायुक्तैर्जानुभ्यांसक्तभूतलः ॥ स्वपाणिपुटमध्यस्थैर्यथालब्धैःफलैःशुभैः ॥१७॥ श्रद्धाभक्तिसमायुक्तः
सपत्नोकोमुदान्वितः ॥ अर्घ्यंदद्यात्प्रहृष्टेनमनसाश्रीहरिंस्मरन् ॥ १८ ॥ अर्घ्यमंत्रः ॥ देवदेवनमस्तुभ्यंपुराणपुरुषोत्तम ॥ गृहाणार्घ्यंमया
दत्तंराधयासहितोहरे ॥१९॥ वंदेनवघनश्यामंद्विभुजंमुरलीधरम् ॥ पीतांबरधरंदेवंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥२०॥ एवंभक्त्याहरिंनत्वासराधंपुरु
षोत्तमम् ॥ चतुर्थ्यंतैर्नाममंत्रैस्तिलहोमंचकारयेत् ॥ २१ ॥ ततस्तदंतेतन्मंत्रैःकार्यंतर्पणमार्जने ॥ नीराजयेत्ततोदेवंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥
॥२२॥ अथनीराजनमंत्रः ॥ नीराजयामिदेवेशमिंदीवरदलच्छविम् ॥ राधिकारमणंप्रेम्णाकोटिकंदर्पसुन्दरम् ॥ २३ ॥ अथध्यानम् ॥
अंतर्ज्योतिरनंतरत्नरचितेसिंहासनेसंस्थितंवंशीनादविमोहितव्रजवधूवृंदावनेसुन्दरम् ॥ ध्यायेद्राधिकयासकौस्तुभमणिप्रद्योतितोरस्थलंरा
जद्रत्नकिरीटकुण्डलधरंप्रत्यग्रपीतांबरम् ॥ २४ ॥ ततःपुष्पांजलिंदत्त्वाराधिकासहितेहरौ ॥ नमस्कारंप्रकुर्वीतसाष्टांगंगृहिणीयुतः ॥
॥ २५ ॥ नौमिनवघनश्यामंपीतवाससमच्युतम् ॥ श्रीवत्सभासितोरस्कंराधिकासहितंहरिम् ॥ २६ ॥ पूर्णपात्रंततोदद्याद्ब्राह्मणेसहिरण्य

कम् ॥ आचार्यायततोदद्याद्दक्षिणांविपुलांमुदा ॥ २७ ॥ आचार्यंतोषयेद्भक्त्यावस्त्रैराभरणैरपि ॥ सपत्नीकंततोदद्याद्दत्विग्भ्योदक्षिणां
पराम् ॥ २८ ॥ धेनुरेकाप्रदातव्यासुशीलाचपयस्विनी ॥ सचैलाचसवत्साचघंटाभरणभूषिता ॥ २९ ॥ ताम्रपृष्ठीहेमशृंगीसरौप्य
खुरभूषिता ॥ घृतपात्रंततोदद्यात्तिलपात्रंतथैवच ॥ ३० ॥ उमामहेश्वरंदद्याद्दंपत्योःपरिधायकम् ॥ पदमष्टविधंदद्यादुपानद्युगलंतथा
॥ ३१ ॥ श्रीमद्भागवतंदद्याद्वैष्णवायद्विजन्मने ॥ शक्तिश्चेन्नविलंबेतचलमायुर्विचारयन् ॥ ३२ ॥ श्रीमद्भागवतंसाक्षाद्भगवद्रूपमद्भुतम् ॥
योदद्याद्वैष्णवायैवपंडितायद्विजन्मने ॥ ३३ ॥ सकोटिकुलमुद्धृत्यह्यप्सरोगणसेवितः ॥ विमानमधिरुह्यैतिगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥ ३४ ॥
कन्यादानसहस्राणिवाजपेयशतानिच ॥ सधान्यक्षेत्रदानानितुलादानानियानिच ॥ ३५ ॥ महादानानियान्यष्टौछंदोदानानियानिच ॥
श्रीभागवतदानस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ३६ ॥ तस्माद्यत्नेनतद्देयंवैष्णवायद्विजन्मने ॥ संभूष्यवस्त्रभूषाभिर्हैमसिंहासनस्थितम् ॥
॥ ३७ ॥ कांस्यानिसंपुटान्येवत्रिंशद्देयानिसर्वथा ॥ त्रिंशत्त्रिंशदपूपैश्चमध्येसंपूरितानिच ॥ ३८ ॥ प्रत्यपूपंतुयावंतिछिद्राणिपृथिवीपते ॥
तावद्वर्षसहस्राणिवैकुंठेवसतेनरः ॥ ३९ ॥ ततःप्रयातिगोलोकंनिर्गुणंयोगिदुर्लभम् ॥ यद्गत्वाननिवर्ततेज्योतिर्धामसनातनम् ॥ ४० ॥
सार्द्धप्रस्थद्वयंकांस्यसंपुटंपरिकीर्तितम् ॥ निर्धनेनयथाशक्त्याकार्याणिव्रतपूर्तये ॥ ४१ ॥ अथवापूपसामग्रीमपक्वांसफलांपराम् ॥ तत्राधाय
प्रदेयानिपुरुषोत्तमप्रीतये ॥ ४२ ॥ निमंत्रितानांविप्राणांसस्त्रीकाणांनराधिप ॥ संकल्पंचप्रकुर्वीतपुरुषोत्तमसन्निधौ ॥ ४३ ॥ ॥ अथ
प्रार्थना ॥ ॥ श्रीकृष्णजगदाधारजगदानंददायक ॥ ऐहिकामुष्मिकान्कामान्निखिलान्पूरयाशु मे ॥ ४४ ॥ इतिसंप्रार्थ्यगोविंदंभोज

येद्ब्राह्मणान्मुदा ॥ सपत्नीकान्सदाचारान्संस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ ४५ ॥ संपूज्यविधिवद्भक्त्याभोजयेद्घृतपायसैः ॥ विप्ररूपंहरिंस्मृत्व
स्त्रीरूपांराधिकांस्मरन् ॥ ४६ ॥ भोजनस्यतुसंकल्पमाचरेद्विधिनाव्रती ॥ द्राक्षाभिःकदलीभिश्चचूतैश्चविविधैरपि ॥ ४७ ॥ घृतपाचित
पक्वान्नैःशुभैश्चमाषकैर्वटैः ॥ शर्कराघृतपूरैश्चफाणितैःखंडमंडकैः ॥ ४८ ॥ उर्वारुकर्कटीशाकैरार्द्रकैश्चसुनिंबुकै ॥ अन्यैश्चविविधैःशाकै
राम्रैःपक्वैःपृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥ चतुर्धाभोजनैरेवषड्रसैःसहसंगतैः ॥ वासितान्गोरसांस्तत्रपरिवेष्यमृदुब्रुवन् ॥ ५० ॥ इदंस्वादुमुदाभो
ज्यंभवदर्थेप्रकल्पितम् ॥ याच्यतांरोचतेब्रह्मन्यन्मयापाचितंप्रभो ॥ ५१ ॥ धन्योस्म्यनुगृहीतोस्मिजातंमेजन्मसार्थकम् ॥ भोजयित्वामु
दाविप्रान्देयास्तांबूलदक्षिणाः ॥ ५२ ॥ एलालवंगकर्पूरनागवल्लीदलानिच ॥ कस्तूरीमुरमांसीचचूर्णंचखदिरंशुभम् ॥५३॥ एतैश्चमीलि
तैर्देयंतांबूलंभगवत्प्रियम् ॥ तस्मादेवंविधायैवदेयंतांबूलमादरात् ॥ ५४ ॥ तांबूलंयोद्विजाग्र्यायएवंकृत्वाप्रयच्छति ॥ सुभगश्चभवेदत्रपरत्रा
मृतभुग्भवेत् ॥ ५५ ॥ परितोष्यसपत्नीकान्यस्तेदद्याच्चमोदकान् ॥ पत्नीभ्योवैणवीर्दद्यादलंकृत्यविधानतः ॥ ५६ ॥ आसीमांतमनुव्रज्य
ब्राह्मणांस्तान्विसर्जयेत ॥ मंत्रहीनेतिमंत्रेणक्षमाप्यपुरुषोत्तमम् ॥ ५७ ॥ यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणनमस्कृत्यजनार्दनम् ॥ यदूनंतत्तुसंपूर्णं
विधायविचरेत्सुखम् ॥ ५८ ॥ अन्नंविभज्यभूतेभ्योयथाभागमकुत्सयन् ॥ भुंजीतस्वजनैःसार्धंमिथ्यावादविवार्जितः ॥ ५९ ॥ दर्शस्यदि
वसेप्राप्तेकुर्याज्जागरणंनिशि ॥ राधिकासहितंहैमंपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ६० ॥ पूजांतेचनमस्कृत्यसपत्नीकोमुदान्वितः ॥ व्रतीविसर्जये
द्देवंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥ ६१ ॥आचार्यायततोदद्यादुपहारंसमूर्तिकम् ॥ अन्नदानंयथायोग्यंदद्यादिच्छानुसारतः ॥ ६२ ॥ येनकेनाप्यु

पायेनव्रतमेतत्समाचरेत् ॥ कुर्याच्चपरयाभक्त्यादानंवित्तानुसारतः ॥ ६३ ॥ नारीवाथनरोवापिव्रतमेतत्समाचरेत् ॥ दुःखदारिद्र्यदौर्भा
ग्यंनाप्नुयाज्जन्मजन्मनि ॥ ६४ ॥ येकुर्वंतिजनाल्लोकेनानापूर्णमनोरथाः ॥ विमानान्यधिरुह्यैवयांतिवैकुंठमुत्तमम् ॥ ६५ ॥ ॥ श्रीना
रायणउवाच ॥ ॥ इत्थंयोविधिमवलंब्यचर्करीतिश्रीकृष्णप्रियतममासमादरेण ॥ गोलोकंव्रजतिविधूयपापराशिंचात्रत्यंसुखमनुभूयपूर्व
पुंभिः ॥ ६६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेव्रतोद्यापनविधिकथनंनामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥
अथोद्यापनानंतरंव्रतनियममोक्षणमुच्यते ॥ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ॥ अशेषपापनाशार्थंप्रीतयेगरुडध्वजे ॥ गृहीतनियमत्यागश्चोच्यतेवि
धिपूर्वकः॥१॥ नक्तभोजीनरोराजन्ब्राह्मणान्भोजयेदथ ॥ अयाचितेव्रतेचैवस्वर्णदानंसमाचरेत् ॥२॥ अमावास्याशनोयस्तुप्रदद्याद्गांसदक्षि
णाम् ॥ धात्रीस्नानंनरोयस्तुदधिवाक्षीरमेवच ॥३॥ फलानांनियमेराजन्फलदानंसमाचरेत् ॥ तैलस्थानेघृतंदेयंघृतस्थानेपयस्तथा ॥४॥
धान्यानांनियमेराजन्गोधूमान्शालितंडुलान् ॥ भूमौचशयनेराजन्सतूलींसपरिच्छदाम् ॥५॥ सुखदांचात्मनोन्यस्यह्यंतर्यामीप्रियोजनः ॥
पत्रभोजीनरोयस्तुभोजनंघृतशर्कराम् ॥ ६ ॥ मौनेघंटांतिलांश्चैवसहिरण्यान्प्रदापयेत् ॥ दंपत्योर्भोजनंचैवसस्नेहंचसुशोभनम् ॥ ७ ॥
नखकेशधरोराजन्नादर्शंदापयेद्बुधः ॥ उपानहौप्रदातव्येउपानहविवर्जनात् ॥ ८ ॥ लवणस्यपरित्यागेदातव्याविविधारसाः ॥ दीपदानेन
रोदद्यात्पात्रयुक्तंचदीपकम् ॥ ९ ॥ अधिमासेनरोभक्त्यासवैकुंठेवसेत्सदा ॥ दीपंचसघृतंताम्रंकांचनीवर्तिसंयुतम् ॥ १० ॥ पलमात्रंप्रदे
यंस्याद्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ एकांतरोपवासेनकुंभानष्टौप्रदापयेत् ॥ ११ ॥ सवस्त्रान्कांचनोपेतान्मृन्मयानथकांचनान् ॥ मासांतेमोदकांस्त्रि

शच्छत्रोपानहसंयुतान् ॥ १२ ॥ अनड्वांश्चप्रदातव्योधौरेयस्तुधुरिक्षमः ॥ सर्वेषामप्यलाभेचयथोक्तकरणंविना ॥ १३ ॥ द्विजवाक्यंस्मृतं
राजन्संपूर्णव्रतसिद्धिदम् ॥ एकान्नेननरोयस्तुमलमासंनिषेवते ॥१४॥ चतुर्भुजोनरोभूत्वासयातिपरमांगतिम् ॥ एकान्नान्नापरांकिंचित्प
वित्रमिहविद्यते ॥ १५ ॥ एकान्नान्मुनयःसिद्धाःपरंनिर्वाणमागताः ॥ अधिमासेनरोनक्तंयोभुंक्तेसनराधिपः ॥१६॥ सर्वान्कामानवाप्नोति
नरोवैनात्रसंशयः ॥ पूर्वाह्णेभुंजतेदेवामध्याह्नेमुनयस्तथा ॥ १७ ॥ अपराह्णेपितृगणाःस्वात्मार्थस्तुचतुर्थकः ॥ सर्ववेलामतिक्रम्ययस्तुभुं
क्तेनराधिप ॥ १८ ॥ ब्रह्महत्यादिपापानिनाशंयांतिजनाधिप ॥ नक्तभोजीमहीपालसर्वपुण्याधिकोभवेत् ॥ १९ ॥ दिनेदिनेऽश्वमेधस्यफ
लंप्राप्नोतिमानवः ॥ तस्मिन्विवर्जयेन्माषमधिमासेहरिप्रिये ॥ २० ॥ सर्वस्मान्मुच्यतेपापाद्विष्णुलोकंसगच्छति ॥ तिलयंत्राणिपापा
त्माकुरुतेब्राह्मणोपिसन् ॥ २१ ॥ तिलानांसंख्ययाराजन्सवैतिष्ठतिरौरवे ॥ चांडालयोनिमाप्नोतिकुष्ठरोगेणपीड्यते ॥ २२ ॥
शुक्लेकृष्णेनरोभक्त्याद्वादशींसमुपोषयेत् ॥ आरुह्यगरुडंयातिनरोभूत्वाचतुर्भुजः ॥२३॥ सदेवैःपूज्यमानोपिह्यप्सरोगणसेवितः ॥ दशमीं
द्वादशींचैवएकभुक्तंचकारयेत् ॥ २४ ॥ प्रीतयेदेवदेवस्यनरःस्वर्गमवाप्नुयात् ॥ भक्त्याचसर्वदाराजन्दर्भकूर्चंनवर्जयेत् ॥२५॥ दर्भेणमार्जये
द्वस्तुपुरीषमूत्रमेवच ॥ श्लेष्माणंरुधिरंवापिविष्ठायांजायतेकृमिः ॥२६॥ पवित्राःपरमादर्भादर्भहीनावृथाक्रियाः ॥ दर्भमूलेवसेद्ब्रह्मामध्येदेवो
जनार्दनः ॥ २७ ॥ दर्भाग्रेतुह्युमानाथस्तस्माद्दर्भेणमार्जयेत् ॥ नदर्भानुद्धरेच्छूद्रोनपिबेत्कपिलापयः ॥ २८ ॥ मध्यपत्रेनभुंजीतब्रह्म
पत्रस्यभूपते ॥ नोच्चरेत्प्रणवंमंत्रंपुरोडाशंनभक्षयेत् ॥ २९ ॥ नासनंनोपवीतंचनाचरेद्वैदिकींक्रियाम् ॥ निर्विंध्याचरणंकुर्वन्पितृभिः

सहमज्जति ॥ ३० ॥ पतंतिनरकेघोरेयावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ पश्चाच्चकौकुटींयोनिंसौकरींवानरींचवा ॥ ३१ ॥ एतस्मात्कारणाच्छूद्रःप्रणवं वर्जयेत्सदा ॥ नमस्कारेणविप्राणांशूद्रोनश्यतिभूमिप ॥ ३२ ॥ एतत्कृत्वामहाराजपरिपूर्णंव्रतंचरेत् ॥ अदत्त्वादक्षिणांवापिनरकंयांतिवै नराः ॥ ३३ ॥ व्रतवैकल्यमासाद्यह्यंधःकुष्टीप्रजायते ॥ ३४ ॥ धरामराणांवचनैर्नरोत्तमादिवौकसांवैपदमाप्नुवंति ॥ नोल्लंघयेद्भूपवचांसि तेषांश्रेयोभिकामीमनुजःसविद्वान् ॥ ३५ ॥ इदंमयाधर्मरहस्यमुत्तमंश्रेयस्करंपापविमर्दनंच ॥ फलप्रदंमाधवतुष्टिहेतोःपठेच्चनित्यंमनसो भिरामम् ॥ ३६ ॥ यःशृणोतिनरोराजन्पठतेवापिसर्वदा ॥ सयातिपरमंलोकंयत्रयोगीश्वरोहरिः ॥ ३७ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुरा णेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेगृहीतनियमत्यागोनामषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥ ॥ छ ॥ ॥ श्रीनारायणउ वाच ॥ इत्युक्काविरतंराजामुनीश्वरमनीनमत् ॥ अपूजयत्ततोभक्त्यासपत्नीकोमुदान्वितः ॥ १ ॥ उररीकृत्यतत्पूजामाशीर्वादमुदीर यत् ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिसरयूंपापनाशिनीम् ॥ २ ॥ आवयोर्वदतोरेवंसायंकालोऽधुनाभवत् ॥ इत्युक्काशुजगामैववाल्मीकिर्मुनि सत्तमः ॥ ३ ॥ आसीमांतमनुव्रज्यराजाप्यागतवान्गृहम् ॥ आगत्यस्वप्रियामाहसुंदरींगुणसुंदरीम् ॥ ४ ॥ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ ॥ अयिसुन्दरिसंसारेह्यसारेकिंसुखंनृणाम् ॥ रागद्वेषादिषट्शत्रौगंधर्वनगरोपमे ॥ ५ ॥ कृमिविड्भस्मसंज्ञांतेदेहेमेकिंप्रयोजनम् ॥ वातपि त्तकफोद्रेकमलमूत्रासृगाकुले ॥ ६ ॥ अध्रुवेणशरीरेणध्रुवमर्जयितुंवने ॥ गमिष्यामिवरारोहेसंस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ ७ ॥ तदाकर्ण्यप्रिया प्राहसाध्वीसागुणसुंदरी ॥ विनयावनताभूत्वाबद्धांजलिपुटाशुचा ॥ ८ ॥ गुणसुंदर्युवाच ॥ ॥ अहमप्यागमिष्यामित्वयैवसहभूपते ॥

पतिव्रतानांस्त्रीणांतुपतिरेवहिदैवतम् ॥ ९ ॥ पत्यौगतेतुयानारीगृहेतिष्ठतिसौनवे ॥ स्नुषाधीनातुसानारीशुनीवपरवेश्मनि ॥ १० ॥
मितंपिताददात्येवमितंभ्राताभितंसुतः ॥ अमितस्यप्रदातारंभर्तारंकानुनव्रजेत् ॥ ११ ॥ प्रियावाक्यमुरीकृत्यसुतंराज्येभिषिच्यच ॥
सहपत्न्याययौशीघ्रमरण्यंमुनिसेवितम् ॥ १२ ॥ हिमाचलसमीपेचगंगामासाद्यदंपती ॥ त्रिकालंचक्रतुःस्नानंसंप्राप्तेपुरुषोत्तमे ॥ १३ ॥
पुरुषोत्तमंसमासाद्यविधिनातत्रनारद ॥ तपस्तेपेसपत्नीकःसंस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ १४ ॥ ऊर्ध्वबाहुर्निरालंबःपादांगुष्ठेनसंस्थितः ॥
नभोदृष्टिर्निराहारःश्रीकृष्णंतमजीजपत् ॥ १५ ॥ एवंव्रतविधौतस्यतस्थुषश्चतपोनिधेः ॥ सेवाविधौप्रपन्नासीन्महिषीसापतिव्रता ॥
॥ १६ ॥ एवंकृतवतस्तस्यसंपूर्णेपुरुषोत्तमे ॥ विमानमागमत्तत्रकिंकिणीजालमंडितम् ॥ १७ ॥ पुण्यशीलसुशीलाभ्यांसेवितंसहसा
गतम् ॥ तदृष्ट्वाविस्मयाविष्टःसपत्नीकोमहीपतिः ॥ १८ ॥ अनीनमद्विमानस्थौपुण्यशीलसुशीलकौ ॥ ततस्तौतंसपत्नीकंविमानंनि
न्यतुर्नृपम् ॥ १९ ॥ विमानमधिरुह्याथसपत्नीकोनराधिपः ॥ गोलोकंगतवाञ्शीघ्रंदिव्यंधृत्वावपुर्नवम् ॥ २० ॥ एवंकृत्वातपोराजामा
सेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ निर्भयंलोकमासाद्यमुमोदहरिसन्निधौ ॥ २१ ॥ पतिव्रताचतत्पत्नीसापितल्लोकमाययौ ॥ पुरुषोत्तमेतपस्यंतंसंसेव्य
निजवल्लभम् ॥ २२ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ वर्णयामिकिमद्याहंयदेकरसनामम ॥ पुरुषोत्तमसमंकिंचिन्नास्तिनारदभूतले ॥
॥ २३ ॥ सहस्रजन्मतप्तेनतपसातन्नगम्यते ॥ यत्फलंगम्यतेपुंभिःपुरुषोत्तमसेवनात् ॥ २४ ॥ व्याजतोपिकृतेतस्मिन्मासेश्रीपुरुषो
त्तमे ॥ उपवासेनदानेनस्नानेनचजपादिना ॥ २५ ॥ कोटिजन्मकृतानेकपापराशिर्लयंव्रजेत् ॥ यथाशाखामृगस्याशुत्रिरात्रस्नान

मात्रतः ॥ २६ ॥ अजानतोपिदुष्टस्यप्राक्तनानांकुकर्मणाम् ॥ संचयोविलयंयातोमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ २७ ॥ सोपिदिव्यंवपुर्धृत्वावि
मानमधिरुह्यच ॥ अगमद्दिव्यगोलोकंजरामृत्युविवर्जितम् ॥ २८ ॥ अतःश्रेष्ठतमोमासःसर्वेभ्यःपुरुषोत्तमः ॥ दुष्टंशाखामृगंयोसौव्या
जेनापिहरिंनयत् ॥ २९ ॥ अहोमूढानसेवंतेमासंश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ तेधन्याःकृतकृत्यास्तेतेषांचसफलोभवः ॥ ३० ॥ पुरुषोत्तममासं
येसेवंतेविधिपूर्वकम् ॥ स्नानदानजपैर्होमैरुपोषणपुरःसरैः ॥ ३१ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ सर्वार्थसाधनंवेदेमानुषंजनुरुच्यते ॥ अयं
शाखामृगोप्यद्धामुक्तोयद्व्याजसेवनात् ॥ ३२ ॥ तद्वदस्वकथामेतांसर्वलोकहितायमे ॥ कुत्रासौकृतवान्स्नानंत्रिरात्रंतपसांनिधे ॥ ३३ ॥
कोसौकपिःकिमाहारःकुत्रजातःक्वचावसत् ॥ व्याजेनतस्यकिंपुण्यंजातंश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ३४ ॥ तत्सर्वंविस्तरेणैवमह्यंशुश्रूषवेवद ॥ नतृप्ति
र्जायतेत्वत्तः शृण्वतोमेकथामृतम् ॥ ३५ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ कश्चित्केरलदेशीयोद्विजःपरमलोलुपः ॥ नित्यंधनचयेदक्षः
सर्वेवधनप्रियः ॥३६॥ लोकेकदर्यइत्याख्यांगतस्तेनैवकर्मणा ॥ चित्रशर्मापुरानामतस्यासीत्पितृकल्पितम् ॥३७॥ सदन्नंचसुवस्त्रंचनभुक्तं
तेनकुत्रचित् ॥ नस्वाहानस्वधावापिकृतातेनकुबुद्धिना ॥ ३८ ॥ यशोर्थेनकृतंकिंचित्पोष्यवर्गोनपोषितः ॥ सर्वंभूमिगतंचक्रेधनम
न्यायसंचितम् ॥ ३९ ॥ नमाघेतिलदानंचकृतंतेनकदाचन ॥ कार्तिकेदीपदानंहिब्राह्मणानांचभोजनम् ॥ ४० ॥ वैशाखेधान्य
दानंचव्यतीपातेचकांचनम् ॥ वैधृतौराजतंदानंसर्वदानान्यमूनिच ॥४१॥ रविसंक्रमणेकालेनदत्तानिकदाचन ॥ चंद्रसूर्योपरागेचनजप्तंन
हुतंक्वचित् ॥ ४२ ॥ अवीवददीनवाचंसर्वत्राश्रुपपरिप्लुतः ॥ वर्षवातातपक्लिष्टःकृशःश्यामकलेवरः ॥ ४३ ॥ चचारधनलोभेनमूढधीर्भूतले

सदा ॥ कोपियच्छतुयत्किंचित्पामरायमुहुर्वदन् ॥ ४४ ॥ सगोदोहनमात्रंहिकुत्रापिस्थातुमक्षमः ॥ लोकधिक्कारसंदग्धोबभ्रामोद्विग्नमान
सः ॥ ४५ ॥ तन्मित्रंवाटिकानाथःकश्चिदासीद्वनेचरः ॥ सतंनिवेदयामासस्वदुःखंसंरुदन्मुहुः ॥ ४६ ॥ तिरस्कुर्वंतिमांनित्यंपुटभेदनवा
सिनः ॥ अतस्तत्रमयास्थातुंनशक्यंपुटभेदने ॥ ४७ ॥ इत्येवंवदतस्तस्यकदर्यस्यद्विजन्मनः ॥ अतिदीनतरांवाचमाकर्ण्यकृपयाप्लुतः
॥ ४८ ॥ मालाकारःप्रपन्नंतंदीनंमत्वाकरोद्दयाम् ॥ हेकदर्यत्वमत्रैववाटिकायांवसाधुना ॥ ४९ ॥ मालाकारवचःश्रुत्वाकदर्यःसर्वनागरैः॥
तिरस्कृतःसतद्वाटीमध्युवासमुदायुतः ॥ ५० ॥ नित्यंतन्निकटस्थायीतदाज्ञापपरिपालकः ॥ तेनवाटीपतिस्तस्मिन्विश्वासमकरोद्दृढम् ॥
॥ ५१ ॥ अतिविश्वस्तचित्तेतुतस्मिन्सवाटिकापतिः ॥ तमेवाचीकरद्विप्रंस्वकल्पंवाटिकापतिम् ॥ ५२ ॥ ततःसर्वात्मभावेनममायमिति
निश्चयात् ॥ विहायवाटिकाचिंतांसिषेवेराजमंदिरम् ॥ ५३ ॥ राजद्वारेसदाकार्यंतस्यात्यंतमभीभवत् ॥ पराधीनतयाचासौवाटिकांनज
गामह ॥ ५४ ॥ तत्फलानिकदर्यस्तुजघासनिर्भरंमुदा ॥ अक्षीणतावशिष्टानिलोभेनातीवदुर्बलः ॥ ५५ ॥ अगृह्णाद्द्रविणंतज्जंसर्वंस्वय
मशंकितः ॥ यदापृच्छद्वनाधीशस्तदग्रेवीवदन्मुधा ॥ ५६ ॥ ग्रामंग्रामंचनगरंयाचंयाचंचभैक्षकम् ॥ घासंघासंदिवारात्रौपरिचर्यामितेव
नम् ॥ ५७ ॥ तथाप्यस्यफलान्याशन्मासंगच्छंतिपक्षिणः ॥ पश्याश्वंतोमयाकेचिन्नाशिताःखचराभृशम् ॥ ५८ ॥ तेषांमांसानिपक्षा
णिपतितानीहसर्वतः ॥ तद्दृष्ट्वातीवविश्वस्यजगामवाटिकापतिः ॥ ५९ ॥ एवंप्रवर्तमानस्यजग्मुर्वर्षाणिदुर्मतेः ॥ सप्ताशीतिःकदर्यस्यजरा
जर्जरितस्ततः ॥ ६० ॥ ममारमूढधीस्तत्रनैवापन्नह्लिदारुणां ॥ नाभुक्तंक्षीयतेपापमितिवेदविदोवदन् ॥ ६१ ॥ तस्माद्धाहाप्रकुर्वाणोमुद्गरा

घातपीडितः ॥ अजीगमन्महामार्गंकृच्छ्रेणातिविभीषणम् ॥ ६२ ॥ स्मरन्पूर्वंकृतंकर्मप्रलपन्बुद्बुदाक्षरम् ॥ अहोमेपश्यताज्ञानंकदर्यस्यच दुर्मतेः ॥ ६३ ॥ आसाद्यमानुषंदेहंदुर्लभंत्रिदशैरपि ॥ खंडेस्मिन्भारतेपुण्येकृष्णसारमृगान्विते ॥ ६४ ॥ किंकृतंधनलोभेनव्यर्थं नीतंजनुर्मया ॥ तद्धनंतुपराधीनंचिरकालार्जितंमया ॥ ६५ ॥ किंकरोमिपराधीनःकालपाशावृतोधुना ॥ मानुषंजनुरासाद्यनाकिंचि त्कृतवाञ्शुभम् ॥ ६६ ॥ नदत्तंनहुतंवह्नौनतप्तंहिमगह्वरे ॥ नगांगसेवितंतोयंमाघेमकरगेरवौ ॥ ६७ ॥ उपवासत्रयंचांतेनकृतं पुरुषोत्तमे ॥ नकृतंकार्तिकेप्रातःस्नानंसत्तारकागणम् ॥ ६८ ॥ नपुष्टश्चमयादेहोमानुषःपुरुषार्थदः ॥ अहोमेसंचितंद्रव्यंस्थितं भूमौनिरर्थकम् ॥ ६९ ॥ जीवोजीवनपर्यंतंक्लेशितोदुष्टबुद्धिना ॥ कदाचिज्जाठरोवह्निर्नान्नैर्निर्वापितोमया ॥ ७० ॥ नापिसद्रसनाच्छ न्नःस्वदेहःपर्वणिक्वचित् ॥ नज्ञातयोबांधवाश्चस्वजनाःस्वसृजाअपि ॥ ७१ ॥ जामाताचसुतावापिपितामातानुजास्तथा ॥ पतिव्रतापि गृहिणीब्राह्मणानैवतोषिताः ॥ ७२ ॥ मिष्टान्नैरेकवारंचतर्पितानमयाक्वचित् ॥ एवंविलपमानंतंनिन्युःकीनाशसन्निधिम् ॥ ॥ ७३ ॥ तंदृष्ट्वाचित्रगुप्तस्तुविलोक्यैतच्छुभाशुभम् ॥ अवोचत्स्वामिनंधर्मंकदर्योयंद्विजाधमः ॥ ७४ ॥ नकिंचित्सुकृतंत्वस्य धनलुब्धस्यदुर्मतेः ॥ आसावचीकरत्पापंपुष्कलंवाटिकास्थितः ॥ ७५ ॥ अचूचुरत्फलान्यद्धाविश्वतोवाटिकापतेः ॥ ततोजघासतान्ये वपक्वानियानियानिच ॥ ७६ ॥ अक्रीणादवशिष्टानिधनलोभेनदुर्मतिः ॥ फलचौर्यकृतंपापंविश्वासघातजंपरम् ॥ ७७ ॥ एतत्पाप द्वयंचास्मिन्नत्युग्रंवर्ततेप्रभो ॥ अन्यान्यपिचपापानिसंत्यस्मिन्विविधानिच ॥ ७८ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ इत्थंनिशम्यविधिनंदनचित्र

गुप्तवाक्यंकुधाप्रबलयाप्लुतधर्मराजः ॥ आहैषयातुकपिजन्मसहस्रकृत्वोविश्वासघातकृतिजंफलमस्यपश्चात् ॥ ७९ ॥ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकदर्योपाख्यानेसप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ तन्निशम्यभटानाहचित्रगुप्तश्चिरंभृशम् ॥ पूर्वंलोभाभिभूतोयंपश्चाच्चौर्यमचीकरत् ॥ १ ॥ अतःप्रेतत्वमासाद्यपश्चाद्भवतुवानरः ॥ ततश्चाहंप्रदास्यामिबह्वीर्नरकयातनाम् ॥ २ ॥ अयमेवक्रमःश्रेयान्धर्मराजगृहेभटाः ॥ इत्येवंचित्रगुप्तेनसमादिष्टाविभीषणाः ॥ ३ ॥ तथाचक्रुर्भटाःशीघ्रंताडयंतश्चतंद्विजम् ॥ प्रेतत्वंप्रापितःपूर्वंकाननेविफलेद्विजः ॥ ४ ॥ निर्जलेबहुकालंचप्रेतयोनिमवाप्यसः ॥ क्षुत्तृड्भ्यांव्याकुलोत्यंतंबभ्रामगहनेवने ॥ ५ ॥ प्रेतयोनिगतंदुःखमनुभूयततःपरम् ॥ फलचौर्यसमुद्भूतांकपियोनिमजीगमत् ॥ ६ ॥ दिव्येकालंजरेशैलेजंबुखंडमनोहरे ॥ सुशीतलजलच्छायेफलपुष्पसमन्विते ॥ ७ ॥ तत्रासीद्देवराजेननिर्मितंकुंडमुत्तमम् ॥ सरोवरसमंपुण्यंसत्सेव्यंपापनाशनम् ॥ ८ ॥ मृगतीर्थमितिख्यातंसुराणामपिदुर्लभम् ॥ यस्मिन्कृतेनश्राद्धेनपितरोयांतिसद्गतिम् ॥ ९ ॥ तत्रदैत्यभयाद्देवामृगाभूत्वानिरंतरम् ॥ अभिसस्नुर्निरातंकामृगतीर्थमतोविदुः ॥ १० ॥ तत्रायंप्रथमंजन्मकापेयंलब्धवान्द्विजः ॥ फलचौर्यकृतात्पपादासाद्यमानुषींतनुम् ॥ ११ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ त्रैलोक्यपावनेरम्येमृगतीर्थेकथंकपिः ॥ आवासमकरोद्दुष्टःपापकोटिसमन्वितः ॥ १२ ॥ छिंधिमेसंशयंनाथतपोधनमनोगतम् ॥ भवादृशांनगोप्यंहिस्वशिष्येषुकदाचन ॥ १३ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एवंसन्नोदितोविप्रानारदेनतपोनिधिः ॥ उवाचपरमप्रीतःसत्कुर्वन्नारदंमुनिम् ॥ १४ ॥

॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ कश्चिद्वैश्योमहानासीन्नाम्नावैचित्रकुंडलः ॥ तत्पत्नीतारकानाम्नीपातिव्रत्यपरायणा ॥ १५ ॥ तावुभौचक्रतुर्भ
क्त्यापुण्यंश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ तयोःकृतव्रतोर्मासोगतः श्रीपुरुषोत्तमः ॥ १६ ॥ चरमेऽहनिसंप्राप्तेउद्यापनमथाकरोत् ॥ सपत्नीकोमुदायु
क्तःश्रद्धयाचित्रकुंडलः ॥ १७ ॥ द्विजानाकारयामासवेदवेदांगपारगान् ॥ उद्यापनविधिंकर्तुंसपत्नीकान्गुणान्वितान् ॥ १८ ॥ कदर्योप्य
गमत्तत्रधनलोभेननारद ॥ उद्यापनविधौपूर्णेसंजातेचित्रकुंडलः ॥ १९ ॥ अत्युग्रदानैस्तान्विप्रान्सपत्नीकानतोषयत् ॥ तुष्टेषुतेषुसर्वेषुभू
यसींदक्षिणामदात् ॥ २० ॥ तद्दत्तभूयसीतुष्टाअन्येविप्रागृहान्ययुः ॥ अतिलुब्धःकदर्यस्तुरुदंस्तस्थौतदग्रतः ॥ २१ ॥ विनयावनतोभू
त्वासगद्गदमुवाचह ॥ चित्रकुंडलवैश्येशभगवद्भक्तिभासुर ॥ २२ ॥ पुरुषोत्तमव्रतंसम्यग्भवताविधिनाकृतम् ॥ नतथाचकृतंकेनकुत्रापिपृ
थिवीतले ॥ २३ ॥ भवानद्यकृतार्थोसिभाग्यवानसिसर्वथा ॥ यत्त्वयापरयाभक्त्यासेवितःपुरुषोत्तमः ॥ २४ ॥ धन्यस्तवपिताधन्यामा
ताचपतिदेवता ॥ याभ्यामुत्पादितःपुत्रस्त्वादृशोहरिवल्लभः ॥ २५ ॥ धन्याद्धन्यतरश्चायंमासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ यत्सेवनादवाप्नोतिह्यैहि
कामुष्मिकंफलम् ॥ २६ ॥ दृष्टाहितावकींपूजांचकितोहंविशांपते ॥ अहोमयामहत्कर्मकृतमेतन्नसंशयः ॥ २७ ॥ अन्येभ्योब्राह्मणेभ्यश्च
धनंदत्तंबृहन्मुदा ॥ नददासिकथंमह्यंभाग्यहीनायभूरिद ॥ २८ ॥ इतिविज्ञापितस्तेनतस्मैधनमदादसौ ॥ तद्गृहीत्वाकरोद्विप्रोधनंभूमिग
तंमुदा ॥ २९ ॥ तत्रानेनमहापूजादृष्टाश्रीपौरुषोत्तमी ॥ पुरुषोत्तममासश्चधनलोभेनसंस्तुतः ॥ ३० ॥ पूजादर्शनमाहात्म्यात्पुरुषोत्तम
संस्तवात् ॥ धनलोभकृताद्वापिमृगतीर्थमुपागतः ॥ ३१ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ दर्शनात्स्तवनाद्वापिधनलोभकृतादपि ॥ दुष्टशाखामृग

स्यापिजातंसत्तीर्थसेवनम् ॥ ३२ ॥ किंपुनःश्रद्धयाकर्तुंदर्शनस्तत्रनेद्विजाः ॥ पुरुषोत्तमदेवस्यसपत्नीकस्यसादरम् ॥ ३३ ॥ ॥ नारद उवाच ॥ ॥ सुशीतलजलेनाढ्ये स्निग्धच्छायेमनोहरे ॥ सद्वृक्षमंडितेऽरण्येतत्स्थितेःकारणंवद ॥ ३४ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणु नारदवक्ष्यामितुभ्यंशुश्रूषवेऽनघ ॥ अत्रास्तिकारणंकिंचिच्छ्रवणात्पापनाशनम् ॥ ३५ ॥ यदादाशरथीरामःसर्वार्थफलदायकः ॥ हतवान् रावणंदुष्टंबध्वासेतुंमहोदधौ ॥ ३६ ॥ विभीषणाद्दतेतेनराक्षसानावशेषिताः ॥ ततोवह्निविशुद्धासाजानकीस्वीकृताधुना ॥ ३७ ॥ चतुर्मुखमहेशानपुरंदरपुरःसरैः ॥ दशवक्त्रवधप्रीतैर्हेरामत्वंवरंवृणु ॥ ३८ ॥ इत्युक्तेऽवीवदद्रामोभक्तानामभयंकरः ॥ सुराःशृणुतम द्वाक्यंयदिदेयोवरोऽधुना ॥ ३९ ॥ अत्रयेवानराःशूरारक्षोभिर्निहताश्चते ॥ संजीवयततानाशुसुधावृष्ट्याममाज्ञया ॥ ४० ॥ तथेत्यु क्त्वासुधावृष्ट्यावानरान्समजीवयन् ॥ चतुर्मुखमहेशानपुरंदरपुरःसराः ॥ ४१ ॥ ततःसंजीविताःसर्वेवानराजयशालिनः ॥ अहुढौकन्रामभद्रेचिरंसुप्तोत्थिताइव ॥ ४२ ॥ अथपुष्पकमारुह्यवानरान्सर्वतःस्थितान् ॥ अजीगदत्सपत्नीकःप्रसन्नमुखपंकजः ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ श्रीरामउवाच ॥ ॥ हेसुग्रीवहनूमंतौहेतारात्मजजांबवन् ॥ मित्रकार्यंकृतंसर्वंभवद्भिःसहवानरैः ॥ ४४ ॥ आज्ञापयंतुतान्सर्वान्भवंतोवानरानितः ॥ भवदाज्ञापिताः सर्वेयथेष्टंयांतुतेयतः ॥ ४५ ॥ यत्रयत्रवनेएतेमामकादीर्घजीविनः ॥ वसंतिवानरास्तत्रवृक्षाःपुष्पफलान्विताः ॥ ४६ ॥ नद्योमृष्टजलाश्चाथशीतलंसुभगंसरः ॥ नकेपिधर्षयिष्यंतिसर्वेयांतुममाज्ञया ॥ ॥ ४७ ॥ अतोरामप्रभावेणयतोवानरजातयः ॥ तत्रनद्योमृष्टजलाःसरश्चसुभगंवने ॥ ४८ ॥ लसत्फलामहावृक्षाःपुष्पपल्लवसंयुताः ॥

परंतुसुखदुःखानिप्राक्तनादृष्टजानिच ॥ ४९ ॥ यत्रयत्रवसेज्जंतुस्तत्रतत्रोपयांतिहि ॥ नाभुक्तंक्षीयतेकर्मइतिवेदानुशासनम् ॥ ५० ॥
॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ अथासौवानरस्तत्रववृधेपर्वतोपमः ॥ बृहत्क्षुत्तृट्समायुक्तोलोलुपोव्यचरद्वने ॥ ५१ ॥ जन्मतस्तस्यवक्त्रे
ऽभूत्पीडापित्तसमुद्भवा ॥ ययासृक्च्यवतेवक्त्रव्रणतश्चदिवानिशम् ॥ ५२ ॥ अत्यंतवेदनाविष्टोनात्तुंशक्तस्तुकिंचन ॥ सचवानरचापल्या
द्रुमेभ्यःसत्फलानिच ॥ ५३ ॥ लुनीयवदनाभ्याशेनीत्वातत्याजभूरिशः ॥ नैकत्रपीडयास्थातुंशक्तोसौवानरःक्वचित् ॥ ५४ ॥
वृक्षाद्वृक्षांतरंगच्छन्मेनेमृत्युंसुखावहम् ॥ कदाचिदपतद्भूमौविललापातिदुःखितः ॥ ५५ ॥ अरूरुदद्भग्नगात्रोनीरभ्रष्टोयथाझषः ॥ असौ
क्षुत्तृट्समाविष्टःश्लथदेहोगलन्मुखः ॥ ५६ ॥ पेतुर्दंतास्तथस्सर्वेव्रणरोगेणपीडितः ॥ पूर्वजन्मकृतात्पापादेवंदुःखमजीगमत् ॥ ५७ ॥
एवंप्रवर्त्तमानस्यनिराहारस्यनित्यशः ॥ दैवयोगात्समागच्छन्मासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ ५८ ॥ तस्मिन्नपितथैवास्तेशीतवातादिपीडितः ॥
कदाचिद्बहुलेपक्षेविचरन्गहनेवने ॥ ५९ ॥ तृषितःकुंडनिकटेनाशक्नोत्पातुममृतम् ॥ क्षुधाविष्टोपिचापल्यात्तत्रोच्चैर्वृक्षमारुहत् ॥ ६० ॥
वृक्षाद्वृक्षांतरंगच्छन्मध्येकुंडमपीपतत् ॥ सचिरायनिराहारःश्लथदिंद्रियजर्जरः ॥ ६१ ॥ निर्बलःशिथिलप्राणःकुंडप्रांतमुपाश्रितः ॥
एवंदिनानिचत्वारिदशमीदिनतःकपेः ॥ ६२ ॥ गतानिलुंठतःकुंडेमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ पंचमेदिवसेप्राप्तेमध्यंदिनगतेरवौ ॥ ६३ ॥ व्यसुः
पपाततत्तीर्थेतोयक्लिन्नवपुःकपिः ॥ सतंदेहंसमुत्सृज्यविनिर्धूतमलाशयः ॥ ६४ ॥ सद्योदिव्यवपुःप्रापदिव्याभरणभूषितम् ॥ इंदीवरदल
श्यामंकोटिकंदर्पसुंदरम् ॥ ६५ ॥ स्फुरद्रत्नकिरीटंचसुचारुझषकुंडलम् ॥ लसत्पीतपटंपुण्यंसद्रत्नकटिमेखलम् ॥ ६६ ॥ लसत्के

यूरवलयंमुद्रिकाहारशोभितम् ॥ नीलकुंचितसुस्निग्धचिकुरावृतसन्मुखम् ॥ ६७ ॥ नृत्यदेवांगनंदिव्यंगायद्गंधर्वकिन्नरम् ॥
तन्निरीक्ष्यमहाभागोदिव्यदेहधरःकपिः ॥ ६८ ॥ विस्मयंपरमंयातोमहापापस्यमेकुतः ॥ एतत्पुण्यतमस्यैवयोग्यंवैमानिकंसुखम्
॥ ६९ ॥ अथकाचित्तदुपरिदधारच्छत्रमिंदुभम् ॥ चक्रतुश्चामरेतस्यकेचिदप्सरसोमुदा ॥७०॥ काचित्तांबूलहस्ताचननर्तचाप्सराःपुरः ॥
काचिद्भृंगारकंहैमंस्वर्धुनीवारिसंभृतम् ॥ ७१ ॥ हस्तेकृत्वापुरस्तस्थौगीतवाद्यादितत्परा ॥ एवंवैभवमालोक्यचित्रन्यस्तइवाभवत ॥
॥ ७२ ॥किमेतत्केनपुण्येनममापुण्यस्यदुमतेः ॥ नास्तिमेसुकृतंकिंचिद्येनयामिहरेःपदम् ॥ ७३ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥
इत्थंतर्कयतोबृहत्सुखनिधिंदिव्यंविमानंपुरोदृष्ट्वाविस्मितचेतसोहरिभटौज्ञात्वास्यहार्दंपरम् ॥ बद्धाग्रेकरसंपुटंसविनयंनत्वातदीयंपदंवाक्यं
सुंदरमूचतुःकपिजनुस्त्यक्त्वापुरःसंस्थितम् ॥७४॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणे पु॰मा॰श्रीनारायणनारदसंवादेकदर्योपाख्यानेकपिजन्मनि
विमानागमनंनामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ पुण्यशीलसुशीलावूचतुः ॥ विभोप्रयाहिगो
लोकंकथमत्रविलंबसे ॥ पुरुषोत्तमसान्निध्यंत्वयालब्धंविशेषतः ॥ १ ॥ ॥ कदर्यउवाच ॥ बहूनिममकर्माणिसंतिभोग्यान्यनेकशः ॥
केनमेनिष्कृतिर्जातायतोगोलोकमाप्नुयाम् ॥ २ ॥ यावंत्योवर्षधाराश्चतृणानिभूरजःकणाः ॥ यावंत्यस्तारकाव्योम्नितावत्पापानिसंतिमे
॥ ३ ॥ कथमेतन्मयाप्राप्तंवपुर्दिव्यंमनोहरम् ॥ एतत्कारणमत्युग्रंमह्यंब्रूतंहरेःप्रियौ ॥ ४ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इतिवाच
मुपाकर्ण्यहरेर्दूतावथोचतुः ॥ हरिदूतावूचतुः ॥ अहोदेवकथंनैवविज्ञातंसाधनंमहत् ॥ ५ ॥ प्रभोनज्ञायतेकस्मान्मासःसर्वोत्तमोत्तमः ॥

विष्णुप्रियोमहापुण्योनाम्नावैपुरुषोत्तमः ॥ ६ ॥ तस्मिंस्त्वयातपश्चीर्णमशक्यंयत्सुरैरपि ॥ अविज्ञातंमहाराजकपिदेहेनकानने ॥७॥ मुख
रोगादनाहारव्रतंजातमजानतः ॥ त्वयाचकपिचांचल्यात्फलान्युत्कृत्यवृंततः ॥ ८ ॥ क्षिप्तानिपृथिवीपीठेतृप्तास्तैरितरेजनाः ॥ पानीयम
पिनोपीतमंतर्दुःखेनभूरिशः ॥ ९ ॥ संजातंतेतपस्तीव्रमज्ञानात्पुरुषोत्तमे ॥ परोपकारःसंजातःफलपातेनतेऽनघ ॥ १० ॥ शीतवातात
परौद्राःसोढाविचरतावने ॥ महातीर्थेवरेरम्येपंचाहंप्लवनंकृतम् ॥ ११ ॥ तस्मात्तेस्नानजंपुण्यंमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ एवंरुग्णस्यतेजातम
ज्ञानात्तपउत्तमम् ॥ १२ ॥ तदेतत्सुफलंजातमनुभूतंत्वयाधुना ॥ व्याजतोपिकृतेनैवसफलंस्याद्यथातव ॥ १३ ॥ किंपुनःश्रद्धयैतस्मि
न्मासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ विधिनाकुर्वतःकर्मज्ञात्वामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ १४ ॥ यस्त्वयासाधितःस्वार्थस्तादृक्कर्तुंचकःक्षमः ॥ यस्मिन्नेकोपवा
सेनमुच्यतेपापराशिभिः ॥ १५ ॥ नैतत्तुल्यंभवेत्किंचित्पुरुषोत्तमप्रीतिदम् ॥ तेधन्याःकृतकृत्यास्तेतद्व्रतंयेप्रकुर्वते ॥ १६ ॥ दुर्लभंमानु
षंजन्मभूखण्डेभारताजिरे ॥ तादृशंजनुरासाद्यसेवंतेपुरुषोत्तमम् ॥ १७ ॥ तेसदासुभगाःपुण्यास्तेषांचसफलोभवः ॥ येषांसर्वोत्तमोमासः
स्नानदानजपैर्गतः ॥ १८ ॥ दानानिपितृकार्याणितपांसिविविधानिच ॥ तानिकोटिगुणान्येवसंप्राप्तेपुरुषोत्तमे ॥ १९ ॥ धिक्तंचना
स्तिकंपापंशठंधर्मध्वजंखलम् ॥ पुरुषोत्तममासाद्यस्नानदानविवर्जितः ॥ २० ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ पुण्यशीलसुशीलाभ्या
महर्षेवर्णितंनिजम् ॥ तच्छ्रुत्वाचकितोहृष्टःपुलकांकितविग्रहः ॥ २१ ॥ तीर्थदेवान्नमस्कृत्यकालंजरगिरिंततः ॥ ननामकाननाधीशान्स
र्वगुल्मलतातरून् ॥ २२ ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यविमानंविनयान्वितः ॥ आरुरोहघनश्यामोलसत्पीतांबरावृतः ॥ २३ ॥ पश्यत्सुसर्वदेवेषु

गंधर्वाद्यैरभिष्टुतः ॥ वाद्यमानेषुवाद्येषुकिन्नराद्यैर्मुहुर्मुहुः ॥ २४ ॥ पुष्पवृष्टिंमुचोदेवामदंमदंमुदान्विताः ॥ सादरंपूजयांचक्रुःपुरंदरपुरःसराः ॥ २५ ॥ ततोजगामगोलोकंसानंदंयोगिदुर्लभम् ॥ गोपगोपीगवांसेव्यंरासमंडलमंडितम् ॥ २६ ॥ यत्रगत्वानशोचंतिजरामृत्युविवर्जिते ॥ तत्रासौचित्रशर्माचपुरुषोत्तमसेवनात् ॥ २७ ॥ व्याजेनापिमुमोदोच्चैर्विहायवानरंवपुः ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंदृष्ट्वाश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ २८ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ इदमाश्चर्यमालोक्यदेवाःसर्वेसुविस्मिताः ॥ स्वंस्वंस्थानंययुःसर्वेशंसंतःपुरुषोत्तमम् ॥ २९ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ दिवसस्यादिमेभागेत्वयाह्निकमुदीरितम् ॥ तद्दिवापरभागीयंकथंकार्यंतपोधन ॥ ३० ॥ गृहस्थस्योपकारायवदमेवदतांवर ॥ सदासर्वोपकारायचरंतिहिभवादृशाः ॥ ३१ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ प्रातःकालोदितंकर्मसमाप्यविधिवत्ततः ॥ कृत्वामाध्याह्निकींसंध्यांतिलतर्पणमाचरेत् ॥ ३२ ॥ देवामनुष्याःपशवोवयांसिसिद्धाश्चयक्षोरगदैत्यसंघाः ॥ प्रेताःपिशाचाउरगाःसमस्तायेचान्नमिच्छंतिमयात्रदत्तम् ॥ ३३ ॥ ततःपंचमहायज्ञान्कुर्याद्भूतबलिंततः ॥ काकस्यचशुनश्चैवबलिंदत्त्वैवमुच्चरन् ॥ ३४ ॥ इत्युक्त्वासर्वभूतेभ्योबलिंदद्यात्पुनःपृथक् ॥ ततआचम्यविधिवच्छ्रद्धयाप्रीतमानसः ॥ ३५ ॥ द्वारावलोकनंकुर्यादतिथिग्रहणायच ॥ गोदोहकालंभाग्यात्तुप्रातश्चेदतिथिर्यदि ॥ ३६ ॥ आदौसत्कृत्यवचसादेववत्पूजयेत्सुधीः ॥ तोषयेत्परयाभक्त्यायथाशक्त्यन्नपानतः ॥ ३७ ॥ भिक्षांचभिक्षवेदद्याद्विधिवद्ब्रह्मचारिणे ॥ आकल्पितान्नादुद्धृत्यसर्वव्यंजनसंयुतात् ॥ ३८ ॥ यतिश्चब्रह्मचारीचपक्वान्नस्वामिनावुभौ ॥ तयोरन्नमदत्त्वैवभुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ॥ ३९ ॥ यतिहस्तेजलंदद्याद्भैक्ष्यंदद्यात्पुनर्जलम् ॥ तद्भैक्ष्यंमेरुणातुल्यंतज्जलंसागरोपमम् ॥ ४० ॥ सत्कृत्यभि

वेभिक्षांयःप्रयच्छतिमानवः ॥ गोप्रदानसमंपुण्यमित्याहभगवान्यमः ॥ ४१ ॥ ततश्चभोजनंकुर्यात्प्राङ्मुखोमौनमास्थितः ॥ प्रशस्तेशुद्ध
पात्रेचभुंजीतान्नमकुत्सयन् ॥ ४२ ॥ नैकवासाःसमश्नीयात्स्वासनेनिजभाजने ॥ स्वयमासनमारुह्यस्वस्थचित्तःप्रसन्नधीः ॥४३॥ एकएव
तुयोभुंक्तेस्वकीयेकांस्यभाजने ॥ चत्वारितस्यवर्धंतआयुःप्रज्ञायशोबलम् ॥ ४४ ॥ सत्यंत्वर्त्तेतिमंत्रेणजलमादायपाणिना ॥ परिषिच्यच
भोक्तव्यंसघृतंव्यंजनान्वितम् ॥४५॥ भोजनात्किंचिदन्नाद्यमादायैवंसमुच्चरेत् ॥ नमोभूपतयेपूर्वंभुवनपतयेनमः ॥४६॥ भूतानांपतयेपश्चा
द्धर्मायचततोबलिम् ॥ दत्त्वाचचित्रगुप्तायभूतेभ्यइदमुच्चरेत् ॥४७॥ यत्रक्वचनसंस्थानांक्षुत्तृषोपहतात्मनाम् ॥ भूतानांतृप्तयेऽक्षय्यमिदमस्तु
यथासुखम्॥४८॥प्राणायापानसंज्ञायव्यानायचततःपरम् ॥ उदानायततोब्रूयात्समानायततःपरम् ॥ ४९ ॥ प्रणवंपूर्वमुच्चार्यस्वाहांतेचघृत
प्लुतम् ॥ पंचकृत्वोग्रसेदन्नंजिह्वयानतुदंशयेत् ॥५०॥ ततश्चतन्मनाभूत्वाभुंजीतमधुरंपुरः ॥ लवणाम्लौतथामध्येकटुतिक्तौततःपरम् ॥५१॥
प्राग्द्रवंपुरुषोऽश्नीयान्मध्येतुकठिनाशनम् ॥ अंतेपुनर्द्रवाशीतुबलारोग्येनमुंचति॥५२॥अष्टौग्रासामुनेर्भक्ष्याःषोडशारण्यवासिनः ॥ द्वात्रिं
शच्चगृहस्थस्यत्वमितंब्रह्मचारिणः ॥ ५३ ॥ नाद्याच्छास्त्रविरुद्धंतुभक्ष्यभोज्यादिकंद्विजः ॥ अभोज्यंप्राहुराहारंशुष्कंपर्युषितंतथा ॥५४॥
सर्वंसशेषमश्नीयाद्धृतपायसवर्जितम् ॥ अग्रांगुलिषुतच्छेषंनिधायभोजनोत्तरम् ॥ ५५ ॥ जलपूर्णांजलिंकृत्वापीत्वाचैवतदर्धकम् ॥ अग्रां
गुलिस्थितंशेषंभूमौदत्त्वांजलेर्जलम् ॥ ५६ ॥ शेषंनिषिंचेत्तत्रैवपठन्मंत्रमिमंबुधः ॥ अन्यथापापभाग्विप्रःप्रायश्चित्तेनशुध्यति ॥ ५७ ॥
रौरवेपूयनिलयेपद्मार्बुदनिवासिनाम् ॥ अर्थिनामुदकंदत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥५८॥ निषिच्यानेनमंत्रेणकुर्याद्दंतविशोधनम् ॥ आचम्यपात्र

मुत्सार्यकिंचिदार्द्रेणपाणिना ॥ ५९ ॥ ततःपरंसमुत्थायबहिः स्थित्वासमाहितः ॥ शोधयेन्मुखहस्तौचमृदाशुद्धजलेनच ॥ ६० ॥ कृत्वा
षोडशगंडूषान्शुद्धोभूत्वासुखासनः ॥ इमौमंत्रौपठन्नेवपाणिनोदरमालभेत् ॥ ६१ ॥ अगस्त्यंकुंभकर्णंचशनिंचवडवानलम् ॥ आहारपरि
पाकार्थंस्मरेद्भीमंचपंचमम् ॥ ६२ ॥ आतापीमारितोयेनवातापीचनिपातितः ॥ समुद्रःशोषितोयेनसमेऽगस्त्यःप्रसीदतु ॥ ६३ ॥ ततःश्री
कृष्णदेवस्यकुर्वीतस्मरणंमुदा ॥ भूयोप्याचम्यकर्तव्यंततस्तांबूलभक्षणम् ॥ ६४ ॥ भुक्तोपविष्टःश्रीकृष्णंपरंब्रह्मविचारयेत् ॥ सच्छास्त्रादिविनो
देनसन्मार्गाद्यविरोधिना ॥ ६५ ॥ ततश्चाध्यात्मविद्यायाःकुर्वीतश्रवणंसुधीः ॥ सर्वथावृत्तिहीनोपिमुहूर्त्तंस्वस्थमानसः ॥ ६६ ॥ श्रुत्वाधर्मं
विजानातिश्रुत्वापापंपरित्यजेत् ॥ श्रुत्वानिवर्ततेमोहःश्रुत्वाज्ञानामृतंलभेत् ॥ ६७ ॥ नीचोपिश्रवणेनाशुश्रेष्ठत्वंप्रतिपद्यते ॥ श्रेष्ठोपिनीच
तांयातिरहितःश्रवणेनच ॥ ६८ ॥ व्यवहारंततःकुर्याद्बहिर्गत्वायथासुखम् ॥ श्रीकृष्णंमनसाध्यायेत्सर्वार्थसिद्धिदायकम् ॥ ६९ ॥ सूर्येऽस्त
शिखरंप्राप्तेतीर्थंगत्वाथवागृहम् ॥ सायंसंध्यामुपासीतधौतांघ्रिःसपवित्रकः ॥ ७० ॥ यःप्रमादान्नकुर्वीतसायंसंध्यांद्विजाधमः ॥ सगोवधमवाप्नो
तिमृतेरौरवमाप्नुयात् ॥ ७१ ॥ कदाचित्काललोपेपिसंकटेवापथिस्थितः ॥ आनिशीथात्प्रकुर्वीतसायंसंध्यांद्विजोत्तमः ॥ ७२ ॥ यस्त्रिसंध्या
मुपासीतब्राह्मणःश्रद्धयान्वितः ॥ तत्तेजोवर्धतेत्यन्तंघृतेनेवहुताशनः ॥ ७३ ॥ सादित्यांपश्चिमांसंध्यामर्धास्तमितभास्कराम् ॥ प्राणाना
यम्यसंप्रोक्ष्यमंत्रेणाब्दैवतेनतु ॥ ७४ ॥ सायमग्निश्चमेत्युक्त्वाप्रातःसूर्येत्यपःपिबेत् ॥ प्राङ्मुखोपविष्टस्तुवाग्यतःसुसमाहितः ॥ ७५ ॥
प्रणवव्याहृतियुतांगायत्रींतुजपेत्ततः ॥ अक्षसूत्रंसमादायसम्यगातारकोदयात् ॥ ७६ ॥ वारुणीभिस्तदादित्यमुपस्थायप्रदक्षिणाम् ॥

कुर्वन्दिशोनमस्कुर्याद्दिगीशांश्चपृथक्पृथक् ॥ ७७ ॥ उपास्यपश्चिमांसंध्यांहुत्वाग्निमश्रियात्ततः ॥ भृत्यैःपरिवृतोभूत्वानातितृप्तोथसंविशेत् ॥ ७८ ॥ सायंप्रातर्वैश्वदेवःकर्तव्योबलिकर्मच ॥ अनश्नतापिसततमन्यथाकिल्बिषीभवेत् ॥ ७९ ॥ कृतपादादिशौचस्तुभुक्त्वासायंततोगृही ॥ गच्छेच्छय्यांततोमृद्वीमुपधानसमन्विताम् ॥ ८० ॥ स्वगृहेप्राक्शिराःशेतेश्वाशुरेदक्षिणाशिराः ॥ प्रवासेपश्चिमशिरानकदाचिदुदक्शिराः ॥ ८१ ॥ रात्रिसूक्तंजपेत्स्मृत्वादेवांश्चसुखशायिनः ॥ नमस्कृत्याव्ययंविष्णुंसमाधिस्थःस्वपेन्निशि ॥ ८२ ॥ अगस्त्योमाधवश्चैवमुचुकुंदोमहाबलः ॥ कपिलोमुनिरास्तीकःपंचैतेसुखशायिनः ॥ ८३ ॥ मांगल्यंपूर्णकुंभंचशिरःस्थानेनिधायच ॥ वैदिकैर्गारुडेमंत्रैरक्षांकृत्वास्वपेत्ततः ॥ ८४ ॥ ऋतुकालाभिगामीस्यात्स्वदारनिरतःसदा ॥ पर्ववर्जंव्रजेदेनांतद्व्रतीरतिकाम्यया ॥ ८५ ॥ प्रदोषपश्चिमौयामौवेदाभ्यासेनतौनयेत् ॥ यामद्वयंशयानस्तुब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ८६ ॥ एतत्सर्वमशेषेणकृत्यजातंदिनेदिने ॥ कर्तव्यंगृहिभिःसम्यग्गृहस्थाश्रमलक्षणम् ॥ ८७ ॥ अहिंसासत्यवचनंसर्वभूतानुकंपनम् ॥ शमोदानंयथाशक्तिगार्हस्थ्योधर्मउच्यते ॥ ८८ ॥ परदारेष्वसंसर्गोधर्मस्त्रीपरिरक्षणम् ॥ अदत्तादानविरमोमधुमांसविवर्जनम् ॥ ८९ ॥ एषपंचविधोधर्मोबहुशाखःसुखोदयः ॥ देहिभिर्देहपरमैःकर्तव्योदेहसंभवः ॥ ९० ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ अशेषवेदोदितसच्चरित्रमेतद्गृहस्थाश्रमलक्षणंहि ॥ उक्तंसमासेनचलक्षणेनतुभ्यंमुनेलोकहितायसम्यक् ॥ ९१ ॥ ॥ इति श्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेआह्निककथनंनामएकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ ॥ २९ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ स्तुतापतिव्रतानारीत्वयापूर्वंतपोनिधे ॥ तल्लक्षणानिसर्वाणिसमासेनवदस्वमे ॥ १ ॥ ॥ सूतउ

वाच ॥ नोदितोनारदेनेत्थंपुरातनमुनिःस्वयम् ॥ पतिव्रतायाःसर्वाणिलक्षणान्याहभूसुराः ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ शृणुनारदवक्ष्यामिसतीनांव्रतमुत्तमम् ॥ कुरूपोवाकुवृत्तोवासुस्वभावोथवापतिः ॥ ३ ॥ रोगान्वितःपिशाचोवाक्रोधनोवाथमद्यपः ॥ वृद्धोवाप्यविदग्धोवामूकोंऽधोबधिरोपिवा ॥ ४ ॥ रौद्रोवाथदरिद्रोवाकदर्यःकुत्सितोपिवा ॥ कातरःकितवोवापिललनालंपटोपिवा ॥ ५ ॥ ॥ सततंदेववत्पूज्यःसाध्व्यावाक्कायकर्मभिः ॥ नजातुविषमंभर्तुःस्त्रियाकार्यंकथंचन ॥ ६ ॥ बालयावायुवत्यावावृद्धयावापियोषिता ॥ नस्वातंत्र्येणकर्त्तव्यंकिंचित्कार्यंगृहेष्वपि॥७॥अहंकारंविहायाथकामक्रोधौचसर्वदा॥मनसोरंजनंपत्युःकार्यंनान्यस्यकुत्रचित्॥८॥सकामंवीक्षिताप्यन्यैःप्रियवाक्यैःप्रलोभिता॥स्पृष्टावाजनसंमर्देनविकारमुपैतिया ॥९॥ यावंतोरोमकूपाःस्युःस्त्रीणांगात्रेषुनिर्मिताः॥तावद्वर्षसहस्राणिनाकंताःपर्युपासते॥१०॥पुरुषंसेवतेनान्यंमनोवाक्कायकर्मभिः॥लोभितापिपरेणार्थैःसासतीलोकभूषणा॥११॥दौत्येनप्रार्थितावापिबलेनविधृतापिवा॥वस्त्राद्यैर्वासितावापिनैवान्यंभजतेसती ॥ १२ ॥ वीक्षितावीक्षतेनान्यैर्हासितानहसत्यपि ॥ भाषिताभाषतेनैवसासाध्वीसाधुलक्षणा ॥ १३ ॥ रूपयौवनसंपन्नागीतेनृत्येऽतिकोविदा ॥ स्वानुरूपंनरंदृष्ट्वानयातिविकृतिंसती ॥ १४ ॥ सुरूपंतरुणंरम्यंकामिनीनांचवल्लभम् ॥ यानेच्छतिपरंकांतंविज्ञेयासामहासती ॥ १५ ॥ देवोमनुष्योगंधर्वःसतीनांनापरःप्रियः ॥ अप्रियंनैवकर्तव्यंपत्युःपत्न्याकदाचन ॥ १६ ॥ भुक्तेभुंक्तेयथापत्यौदुःखितेदुःखिताचया ॥ मुदितेमुदितात्यर्थंप्रोषितेमलिनांबरा ॥ १७ ॥ सुप्तेपत्यौचयाशेतेपूर्वमेवप्रबुध्यति ॥ प्रविशेच्चैवयावह्नौयातेभर्त्तरिपंचताम् ॥ १८ ॥ नान्यंकामयतेचित्तेसाविज्ञेयापतिव्रता ॥ भक्तिंश्वशुरयोःकुर्यात्पत्युश्चापिविशेषतः ॥ १९ ॥ धर्म

गृहोपस्करसंस्कारेसक्तायाप्रतिवासरम् ॥ २० ॥ क्षेत्राद्वनाद्वाग्रामाद्वाभर्त्तारंगृहमागतम् ॥ प्रत्युत्थाया
कार्येनुकूलत्वमर्थकार्येपिसंचये ॥ गृहोपस्करसंस्कारेसक्तायाप्रतिवासरम् ॥ २० ॥ क्षेत्राद्वनाद्वाग्रामाद्वाभर्त्तारंगृहमागतम् ॥ प्रत्युत्थाया
भिनंदेतआसनेनोदकेनच ॥ २१ ॥ प्रसन्नवदनानित्यंकालेभोजनदायिनी ॥ भुक्तवंतंतुभर्त्तारंनवदेदप्रियंक्वचित् ॥ २२ ॥ आसनेभोजने
दानेसंमानेप्रियभाषणे ॥ दक्षयासर्वदाभाव्यंभार्ययागृहमुख्यया ॥ २३ ॥ गृहव्ययनिमित्तंचयद्द्रव्यंप्रभुणार्पितम् ॥ निर्भृत्यगृहकार्यंसाकिं
चिद्बुद्ध्यावशेषयेत् ॥ २४ ॥ त्यागार्थमर्पितद्रव्यंलोभात्किंचिन्नधारयेत् ॥ भर्तुराज्ञांविनानैवस्वबंधुभ्योदिशेद्धनम् ॥ २५ ॥ अन्यालाप
मसंतोषंपरव्यापारसंकथाः ॥ अतिहासातिरोषंचक्रोधंचपरिवर्जयेत् ॥ २६ ॥ यच्चभर्त्तानपिबतियच्चभर्त्तानखादति ॥ यच्चभर्त्तानचा
श्नातिसर्वंतद्वर्जयेत्सती ॥ २७ ॥ तैलाभ्यंगंतथास्नानंशरीरोद्वर्तनक्रियाम् ॥ मार्जनंचैवदन्तानांकुर्यात्पतिमुदेसती ॥ २८ ॥ त्रेताप्रभृ
तिनारीणांमासिमास्यार्तवंमुने ॥ तदादिनत्रयंत्यक्ताशुद्धास्याद्गृहकर्मणि ॥ २९ ॥ प्रथमेहनिचांडालीद्वितीयेब्रह्मघातिनी ॥ तृतीयेरज
कीप्रोक्ताचतुर्थेहनिशुध्यति ॥ ३० ॥ स्नानंशौचंतथागानंरोदनंहसनंतथा ॥ यानमभ्यंजनंनारीद्यूतंचैवानुलेपनम् ॥ ३१ ॥ दिवास्वप्नंवि
शेषेणतथावैदंतधावनम् ॥ मैथुनंमानसंवापिवाचिकंदेवतार्चनम् ॥ ३२ ॥ वर्जयेच्चनमस्कारंदेवतानांरजस्वला ॥ रजस्वलायाःसंस्पर्शंसं
भाषांचतयासह ॥ ३३ ॥ त्रिरात्रंस्वमुखंनैवदर्शयेच्चरजस्वला ॥ स्ववाक्यंश्रावयेन्नैवयावत्स्नातानशुद्धितः ॥३४॥ स्नात्वान्यंपुरुषंनारीनप
श्येच्चरजस्वला ॥ ईक्षेतभास्करंदेवंब्रह्मकूर्चंततःपिबेत् ॥ ३५ ॥ केवलंपंचगव्यंचक्षीरंवात्मविशुद्धये ॥ यथोपदेशंनियतावर्तयेतवरांगना
॥ ३६ ॥ गर्भिणीचेद्भवेन्नारीतदानियमतत्परा ॥ अलंकृतासुप्रयताभर्त्तुःप्रियहितेरता ॥ ३७ ॥ तिष्ठेत्प्रसन्नवदनास्वधर्मनिरताशुचिः ॥

कृतरक्षासुभूषाचवास्तुपूजनतत्परा ॥ ३८ ॥ कुस्त्रीभिर्नाभिभाषेतशूर्पवातंचवर्जयेत् ॥ मृतवत्सादिसंसर्गंपरपाकंचसुन्दरी ॥ ३९ ॥ नबीभत्संकिंचिदीक्षेन्नरौद्रांशृणुयात्कथाम् ॥ गुरुंवात्युष्णमाहारमजीर्णंनसमाचरेत् ॥ ४० ॥ अनेनविधिनासाध्वी शोभनंपुत्रमाप्नुयात् ॥ अन्यथागर्भपतनंस्तंभनंवाप्रपद्यते ॥ ४१ ॥ हीनांनिजगुणैरन्यांसपत्नींनैवगर्हयेत् ॥ ईर्ष्यारागसमुद्भूते विद्यमानेपिमत्सरे ॥ ४२ ॥ अप्रियंनैवकर्त्तव्यंसपत्नीभिःपरस्परम् ॥ नगायेदन्यनामानिनकुर्यादन्यवर्णनम् ॥ ४३ ॥ नव सेद्दूरतःपत्युःस्थेयंवल्लभसन्निधौ ॥ निर्दिष्टेचमहीभागेवल्लभाभिमुखावसेत् ॥ ४४ ॥ नावलोक्यादिशःस्वैरंनावलोक्यःपरोजनः ॥ विलासैरवलोक्यंस्यात्पत्युराननपंकजम् ॥ ४५ ॥ कथ्यमानाकथाभर्त्राश्रोतव्यासादरंस्त्रिया ॥ पत्युःसंभाषणस्याग्रेनान्यत्संभाषयेत्स्व यम् ॥ ४६ ॥ आहूतासत्वरंगच्छेद्रतिस्थानंरतोत्सुका ॥ पत्यौगायतिसोत्साहंश्रोतव्यंहृष्टचेतसा ॥ ४७ ॥ गायंतंचपतिंदृष्ट्वाभवेदानंद निर्वृता ॥ भर्तुःसमीपेनस्थेयंसोद्वेगंव्यग्रचित्तया ॥ ४८ ॥ कलहोनविधातव्यःकलियोग्येप्रियेस्त्रिया ॥ भर्त्सितानिंदितात्यर्थंताडि तापिपतिव्रता ॥ ४९ ॥ व्यथितापिभयंत्यक्त्वाकंठेगृह्णीतवल्लभम् ॥ उच्चैर्नरोदनंकुर्यान्नैवाक्रोशेच्चतंप्रति ॥ ५० ॥ पलायनंनकर्त्तव्यंनिज गेहाद्बहिःस्त्रिया ॥ उत्सवादिषुबंधूनांसदनंयदिगच्छति ॥ ५१ ॥ लब्ध्वानुज्ञांतदापत्युर्गच्छेदध्यक्षरक्षिता ॥ नवसेत्सुचिरंतत्रप्रत्याग च्छेद्गृहंसती ॥ ५२ ॥ प्रस्थानाभिमुखेपत्यौमासन्मंगलभाषिणी ॥ नवार्योसौनिषेधोक्त्यानकार्यंरोदनंतदा ॥ ५३ ॥ अकृत्वोद्वर्तनंनित्यं पत्यौदेशांतरेगते ॥ वधूर्जीवनरक्षार्थंकर्मकुर्यादनिंदितम् ॥ ५४ ॥ श्वश्रूश्वशुरयोःपार्श्वेनिद्राकार्यानचान्यतः ॥ प्रत्यहंपतिवार्ताचतया

न्वेष्याप्रयत्नतः ॥ ५५ ॥ दूताःप्रस्थापनीयाश्चपत्युःक्षेमोपलब्धये ॥ देवतानांप्रसिद्धानांकर्त्तव्यमुपयाचनम् ॥ ५६ ॥ एवमादिविधा
तव्यंसत्याप्रोषितकांतया ॥ अप्रक्षालनमंगानांमलिनांबरधारणम् ॥ ५७॥ तिलकांचनहीनत्वंगंधमाल्यविवर्जनम् ॥ नखरोम्णामसंस्का
रोदशनानाममार्जनम् ॥ ५८ ॥ उच्चैर्हासःपरैर्नर्मपरचेष्टाविचिंतनम् ॥ स्वेच्छापर्यटनंचैवपरपुंसांगमर्दनम् ॥५९॥ अटनंचैकवस्त्रेणनिर्लज्ज
त्वंयथागतिः ॥ इत्यादिदोषाःकथितायोषितोनित्यदुःखदाः ॥ ६० ॥ निर्वृत्यगृहकार्याणिहरिद्रालेपनैस्तनुम् ॥ प्रक्षाल्यशुचितोयेनकुर्या
न्मंडनमुज्ज्वलम् ॥ ६१ ॥ समीपंप्रेयसोगच्छेद्धिकसन्मुखपंकजा ॥ अनेननारीवृत्तेनमनोवाग्देहसंयुता ॥ ६२ ॥ आहूतागृहकार्याणि
त्यक्त्वागच्छेच्चसत्वरम् ॥ किमर्थंव्याहृतास्वामिन्सप्रसादोविधीयताम् ॥ ६३ ॥ माचिरंतिष्ठतेद्वारिनद्वारमुपसेवयेत् ॥ स्वामिनादापितं
किंचित्कस्मैचिन्नददात्यपि ॥ ६४ ॥ सेवयेद्भर्तुरुच्छिष्टमिष्टमन्नफलादिकम्॥ महाप्रसादइत्युक्त्वामोदमानानिरंतरम् ॥ ६५ ॥ सुखसुप्तंसु
खासीनंरममाणंयदृच्छया ॥ आतुरेष्वपिकार्येषुपातिंनोत्थापयेत्क्वचित् ॥ ६६ ॥ नैकाकिनीक्वचिद्गच्छेन्ननग्नास्नानमाचरेत् ॥ भर्तृवि
द्वेषिणींनारींसाध्वींनोभावयेत्क्वचित् ॥ ६७ ॥ नोलूखलेनमुसलेनवर्धिन्यांदृषद्यपि ॥ नयंत्रकेपिदेहल्यांसतीचोपविशेत्क्वचित्
॥ ६८ ॥ तीर्थस्नानार्थिनीनारी पतिपादोदकंपिबेत् ॥ शंकरादपिविष्णोर्वापतिरेवाधिकःस्त्रियः ॥ ६९ ॥ व्रतोपवासनियमंपति
मुल्लंघ्ययाचरेत् ॥ आयुष्यंहरतेभर्तुर्मृतानरकमृच्छति ॥ ७० ॥ उक्ताप्रत्युत्तरंदद्यान्नारीक्रोधेनतत्परा ॥ सरमाजायतेग्रामेसृगालीनिर्ज
नेवने ॥ ७१ ॥ स्त्रीणांहिपरमश्चैकोनियमःसमुदाहृतः॥ अभ्यर्च्यभर्तुश्चरणौभोक्तव्यंचसदास्त्रिया ॥ ७२ ॥ याभर्तारंपरित्यज्यमिष्टम

श्चातिकेवलम् ॥ उलूकीजायतेक्रूरावृक्षकोटरशायिनी ॥ ७३ ॥ याभर्तारंसमुत्सृज्यरहश्चरतिकेवलम् ॥ ग्रामेवासूकरीभूयाद्वल्गुलीवाश्वविड्भुजा ॥ ७४ ॥ याहुंकृत्याप्रियंब्रूतेसामूकाजायतेखलु ॥ यासपत्नीसदेर्ष्यैतद्दुर्भगासान्यजन्मनि ॥ ७५ ॥ दृष्टिंविलुप्यभर्तुर्याकंचिदन्यंसमीक्षते ॥ काणावाविमुखीचापिकुरूपाचैवजायते ॥ ७६ ॥ बाह्यादागतमालोक्यत्वरिताचजलासनैः ॥ तांबूलैर्व्यजनैश्चैवतालसंवाहनादिभिः ॥ ७७ ॥ अतिप्रियतरैर्वाक्यैर्भर्तारंयासुसेवते ॥ पतिव्रताशिरोरत्नंसानारीकथिताबुधैः ॥ ७८ ॥ भर्त्तादेवोगुरुर्भर्ताधर्मतीर्थव्रतानिच ॥ तस्मात्सर्वंपरित्यज्यपतिमेकंसमर्चयेत् ॥ ७९ ॥ जीवहीनोयथादेहःक्षणादशुचितांव्रजेत् ॥ भर्तृहीनातथायोषित्सुस्नाताप्यशुचिःसदा ॥ ८० ॥ अमंगलेभ्यःसर्वेभ्योविधवाह्यत्यमंगला ॥ विधवादर्शनात्सिद्धिर्जातुकापिनजायते ॥ ८१ ॥ विहायमातरंचैकामाशीर्वादप्रदायिनीम् ॥ अन्याशिषमपिप्राज्ञस्त्यजेदाशीविषोपमाम् ॥ ८२ ॥ कन्यांविवाहसमयेवाचयेयुरितिद्विजाः ॥ भर्तुःसहचरीभूयाज्जीवतोजीवितापिवा ॥ ८३ ॥ तस्माद्भर्तानुयातव्योदेहवच्छाययास्वया ॥ एवंसत्यासदास्थेयंभक्त्यापत्यनुकूलया ॥ ८४ ॥ व्यालग्राहीयथाव्यालंबिलादुद्धरतेबलात् ॥ एवमुत्क्रम्यदूतेभ्यःपतिंस्वर्गंनयेत्सती ॥ ८५ ॥ यमदूताःपलायंतेसतीमालोक्यदूरतः ॥ अपिदुष्कृतकर्माणमुत्सृज्यपतितंपतिम् ॥ ८६ ॥ यावत्स्वलोमसंख्यास्तितावत्कोट्ययुतानिच ॥ भर्त्रास्वर्गसुखंभुंक्तेरममाणापतिव्रता ॥ ८७ ॥ शीलभंगेनदुर्वृत्ताःपातयंतिकुलद्वयम् ॥ पितुःकुलंतथापत्युरिहामुत्रचदुःखिताः ॥ ८८ ॥ अनुयातिनभर्तारंयदिदैवात्कथंचन ॥ तत्रापिशीलंसंरक्ष्यंशीलभंगात्पतत्यधः ॥ ८९ ॥ तद्वैगुण्यात्पितास्वर्गात्पतिःपततिनान्यथा ॥ विध

वाकबरीबंधोभर्तृबंधायजायते ॥ ९० ॥ शिरसोवपनंकार्यंतस्माद्विधवयासदा ॥ एकाहारःसदाकार्योनद्वितीयःकदाचन ॥ ९१ ॥ पर्यंक
शायिनीनारीविधवापातयेत्पतिम् ॥ तस्माद्भूशयनंकार्यंपतिसौख्यसमीहया ॥ ९२ ॥ नैवांगोद्वर्तनंकार्यंनतांबूलस्यभक्षणम् ॥ गंधद्रव्य
स्यसंभोगोनैवकार्यस्तयाक्वचित् ॥ ९३ ॥ तर्पणंप्रत्यहंकार्यंभर्तुःकुशतिलोदकैः ॥ तत्पितुस्तत्पितुश्चापिनामगोत्रादिपूर्वकम् ॥ ९४ ॥ श्वेतवस्त्रंस
दाधार्यमन्यथारौरवंव्रजेत् ॥ इत्येवंनियमैर्युक्ताविधवापिपतिव्रता ॥ ९५ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ नैतादृशंदैवतमस्तिकिंचित्सर्वेषुलो
केषुसदैवतेषु ॥ यदापतिस्तुष्यतिसर्वकामाँल्लभेत्प्रकामंकुपितश्चहन्यात् ॥ ९६ ॥ तस्मादपत्यंविविधाश्चभोगाःशय्यासनान्यद्भुतभोजनानि ॥
वस्त्राणिमाल्यानितथैवगंधाःस्वर्गेचलोकेविविधाचकीर्तिः ॥ ९७ ॥ ॥ इतिश्रीबृ॰पुयेमा॰पतिव्रताधर्मनिरूपणेत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥
॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्थंपतिव्रताधर्ममाकर्ण्यनारदोमुनिः ॥ किंचित्प्रष्टुमनाविप्रामुनिमाहपुरातनम् ॥ १ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ सर्व
दानाधिकंकांस्यसंपुटंपरिकीर्तितम् ॥ एतत्कारणमव्यक्तंवदमेबदरीपते ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ॥ एकदैतद्व्रतंब्रह्मन्नची
करदुमापुरा ॥ तदापृच्छन्महादेवंकिंदेयंदानमुत्तमम् ॥ ३ ॥ येनसंपूर्णतांयातिव्रतंमेपौरुषोत्तमम् ॥ तन्मेवददयासिंधोसर्वेषांहितहेतवे ॥
॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वामनसिध्यायन्ध्यायञ्श्रीपुरुषोत्तमम् ॥ उमामजीगदच्छंभुःसर्वलोकहितैषिणीम् ॥ ५ ॥ ॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ ॥
नशक्यंकिञ्चिदेवास्तिदानंश्रीपुरुषोत्तमे ॥ व्रतपूर्णविधिंकर्तुमपर्णेछंदसिक्वचित ॥ ६ ॥ यद्यद्दानंगिरिसुतेह्युत्तमंपरिकीर्तितम् ॥ श्रीकृष्णव
ल्लभेमासितत्सर्वंगौणतांगतम् ॥ ७ ॥ तस्मादेतादृशंदानंनैवास्तिक्वापिसुंदरि ॥ येनतेव्रतसंपूर्तिर्भवेच्छ्रीपुरुषोत्तमे ॥ ८ ॥ पुरुषोत्तममासे

स्मिन्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ ब्रह्मांडसंपुटाकारंतदर्हंदेयमंगने ॥ ९ ॥ नशक्यंतत्तुकेनापिदातुंक्वापिवरानने ॥ तस्मादेतत्प्रतिनिधिंकृत्वाकांस्य
स्यसंपुटम् ॥ १० ॥ तन्मध्येपूरयित्वैवापूपांस्त्रिंशन्मितान्मुदा ॥ सप्ततंतुभिरावृत्यसंपूज्यविधिवत्प्रिये ॥ ११ ॥ देयंविप्रायविदुषेव्रतसं
पूर्तिहेतवे ॥ एवंत्रिंशन्मितान्येवदेयानिसतिवैभवे ॥ १२ ॥ इत्याकर्ण्यवचोरम्यंधूर्जटेरुपकारकम् ॥ अबीभवदुमाहृष्टासर्वलोकहितैषिणी ॥
॥ १३ ॥ त्रिंशत्कांस्यानिविद्वद्भ्यःसंपुटानिव्यतीर्यसा ॥ पूर्णंव्रतविधिंकृत्वामुमोदातीवनारद ॥ १४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्याकर्ण्य
मुनिर्विप्रानारायणवचोमृतम् ॥ पुनराहातितृप्तोसौनामंनामंपुनःपुनः ॥ १५ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ सर्वेभ्यःसाधनेभ्योयंमासःश्रीपु
रुषोत्तमः ॥ वरीयान्निश्चितोमेद्यश्रुत्वामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ १६ ॥ श्रुत्वापिजायतेभक्त्यामहापापक्षयोनृणाम् ॥ किंपुनःश्रद्धयाकर्तुर्विधिना
चेतिमेमतिः ॥ १७ ॥ अतःपरंनकिंचिन्मेश्रोतव्यमवशिष्यते ॥ पीयूषात्यंतसंतृप्तोनान्यत्तोयंसमीहते ॥ १८ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥
इत्युक्त्वाविरतोविप्रोनारदोमुनिसत्तमः ॥ अनीनमत्पादपद्मंपुरातनमुनेःपरम् ॥ १९ ॥ भारतेजनुरासाद्यपुरुषोत्तममुत्तमम् ॥ नसेवंतेनश्रृ
ण्वंतिगृहासक्तानराधमाः ॥ २० ॥ गतागतंभजंतेत्रदुर्भगाजन्मजन्मनि ॥ पुत्रमित्रकलत्राप्तवियोगाद्दुःखभागिनः ॥ २१ ॥ अस्मिन्मा
सेद्विजश्रेष्ठानासच्छास्त्राण्युदाहरेत् ॥ नस्वपेत्परशय्यायांनालपेद्वितथंक्वचित् ॥ २२ ॥ परापवादान्नब्रूयान्नकथंचित्कदाचन ॥ परान्नंचन
भुंजीतनकुर्वीतपरक्रियाम् ॥ २३ ॥ वित्तशाठ्यमकुर्वाणोदानंदद्याद्द्विजातये ॥ विद्यमानेधनेशाठ्यंकुर्वाणोरौरवंव्रजेत् ॥ २४ ॥ दिने
दिनेद्विजेंद्रायदत्त्वाभोजनमुत्तमम् ॥ दिवसस्याष्टमेभागेव्रतीभोजनमाचरेत् ॥ २५ ॥ धन्यास्तेपुरुषालोकेयेनित्यंपुरुषोत्तमम् ॥ अर्चयं

तिविधानेनभक्त्याप्रेमपुरःसरम् ॥ २६ ॥ इंद्रद्युम्नःशतद्युम्नोयौवनाश्वोभगीरथः ॥ पुरुषोत्तममाराध्ययययुर्भगवदंतिकम् ॥ २७ ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनसंसेव्यःपुरुषोत्तमः ॥ सर्वसाधनतःश्रेष्ठःसर्वार्थफलदायकः ॥ २८ ॥ गोवर्धनधरंवंदेगोपालंगोपरूपिणम् ॥ गोकुलो
त्सवमीशानंगोविंदंगोपिकाप्रियम् ॥ २९ ॥ कौंडिन्येनपुराप्रोक्तमिमंमंत्रंपुनःपुनः ॥ जपन्मासंनयेद्भक्त्यापुरुषोत्तममाप्नुयात् ॥ ३० ॥
ध्यायेन्नवघनश्यामंद्विभुजंमुरलीधरम् ॥ लसत्पीतपटंरम्यंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥ ३१ ॥ ध्यायंध्यायंनयेन्मासंपूजयन्पुरुषोत्तमम् ॥ एवं
यःकुरुतेभक्त्यास्वाभीष्टंसर्वमाप्नुयात् ॥ ३२ ॥ गुह्याद्गुह्यतरंचैतन्नवाच्यंयस्यकस्यचित् ॥ मयापिकथितंनैवकस्याप्यग्रेतपोधनाः ॥
॥ ३३ ॥ श्रोतव्यमेतत्सततंपुराणमभीष्टदंपावनमादरेण ॥ श्लोकैकमात्रश्रवणेनपुंसामघानिसर्वाणिनिहंतिविप्राः ॥ ३४ ॥ गंगादिसर्व
तीर्थेषुमज्जतोयत्फलंभवेत् ॥ तत्फलंशृण्वतस्तस्यमाहात्म्यंमुनिसत्तमाः ॥ ३५ ॥ इलांप्रदक्षिणीकुर्वन्यत्पुण्यंलभतेनरः ॥ तत्पुण्यं
शृण्वतस्तस्यमाहात्म्यंपौरुषोत्तमम् ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणोब्रह्मवर्चस्वीक्षत्रियोवसुधाधिपः ॥ वैश्योधनपतिर्भूयाच्छूद्रःसत्तमतांलभेत् ॥ ३७॥
येन्येकिरातहूणाद्याःपशुचर्यापरायणाः ॥ तेसर्वेमुक्तिमायांतिश्रुत्वामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ ३८ ॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यंलेखयित्वाद्विजन्मने ॥
संभूष्यवस्त्रभूषाभिर्विधिनायःप्रयच्छति ॥ ३९ ॥ कुलत्रयंसमुद्धृत्यगोलोकंयातिदुर्लभम् ॥ यत्रास्तेगोपिकावृंदैर्वेष्टितःपुरुषोत्तमः ॥ ४० ॥
लिखित्वाधारयेद्यस्तुगृहेमाहात्म्यमुत्तमम् ॥ तद्गृहेसर्वतीर्थानिविलसंतिनिरंतरम् ॥ ४१ ॥ मासोत्तमस्यमहिमानमनंतपुण्यंश्रुत्वासुवि
स्मितधियोमुनयश्चसर्वे ॥ ऊचुश्चसूततनयंविनयेनविष्वक्सेनांघ्रिसेवनविधौनिपुणानितांतम् ॥ ४२ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ सूतसूत

महाभागधन्योसित्वंमहामते ॥ त्वन्मुखामृतपानेनकृतार्थाःस्मोवयंभृशम् ॥ ४३ ॥ चिरंजीवसदासूतपौराणिकशिरोमणे ॥ अस्तुतेशाश्वतीकीर्तिर्जगत्पावनपावनी ॥ ४४ ॥ तुभ्यंप्रदत्तंनिमिषालयस्थैर्ब्रह्मासनंपूज्यतमंमुनीशैः ॥ त्वदीयवक्त्रांबुजनिर्गतश्रीमुकुंदवार्तामृतपानलोलैः ॥ ४५ ॥ विष्टरश्रवसएवपवित्रायावदेववितताभुविकीर्तिः ॥ तावदत्रमुनिवर्यसमाजेश्रीहरेर्वदकथांकमनीयाम् ॥ ४६ ॥ इत्थंद्विजाशीर्वचनंप्रगृह्यप्रदक्षिणीकृत्यद्विजान्समस्तान् ॥ नत्वागमद्देवनदींस्वकीयंकृत्यंविधातुंसचसूतसूनुः ॥ ४७ ॥ अन्योन्यमूचुर्नैमिषालयस्थावरिष्ठमाहात्म्यमिदंपुराणम् ॥ मासस्यदिव्यंपुरुषोत्तमस्यसमीहितार्थार्पणकल्पवृक्षम् ॥ ४८ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममासमाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तममाहात्म्यश्रवणफलकथनंनामएकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

इदं पुस्तकं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन क्षेमराजेन स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणालयेंकयित्वा प्रकाशितम् ।

संवत् १९६६, शके १८३१.

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

॥ * ॥ इति पुरुषोत्तममासमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ * ॥